द्विभाषी राष्ट्रसेवक

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal

वर्ष : 74 अंक : 05 अगस्त, 2024

RNI NO. ASSBIL/2009/31008 ISSN : 2321-4945

एक हृदय हो भारत जननी

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

(भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक शोध-पत्रिका)

UGC CARE Listed Journal

वर्ष : 74 **अंक : 05** **अगस्त, 2024**

परामर्श मंडल

श्री भारतभूषण महंत
कार्याध्यक्ष, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
गुवाहाटी (असम)

डॉ. किरण हाजरिका
सम कुलपति, इंदिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय
नयी दिल्ली-68

प्रो. आर.एस. सर्राजु
सम कुलपति, हैदराबाद विश्वविद्यालय
तेलंगाना-500046

प्रो. प्रदीप के शर्मा
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
सिक्किम केंद्रीय विश्वविद्यालय
काजी रोड, गंगटोक, सिक्किम - 737101

डॉ. दीपक प्रकाश त्यागी
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय
गोरखपुर (उत्तर प्रदेश)

डॉ. दिलीप कुमार मेधि
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

डॉ. अमूल्य चंद्र बर्मन
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

डॉ. अच्युत शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

प्रधान संपादक

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया
मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

संपादक

प्रो. मोहन
भाषाविद् एवं साहित्यकार

कार्यकारी संपादक

रामनाथ प्रसाद
प्रभारी साहित्य सचिव
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

DWIBHASHI RASTRASEWAK : A Bilingual (Hindi & Assamese) Monthly Research Journal, Focused on Language, Literature Society, Art and Culture, Partially funded by Central Hindi Directorate, Govt. of India and Published by Asom Rastrabhasha Prachar Samiti, Rupnagar, Guwahati-781032.

प्रकाशक :
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
गुवाहाटी-32

संपादकीय कार्यालय :
प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-32
फोन : 9101541395, 9101541380
ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

सहयोग राशि : 100/- (प्रति अंक)

शब्द संयोजन : रतिकांत कलिता

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की ओर से मंत्री डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया द्वारा सराइघाट फोटो टाइप्स प्रा.लि., इंडस्ट्रियल इस्टेट, गुवाहाटी-781021 में मुद्रित, प्रकाशित एवं प्रसारित।

सर्वाधिकार : **असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी-32**

'द्विभाषी राष्ट्रसेवक' में प्रकाशित रचनाओं के विचारों से असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का सहमत होना आवश्यक नहीं है। प्रकाशित सामग्री के उपयोग हेतु प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। सभी कानूनी विवादों का निपटारा गुवाहाटी न्यायालय के अधीनस्थ होगा।

विषय सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
	हिंदी विभाग		
	संपादकीय		*5*
1.	भारतीय संस्कृति में शाश्वत जीवन मूल्य	✍ डॉ. अक्षांश भारद्वाज	6
2.	'रानी नागफनी की कहानी' में शैक्षिक व प्रशासनिक व्यंग्य	✍ डॉ. भरत अ. पटेल	11
3.	हिंदी के विकास में अनुवाद-विशेष संदर्भ : राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम का दौर	✍ डॉ. राम प्रकाश यादव	16
4.	प्रतिरोध का अग्रदूत अमृत बाजार पत्रिका और इसकी पत्रकारिता	✍ डॉ. गौरव रंजन ✍ प्रमोद कुमार पांडेय	20
5.	मुक्लोम आदिवासी के प्रमुख त्योहार और अनुष्ठान	✍ रेमोन लोंग्कु	28
6.	असमिया उपन्यास 'जीवनर बाटत' में प्रतिफलित सामाजिक मूल्यों का टकराव : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन	✍ डॉ. संजय भट्टाचार्य ✍ डॉ. जान्हवी दास भट्टाचार्य	34
7.	'रोंग्मिली की मुस्कान' उपन्यास में कार्बी लोक-संस्कृति की अभिव्यक्ति	✍ डॉ. थेसो क्रोपी	39
8.	असमिया साहित्य में नारी केंद्रित उपन्यास : एक मूल्यांकन	✍ स्मिता साह	46
9.	आदिवासी समाज का यथार्थ दस्तावेज 'धूणी तपे तीर'	✍ अरविन्द कुमार यादव	51
10.	बंगाल के अकाल के अस्सी साल और 'तूफानों के बीच'	✍ डॉ. अनुपम	58
11.	चित्रा मुद्गल और मामोनी रायसम गोस्वामी की कहानियों के नारी-पात्रों का मनोविश्लेषणात्मक विवेचन	✍ दीक्षा कोंवर	62
12.	नीरजा माधव कृत 'यमदीप' : एक विश्लेषण	✍ पूनम पाधा	67
13.	अलका सरावगी के कथा-साहित्य में नारी चेतना	✍ मोनमी गायन ✍ डॉ. अनुज कुमार	70
14.	नाटकों के रंगमंचीय प्रस्तुति में ज्योतिप्रसाद अगरवाला की भूमिका	✍ रूपरेखा पाटगिरि	76
15.	रणेंद्र के कथा साहित्य में व्यक्त सामाजिक स्वर और आदिवासी जनजीवन	✍ डिम्पी बरगोहाईं ✍ डॉ. परिस्मिता बरदलै	80
16.	विश्व में भारतीय-सभ्यता एवं संस्कृति की प्रासंगिकता	✍ आनंद कुमार ✍ डॉ. के. के. शर्मा	85

অসমীয়া বিভাগ

17.	হোমেন বৰগোহাঞিৰ 'হালধীয়া চৰায়ে বাওধান খায়' ঃ এক পৰ্যালোচনা	✍ ড° নন্দিতা গোস্বামী	90
18.	আহোম বুৰঞ্জীৰ আধাৰত টাই-আহোম ভাষাৰ বিশেষণ শব্দৰ প্ৰকাৰ আৰু গঠন	✍ ড° উদয়ন বড়া	99
19.	অসমৰ কন্যাক নগাসকলৰ ঋতুকালীন উৎসৱ	✍ ড° বনিতা বুঢ়াগোহাঁই	106
20.	শিশুৰ মানসিক স্বাস্থ্য বিকাশত ঘৰখনৰ ভূমিকা	✍ ড° লিমা বৰুৱা	112
21.	প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত নাৰীবাদী চিন্তা ঃ ইয়াৰ প্ৰাসংগিকতাৰ ওপৰত সাহিত্য পৰ্যালোচনাৰ পৰা পোৱা ফলাফল	✍ ড° পাপৰি ডেকা	116
22.	অসমীয়া ভাষাত দৈনিক ব্যৱহৃত বিশেষ্যপদসমূহৰ সমষ্টিগত বৈশিষ্ট্যসমূহ আৰু ইয়াৰ তাত্বিক পৰ্যবেক্ষণ	✍ কৃষ্ণা হাজৰিকা	124
23.	গায়ত্ৰী চক্ৰৱৰ্তী স্পিভাকৰ নিম্নবৰ্গীয় তত্ত্বৰ আধাৰত চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ সূৰুজমুখীৰ স্বপ্ন : এটি বিশ্লেষণ	✍ মাইনী চমুৱা ✍ ড° পৰাগ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য	133
24.	দেশী মুছলমানসকলৰ সমাজ-জীৱনত নাম ঃ এক সমাজ-ভাষাবৈজ্ঞানিক অধ্যয়ন	✍ গুল ৰৌচন আৰা আহমেদ ✍ ড° উপেন ৰাভা হাকাচাম	141
25.	ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ চুটি গল্পত অলংকাৰৰ প্ৰয়োগ ঃ এক চমু আলোকপাত	✍ প্ৰণীতা দাস ✍ চুমী ঠাকুৰীয়া	153
26.	মিচিং লোক-সাধু ঃ এক পৰিচয়	✍ ত্ৰিনয়ন দলে	159
27.	বড়োসকলৰ লোক ঔষধি প্ৰথা আৰু বাস্তব্যবিদ্যা	✍ জোংদাৰ বসুমতাৰী ✍ ৰাজলক্ষ্মী দত্ত	163
28.	অসমীয়া আৰু ওড়িআ ভাষাৰ ক্ৰিয়াৰ 'সম্ভাব্য কাল' ঃ এটি তুলনাত্মক অধ্যয়ন	✍ অৰূপ দাস ✍ ড° জ্যোৎস্না ৰাউত	171
29.	কাৰ্বিসকলৰ শ্ৰাদ্ধ অনুষ্ঠান ঃ চ'মাংকান	✍ পূৰবী বৰদলৈ ✍ অৱনীতা সাউদ	176
30.	অসমীয়া উপন্যাসত অসমৰ পাৰ্বত্য জনজাতিৰ সমাজ জীৱনৰ প্ৰতিফলন (ৰং বং তেৰাঙৰ ৰংমিলিৰ হাঁহি উপন্যাসৰ বিশেষ উল্লিখনেৰে)	✍ ৰিম্পী ৰাণী দত্ত ✍ ভাৰতী শইকীয়া	180
31.	শংকৰদেৱৰ বৰগীতত কৃষ্ণ চেতনা ঃ এক অধ্যয়ন	✍ হিনাশ্ৰী দিহিঙীয়া	189
32.	উড়িআ গল্পকাৰ সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পত প্ৰতিফলিত সমাজ	✍ মৃদুল মৰাণ	197
33.	ঔপনিষদীয় চতুৰ্মহাবাক্য-এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন	✍ প্ৰকাশ বৰ্মন	202

❑ ❑ ❑

संपादकीय

साहित्य के बदलते आयाम

'आज समाज में बहुत तेजी से बदलाव आ रहा है। सामाजिक संरचना और सामाजिक संबंधों में भी बदलाव देखने को मिल रहा है। राजनीति में भी इस बदलाव को व्यापक रूप में देख सकते हैं। अब क्षेत्रीय दलों के अस्तित्व पर संकट देखने को मिल रहा है। भारतीय जनता ने राष्ट्रीय और क्षेत्रीय दोनों दलों की स्थिति का अनुभव कर लिया है। ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि इस सदी में इस बदलाव की पड़ताल की जाए। कारणों की तलाश की जाए। इन बदलावों के पीछे कोई-न-कोई कारण जरूर है, जिसके कारण से ये बदलाव घटित हो रहे हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में समाज और साहित्य का अध्ययन आवश्यक हो गया है।

नया समाज नई परिस्थितियों में नया साहित्य रच रहा है। साहित्य में सबसे अधिक द्वंद्व मूल्यों में आए परिवर्तन हैं। नैतिक और सौंदर्यात्मक मूल्य मिश्रित संस्कृति की स्थितियों में बदल रहे हैं। आज के साहित्य का यह मूल विषय है। मूल्यों में परिवर्तन परंपरा और नवीनता की टकराहट को दर्शाता है। नए संबंध उभर रहे हैं, जिनका कोई नाम नहीं है। अब समाज उनको अनदेखा नहीं कर रहा है, बल्कि इसे संबंधित संस्कृति से समझ रहा है। समाज में अस्मिताओं और समूह विशेष की पहचान का प्रश्न काफी गंभीरता से उठाया जाने लगा है। समाज में विशेष लक्षणों से उत्पन्न समूह, जैसे - रीति-रिवाज, अध्यात्म, क्षेत्र, बोली आदि के आधार पर नई अस्मिताओं और पहचान को गढ़ रहे हैं।

लिंग, भाषा, रूप का अंतर हो या सामाजिक (दलित, स्त्री, आदिवासी, ट्रांसजेंडर) या आर्थिक (उच्च-मध्यम-निम्न अथवा मलिन बस्ती) वर्गों का, सब पर खुलकर बात की जा रही है।

साहित्य में पारिस्थितिकीय (जीवन की आश्रित शृंखला) और पर्यावरण (प्रकृति) का प्रश्न भी मुख्य बन गया है। अब यह आदिवासी विमर्श के जल, जंगल और जमीन के बाहर भी शहरी और आधुनिक जीवन के दुष्प्रभावों (भीड़, प्रदूषण, प्रतिस्पर्धा, आर्थिक लूट आदि) में प्रस्तुत हो रहा है। साहित्य में अब उत्तर-आधुनिक अंतर-पाठ की तर्ज पर प्रस्तुति हो रही है। एक पाठ के भीतर कई पाठ हैं या वहाँ पिछले पाठों या अन्य माध्यमों की चिप्पियाँ मौजूद हैं। अब हम एकल पाठ नहीं, बल्कि आश्रित पाठ पढ़ रहे हैं। जैसे - मनोहर श्याम जोशी का लेखन है, जहाँ चरित्र फिल्मों, नाटकों, काव्य या गीत आदि को अपने संवादों में लगातार लाते हैं।

साहित्य में विधा रूप अब एकल नहीं रह गया है, बल्कि इसके बीच संवाद देखने को मिल रहा है। अब कहानी सिर्फ कहानी नहीं है, बल्कि डायरी, रिपोर्ताज या लंबी कविता भी है। कथाकार काशीनाथ सिंह ने एक कहानी कविता के रूप में लिखी थी। कविता गद्य के करीब आई है और गद्य कविता के करीब आ गया है। निर्मल वर्मा, विनोद कुमार शुक्ल आदि का गद्य कविता के करीब गया है तो नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, रघुवीर सहाय, धूमिल आदि की कविताएँ गद्य की ओर उन्मुख हुई हैं। दर्शन विज्ञान और मानविकी के सवाल अब संकेतात्मक भाषा में साहित्य में मौजूद हैं। अब हल नहीं चर्चा हो रही है। लेखन अब उत्तर नहीं विकल्प तलाश रहा है। अब हास्य व्यंग्य में मौजूद है और वह विडंबना या विसंगति के इर्द-गिर्द बुना गया है। हरिशंकर परसाई, मनोहर श्याम जोशी, शरद जोशी का लेखन इसी प्रकार का है।

अंत में इस अंक के लेखकों को साधुवाद। ❑

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

धरोहर

भारतीय संस्कृति में शाश्वत जीवनमूल्य

डॉ. अक्षांश भारद्वाज

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग
भाषा एवं मानविकी पीठ
राजस्थान केंद्रीय विश्वविद्यालय
अजमेर, राजस्थान-305817
7665331113
akshanshbharadwaj306@gmail.com

किसी भी राष्ट्र का मूल्यांकन वहां के जन समाज के आचरणगत मूल्यों के आधार पर होता है। प्रत्येक राष्ट्र की एक परंपरागत संस्कृति होती है जिसका सर्जन उन मूल्यों के आधार पर होता है, जिन्हें वहां के महापुरुषों ने अपने जीवन में अपनाया होता है। वस्तुत: उन मूल्यों के माध्यम से महापुरुषों के चरित्र एवं व्यक्तिगत गौरव को स्वर्णाक्षरों में अंकित किया जाता है। किसी भी देश की भौतिक प्रगति का भी महत्व होता है, किंतु भौतिक प्रगति को देश का शरीर कहा जाता है, जबकि उसमें प्राण तत्त्व का संचार करनेवाले घटकों को जीवन मूल्य कहते हैं। प्रत्येक व्यक्ति, जाति, समाज, देश व राष्ट्र के लिए जीवन मूल्य आवश्यक तत्व हैं।

किसी भी उन्नतिशील राष्ट्र की कुछ कसौटियां होती हैं। उन कसौटियों पर जो खरे उतरते हैं, वही जीवन की परीक्षा में उत्तीर्ण होते हैं। जो उन कसौटियों की चुनौतियों का सामना नहीं कर पाते, वे अनुत्तीर्ण होते हैं। उत्तीर्ण होने के लिए जिन तत्त्वों की आवश्यकता होती है, उन्हीं को श्रीमद्भगवद्गीता में **दैवी संपत्ति** कहा गया है तथा आधुनिक परिभाषा में उन्हीं आवश्यक तत्त्वों को हम **जीवन मूल्य** कहते हैं। ये मूल्य शाश्वत होते हैं, इनका निर्माण मानवता के साथ होता है तथा कभी अंत नहीं होता।

यह विषय मूल रूप से दो चरणों में समझा जा सकता है। जहाँ हम पहले चर्चा करेंगे-शाश्वत जीवन मूल्यों की, फिर उन शाश्वत जीवन मूल्यों के योग से व्यक्तित्व निर्माण प्रक्रिया की। शाश्वत का अर्थ है- चिरंतन, अनंत, जो कभी खत्म न हो। कहा जा सकता है कि ऐसे मूल्य अथवा सिद्धांत जो जीवन की श्रेष्ठता के लिए अपरिहार्य हों, जिनसे जीवन सार्थक बन सके और जिन्हें हम पीढ़ी-दर-पीढ़ी श्रेष्ठ जीवन की कुंजी मानकर अपनी भावी पीढ़ी को संस्कार स्वरूप में दे सकें और अंतत: जो हमारे राष्ट्र की पहचान बन सके।

हमारे ऋषि-मुनियों, द्रष्टाओं, चिंतकों व कवियों ने अगणित वर्षों से इस विषय पर चिंतन किया है एवं हमारे वेद, पुराण, श्रुति, स्मृति, उपनिषद्, धार्मिक ग्रंथ, महाकाव्य एवं अन्यान्य भारतीय वाङ्मय में मानव सभ्यता को श्रेष्ठता की ओर ले जाने वाले बेहतर, अर्थपूर्ण और सुखद जीवन जीने की कुंजीस्वरूप आदर्श

मूल्यों का प्रतिपादन किया है। इस शाश्वत चिंतन से उपजा नवनीत ही हमारे शाश्वत जीवन मूल्य हैं, जिनको जीते हुए हम मोक्ष की अवधारणा के लिए तैयार होते हैं।

यदि हिंदू संस्कृति का प्राणतत्व देखना चाहें तो निम्न श्लोक उसे सही अर्थों में अनुप्राणित करता है–

'सर्वे भवंतु सुखिनः सर्वे संतु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यंतु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्॥'(1)

भारतीय संस्कृति में सदैव शुभ की कामना है। सभी सुखी हों, सभी नीरोग (स्वस्थ) हों, सभी भद्र (शुभ) देखें और कोई भी **दुख** का भागी न बने। जब **दुख** ही नहीं होगा तो सुख और फिर चिरंतन सुख की स्थिति की कल्पना हुई और हम सामान्य जीवन में देखते हैं कि सुख प्रत्येक प्राणी का अभीष्ट है। उसी को प्राप्त करने के लिए समस्त प्राणी प्रयत्नशील रहते हैं और उद्यम करते हैं। किंतु महाभारत के शांति पर्व में एक श्लोक है–

'आधारनिद्राभयमैथुनं च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्।
धर्मोहि तेषामधिको विशेषः, धर्मेणहीनाः
पशुभिः समानाः॥'(2)

अर्थात् आहार, निद्रा, भय और मैथुन – यह चार वृत्तियाँ मनुष्य और पशु दोनों में समान होती हैं। मनुष्य और पशु में विभेद, विशेष रूप से **धर्म** ही करता है। धर्महीन व्यक्ति पशु के समान होता है। ऐसे में प्रश्न उपस्थित होता है कि **धर्म** क्या है? कहा गया है –

'यः धार्यते स धर्मः'(3)

अर्थात् जो धारण करता है, वह धर्म है। यथा – जल का धर्म है नम करना या बहना, अग्नि का धर्म है, जलना या जलाना, वायु का धर्म है बहना, जीवन देना। अगर मनुष्य के धर्म पर विचार करें तो वह है– उसके मानवीय जीवन मूल्य अथवा शाश्वत जीवन मूल्य।

हम चर्चा कर रहे थे कि मनुष्य के जीवन का केंद्रित है – **सुख**! किंतु आहार, निद्रा,भय मुक्ति तथा इंद्रिय सुख, जो पशुओं में भी समान है, वस्तुतः मनुष्य में बौद्धिक उत्कंठा भी है; वह स्वभाव से जिज्ञासु और तार्किक भी होता है। ऐसे में जब यह सुख का तर्क करता है तो वह क्षणिक भौतिक अथवा इंद्रिय सुख मात्र से सदा संतुष्ट नहीं होता। वह चिरंतन अथवा शाश्वत सुख की कल्पना करता है। वह सुख भी मन, बुद्धि व देह से ऊपर का प्राप्त करना चाहता है, क्योंकि जब मन, बुद्धि और देह शाश्वत नहीं, तो उससे मिलने वाला सुख शाश्वत नहीं हो सकता।

जब व्यक्तिगत सुख की कामना होती है तो यह तय है कि उसमें प्रतिस्पर्धा होगी, दूसरों की तुलना में अधिक की कामना होगी। सभी दूसरों से अधिक दैहिक या बौद्धिक सुख चाहेंगे और पाने की यह स्पर्धा कलह और मानसिक संताप का कारण बन जाएगी। ऐसे में सच्चा सुख किसे मिल पाएगा?

इसीलिए सुख के तत्व को हटाए बिना हमारे मनीषियों ने जो मूल्य अपने ग्रंथों में कथाओं, आख्यानों और उपदेशों में अथवा काव्य के माध्यम से प्रतिपादित व संवर्धित किए, वे हमारे शाश्वत जीवन मूल्य हुए।

जब आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पंडितः(4) कहा गया तो स्पष्ट था कि हम दूसरों के साथ भी वही व्यवहार करें, जो स्वयं के लिए पसंद करते हैं। जब *परद्रव्येषु लोष्ठवत्*(5) कहा गया तो अस्तेय की अवधारणा दी गई। *कृण्वंतो विश्वमार्यम्*(6) कहकर यह कामना की गई कि सारा विश्व श्रेष्ठ, सभ्य और सुसंस्कृत हो। *धर्म न दूसर सत्य समाना*(7) कहकर सत्य को ही श्रेष्ठ धर्म माना गया। *एकं तद् विप्रा बहुधा वदंति*(8) कहकर अनेकता में एकता, सर्वग्राह्यता व सभी की आस्था को समान सम्मान के मूल्यों को स्वीकार किया। स्वामी श्री रामसुखदास महाराज श्रीमद्भगवद्गीता की अपनी टीका के प्रारंभ में ही लिखते हैं *'यह हिंदू संस्कृति की विलक्षणता है कि इसमें प्रत्येक कार्य को मानव कल्याण का उद्देश्य सामने रखकर ही करने की प्रेरणा की गई है। इसीलिए युद्ध जैसा घोर कर्म भी धर्मक्षेत्र व कर्मक्षेत्र कहा गया, जिसमें युद्ध में मरने वाले का भी कल्याण हो जाए।'*(9)

एक जातक कथा जिसमें भगवान बुद्ध उस युवती को, जो अपने पुत्र का जीवनदान मांगने आई है, ऐसे घर से एक मुट्ठी चावल लाने को कहते हैं जिसमें मृत्यु कभी नहीं हुई हो, यह सहज ही मृत्यु की अवश्यंभाविता को स्वीकार करने की सीख है।

'जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः त ध्रुवं जन्ममृतस्य च।
तस्मात् अपरिहार्येऽर्थे, न त्वं शोचितुमर्हसि॥'(10)

अर्थात् जो पैदा हुआ है, उसकी मृत्यु निश्चित है और मरे हुए का जन्म निश्चित है। यह जन्म-मरण चक्र अपरिहार्य है अर्थात् इसका किसी भी प्रकार से प्रतिकार नहीं किया जा सकता। अत: कृष्ण कहते हैं कि इस अपरिहार्य विषय के निमित्त शोक करना उचित नहीं।

भारतीय शास्त्रों में कहा गया है- *अमृतस्य पुत्रा: वयम्।* [11] अमृत के पुत्र हैं हम, अर्थात् हम अविनाशी ईश्वर की संतान हैं, ईश्वर ही तो अमृत हैं, अमर है। वह दिव्यता हम सभी में है, बस अव्यक्त रहती है। हम जन्म-जन्मांतरों में इस अव्यक्त दिव्यता को परिष्कृत करते हैं, क्योंकि यह परिष्कार हमारी बौद्धिक क्षमता के अनुरूप होता है। चूंकि **सुख** जीवन में महत्वपूर्ण चुंबकीय तत्व है अत: हम सुख पाने के अनेक मार्गों से होकर गुजरते हैं। उसकी क्षणभंगुर प्रकृति को समझने में जीवन दर जीवन भटकते हैं और हर बार कुछ परिष्कार अवश्य होता है। यह भी सत्य ही है कि अंतत: यह अनवरत परिष्कार आत्मा का वह अमृत तत्व **सत् चित् आनंद** लाता ही है, क्योंकि सुख की चरम परिणति वही है। स्वार्थपूर्ण एवं प्रतिस्पर्धा आधारित सुख की प्रकृति का संकुचित अर्थ ठीक से समझ आने पर ही व्यक्ति **चरम लक्ष्य** की ओर अग्रसर होता है। अंतत: ज्ञान से ही परमानंद संभव है।

हमारे प्राचीन मनीषियों ने जीवन को चार आश्रमों में क्रमश: ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम में वर्गीकृत किया है। ब्रह्मचर्य आश्रम में मनुष्य बेहतर जीवन जीने के लिए गुरुकुल में रहते हुए ज्ञानार्जन करता था, शरीर को शक्तिशाली बनाता था व जिन शाश्वत जीवनमूल्यों की हम बात कर रहे हैं, उनका गुरु के सान्निध्य में अभ्यास करता था। गृहस्थ आश्रम में कुटुंब निर्वहन का कर्तव्य निभाता था। यहाँ **पुरुषार्थ चतुष्ट्य** की बात करना समीचीन होगा। हमारे शास्त्रों में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को पुरुषार्थ चतुष्ट्य कहा गया है। धर्म जीवनमूल्यों को धारण करना है और धर्म के बिना जीवन अव्यवस्थित और अराजक हो जाएगा। इसीलिए इसे पुरुषार्थ चतुष्ट्य में प्रथम स्थान पर रखा गया है।

फिर स्थान आता है **अर्थ** का! अर्थ मतलब धन, भौतिक संपदा। धर्म द्वारा भौतिक संपदा अर्जित करना। अनुभव कहता है सच्चा सुख तभी संभव है, जब धर्म का आचरण करते हुए अर्थ अर्जित किया जाए। कुटुंब के भरण-पोषण का स्रोत है अर्थ। तत्पश्चात् स्थान है **काम** का! काम को सामान्य इंद्रिय सुख तक संकुचित करना ठीक नहीं होगा। काम व्यक्ति की कामनाओं का विस्तार मांगता है। यह राजसी गुण है- व्यक्ति की महत्वाकांक्षाओं का क्षितिज। भारतवर्ष में प्राचीन काल से ही राजा एवं श्रेष्ठिवर्ग जनहित में विद्यालय, जलाशय, धर्मशालाएं, औषधालय इत्यादि बनवाते थे, क्योंकि वे जानते थे कि धन की शास्त्रोक्त तीन गतियां हैं- दान, भोग और नाश। **दान** को अर्थ के व्यय की सर्वोत्तम गति मानी गई है। यह धर्म में आदर्श कामनाओं की पूर्ति का माध्यम था।

'ब्रह्मण्याधाय कर्माणि संगं त्यक्त्वा करोति य:।
लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा॥' [12]

अर्थात् जो पुरुष सब कर्मों को परमात्मा को अर्पण करके और आसक्ति को त्याग कर कर्म करते हैं, वे पुरुष जल में कमल का पत्ता जैसे गीला नहीं होता, वैसे ही पाप से लिप्त नहीं होते।

इस प्रकार आसक्तिरहित कर्म ही पुरुषार्थ के अंतिम सोपान मोक्ष तक ले जाते हैं। मोक्ष के दो अर्थ निकाले जा सकते हैं- पहला, गति का रुक जाना; दूसरा, स्वयं प्रकाश हो जाना। भगवान बुद्ध ने इसे ही अप्प दीपो भव कहा है। मोक्ष चिर शांति की अथवा अनंत प्रकाश की अवस्था है। यहां ज्ञान को प्रकाश कहा जा सकता है, जो निर्लिप्त भाव से कर्म के अभ्यास से संभव है।

यह पुरुषार्थ चतुष्ट्य का योग ही वानप्रस्थ व संन्यास आश्रम के जीवन काल की सफलता की कुंजी है। वानप्रस्थ काल में व्यक्ति कुटुंब के सीमित दायरे से निकल कर समाज व राष्ट्र के लिए अपने सामर्थ्य अनुसार योग करता है तथा संन्यास आश्रम में अथवा जीवन काल की संध्या में संचित ज्ञान को समाज कल्याण हेतु साझा करता है।

इस प्रकार हमने देखा कि हम जीवनपर्यन्त शाश्वत जीवनमूल्यों को सीखते हुए उनका अभ्यास करते रहते हैं। उनका निरंतर अभ्यास और आचरण में ढालने के पश्चात् ही हम चिरंतन आनंद के लक्ष्य की कल्पना कर सकते हैं।

अब हम विषय के दूसरे पहलू पर आते हैं, जिसमें इन शाश्वत मूल्यों को आत्मसात करने से श्रेष्ठ व्यक्तित्व का निर्माण होता है। हमारा सामान्य जीवन का अनुभव बताता है कि जब हम एक बहुत विद्वान व्यक्ति के संपर्क में आते हैं तो संभव है, हम उसकी बौद्धिकता से एक बार तो प्रभावित हो जाएं, किंतु यदि यह व्यक्ति कोरे किताबी ज्ञान वाले हैं और उन्होंने अपने ज्ञान को आचरण व व्यवहार में नहीं उतारा है, तो उनके व्यक्तित्व की वे तरंगे हम तक नहीं पहुंच पातीं, जो एक कम बौद्धिक, किंतु कर्मशील व्यक्ति के संपर्क में आने से पहुंचती हैं। ऐसे व्यक्ति से हम सहज ही जुड़ाव भी महसूस करते हैं और इनका प्रभाव भी हम पर आता है। अनेक बार कहा जाता है कि व्यक्ति को परखना हो तो मात्र उसके बड़े कार्यों से नहीं जानना चाहिए क्योंकि कई बार सामान्य अथवा धूर्त व्यक्ति भी अवसर विशेष पर श्रेष्ठता दिखाते नजर आते हैं। वास्तविकता में, इस हेतु व्यक्ति के दैनंदिन जीवन के सामान्य व्यवहार में किए जाने वाले साधारण कार्यों को देखना चाहिए, क्योंकि जो सब अवस्थाओं में समान रूप से उदात्त कर्मशील बना रहता है, वही महान है। रिचर्ड एटनबरो ने महात्मा गांधी के जीवन पर एक बड़ी सार्थक फिल्म बनाई **गांधी**। फिल्म में एक दृश्य है, जिसमें चौरी-चौरा कांड के बाद गांधीजी ने अत्यंत सफल असहयोग आंदोलन को वापस ले लिया। तब भारतीय राजनीति के श्रेष्ठ नेतृत्व, यथा- नेहरू, पटेल गांधी जी से पुनर्विचार हेतु आग्रह करते हैं। गांधीजी एक दर्दभरी मुस्कुराहट के साथ अपनी बकरी के बच्चे को गोद में उठाए हुए जाते हुए जवाब देते हैं - मेरी बकरी के बच्चे की टांग टूट गई है, इसे मिट्टी की पुल्टिस चाहिए। सोचिए, अहिंसा के जीवनमूल्य को गांधीजी ने किस कदर निभाया। जब पूरा राष्ट्र आंदोलित था, तब हिंसा की एक क्रूर घटना ने उन्हें इतना द्रवित कर दिया कि राष्ट्रव्यापी सफल आंदोलन को ही वापस ले लिया। यहां मैमने की टांग हिंसा का प्रतीक है, किंतु मिट्टी की पुल्टिस अहिंसक मार्ग का इलाज है। इसीलिए गांधीजी महात्मा कहलाए। शाश्वत जीवन मूल्यों को जीना ही व्यक्ति निर्माण का विशुद्ध अभ्यास है। भगवद्गीता में कहा गया है-

'दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते॥' (13)

अर्थात् दुखों की प्राप्ति होने पर जिसके मन में उद्वेग नहीं होता, सुखों की प्राप्ति में जो निस्पृह रहता है; जिसके राग, भय और क्रोध नष्ट हो चुके हों, ऐसा मनुष्य स्थिर बुद्धि कहलाता है।

हमारा मस्तिष्क निरंतर कुछ न कुछ सोचता रहता है और प्रत्येक विचार हमारे चित्त पर एक संस्कार छोड़ देता है। भगवद्गीता में विषयों में चिंतन से लेकर अतृप्त कामनाओं के कारण उत्पन्न क्रोध के प्रभाव का बड़ा गूढ़ मनोवैज्ञानिक विवेचन किया गया है-

'ध्यायतो विषयान्पुंसः संगस्तेषूपजायते।
संगात्संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते॥' (14)

'क्रोधाद् भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति॥' (15)

अर्थात् विषयों का चिंतन करते रहने वाले पुरुष की उन विषयों में आसक्ति हो जाती है, आसक्ति से उन विषयों की कामना उत्पन्न होती है और कामनापूर्ति में विघ्न पड़ने से क्रोध उत्पन्न होता है। क्रोध के कारण सम्मोह या अत्यंत मूढ़ता का भाव पैदा हो जाता है। सम्मोह से स्मृति में विभ्रम पैदा हो जाता है। स्मृति भ्रंश होने से बुद्धि अर्थात् ज्ञान शक्ति का नाश हो जाता है और बुद्धि अथवा विवेक समाप्त होने पर व्यक्ति अपनी स्थिति से गिर जाता है।

सामान्य व्यवहार में देखा गया है कि आदत ही हमारा दूसरा स्वभाव होती है, आदत हमारे पुनः पुनः आवृत किए जाने वाले कर्म ही तो हैं। जो भी हम जीवन में बार-बार दोहराते हैं, चाहे वह विचार हों या कर्म, वही हमारी आदत बन जाते हैं।

महत्व :

मूल्यवान एवं मूल्यहीन होना ही प्रत्येक वस्तु की उपयोगिता एवं उपयोगहीनता को सिद्ध करता है। जीवन मूल्यों के महत्व को प्रत्येक अवस्था में स्वीकार किया जाता है। मूल्यहीनता की स्थिति सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक असंतुलन की सूचना देती है तथा मूल्य विकास की स्थिति सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक विकास को सूचित करती है। अतः जीवन मूल्य का महत्व प्रत्येक क्षेत्र में स्वीकार किया जाता है। मूल्यों के महत्व को किसी

भी स्तर पर अस्वीकार नहीं किया जा सकता। मूल्य ही वह महत्वपूर्ण तथ्य है, जो कि समाज, संस्कृति एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। मूल्य के अभाव में कोई भी विचार एवं वस्तु समाजोपयोगी एवं राष्ट्रोपयोगी नहीं हो सकती।

निष्कर्ष :

अत: हम कह सकते हैं कि हम आज जो कुछ भी हैं, यह हमारे अतीत जीवन के समस्त संस्कारों का प्रभाव है। वास्तव में यही चरित्र निर्माण की प्रक्रिया है। इसलिए अगर आज हम अपने आप से संतुष्ट नहीं हैं, तो हमें बदलने के लिए सोच-समझ कर अपनी आदतें विकसित करनी होगी, उन्हें बदलना होगा, क्योंकि वही आगे जाकर हमारे भविष्य का स्वभाव या चरित्र बन जाएगी।

अब हमें शाश्वत जीवन मूल्यों को अपने जीवन में उतारने का अभ्यास करना होगा, उन पर मनन कर, मंथन कर और उचित का अभ्यास बढ़ाना होगा। तब नि:संदेह **सत् चित् आनंद** दूर नहीं रहेगा। ❑

संदर्भ सूची:

1. तैत्तिरीय उपनिषद
2. महाभारत,शांतिपर्व
3. श्रीमद्भागवत गीता
4. श्रीमद्भागवत गीता
5. श्रीमद्भागवत गीता
6. ऋगवेद 9/63/5
7. श्रीरामचरितमानस 2/94/3
8. ऋगवेद 164/46
9. स्वामीरामसुखदास,साधकसंजीवनी (श्रीमद्भागवतगीता टीका)
10. श्रीमद्भागवतगीता 2/27
11. श्वेताश्वेत्तर उपनिषद
12. श्रीमद्भागवत गीता 5/10
13. श्रीमद्भागवत गीता 2/56
14. श्रीमद्भागवत गीता 2/62
15. श्रीमद्भागवत गीता 2/63

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विवेचन

'रानी नागफनी की कहानी' में शैक्षिक व प्रशासनिक व्यंग्य

डॉ. भरत अ. पटेल

एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
विजयनगर आर्ट्स कॉलेज, विजयनगर
ता. विजयनगर, जिला : साबरकांठा
पिन : 383460, गुजरात (भारत)
9428555165
bapatel55165@gmail.com

श्री हरिशंकर परसाई आधुनिक हिंदी साहित्य के सर्वाधिक सशक्त व्यंग्यकार के रूप में प्रतिष्ठित हैं। स्वातंत्र्योत्तर युग में कथ्य एवं शिल्प दोनों दृष्टियों से उन्होंने हिंदी व्यंग्य को एक नई दिशा और नई पहचान प्रदान करने में बहुत महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उनके 28 से भी अधिक व्यंग्य-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। उनके समग्र साहित्य को समाविष्ट करने हेतु 'परसाई रचनावली' भी प्रकाशित की गई है। 'रानी नागफनी की कहानी' फैंटेसी (Fantasy) शैली में लिखा गया उनका लघु व्यंग्य-उपन्यास है। इसमें उन्होंने अपने समय की वास्तविकता को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। इस व्यंग्य-उपन्यास में परसाई जी ने अनेकानेक विसंगतिओं और विद्रूपताओं को अपने व्यंग्य का विषय बनाया है। हम यहाँ शैक्षिक व प्रशासनिक व्यंग्य की आलोचना करेंगे।

शिक्षा एक ऐसा महत्वपूर्ण और पवित्र साधन है, जो किसी भी राष्ट्र की आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक स्थिति को सुदृढ़ बनाता है। भारत में स्वतंत्रता के बाद शिक्षा के प्रसार में अनेक सिद्धांत और आदर्श रखे गए, किंतु कुछ समय बाद अन्य क्षेत्रों की भाँति इस क्षेत्र में भी अनेकविध विद्रूपताएँ और विसंगतियाँ उभरने लगीं। विद्यार्थी गहन अध्ययन को छोड़कर फैशन-परस्त हो गया। धनी माता-पिता के रुपयों से सालभर गुलछर्रे उड़ाने वाले और सैर-सपाटे मारने वाले विद्यार्थी परीक्षा नजदीक आते ही बाजार में उपलब्ध सस्ते नोट्स खरीद लाते हैं। वे परीक्षा में नकल करने से लेकर कोरी परीक्षा-कॉपियाँ चुराने और पेपर आउट करवाने तक का दुस्साहस करते हैं। 'रानी नागफनी की कहानी' नामक फैंटेसी शैली में लिखे गए इस लघु उपन्यास का नायक राजा भयभीतसिंह का कुँवर अस्तभान बी.ए. की परीक्षा में चौथी बार फेल होने पर आत्महत्या करने के पूर्व अपने पिताजी को चिट्ठी लिखता है। इसमें वह अपनी सच्चाई बयान करता है, *"मैंने पाठ्य-पुस्तकों को कभी नहीं छुआ और न कक्षा में अध्यापकों की बातें कान पर धरीं। मैंने केवल उन नोट्स और कुँजियों का अध्ययन किया, जो 'एन एक्सपीरिएंस्ड प्रोफेसर' और 'एक गोल्ड मेडेलिस्ट' लिखते हैं। मैंने इनमें इतना मन लगाया कि परीक्षा-कापी में मैंने लिखा कि 'जुलियस सीजर' का लेखक 'एन एक्सपीरिएंस्ड प्रोफेसर' है और 'विनयपत्रिका' 'एक गोल्ड मेडेलिस्ट' ने लिखी है। गोल्डस्मिथ*

के बारे में मैंने लिखा कि वह भी गोल्ड मेडेलिस्ट था और कुँजियाँ लिखता था। मैंने इतने अच्छे-अच्छे और सही उत्तर लिखे, पर परीक्षक कहते हैं कि ये गलत हैं। मैंने प्रश्नपत्र 'आउट' करने की भी कोशिश की और कुछ अंशों में सफल भी हो गया। फिर मैंने विश्वविद्यालय से कोरी परीक्षा कापियाँ चुराने की भी कोशिश की, पर पकड़ लिया गया। तब आपने मामले को दबवाया। परीक्षा में मैंने भरसक नकल भी की। परीक्षा के बाद परीक्षकों को नंबर बढ़ाने के लिए आपने मनमाना रुपया भी दिया। कुछ ने नंबर बढ़ाए, कुछ रुपया खा गए, पर नंबर नहीं बढ़ाए और कुछ तो ऐसे निकले कि साफ इनकार कर गए। इन्हीं के कारण मैं फेल हो गया।''[1] यहाँ व्यंग्यकार ने धनी बाप की बिगड़ैल संतानों द्वारा होती धांधली को मार्मिकता के साथ बखूबी उजागर किया।

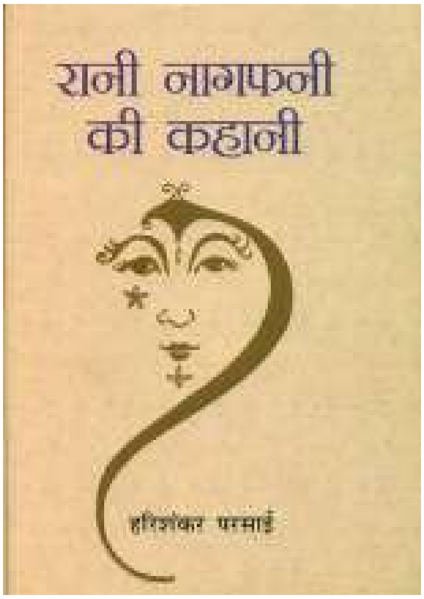

कुछ विद्यार्थियों का ऐसा विश्वास है कि परीक्षा में पेपर भले ही खराब गए हों, लेकिन यदि यह पता लग जाता कि कापियाँ कहाँ जँचने गई हैं तो उत्तीर्ण होना आसान हो जाता है। भेड़ाघाट पर आत्महत्या करने गया राजकुमार अस्तभान अपने साथी ज्ञानरिपु से पूछता है-

'तुम किस पेपर में फेल हुए?'

'अंतिम पेपर में'

'याने अर्थशास्त्र में?'

ज्ञानरिपु ने अपनी बात को समझाकर कहा- *''अर्थशास्त्र अंतिम पेपर नहीं है, जितने पेपर विश्वविद्यालय की विवरण-पत्रिका में लिखे हैं, उनके बाद भी एक पेपर होता है, जो सबसे महत्वपूर्ण है, पर जिसका कहीं उल्लेख नहीं है। इस पेपर का विषय होता है यह पता लगाना कि किस विषय की उत्तर-कापियाँ किसके पास जँचने गई हैं और फिर उनसे नंबर बढ़वाना। जो इस पेपर में पास हो जाता है, वह सब में पास हो जाता है। मैं इसी में फेल हो गया कुमार।''*[2] यहाँ पूरा साल सैर-सपाटे मारने वाले और अंत में पैसों के बल पर पास हो जाने की कोशिशें करने वाले छात्रों पर परसाईजी ने भरपूर कशाघात किया है।

कुँवर अस्तभान आत्महत्या से पहले अखबारों के लिए एक बयान लिखता है, जिससे इस युग की सामाजिक परिस्थितियों पर अच्छा प्रकाश पड़ता है-

''मैं विश्वविद्यालय से पूछता हूँ कि यह कहाँ का न्याय है कि जिन्हें दोनों जून खाने को नहीं मिलता उन्हें तो डिग्री मिल जाती है, और हम फेल हो जाते हैं। हमें, जिन्हें बिना परीक्षा के ही डिग्री दे देनी चाहिए, एक-एक नंबर के लिए दर-दर भटकना पड़े, और जिनके पास फूटी कौड़ी नहीं है वे घर बैठे नंबर पा जाएँ। घोर अन्याय है.... मैं इस संबंध में निम्नलिखित सुझाव देता हूँ जिन पर विश्वविद्यालयों की एकेडेमिक कौंसिल विचार करे-

(i) एक खास आमदनी के ऊपर वालों के पुत्र-पुत्रियों को बिना परीक्षा लिए सम्मानपूर्ण डिग्रियाँ दे देने की व्यवस्था हो।

(ii) प्रति पेपर जो एक खास रकम दे सके, उसे उस पेपर में नकल करने की सुविधा दी जाए। इसके लिए उस विषय के जानकार प्रोफेसरों को नकल कराने का काम सौंपा जाय और उन्हें इसका अलग अलाउंस मिले।

(iii) जिस तरह बाजार में और चीजें बिकती हैं, उसी तरह नंबर भी बिकें और जिसमें सामर्थ्य हो वह नंबर खरीद ले।

अभी जो चल रहा है, वह बड़ा गलत है। सब धान बाईस पसेरी तौला जाता है, जिसमें कितने ही होनहार युवकों का जीवन नष्ट हो जाता है।''[3]

यहाँ रईस बाप की बिगड़ैल संतानों द्वारा रुपयों से डिग्री खरीदने, नड़ल करने की सुविधा प्राप्त करने की मंशा की

भरपूर खिल्ली उड़ाई है। खरी वास्तविकता को अनावृत्त करने में परसाई जी माहिर हैं।

देश के स्वतंत्र होने के बाद कई बार शिक्षा-प्रणाली को बदलने की बात उठाई गई, पर साठ-सत्तर साल के बाद भी कभी कोई बदलाव नहीं हुआ। शिक्षा-संबंधित समस्याओं के निवारण हेतु समितियों का गठन होता है। इनके गठन पर काफी रुपया बर्बाद हो जाता है, पर कोई ठोस और प्रभावी निर्णय सामने नहीं आ पाता। यथा - *''इस साल (आत्महत्या करने वालों की) भीड़ अधिक है, क्योंकि रिजल्ट बहुत खराब निकले हैं। विश्वविद्यालयों की एक जाँच-समिति बैठी थी, जिसने उन कारणों की खोज की है, जिनसे पढ़ाई का स्तर नीचा होता जा रहा है। उसकी सिफारिशों में से एक महत्वपूर्ण सिफारिश यह है कि अध्यापकों का वेतन और कम करना चाहिए तथा जिन्हें कहीं और नौकरी न मिले, उन्हीं को अध्यापक बनाना चाहिए। जब सब जगह अयोग्य ठहराया गया आदमी अध्यापक बनेगा और वेतन भी बहुत कम मिलेगा तो वह अपने काम को सेवा और त्याग की भावना से करेगा और शिक्षा का स्तर बढ़ जाएगा। समिति की एक सिफारिश यह भी है कि प्रश्नपत्र वर्ष के आरंभ में ही विद्यार्थियों को देने चाहिए। ऐसा करने से वे मन लगाकर पढ़ेंगे।''*[4] यहाँ यह बात ध्यान देने की है कि परसाई जी के समय अध्यापकों का वेतन काफी कम था। आज के समय में सरकारी और ग्रांट-इन-एड स्कूल-कॉलेजों के अध्यापकों का वेतन बढ़ा है, पर सेल्फ-फैनान्स या प्राइवेट स्कूल-कॉलेजों के अध्यापकों को दिहाड़ी मजदूरों जितना वेतन दिया जाता है। अर्थात परसाई जी का व्यंग्य आज भी कितना सटीक लगता है।

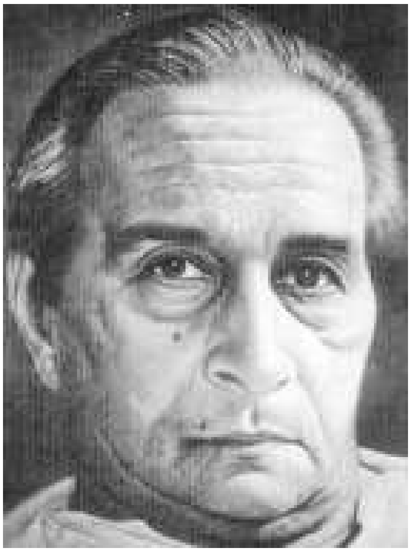

आजादी के पश्चात सरकारी और राजनीतिक क्षेत्रों में पनपी विकृतियों का प्रभाव सार्वजनिक प्रशासनिक क्षेत्र पर भी पड़ा, क्योंकि सार्वजनिक प्रशासन क्षेत्र सरकारी तंत्र के सीधे नियंत्रण में होता है। राज्य में शासकीय नौकरियों की भर्ती किन स्थितियों में की जाती है, इस पर परसाई जी ने करारा व्यंग्य किया है- *''राज्य में शासकीय नौकरियों की भर्ती दो स्थितियों में होती थी- तब, जब पद खाली हो और उन्हें भरने के लिए उम्मीदवारों की जरूरत हो, और तब, जब विशेष उम्मीदवार खाली हों और उन्हें भरने के लिए पदों की आवश्यकता हो। शासकीय सेवा संहिता के अनुच्छेद -2 की धारा 11, उपधारा 3 में 'विशेष उम्मीदवार' की परिभाषा यह दी गई थी-ऐसा पदेच्छु नागरिक, जिसकी योग्यता अविशेष हो, पर संबंध विशेष हों- अर्थात राज्य में किसी ऐसे व्यक्ति का वह कृपापात्र हो, जो स्वयं शासक हो या जिसका शासनकर्ताओं पर प्रभाव हो।''*[5] यहाँ परसाई जी ने परिजनों, रिश्तेदारों, मित्रों और जान-पहचान वालों को नौकरी दिलाने की धाँधली का पर्दाफाश किया है।

'रानी नागफनी की कहानी' में परसाई जी ने प्रशासन-तंत्र की लापरवाही, जड़ता और ढुलमुल नीति की बखिया उधेड़ दी है। कुमार अस्तभान के मित्र मुफतलाल ने डिप्टी कलेक्टर के लिए आवेदन-पत्र भेजा था। इस संदर्भ में व्यंग्यकार ने लिखा है- *''एक-एक पद के लिए कई हजार आवेदन-पत्र आते। इन्हें छाँटने में दो-तीन साल लग जाते। इसके बाद उम्मीदवारों की परीक्षा और इंटरव्यू होता। नियम के अनुसार हर उम्मीदवार को हर तीन महीने में सूचित करना पड़ता था कि मैं अभी जीवित हूँ। जो सूचना नहीं देता, उसे मारा मानकर उसका नाम काट दिया जाता था। इससे चुनाव में सुविधा होती थी।''*[6]

मुफतलाल को दो वर्ष बाद कार्यालय से सचिव का पत्र मिलता है, जिसमें शासकीय सेवा अधिनियम-17 के अनुसार प्रमाणपत्र सहित यह सूचित करना था कि आप किसके आदमी हो तथा वे किस श्रेणी में हैं। मुफतलाल ने अस्तभान

का आदमी होने तथा प्रमाण के लिए फोटोग्रुप की नकल भेज दी। इसके बाद डिप्टी कलेक्टर का इंटरव्यू किस प्रकार होता है, उसका वर्णन सचमुच में अद्‌भुत है। व्यंग्यकार ने इसीलिए फैंटेसी का उपयोग किया है। यथा– *''उम्मीदवारों के इंटरव्यू और चुनाव के लिए पाँच अफसरों का एक आयोग बैठता था। आयोग के सदस्यों के पास फॉर्म 'ख' पहले ही भेज दिया जाता था और वे दो प्रकार के प्रश्न तैयार कर लेते थे– जिसे लेना है, उसके लिए एक प्रकार के प्रश्न और जिसे नहीं लेना, उसके लिए दूसरे प्रकार के.... (एक एम.ए., एल.एल.बी. फर्स्ट क्लास युवक का इंटरव्यू)*

एक सयाने ने उस युवक का नाम पूछा। नाम सुनकर उन सबने फॉर्म 'ख' देखा। उसमें लिखा था – किसी का आदमी नहीं। सयाने उससे प्रश्न पूछने लगे।

एक ने पूछा, वेदांत की माया और सांख्य की प्रकृति में क्या भेद है?

उम्मीदवार ने दर्शन का इतना अध्ययन नहीं किया था। वह नहीं जानता था कि डिप्टी कलेक्टर के लिए दार्शनिक की आवश्यकता है।

दूसरे सयाने ने प्रश्न किया, कान्ट ने विशुद्ध तर्क की क्या प्रवृत्ति प्रतिपादित की है?

उम्मीदवार चकरा गया ....उसे पसीना आने लगा।

सयाना बोला – उसे तो कुछ भी नहीं आता। बिल्कुल डल है।

(अब कुँवर अस्तभान के मित्र मुफतलाल का इंटरव्यू)

मुखिया ने बड़े प्रेम से कहा – खड़े क्यों हो, बेटा ! बैठ जाओ।

मुफतलाल कुर्सी पर बैठ गया।

प्रश्न पूछे जाने लगे।

एक सयाने ने पूछा– कुमार साहब कैसे हैं?

मुफतलाल ने जवाब दिया– अच्छे हैं।

दूसरे ने पूछा– आज तुमने क्या खाया था?

मुफतलाल तपाक से बोला– रोटी, चावल, दाल, सब्जी, अचार।

उसकी तत्परता से सब प्रभावित हुए। मुखिया ने कहा, कैसे तपाक से जवाब देता है। वेरी स्मार्ट।

तीसरे सयाने ने पूछा– आजकल शहर में कौन-सी अच्छी फिल्म चल रहा है?

मुफतलाल ने फौरन उत्तर दिया– 'चौदहवीं का चाँद', जिसमें वहीदा रहमान, गुरुदत्त, जॉनी वाकर, हैलन वगैरह काम करते हैं।

मुखिया ने कहा– वाह! बड़ा होंशियार और स्मार्ट लड़का है।

इंटरव्यू समाप्त हुआ।''[7]

यहाँ व्यंग्यकार ने सरकारी नौकरी में परिवारवाद, भाई-भतीजावाद , जान-पहचानवाद आदि की धाँधली पर रोचक शैली में प्रहार करते हुए लक्ष्य की धज्जियाँ उड़ा दी हैं।

अब हम मेडिकल क्षेत्र में फैली भ्रष्टता, स्वार्थपरता और बाजारवाद का जायजा लेंगे। कुमार अस्तभान नागफनी के विरह में इतना बेहाल हो गया है कि डॉक्टर को बुलाया जाता है–

''डॉक्टर सोच में पड़ गया। अपने आप कहने लगा– सिस्टम सब ठीक है, नाड़ी बराबर है, हार्ट दुरुस्त है। फिर क्या गड़बड़ है?

मुफतलाल ने उसकी उलझन देखकर कहा– इन्हें प्रेम की बीमारी है।

डॉक्टर ने कहा– ठीक है। पेनिसिलिन मँगा लो।

मुफतलाल बोल पड़ा– डॉक्टर साहब, यद्यपि चिकित्सा-शास्त्र में मेरा दखल नहीं है, फिर भी मन में प्रश्न उठता है कि क्या प्रेम की बीमारी में भी पेनिसिलिन ही दिया जाएगा?

डॉक्टर ने कड़ी नजर से उसे देखा और कहा– हाँ, कोई भी बीमारी हो।

तो फिर बीमारी की जाँच और रोग का निदान करने की क्या जरूरत है?

कोई नहीं। पर अगर डॉक्टर यह सब दिखाने के लिए न करे तो उस पर विश्वास न किया जाय और उसे फीस न मिले .... मुफतलाल– डॉक्टर साहब, गुस्ताखी माफ हो। आपने तो क्लोरोमाइसिन लिख दिया है। जहाँ तक मैं

जानता हूँ... डॉक्टर ने बात काटकर कहा– तुम्हारा मतलब है कि यह दवा इस बीमारी में नहीं दी जाती। ठीक है। यह मैं भी जनता हूँ। पर बाजार में क्लोरोमाइसिन का जो भारी स्टॉक पड़ा है, उसका क्या होगा? साल-भर से टाइफाइड के केस लगभग नहीं हुए। दवाइयों का स्टॉक पड़ा सड़ रहा है ... सारी गर्मी और बरसात निकल गई, पर इस अभागे शहर में एक भी मरीज हैजे से नहीं मरा। ऐसी स्थिति में डॉक्टर क्या करें? और दवा-विक्रेता क्या करें?''[8] यहाँ परसाई जी ने मेडिकल कंपनियों, दवा-विक्रेताओं और डॉक्टरों की मिलीभगत का पर्दाफाश करते हुए इनकी नफाखोरी से मरीज के शारीरिक और आर्थिक नुकसान की ओर संकेत किया है। आजकल वाइरल इंफेक्शन के लिए डॉक्टर आठ-दस प्रकार दवा लिख देता है। बड़े गंभीर रोगों के संदर्भ में तो उनकी धाँधली कल्पनातीत होगी।

इस प्रकार व्यंग्यकार ने इस उपन्यास में शैक्षिक और प्रशासनिक विसंगतियों पर बड़े मार्मिक रूप से बखिया-उधेड़ व्यंग्य किए हैं। ❑

संदर्भ-संकेत :

1. रानी नागफनी की कहानी, हरिशंकर परसाई, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ 15
2. वही, पृष्ठ 30–31
3. वही, पृष्ठ 16–17
4. वही, पृष्ठ 28–29
5. वही, पृष्ठ 61
6. वही, पृष्ठ 62
7. वही, पृष्ठ 66–67
8. वही, पृष्ठ 49–50–51

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

दृष्टिकोण

हिंदी के विकास में अनुवाद विशेष संदर्भ : राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम का दौर

डॉ. राम प्रकाश यादव

सहायक प्रोफेसर
अनुवाद अध्ययन विभाग
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
वर्धा, महाराष्ट्र, पिन- 442001
+91-7972952363
dr.rampprakashyadav@gmail.com

सन 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम ने भारतीय जनमानस के मन में यह आकांक्षा जगा दी थी कि प्रयास करने पर विदेशी पराधीनता से मुक्ति पाई जा सकती है। भारतीय नवजागरण और शिक्षा के प्रचार-प्रसार ने यह परिस्थिति निर्मित कर दी थी कि अंग्रेजी शासन के आधार और उसके प्रभाव का व्यापक मूल्यांकन किया जा सके। दादा भाई नौरोजी ने संपत्ति की निकासी के सिद्धांत के माध्यम से अंग्रेजी शासन के द्वारा भारतीय अर्थव्यवस्था को खोखला करने की प्रक्रिया का विश्लेषण किया। विवेकानंद और दयानंद सरस्वती जैसे समाज सुधारक अपने प्रयासों से भारतीय समाज की कुरीतियों और जड़ता को दूर कर रहे थे। आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक दृष्टि से भारतीय समाज की पुनर्रचना प्रारंभ हो गई थी। इस विषय में भी चिंतन प्रारंभ हो गया था कि यदि पराधीनता से मुक्ति मिली तो राष्ट्रीय शासन व्यवस्था का स्वरूप क्या होगा? एक समर्थ राष्ट्र के निर्माण के लिए किन तत्वों की आवश्यकता होगी? भौगोलिक दृष्टि से इतने बड़े भू-भाग की क्या आवश्यकताएँ हैं? राष्ट्र के समक्ष बड़े प्रश्न क्या हैं और उनका समाधान क्या है? राष्ट्र को एक सूत्र में कैसे पिरोया जाए?

बीज शब्द : भाषा विकास, अनुवाद, अनुसृजन, राष्ट्रीयता, एकता।

मूल आलेख :

भारत विविधताओं से भरा देश है और इन्हीं विविधताओं के मध्य एकता के वे सूत्र भी हैं, जो संपूर्ण राष्ट्र को एक इकाई के रूप में स्थापित करते हैं। भारत भाषाओं की दृष्टि से भी एक समृद्ध राष्ट्र है। अब तक शासन के काम-काज विदेशी भाषाओं जैसे- फारसी और अंग्रेजी में किए जा रहे थे। स्वाभाविक रूप से यह प्रश्न भी उठ रहा था कि भविष्य के भारत में भाषाओं की क्या भूमिका होगी? प्रांतीय भाषाओं के विकास और राष्ट्रभाषा के चुनाव को लेकर भी चिंतन प्रारंभ हो गया था। हिंदी क्षेत्र में विभिन्न बोलियों के मध्य कौन-सी प्रतिनिधि बोली हो, इस पर भी विचार किया जा रहा था। भारतेंदु हरिश्चंद्र जैसे अग्रगण्य व्यक्तित्व मुखर होकर यह प्रश्न उठा रहे थे और लोगों को बतला रहे थे- 'निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटै न हिय को शूल।।'

स्वभाषा में ही राष्ट्र की उन्नति की जा सकती है और सभी प्रकार की उन्नति

का यह मूल है। परंतु यहाँ भी काव्य भाषा और गद्य की भाषा को लेकर द्वंद्व था। कविता की भाषा के रूप में ब्रज भाषा का जो प्रभाव था और जो उसकी प्रतिष्ठा थी कि उसको छोड़कर कविता करना असंभव लग रहा था। गद्य की भाषा के रूप में खड़ी बोली हिंदी ऐसी थी, जो पूरे देश में बोली और समझी जा रही थी। खड़ी बोली हिंदी को गद्य की भाषा के रूप में अपनाया गया। खड़ी बोली हिंदी में कविता भी की जाने लगी और छायावाद काल तक आते-आते खड़ी बोली हिंदी काव्यभाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो गई। बाद में राष्ट्रीय आंदोलन के कई गैर-हिंदी भाषी नेताओं ने भी हिंदी के इस महत्व को समझा और पूरे देश में हिंदी के पक्ष में एक वातावरण निर्मित किया। महात्मा गांधी, सुभाष चंद्र बोस और सी. राजगोपालाचारी आदि विभिन्न नेताओं ने राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी को अपनाने की अपील की।

भारत एक बहुभाषा-भाषी देश है। डॉ. सुरेश कुमार का मानना है कि 'बहुभाषिकता के कारण भारत में भाषा संपर्क एक तर्कयुक्त और स्वाभाविक स्थिति है। तद्नुसार, भारत एक भाषा संपर्क क्षेत्र है और इसीलिए अनुवाद क्षेत्र है।' (कुमार, 2005, 174) डॉ. सुरेश कुमार की स्पष्ट मान्यता है कि ''आधुनिक हिंदी के विकास में अनुवाद की स्पष्ट और विशिष्ट भूमिका है।' (कुमार, 2005, 175)

यद्यपि हिंदी की विगत एक हजार वर्षों की समृद्ध परंपरा थी, परंतु मुख्य रूप से यह एक साहित्यिक परंपरा थी। साहित्यिक भाषा की पृष्ठभूमि के रूप में हिंदी को एक समृद्ध विरासत प्राप्त थी, जिस पर गर्व किया जा सकता है। हिंदी को अब ज्ञान-विज्ञान की भाषा बनाने और नई आवश्यकताओं के अनुरूप ढालने के लिए प्रयास किए जाने लगे। भारतेंदु हरिश्चंद्र खड़ी बोली हिंदी आंदोलन के प्रारंभिक और सर्वाधिक महत्वपूर्ण नेतृत्वकर्ता के रूप में सामने आते हैं। खड़ी बोली हिंदी में लेखन को भारतेंदु ने प्रोत्साहित किया और साथ ही साथ हिंदी को समृद्ध बनाने और अन्य भाषाओं से संपर्क सूत्र को दृढ़ करने हेतु हिंदी में अनुवाद को भी प्रोत्साहित किया। इस काल में बड़े पैमाने पर अनुवाद कार्य किए गए। इस अनुवाद कार्य ने न केवल हिंदी भाषी समाज को विविध भाषाओं के महत्वपूर्ण साहित्य से परिचित कराने का कार्य किया, बल्कि राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम को मजबूत करने और संपूर्ण राष्ट्र को एक सूत्र में पिरोने का कार्य भी किया।

भारतीय नवजागरण और खड़ी बोली हिंदी आंदोलन साथ-साथ चलते हैं। नवजागरण की चेतना के पीछे अनुवाद की भूमिका की पहचान करते हुए कृष्ण कुमार गोस्वामी कहते हैं, 'यदि नवजागरण दो जातीय संस्कृतियों की टकराहट से उत्पन्न रचनात्मक ऊर्जा है तो अनुवाद ही वह माध्यम है, जो संस्कृतियों में संपर्क और टकराहट लाने में मुख्य भूमिका निभाता है। वस्तुतः अनुवाद की गहरी परतों से नवजागरण की भूमि उर्वर होती है।' (गोस्वामी, 2008, 445) भारतीय नवजागरण ने स्वतंत्रता संग्राम के लिए एक प्रेरक शक्ति का काम किया और भारतीय नवजागरण और स्वतंत्रता संग्राम को प्रेरित करने में अनुवाद ने एक बड़ी भूमिका निभाई। भारतीय जनमानस में चेतना का संचार करने में संस्कृत और अंग्रेजी से हुए अनुवादों की बड़ी भूमिका रही। संस्कृत से किए गए अनुवादों ने भारतीय ज्ञान परंपरा से अवगत कराकर सोई हुई जनता में भारत की उपलब्धियों के प्रति गौरव का बोध जगाया और उनमें एक आत्मविश्वास को जन्म दिया। वहीं अंग्रेजी से हुए अनुवादों ने विश्व राजनीति में उभर रहे नए सामाजिक- राजनीतिक आंदोलनों से, वैज्ञानिक प्रगति से और आधुनिकता की नई संकल्पनाओं से परिचित कराया। छापेखानों के विस्तार और पाठक वर्ग की बढ़ती संख्या ने इन अनुवादों के लिए एक बाजार सुलभ कराया। विपुल अनुवाद कार्य ने भाषा विकास की परिस्थिति को भी प्रोत्साहन दिया। साहित्य एवं ज्ञान- विज्ञान के पाठों को सुलभ बनाकर खड़ी बोली हिंदी को भी समृद्ध करने का उपक्रम जारी हुआ। साहित्य में तो हिंदी को बोलियों की समृद्ध परंपरा का अवदान तो प्राप्त ही था, अब साहित्य की नई विधाओं में साहित्य सृजन का प्रारंभ अनुवाद के माध्यम से प्राप्त हुआ। कहानी, कविता, आत्मकथा, उपन्यास, रिपोर्ताज आदि विविध विधाओं में अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद किए गए। इन विधाओं में भाषा- शैली को लेकर भी नवीन प्रयोग किए गए।

श्रीधर पाठक के 'एकांतवासी योगी' (1886) को खड़ी बोली काव्य की प्रथम कृति माना जाता है। यह ओलिवर गोल्डस्मिथ के 'द हरमिट' का काव्यानुवाद है।

डॉ. नगेंद्र ने अपने हिंदी साहित्य का इतिहास में अनुवादों की कुछ सूची उपलब्ध कराई है, जो आधुनिक हिंदी नाटक के उद्‌भव और विकास के संदर्भ में उल्लेखनीय हैं। डॉ. राम चंद्र प्रसाद (नगेन्द्र, 1993, 11) ने इसकी चर्चा करते हुए यह उल्लेख किया है कि हिंदी लेखक उन दिनों अपनी भाषा और साहित्य के संवर्द्धन के लिए सतत प्रयत्नशील थे और जानते थे कि अनुवाद ऐसे संवर्द्धन के लिए एक सहज और अमोघ उपाय है। उन्होंने लाला सीताराम जैसे अच्छे और कई दृष्टियों से सफल अनुवादक की भूरि-भूरि प्रशंसा की है, जिनकी अनूदित रचनाएँ उनकी कला चेतना के सभी आवश्यक तत्वों से समन्वित हैं। यह सूची द्रष्टव्य है- भवभूति की अत्यंत प्रसिद्ध कृति है 'उत्तररामचरित', जिसका अनुवाद देवव्रत तिवारी ने 1871 ई. में, नंदलाल विश्वनाथ दुबे ने 1886 ई. में और लाला सीताराम ने 1897 ई. में किया। उनकी दूसरी महत्वपूर्ण कृति है 'मालतीमाधव', जिसका अनुवाद लाला शालिग्राम ने 1881 ई. में और लाला सीताराम ने 1897 ई. में किया। उनकी अन्य महत्वपूर्ण कृति 'महावीरचरित का अनुवाद लाला सीताराम ने 1897 ई. में किया। कालिदास के अभिज्ञानशाकुंतलम का अनुवाद नंदलाल विश्वनाथ दुबे ने 1888 ई. में किया। कालिदास के मालविकाग्निमित्र का अनुवाद लाला सीताराम ने 1898 ई. में किया। कृष्णमित्र के प्रबोध चंद्रोदय का अनुवाद लाला शीतला प्रसाद ने 1879 ई. में किया और इसी ग्रंथ का एक और अनुवाद अयोध्या प्रसाद चौधरी ने 1885 ई. में किया। शूद्रक के मृच्छकटिकम् का अनुवाद गदाधर भट्ट ने 1800 ई. में और इसी ग्रंथ का एक अन्य अनुवाद लाला सीताराम ने 1899 ई. में किया। हर्ष की रत्नावली का अनुवाद देवदत्त तिवारी ने 1872 ई. में किया। इसी ग्रंथ का एक और अनुवाद बालमुकुंद सिंह ने 1898 ई. में किया। भट्ट नारायण के वेणीसंहार का अनुवाद ज्वाला प्रसाद सिंह ने 1897 ई. में किया। लाला सीताराम ने 1885 ई. से 1915 ई. के बीच शेक्सपियर के ग्यारह नाटकों का अनुवाद किया।

भारतेंदु की भूमिका हिंदी भाषा और साहित्य को विकसित करने में अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। उन्होंने हिंदी की विभिन्न विधाओं पर महत्वपूर्ण कार्य किया। साथ ही हिंदी में अनेक अनुवाद भी किए। हिंदी को वैश्विक साहित्य के समकक्ष खड़ा करने की लालसा भारतेंदु के मन में थी। उन्हें तत्काल मौलिक रचनाएँ बड़ी संख्या में उपलब्ध होती हुई नहीं दिख रही थीं। इस कारण वे अन्य भाषाओं के साहित्य को अनुवाद के माध्यम से हिंदी में लाना चाहते थे। 'रत्नावली' की भूमिका में भारतेंदु ने कहा है- ''हिंदी भाषा में जो सब भाँति की पुस्तकें बनने के योग्य हैं, अभी वे बहुत कम बनी हैं, विशेषकर नाटक तो (कुँवर लक्ष्मण सिंह के शकुंतला के सिवाय) कोई भी ऐसे नहीं बने हैं, जिनको पढ़कर चित्त को कुछ आनंद मिले और इस भाषा का बल प्रकट हो; इस वास्ते मेरी इच्छा है कि चार नाटकों का तर्जुमा हिंदी में हो जाए तो मेरा मनोरथ सिद्ध हो।'' (गोस्वामी, 2008, 452) यह बताता है कि भारतेंदु हिंदी साहित्य के भंडार को अनुवाद के माध्यम से समृद्ध करना चाहते थे और इसके लिए न केवल वे स्वयं प्रयास करते हैं, बल्कि उन्होंने अपने समकालीन लेखकों को भी प्रेरणा दी। उन्हें प्रोत्साहित किया। उन्होंने संस्कृत से हिंदी में अनुवाद किया और अंग्रेजी से हिंदी में भी अनुवाद किया। उन्होंने श्रीहर्ष की रचना 'रत्नावली', कृष्ण मिश्र के 'प्रबोध चंद्रोदय' नाटक का 'पाखंड विडंबन' के नाम से 1873 ई. में अनुवाद किया। कंचन पंडित के 'धनंजय विजय' का हिंदी अनुवाद 1873 ई. में तथा विशाखदत्त के 'मुद्राराक्षस' का अनुवाद 1875 ई. में किया। राजशेखर की 'कर्पूरमंजरी' का अनुवाद उन्होंने 1875 ई. में किया। उन्होंने शेक्सपियर के 'मर्चेंट ऑफ वेनिस' का भी हिंदी में अनुवाद किया।

हिंदी आलोचना के क्षेत्र में किए गए प्रारंभिक प्रयासों में बाबू जगन्नाथ दास रत्नाकर का आलेख 'समलोचनादर्श' उल्लेखनीय है। यह पद्यबद्ध आलेख है, जो अलेक्जेंडर पोप के 'एन एसे इन क्रिटिसिज्म' का अनुवाद माना जाता है। (रमण, 2002, 10) यह अनुवाद 1896 ई. में नागरी प्रचारिणी सभा से प्रकाशित हुआ। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने आलोचना के क्षेत्र में कुछ प्रसिद्ध निबंधों का हिंदी में अनुवाद किया। नामवर सिंह द्वारा संपादित चिंतामणि भाग-3 में उनका एक लेख है- 'साहित्य', जो जॉन हेनरी न्यूमैन के 'आइडिया ऑफ द यूनिवर्सिटी' नामक निबंध के आधार पर लिखा गया है। इसी पुस्तक में प्रकाशित उनका एक अन्य लेख 'कल्पना का आनंद' है, जो अट्ठारहवीं सदी के प्रसिद्ध अंग्रेजी निबंधकार जोसेफ एडिसन के 'प्लेजर्स

ऑफ इमैजिनेशन' शीर्षक ग्यारह निबंधों का अनुवाद है। इस अनुवाद का प्रकाशन 1905 ई. में नागरी प्रचारिणी पत्रिका के कई अंकों में क्रमश: प्रकाशित किया गया। रेवती रमण आलोचना विधा को समृद्ध करने में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के महत्व की चर्चा करते हुए उद्धृत करते हैं कि उन्होंने लाला सीताराम बी.ए. के अनुवाद किए हुए नाटकों के भाव और भाषा संबंधी दोष अपने ग्रंथ 'हिन्दी कालिदास की आलोचना' में बड़े विस्तार से दिखाए। यह अनुवादों की समालोचना थी। (रमण, 2002, 10) महावीर प्रसाद द्विवेदी ने फ्रांसिस बेकन के अनुवादों का एक संकलन छपवाया।

हिंदी की प्राय: हर विधा को समृद्ध करने में अनुवाद की महती भूमिका रही है। 'इंदुमती' को हिंदी की प्रथम कहानी माना जाता है। यह सरस्वती के पहले अंक में 1900 ई. में प्रकाशित हुई थी। इसमें शेक्सपियर के 'द टेंपेस्ट' की छाया मिलती है। हिंदी निबंध के क्षेत्र में दृष्टिपात करें तो गंगा प्रसाद अग्निहोत्री द्वारा अनूदित 'निबंधमालादर्श' जो कि विष्णु कृष्ण चिपलूणकर द्वारा लिखित मराठी निबंधों का संग्रह है, प्रमुख है। इसके अतिरिक्त महावीर प्रसाद द्विवेदी ने फ्रांसिस बेकन के अंग्रेजी निबंधों का अनुवाद 'बेकन विचार रत्नावली' के नाम से प्रस्तुत किया। हिंदी निबंध विधा को समृद्ध करने के प्रारंभिक प्रयासों में ये दोनों निबंध महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। कविता विधा में भी हिंदी में अनेक अनुवाद किए गए। 11 वीं -12 वीं शताब्दी के एक फारसी कवि उमर खैय्याम की रूबाइयों का अंग्रेजी में अनुवाद फिटजेराल्ड ने किया। इन रूबाइयों का मैथिलीशरण गुप्त, सुमित्रानंदन पंत, हरिवंशराय बच्चन, केशव प्रसाद पाठक, ब्रजमोहन तिवारी, जगदंबा प्रसाद हितैषी, कमला देवी चौधरी आदि अनेक साहित्यकारों ने हिंदी में अनुसृजन किया।

भारतेंदु युग और द्विवेदी युग में अनुवाद की जिस प्रक्रिया का प्रारंभ हुआ, वह आगे के युग में भी निरंतर गतिमान रही। महावीर प्रसाद द्विवेदी न केवल हिंदी भाषा को मानक रूप में विकसित कर रहे थे, बल्कि अनुवाद के माध्यम से हिंदी के साहित्य को भी समृद्ध कर रहे थे। महावीरप्रसाद द्विवेदी ने जयदेव की 'बिहारवाटिका' का अनुवाद 1890 ई. में, कालिदास की 'ऋतुतरंगिनी' का हिंदी अनुवाद 1891 ई. में, पंडित राज जगन्नाथ की 'गंगा लहरी' का अनुवाद 1891 ई. में किया। उन्होंने जे.एस. मिल की 'ऑन लिबर्टी' का 'स्वाधीनता' शीर्षक से 1905 ई. में अनुवाद किया।

हिंदी समाज को उपन्यास विधा से परिचित कराने का श्रेय 1719 ई. में लिखित डेनियल डेफो के अंग्रेजी उपन्यास 'द लाइफ एंड स्ट्रेंज एंड सरप्राइजिंग एड्वेंचर्स ऑफ रॉबिन्सन क्रूसो' को जाता है। इसका अनुवाद बांग्ला भाषा से हिंदी में पंडित बद्री लाल ने 1860 ई. में किया।

वस्तुत: देश को पराधीनता की बेड़ियों से मुक्त कराने और देश की आगामी व्यवस्था को निर्मित करने की तैयारी का प्रारंभ एक साथ ही हो चुका था। अनुवाद ने भाषा विकास का कार्य तो किया ही, दुनिया भर में घट रहे राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक घटनाक्रमों और आंदोलनों से भारतीय जनमानस को परिचित कराने में भी अनुवाद ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। विभिन्न भाषाओं में जो साहित्यिक और ज्ञान सामग्री उपलब्ध थी, अनुवाद के माध्यम से वह हिंदी में उपलब्ध हो गई। हिंदी में विभिन्न विधाओं को समृद्ध करने में और कई साहित्यिक विधाओं के प्रारंभ में अनूदित साहित्य का योगदान स्पष्टत: रेखांकित किया जा सकता है। अनुवाद प्रक्रिया ने न केवल विभिन्न भाषा-भाषी समुदायों को परस्पर एकता के सूत्र में बांधा, बल्कि स्वाधीनता संग्राम के लिए चेतना उत्पन्न कर राष्ट्र की मुक्ति का मार्ग भी प्रशस्त किया। ❑

संदर्भ :

- नगेन्द्र (Ed.). (1993). अनुवाद विज्ञान : सिद्धांत एवं अनुप्रयोग (प्रथम ed.). दिल्ली विश्वविद्यालय
- रमण, र. (2002). हिन्दी आलोचना : बीसवीं शताब्दी (प्रथम ed.). अभिव्यक्ति प्रकाशन
- कुमार, सं. (2005). (IV ed.). वाणी प्रकाशन, दिल्ली
- गोस्वामी, क. क. (2008). अनुवाद विज्ञान की भूमिका (प्रथम ed.). राजकमल प्रकाशन

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

मंथन

प्रतिरोध का अग्रदूत 'अमृत बाजार पत्रिका' और इसकी पत्रकारिता

डॉ. गौरव रंजन
सहायक प्राध्यापक
पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग
ओडिशा केंद्रीय विश्वविद्यालय
नाद, सुनाबेडा, कोरापुट, ओडिशा-763004
8539010264
gauravdjmc@gmail.com

प्रमोद कुमार पांडेय
शोधार्थी, मीडिया एवं जनसंचार विभाग
दक्षिण बिहार केंद्रीय विश्वविद्यालय
9431658746
pramodkr@cusb.ac.in

शोध-सार :

व्यापारी बनकर आए अंग्रेजों ने सत्ता पर कब्जे के क्रम में भारतीय समाज और संस्कृति की विभिन्न गतिविधियों तथा यहां की राजनातिक व्यवस्था को प्रभाव में लेने का सुनियोजित प्रयास बंगाल से ही शुरू किया। अंग्रेजों के प्रभाव क्षेत्र में सबसे पहले आने से बंगाल एक ओर जहां अंग्रेजी कुशासन की प्रयोगभूमि बना वहीं अत्याचार-अनाचार से दबे लोकमानस में प्रतिरोध की भावना भी यही सबसे पहले पनपी। बंगाल प्रतिरोध और विद्रोह का पर्यायवाची बन गया। यह अकारण नहीं है कि नवजागरण के अग्रदूत के रूप में चर्चित अखबारों, पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन केंद्र प्रमुखतः बंगाल ही था।

अमृत बाजार पत्रिका भी इसी परंपरा से निःसृत साप्ताहिक था, जो पहले जेसोर के अमृत बाजार से और बाद में कोलकाता (तब कलकत्ता) से लंबे समय तक छपता रहा। अपने तेवर से यह प्रकाशन के शुरुआती वर्षों में ही प्रतिरोध का पर्यायवाची और अग्रदूत बन गया। स्थिति यह हो गई कि अंग्रेजी हुकूमत को इस अखबार से समझौते का सौदा भी लाभकारी लगा, संपादक बाबू शिशिर कुमार घोष को सरकार में शामिल होने के प्रलोभन दिए गए और जब वे झुकने को तैयार नहीं हुए तो अंग्रेजी सरकार ने इस अखबार को वश में करने के लिए कानून का सहारा लेने की रणनीति तैयार की। वर्नाकुलर प्रेस एक्ट का मूल और सबसे प्रमुख उद्देश्य तब बांग्ला साप्ताहिक अमृत बाजार पत्रिका को दबाने का ही था, लेकिन इसके संचालकों ने रातोंरात इसे बांग्ला अंग्रेजी साप्ताहिक से अंग्रेजी साप्ताहिक में परिवर्तित कर इस कानून की जद में आने से बचाया। (नटराजन, 2002, पृ-112)

अंग्रेजी दैनिक के रूप में न केवल बंगाल में बल्कि पूरे भारत में अंग्रेजों के खिलाफ जनमानस तैयार करने में अमृत बाजार पत्रिका की महती भूमिका रही। बाल गंगाधर तिलक और महात्मा गांधी भी इससे अनुप्राणित हुए। तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था को छिन्नभिन्न करने के हर प्रयास का अमृत बाजार पत्रिका ने विरोध किया। इसने जनाक्रोश को स्वर दिया, प्रतिरोध का प्रतीक बनकर लोगों को जागरूक, जागृत करने में महती भूमिका निभाई।

प्रस्तुत शोध पत्र आजादी के अमृतमहोत्सव पर अमृत बाजार पत्रिका के इन्हीं अवदानों पर केंद्रित-आधारित है। यह स्वतंत्रता आंदोलन के दौर की पत्रकारिता में अमृत बाजार पत्रिका के महत्व को रेखांकित करने का प्रयास है।

बीज शब्द :

स्वतंत्रता आंदोलन, पत्रकारिता, प्रतिरोध, जनजागरण, अमृत महोत्सव, भाषायी पत्रकारिता, जनांदोलन।

प्रस्तावना :

बंगाल को राष्ट्रीय जनजागरण की प्रयोगभूमि और भारतीय पत्रकारिता की जन्मस्थली होने का गौरव हासिल है। जनजागरण का यह प्रयास कई मोर्चों पर हुआ। एक ओर राजाराम मोहन राय, केशव चंद्र सेन, पंडित ईश्वर चंद्र विद्यासागर सहित अन्य समाज सुधारकों ने सामाजिक परिवर्तन का प्रयास किया वहीं दूसरी ओर रामकृष्ण परमहंस और उनके शिष्य स्वामी विवेकानंद तथा अरविंद घोष जैसे आध्यात्मिक लोगों ने आध्यात्मिकता की अलख जगाकर भारत की खोई गरिमा को पुनरस्थापित करने का सत्प्रयास न केवल बंगाल बल्कि बंगाल से बाहर देश में और विदेशों में भी किया। 1857 के आंदोलन के बाद बंगाल और विशेषकर कलकत्ता जिसप्रकार राजनीतिक गतिविधियों का केंद्र बना उससे यह बिल्कुल स्वाभाविक था कि बाद के दिनों में जनजागृति के प्रतीक बने समाचार पत्रों के प्रकाशन का प्रयास यही से होता।

पहले भारतीय समाचार पत्र के रूप में समादृत बंगाल गजट या बंगाल जनरल एडवरटाइजर का प्रकाशन बंगाल से ही हुआ। इसे ईस्ट इंडिया कंपनी के कर्मचारी जेम्स आगस्टस हिक्की ने 29 जनवरी 1780 को इस मंतव्य से शुरू किया था कि वह सबकी खबर देगा, किसी को विशिष्ट नहीं मानेगा। हिक्की अंग्रेज होकर भी कंपनी के कर्मचारियों के भ्रष्टाचार और तत्कालीन शासकों और उनके परिजनों की विलासिता से खिन्न था, उनके बारे में लोगों को बताना चाहता था। हिक्की के बंगाल गजट का ध्येय वाक्य था - Open to All Parties, But Influenced by None, जो हर अंक के फोलियो में प्रकाशित होता था (कुमार, 2015, पृ.77)। तत्कालीन गवर्नर जनरल वारेन हैस्टिंग्स की पत्नी की विलासिता से जुड़ी खबरों को अखबार के पन्ने पर जगह देकर सत्ता से टकराने का प्रयास किया। पत्रकारिता की आधारभूमि तैयार करने में हिक्की का यह योगदान अनुपम है कि उसने प्रतिरोध को अपने पत्र का केंद्रबिंदु बनाया।

भारत में पत्रकारिता की औपचारिक शुरुआत भले हिक्की से ही होती है लेकिन इससे बारह साल पहले अखबार शुरू करने की घोषणा भर से अंग्रेज अधिकारियों के माथे पर बल ला देने वाले विलियम बोल्ट्स का योगदान भी अप्रतिम है। कंपनी की सेवा से त्यागपत्र देने के बाद उसने भ्रष्टाचार की पोल खोलने की मंशा से 1767 में अखबार प्रकाशित करने की घोषणा भर ही की कि उसे बंगाल छोड़ने और यूरोप का रास्ता पकड़ लेने का फरमान सुना दिया गया। (नटराजन, 2002, पृ.6)।

बंगाल जर्नल के स्वामी-प्रकाशक के रूप में विलियम ड्यैन भी अंग्रेजी प्रशासन के आंखों की किरकिरी बना। धारदार पत्रकारिता के कारण सजा मिलने के बावजूद प्रभावशाली अंग्रेजों से अपने संपर्क के कारण वह निष्कासन से तो बचा, लेकिन उसका संपादक पद जाता रहा। जब उसने इंडियन वर्ल्ड का प्रकाशन शुरू किया तो विभिन्न अभियोगों में दोषी ठहराकर उसे जबरन इंग्लैंड भेज दिया गया, संपत्ति जब्त कर ली गईं। इस कार्रवाई को सही ठहराने के लिए तत्कालीन गवर्नर जनरल सर जॉन शोर ने 31 दिसंबर 1794 को जो पत्र हेनरी डुंडास को लिखा उससे स्पष्ट हो जाता है कि बंगाल की पत्रकारिता किस दिशा में जा रही थी। उसने लिखा...'कलकत्ता के पत्र स्वेच्छाचारी हो गए हैं। वे इतने अधिक खतरनाक हो गए हैं कि इस देश में इसकी इजाजत नहीं दी जा सकती। विलियम ड्यैन नामक संपादक को उसने यूरोप भेजने का आदेश दिया है।' (नटराजन, 2002, पृ.-10)

प्रतिरोध की एक और बानगी भारतीय मूल के हेटली ने भी प्रस्तुत की जो मॉर्निंग पोस्ट का स्वामी-संपादक था। प्रेस नियंत्रक के रूप में अत्यंत सख्ती के बावजूद कार्यवाहक मुख्य सचिव विलियम बटरवर्थ बेली उसपर नियंत्रण में इसलिए शक्तिहीन साबित हुआ, क्योंकि तब सारे संपादक यूरोपियन होते थे और नियम-विनियम भी ऐसे लोगों को ध्यान में रखकर ही बनते थे।

भारतीय मां की कोख से भारतभूमि पर पैदा होने वाला हेटली चूंकि भारतीय था इसकारण तत्कालीन कानून उसपर लागू ही नहीं होते थे। इससे निपटने के लिए तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड हैंस्टिंग्स ने प्रेस सेंशरशिप को खत्म कर सभी संपादकों को कानून की गिरफ्त में लेने का प्रयास किया। 19 अगस्त 1818 को इस बारे में जारी दिशा-निर्देश में संपादकों को सरकार के किसी कृत्य की आलोचना से रोक दिया गया। उन्हें भारत में ब्रिटिश सत्ता की प्रतिष्ठा को धूमिल करने के प्रयास से भी रोका गया। (नटराजन, 2002, पृ.-17)

एक चिंतनशील पत्रकार-संपादक के रूप में जेम्स मिल्क बकिंघम की पत्रकारिता भी प्रतिरोध को स्वर देने वाली थी। सरकार की आलोचना पर प्रतिबंध के बावजूद सप्ताह में दो बार प्रकाशित होने वाले कलकत्ता जर्नल में बकिंघम ने साफ कहा - 'संपादक का काम है गवर्नरों को उनके कर्तव्यों की याद दिलाना, गलतियों के लिए उनकी भर्त्सना करना और असहमतिजनक सत्य भी बोलना।' भारत से निष्कासित किए जाने के बावजूद उसने यह संकल्प नहीं तोड़ा और इंग्लैंड में भी ओरिएंटल हेराल्ड नामक पत्र के जरिए भारतीय प्रशासन की पोल खोलना जारी रखा। (नटराजन, 2002, पृ.-18)

राजाराम मोहन राय की संवाद कौमुदी भी प्रतिरोध का प्रतीक थी यह बकिंघम की टिप्पणी से ही स्पष्ट हो जाता है। मात्र 13 सप्ताह के प्रकाशन के बाद संपादक भवानीचरण बंद्योपाध्याय के अलग हो जाने के कारण इसका प्रकाशन कुछ समय के लिए स्थगित हुआ तो बकिंघम ने बंगाल गजट में टिप्पणी की - वह अखबार जिसे जोखिमपूर्ण समझा जाता था और जो बारूद के ढेर में चिंगारी की तरह पूरे भारत में विस्फोट कर सकता था, सहयोग के अभाव में बंद पड़ा है। (नटराजन, 2002, पृ.-26)

इन संपादकों ने प्रतिरोध की पत्रकारिता का आदर्श स्थापित किया, जनजागरण की अलख जगाने के साथ समाज के प्रबुद्ध लोगों को भी पत्रकारिता को ओर उन्मुख किया। इससे ऐसी भावभूमि तैयार हुई कि बांग्ला और अंग्रेजी पत्रकारिता के साथ हिंदी पत्रकारिता को भी यहां पुष्पित-पल्लवित होने का अवसर मिला। पहला हिंदी अखबार उदंत मार्तंड बंगाल के कलकत्ता से ही 30 मई 1826 को छपना शुरू हुआ। अल्पावधि में ही इसने जनमानस पर अमिट छाप छोड़ी। कालांतर में अनेक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन बंगाल से शुरू हुआ।

अमृत बाजार पत्रिका बनाम प्रतिरोध की पत्रकारिता

बंगाल से प्रकाशित अमृत बाजार पत्रिका की गणना भी प्रतिरोध के प्रतिनिधि समाचार पत्र के रूप में होती है। लगभग सवा सौ साल की प्रकाशन अवधि और विशेषकर प्रारंभिक दिनों में इसने पत्रकारिता के क्षेत्र में अनेक प्रतिमान गढ़े। स्वंतंत्रता आंदोलन के प्रारंभिक दिनों में जब भारतीयों की अपेक्षा से अंग्रेजी सरकार को परिचित कराने के लिए कांग्रेस जैसी कोई प्रतिनिधि संस्था नहीं थी, जब पत्रकारिता अपने शैशव में थी और अंग्रेज भारतीयों की बात सुनने के लिए तैयार नहीं थे, अमृत बाजार पत्रिका ने भारतीय जनमानस की आवाज बनकर तमाम प्रतिबंधों और दमनकारी नीतियों के आगे खुद को मजबूती से खड़ा रखा। इसकी शुरुआत तत्कालीन बंगाल के जेसोर जिले (अब बांग्लादेश में) के एक छोटे गांव अमृत बाजार से 20 फरवरी 1868 को साप्ताहिक पत्र के रूप में हुई। स्थानीय परिस्थितियों के कारण मात्र दो साल के भीतर इसे जेसोर से कलकत्ता ले आना पड़ा और यहां भी दमन की कोशिशों के बीच इसके आद्यसंपादक शिशिर कुमार घोष और उनके भाइयों हेमंत कुमार और मोतीलाल घोष ने जिस तरह इसका संचालन किया वह उनकी अद्भुत जीवटता का प्रमाण है। बाल गंगाधर तिलक ने स्वयं कहा है कि वे शिशिर कुमार को पितातुल्य मानते थे, उनसे पुत्रवत् स्नेह पाते थे और सरकार की आलोचना करने में वे पत्रिका का अनुसरण करते थे। (देवस्थले एट आल (सं), 2021, पृ-40)

बड़े भाई बसंत कुमार की प्रेरणा से मात्र 32 रुपये की मशीन और कुछ अन्य उपकरणों तथा खुद के अध्यवसाय के बूते शिशिर कुमार और बड़े भाई हेमंत कुमार ने इनकम विभाग की नौकरी छोड़कर अमृतबाजार पत्रिका की नींव डाली और जल्द ही यह जनता में लोकप्रिय और अंग्रेजी शासन की नजरों में खटकने वाला हो गया। (नटराजन, 2002, पृ.95)। शुरू होते ही इसे पहले मानहानि और बाद में स्वामित्व के विवाद में उलझाने की कोशिश हुई।

पत्रकारिता के इतिहास में यह बात दर्ज है कि आठ माह की कवायद के बाद मुद्रक चंद्रनाथ राय को छह माह की सजा और मानहानि परक आलेख के लेखक राजाकृष्ण मित्र को एक साल की साधारण कैद की सजा हुई। शिशिर कुमार इसलिए बचे, क्योंकि यह साबित नहीं हो पाया कि वे ही पत्र के संपादक हैं। (नटराजन, 2002, पृ.96)

लोगों को जगाने की जरूरत है

पत्रिका की सोच दूरदृष्टि वाली थी। इसमें उसने विरोधों की बिल्कुल परवाह नहीं की। यह कम आश्चर्यजनक नहीं है कि जिस दौर में यूरोपियन समुदाय और अंग्रेजी प्रेस एक स्वर से प्रस्तावित आयकर कानूनों का विरोध कर रहे थे, अमृतबाजार पत्रिका ने इस कानून का समर्थन किया।

उल्लेखनीय है कि पत्रकारिता की शुरुआत के पूर्व शिशिर कुमार आयकर विभाग में काम कर चुके थे। इस बात के प्रबल पक्षधर थे कि सक्षम लोगों को अपनी आय का एक हिस्सा जनकल्याण पर खर्च करना चाहिए, लेकिन चूंकि तब बड़े जमींदार, रजवाड़े और अंग्रेज अधिकारी इस कानून की जद से बाहर थे तो स्वाभाविक था कि वे इस सुविधा को बरकरार रखना चाहते थे। इसके लिए हर मंच पर कानून का विरोध कर रहे थे। इसका प्रतिवाद अमृतबाजार पत्रिका ने बहुत बढ़चढ़ कर किया। पत्रिका इस सहूलियत को जारी रखने के खिलाफ खड़ी हो गई। उसने धनी लोगों की संपत्ति का विवरण छापना शुरू कर दिया। ऐसे लोगों में पत्रिका के पाठक भी बड़ी तादाद में थे, जिनके बारे में पत्रिका में विस्तार से छपा। इस कारण पत्रिका की पाठक संख्या में भारी गिरावट आई। शिशिर कुमार को नसीहतें दी गईं, व्यंग्य और कठोर टिप्पणियों से बचने की सलाह दी गई। कलकत्ता हाईकोर्ट के एक जज द्वारका नाथ मित्र ने संपादक शिशिर कुमार से कहा – आपके अखबार का ग्राहक हूं, लेकिन मुझे भय है कि कहीं यह जनमत पर प्रभाव डालकर उनमें असंतोष – विद्रोह की भावना न भड़का दे। शिशिर बाबू ने कहा – पत्रिका की शुरुआत ही जनता को जागरूक करने के लिए हुई है। वे जीवित से अधिक मृत हैं, उन्हें जगाने की जरूरत है। (नटराजन, 2002, पृ.–96)।

बिल के विरोध की चर्चा ब्रिटेन तक पहुंची। तत्कालीन प्रधानमंत्री ग्लैडस्टन ने पार्लियामेंट में अपने वक्तव्य में कहा – चाहे लाख विरोध हो, जनहित की बात उठाने वाला अमृत बाजार पत्रिका समर्थन कर रहा है तो हमें चिंता करने की जरूरत नहीं है। (वेफेयरर, 1946, पृ.–96)।

वर्नाकुलर प्रेस एक्ट की पृष्ठभूमि इसी से बनी

वर्नाकुलर प्रेस एक्ट लागू होने की पृष्ठभूमि भी इस अखबार से संबंध रखती है। अखबार अपनी वैचारिकी में किसी तरह के प्रतिबंध से मुक्त रहने का आकांक्षी था, जबकि तत्कालीन लेफ्टिनेंट गर्वनर सर एश्ले इडेन की नीति प्रेस को पूरी तरह वश में करने की थी। अन्य अखबार घुटने टेक चुके थे। उसने सत्ता में भागीदारी तक का प्रलोभन संपादक को दिया। शिशिर कुमार से हुई मुलाकात में साफ कहा कि हम और आप मिलकर बंगाल का राज चलाएंगे, बस आप मुझे पत्रिका में बिना दिखाए कुछ न छापिए, जरूरत होगी तो मैं संशोधन कर दूंगा, आपके नाम से स्वयं आलेख भी लिख दूंगा। शिशिर कुमार ने तमाम प्रलोभनों का जवाब यह कहकर दिया – क्या बंगाल के लेफ्टिनेंट गवर्नर महोदय इतना भी नहीं चाहते कि पूरे भारत में कम से कम एक अखबार निष्पक्ष रहे? यह प्रतिरोध का स्वर ही था। इडेन आगबबूला हो गया। उसने पत्रिका का प्रकाशन बंद कराने के साथ छह माह के अंदर कलकत्ता से रवाना कर देने की धमकी दी। शिशिर कुमार ने प्रतिवाद किया – आप बंगाल के मालिक हैं, जो चाहें कर सकते हैं, लेकिन यह न भूलें कि कलकत्ता से निकाले जाने पर मैं भूखों न मर जाऊंगा। जेसोर जाकर खेती ही कर लूंगा, चलता हूं। (वेफेयरर, 1946, पृ.–58)

इसके बाद अंग्रेजी सरकार अमृत बाजार पत्रिका और इसके संपादक शिशिर कुमार के शुभचिंतकों पर सख्त हो गई। इसी पृष्ठभूमि में 14 मार्च 1878 को कुछ अंग्रेजी अखबारों में यह खबर प्रकाशित हुई कि देसी अखबारों पर नियंत्रण के लिए नया कानून आने वाला है और बहुत संभव है यह पारित भी हो जाए। अमृत बाजार पत्रिका तब बंगाली और अंग्रेजी में छपने के कारण इस कानून के दायरे में आ रहा था। भाई मोतीलाल घोष को शिशिर बाबू ने काउंसिल में दर्शक के रूप में जाने को कहा। उसी बैठक बैठक में यह कानून पारित हो गया।

इसी को वर्नाकुलर प्रेस एक्ट कहा गया, जो मुख्यत: अमृत बाजार पर शिकंजे की नीयत से लाया गया था। लेकिन शिशिर कुमार तेज निकले। एक्ट 14 मार्च 1878 को पारित हुआ। उस दिन तो यह द्विभाषी पत्र की तरह छपा किंतु अगले अंक (21 मार्च 1878) तक यह पूरी तरह अंग्रेजी साप्ताहिक में तब्दील हो चुका था। शिशिर कुमार घोष के जीवनी लेखक के शब्दों में, अनाड़ी बंगाली पत्रकार ने बंगाल के लेफ्टिनेंट गवर्नर जैसे अनुभवी को एक झटके में पछाड़ दिया था। (वेफेयरर, 1946, पृ.59)।

घरेलू मोर्चे पर भी जूझना पड़ा

जनहित के मुद्दे पर पत्रिका ने न केवल अंग्रेजी सरकार से लड़ाई लड़ी, उसे घरेलू मोर्चे और बंगाल के एंग्लो इंडियन समुदाय से भी जबरदस्त जूझना पड़ा। मल्हार राव के निर्वासन का मामला फंसा तो बंगाल के प्रतिष्ठित अखबार द हिंदू पैट्रियट ने लार्ड नार्थब्रुक का पक्ष लिया। साफ कहा कि नार्थब्रुक्स जैसे सक्षम अधिकारी की सेवाओं के बदले कई-कई मल्हार राव की कुर्बानी हमें मंजूर है। इसके प्रतिवाद में पत्रिका ने पैट्रियट्स पैट्रियटिज्म (पैट्रियट की देशभक्ति) नाम से संपादकीय लिखकर पैट्रियट के विचारों की भर्त्सना की। इसके बाद पैट्रियट इंडियन रिफार्मर जैसे अन्य भारतीय पत्रों के निशाने पर भी आया। (वेफेयरर, 1946, पृ.60-61)

कई उपलब्धियां 'पत्रिका' के नाम

डाकघरों में तब वरिष्ठ पदों पर भारतीयों की नियुक्ति नहीं की जाती थी। अमृत बाजार पत्रिका ने इसके विरोध में खूब आवाज बुलंद की, शुरू में पत्रिका को अनसुना किया गया, लेकिन बाद में सरकार इसके लिए राजी हुई। यह प्रमुख पदों पर भारतीयों को नियुक्त किए जाने के मामले में पत्रिका की पहल की बड़ी जीत थी। (वेफेयरर, 1946, पृ. 75)

जब कांग्रेस जैसी संस्था नहीं थी, जब लोगों में राजनीतिक चेतना का अभाव था तब इंडियन लीग की स्थापना करने, लोकल सेल्फ रूल की वकालत करने, कलकत्ता म्युनिसिपैलिटी में प्रत्यक्ष निर्वाचन प्रणाली की स्थापना के लिए लगातार और निर्णायक आंदोलन में भी अमृत बाजार पत्रिका की बड़ी भूमिका रही। जब प्रत्यक्ष निर्वाचन से जनप्रतिनिधियों के चयन जैसी स्थितियां भारत में नहीं थीं, तब अमृत बाजार पत्रिका के संपादक शिशिर कुमार ने इसके लिए लगातार आंदोलन चलाया। इसके लाभ गिनाए।

'द म्युनिसिपल रिफार्मेशन' नाम के अपने संपादकीय में 16 अप्रैल 1875 को उन्होंने लिखा था -

राजनीतिक आजादी के नजरिए से यह जरूरी है कि सत्ता का विकेंद्रीकरण हो। हम अभी हर बात के लिए ब्रिटिश सरकार का मुंह जोहते हैं। विधवा विवाह की मान्यता हो, बहुविवाह पर रोक लगे, साहित्य से अश्लीलता खत्म हो....सरकार से ये मांगे ठीक हैं, लेकिन क्या यह सरकार ही करेगी? हमारी बेटियां जिंदगी भर वैधव्य ढोती रहें या वे फिर विवाह बंधन में बंधकर परिवार की धुरी बनें, क्या यह सरकार के हिस्से छोड़ने वाली बात है? हमारे घरों में शांति और हमारी व्यावसायिक उन्नति के लिए भी क्या सरकार ही जवाबदेह हो? यह हमारी जवाबदेही है...। (वेफेयरर, 1946, पृ-40)

कलकत्ता के ऐतिहासिक म्युनिसिपल बिल के पारित होने में तीन लोगों की सबसे ज्यादा भूमिका रही उसमें कालिया मोहन दास और रासबिहारी घोष के साथ शिशिर कुमार का नाम भी आदर से लिया जाता है। 4 मार्च 1876 को यह बिल बहस के लिए लाया गया और 25 मार्च को पारित हुआ। अमृतबाजार पत्रिका ने 50 हजार लोगों के हस्ताक्षर वाला ज्ञापन इसके समर्थन में जुटाया था। यह एक तरह से भारत में लोकतंत्रात्मक निर्वाचन प्रणाली की शुरुआत कहा जा सकता है। इंडियन लीग की स्थापना और इसके लिए सदस्यता शुल्क जैसे दूरगामी प्रभाव वाली परंपरा की शुरुआत शिशिर बाबू ने की। संगठनों के लिए चंदे की शुरुआत यही से हुई। 13 मार्च 1886 को झिकरगाछा में हुई मीटिंग आमजनता में पत्रिका की पहुंच और उसके संपादक शिशिर कुमार की राजनीतिक दूरदर्शिता और स्वीकार्यता की मिसाल मानी गई। (वेफेयरर, 1946, पृ. 72)

History of Political Thought के लेखक बिमान बिहारी मजुमदार और A Short History of British commonwealth के लेखक प्रो.रैमसे मूर ने भारतीय राष्ट्रीय राजनीति में शिशिर कुमार के अवदानों का उल्लेख करते

हुए उन्हें राजनीतिक दूरदर्शिता से परिपूर्ण बताया है। (वेफेयरर्स, 1946, पृ. 73)

खोजी पत्रकारिता की अद्भुत मिसाल

खोजी पत्रकारिता के क्षेत्र में अमृत बाजार पत्रिका का योगदान भी याद करने लायक है। मध्य भारत के अंग्रेज एजेंट सर लिपेल ग्रिफिन तथा भोपाल की बेगम के बीच के पत्रव्यवहार के प्रकाशन तथा रीवा के राजकुमार की पढ़ाई के मुद्दे पर वहां की महारानी पर ग्रिफिन के दबाब के मुद्दे को अमृत बाजार पत्रिका ने बहुत प्रमुखता दी। तब वायसराय डफरिन को रीवा जाकर मामला सुलझाना पड़ा। भोपाल रियासत की तत्कालीन बेगम के संदर्भ में अंग्रेज एजेंट लिपेल का पत्र अमृत बाजार पत्रिका में छपा तो लिपेल को त्यागपत्र देना पड़ गया। (नटराजन, 2002, पृ.144)

गिलगिट को कश्मीर से अलग कर सीधे अंग्रेजी शासन के अधीन करने के प्रश्न पर हुए विवाद में भी अमृत बाजार पत्रिका ने बड़ी हिम्मत दिखाई। इस प्रकरण के कारण ही लार्ड डफरिन की विदाई हुई और लैंसडाउन वायसराय बने। महाराजा प्रताप सिंह के निर्वासन और गिलगिट को कश्मीर से अलग करने के प्रस्ताव से जुड़ा वह दस्तावेज अपनी टिप्पणी सहित विस्तार से छाप दी जो तत्कालीन विदेश सचिव एचएम डूरंड ने तत्कालीन वायसराय को लिखी थी। यह चिट्ठी और अन्य दस्तावेज गवर्नर जनरल के टेबल के पास की डस्टबिन से हासिल किए गए थे। ये वही डूरंड हैं जिन्होंने अफगानिस्तान और तत्कालीन भारत की सीमा निर्धारित की थी और जिसे आज भी डूरंड लाइन ही कहा जाता है। यह प्रकरण तीन अक्टूबर 1889 को पत्रिका में प्रमुखता से प्रकाशित हुआ और सप्ताह भर के अंदर ही 9 अक्टूबर 1889 को अखबारों को एक अध्यादेश के जरिए गोपनीय सूचनाओं के प्रकाशन से रोक दिया गया। यही अध्यादेश आफिसियल सेक्रेट एक्ट और इंडियन प्रेस एक्ट-1910 की पृष्ठभूमि बना। (वेफेयरर, 1946, पृ-65)

बंकिम चंद्र का मानस परिवर्तन भी हुआ

आनंद मठ के यशस्वी लेखक बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय शुरुआती दिनों में डिप्टी मजिस्ट्रेट और अंग्रेजी सरकार के प्रशंसक थे। 1872-75 के दौरान एक ओर जहां अमृत बाजार पत्रिका और इसके संपादक शिशिर कुमार स्थानीय स्वशासन के पक्ष में अभियान चलाते हुए हर जिले में डिस्ट्रिक्ट एसोसिएशन की स्थापना में जुटे थे, बंकिम बाबू इसका यह कहकर विरोध कर रहे थे कि स्थानीय लोग जब तक सक्षम न हो जाएं, तब तक ऐसा प्रयास केवल विद्रोह को ही जन्म देगा। शिशिर कुमार समझ गए कि बंकिंम चंद्र का मानस परिवर्तन करना होगा। बंगाल के तत्कालीन ख्यातिलब्ध साहित्यकार अशोक चंद्र सरकार के प्रभाव का इस्तेमाल उन्होंने बंकिम बाबू को मनाने में किया और वह दिन भी आया जब बंगाल की दो महान हस्तियां एक साथ एक मंच पर आईं। बहरामपुर में एसोसिएशन का गठन दोनों की उपस्थिति में हुआ। (वेफेयरर, 1946, पृ.-45) बंकिम बाबू ने कालांतर में आनंद मठ की रचना भी की और यह इस मानस परिवर्तन के बिना संभव नहीं था।

विश्वसनीयता की मिसाल

तथ्यपरक सूचना के प्रति अमृत बाजार पत्रिका का आग्रह भी उसे अन्य अखबारों से अलग करने वाला रहा। कस्बों में और जिला मुख्यालयों पर रिपोर्टर रखने की शुरुआत अमृत बाजार पत्रिका ने ही की थी।

बिहार में अकाल जैसी स्थिति आने पर जब बाकी अखबार अकाल पर लंबे-लंबे लेख लिखने लगे तत्कालीन वायसराय लार्ड नार्थब्रुक ने बंगाल के लेफ्टिनेट गवर्नर सर जार्ज को तत्काल ध्यान देने को कहा। अंग्रेजी सरकार ने राहत की घोषणा की, लेकिन इसी बीच हेमंत कुमार ने बतौर संवाददाता बिहार दौरे पर जाकर वहां से बताया कि यह अकाल नहीं है, व्यापारियों की जमाखोरी और अन्य कारणों से उत्पन्न स्थिति है। इस रिपोर्ट को पहले तो अंग्रेजी प्रशासन ने नजरअंदाज किया, लेकिन बाद में इसकी पुष्टि होने पर अकाल के नाम पर हुए खर्चे को अपव्यय बताते हुए बड़ा प्रशासनिक फेरबदल भी हुआ। अकाल की पुष्टि करना आसान था लेकिन पत्रिका ने इसकी जगह तथ्यपरक पत्रकारिता की मिसाल कायम की। (वेफेयरर, 1946, पृ.-70)

1890-91 में शारीरिक संबंध के लिए सहमति की आयुसीमा के संदर्भ में प्रस्तावित कानून पर जब बावेला मचा तो अमृत बाजार पत्रिका ने विरोध का झंडा बुलंद कर

दिया। बालगंगाधर तिलक भी मुखर विरोध में थे, लेकिन तिलक ने इस प्रकरण में पत्रिका के संपादक शिशिर कुमार के योगदान को याद करते कहा था कि सरकार की आलोचना हमने पत्रिका और इसके संपादक शिशिर बाबू से ही सीखी। (वेफेयरर, 1946, पृ.-60)

शिशिर कुमार का निधन 1910 में हुआ। इसके बाद मोतीलाल घोष ने संपादन का दायित्व संभाला, जो प्रारंभ से ही शिशिर कुमार के दाहिने हाथ की तरह उनके साथ लगे हुए थे। 1922 में निधनपर्यंत वे संपादक रहे और पत्रिका इस दौरान भी उसी तरह प्रतिरोध की पत्रकारिता का प्रतीक बनी रही।

नील आयोग के गठन से लेकर 1917 में चंपारण सत्याग्रह और गांधीजी के चंपारण प्रवास से जुड़ी सूचनाएं देशभर में ठीक-ठीक पहुंचे इसके लिए अमृत बाजार पत्रिका ने बार-बार अपने संवाददाताओं को चंपारण भेजा, जिसका उल्लेख इस आंदोलन से सीधे तौर पर जुड़े रहे डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने भी किया है। (प्रसाद, 1998, पृ.-224)

शिशिर कुमार घोष के निधन के कुछ समय बाद उनके पुत्र तुषार कांति घोष पत्रिका के संपादक बने। 1924 से देश की आजादी और पूर्वी पाकिस्तान के गठन के दर्द से लेकर बांग्लादेश की आजादी का जश्न भी अमृत बाजार पत्रिका ने उन्हीं के नेतृत्व में मनाया। इतने लंबे समय तक संपादक रहने के कारण उन्हें ग्रांड ओल्ड मैन ऑफ इंडियन जर्नलिज्म (भारतीय पत्रकारिता का भीष्म पितामह) भी कहा जाता है।

वे अंग्रेजी में नित नए प्रयोग करते थे। चालीस के दशक में बंगाल के तत्कालीन गर्वनर ने एक दफे मुलाकात में उनसे कहा, तुषार बाबू, आपका अखबार अंग्रेजी भाषा पर कुछ ज्यादती कर रहा है, इसे रोकिए क्योंकि आपका अखबार बहुत पढ़ा जाता है। तब तुषार कांति घोष ने विनम्रता से कहा, यह देश के स्वतंत्रता आंदोलन में यह हमारा अपने तरीके का योगदान है। (सेतु, 2022)

देश विभाजन से ऐन पहले बंगाल में हुई हिंसा के विरोधस्वरूप तीन दिन तक अमृत बाजार पत्रिका का पहला पन्ना सादा रहा था। यह हिंसा के प्रति अखबार की अपनी प्रतिक्रिया और विरोध दर्ज कराने का तरीका है, इसे समझने में लोगों को समय लगा। आपातकाल के समय जब अखबारों ने अपने संपादकीय कालम रिक्त थोड़े तो स्पष्ट हुआ कि अमृत बाजार पत्रिका का विरोध कैसा, क्यों और किसके प्रति था?

आजादी के बाद भी इसकी लोकप्रियता बनी रही। 1954 में अमृत बाजार पत्रिका किसी एक स्थान से छपने वाला सबसे ज्यादा प्रसार संख्या वाल अंग्रेजी अखबार बन गया था। (बिजनेस लाइन, 2018) लेकिन वक्त के थपेड़ों ने इसपर भी असर डाला और देश में जब मुक्त बाजार और खुली अर्थ व्यवस्था की धमक आई, तब यह आर्थिक संकटों का शिकार होकर बंद हो गया। (इंडिया टुडे-1991)

राजनीतिक दूरदर्शिता भी अद्भुत थी

पत्रिका के आदि संपादक शिशिर कुमार की राजनीतिक दूरदर्शिता भी अद्भुत थी। द्विराष्ट्र सिद्धांत पर देश में जब चर्चा भी शुरू नहीं हुई थी, बंगाल के मुसलमानों में पृथकतावाद के बीजांकुरण को शिशिर कुमार ने पहचान लिया। जब न कांग्रेस थी न आजादी के बड़े नेताओं का राजनीतिक परिदृश्य में आगमन हुआ था उस वक्त 26 अक्टूबर 1882 को पत्रिका में Those Musalmans नाम से छपे संपादकीय में उन्होंने जो लिखा, उसे यहां उद्धृत करना प्रासंगिक होगा।

Those musalmans who are for special priviledge, must not forget the interest of India... Quarelling over the te&ts of Puranas or Quran is not at all a serious affair, but it is altogether a serious affair when the unthinking musalmans cry for special priviledge, the effect of which can do no good to themselves, but would be very weakening to the country. (वेफेयरर्स, 1946, पृ-69)

न्यायिक इतिहास में भी याद रखने वाला योगदान

न्याय प्रणाली में कथित सुधार और त्वरित न्याय के नाम पर कतिपय आपराधिक प्रकरणों में बिना किसी तरह के बचाव का अवसर दिए बिना सीधे सजा देने के सरकार के प्रस्ताव का जब कई प्रमुख भारतीय समर्थन कर रहे थे, तो शिशिर कुमार उन चंद लोगों में शामिल थे, जिन्होंने सरकार को ऐसा करने के खतरे बताते हुए इसे न्यायिक

प्रक्रिया का खुल्लमखुल्ला उल्लंघन बताया। शिशिर कुमार इस बात पर बहुत सख्ती से कायम रहे कि बिना सुनवाई किसी को सजा देना न्याय के नैसर्गिक सिद्धांत की अवहेलना है। अखबारों में इसके समर्थन और विरोध में खूब लेख लिखे गए, अंततः सरकार ने इस प्रस्ताव से किनारा कर लिया। (वेफेरयरर्स, 1946, पृ.- 69)

प्रसंगवश यह कानून आज भी यथावत है कि हर मामले में किसी को भी दोषी करार दिए जाने से पहले उसका पक्ष सुना जाएगा और भले चार दोषी बच जाएं किंतु एक भी निर्दोष को सजा नहीं होगी। इस प्रकार देश के न्यायिक इतिहास में भी अमृत बाजार पत्रिका और इसके संपादक का योगदान याद रखने लायक है।

निष्कर्ष :

इन तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि तत्कालीन समाज को जागृत करने में अमृत बाजार पत्रिका का विशिष्ट योगदान रहा। पत्रिका ने सामाजिक बदलाव के लिए प्रयास किए, पत्रकारिता के आदर्शों की स्थापना की, किसी भी दबाव में आए बिना निष्पक्षता को सर्वोच्च प्राथमिकता दी, ऐसे समय में जब पत्रकारिता शैशव अवस्था में थी, विश्वसनीयता को मानक बनाने में अपना अप्रतिम योगदान दिया। राजनीतिक चेतना जागृत कर लोगों को विदेशी सत्ता से मुक्त होने का मंत्र दिया, देश के अगली पीढ़ी के नेताओं को परिष्कृत करते हुए उन्हें राजनीतिक दृष्टि दी। न्यायिक प्रक्रिया में सुधार में अपनी भूमिका निभाई। अन्य अखबारों के लिए प्रेरणापुंज बनकर पत्रकारिता की दशा-दिशा तय करने का काम भी किया। अमृत बाजार पत्रिका के इन अवदानों ने स्वतंत्रता आंदोलन को धार दी। वास्तविक अर्थों में अमृत बाजार पत्रिका प्रतिरोध का अग्रदूत कहे जाने लायक है। ❑

संदर्भ सूची :

1. नटराजन, जे (2002), भारतीय पत्रकारिता का इतिहास, अनु-आर चेतनक्रांति, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली
2. प्रसाद, डॉ. राजेंद्र (1998), चंपारन में महात्मा गांधी, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद पटना (बिहार)
3. मालवीय, डॉ. सौरभ व राजपूत, डॉ. लोकेंद्र सिंह (2021), मीडिया मीमांसा अंक - जुलाई-सितंबर, 2021, Vol-15, No माखन लाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विवि, भोपाल
4. बनर्जी, रुबेन (1991), इंडिया टूडे अंग्रेजी संस्करण अंक-15 जुलाई, 1991,
5. देवस्थले, डॉ. गिरिबाला & शिवाने, डॉ. अभिजीत (2021), स्वतंत्रता टू आत्मनिर्भरता : लोकमान्य तिलक्स लिगेसी (संपादित) अध्याय- Tilak's Bengal Connect, लेखक : शिवाने व चक्रवर्ती, आईएमडीआर, पुणे आइएसबीएन- 978-81-950739-5-5
6. मजूमदार, बिमान बिहारी (1934), हिस्ट्री आफ पालिटिकल थाट, कलकत्ता विवि, वाल्यूमद्य-I (1821-84)
7. मूर, प्रो. रैम्से (1923), अ शार्ट हिस्ट्री आफ ब्रिटिश कामनवेल्थ, वर्ल्ड बुक कंपनी, हडसन, न्यूयार्क, खंड-II.
8. बेफेयरर (1946), लाइफ ऑफ शिशिश घोष, अमृत बाजार पत्रिका प्रकाशन,कलकत्ता
9. https://bloncampus.thehindubusinessline.com/columns/brand-basics/anandabazar-patrika-informing-the-masses-since-1876/article24293354.ece, retrieved on 06th of March, 2024
10. https://www.thebetterindia.com/276207/amrita-bazar-patrika-tushar-kanti-ghosh-india-freedom-struggle-history-newspaper/ retrieved on 06th of March, 2024

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

यथा-कथा

मुक्लोम आदिवासी के प्रमुख त्योहार और अनुष्ठान

रेमोन लोंग्कु

पीएच.डी शोधार्थी, हिंदी विभाग
पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय
शिलोंग, मेघालय-793022
9366268033, 9774791077
remonlongku1@gmail.com

शोध-सार :

भारत एक बहुभाषिक एवं बहुसांस्कृतिक देश है। इस देश में विभिन्न जाति तथा जनजातियाँ निवास करती हैं। भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र भी विभिन्न संस्कृति एवं इतिहास के लिए एक विशिष्ट पहचान रखता है। अरुणाचल प्रदेश पूर्वोत्तर भारत का एक ऐसा राज्य है, जहाँ छब्बीस आदिवासी समुदाय तथा सौ से अधिक उप-समुदाय निवास करते हैं। यह राज्य विभिन्न भाषाओं एवं सांस्कृतिक की दृष्टि से अत्यंत समृद्ध है। प्रत्येक समुदाय की भाषा एक दूसरे से पृथक है तथा उप-समुदाय की भाषाओं में भी विविधता दिखाई देती है। 'एथनिक कम्युनिटी ऑफ अरुणाचल प्रदेश' पुस्तक के लेखक बातेम पर्तिन ने अरुणाचल प्रदेश के आदिवासी समुदाय एवं संस्कृति के संदर्भ में कहा है – *"Arunachal Pradesh have their own festivals, songs and dances by which legacy of rich tradition has been preserved and cultural continuity maintained in the area. Some of these festivals have attained regional characters of the various festivals celebrated throughout the year, the mention may be made of the Losar festival of the Monpas, Nyokum of the Nyishis, Dree of Apatanis, Solung of the Adis, Mopin of the Galos, Reh and Tamladu of the Mishmis, Sangken of the Khamtis, Mol of the Tangsa, Loku of the Noctes and Ojiyele of the Wangchos. These festivals are in one way or other connected with some traditions. Some festivals are celebrated to mark the New Year, some to start the new crop, some to celebrate the harvest and so on. Most of the festivals are celebrated accompanied with folk dances performed either by man-folk alone or by men and women together. The dances performed by the people are varied and many. Some of these dances have by now gained popularity throughout the state. Likewise the folk-literature of the people comprising folk songs, tales, myths, proverbs and saying are also e&tensively rich and varied. Almost all the tribes have myths and legends connected with various phenomenons such as origin of the universe, creation*

of animals, the various activities and so on." [1] अर्थात् अरुणाचल प्रदेश के अपने त्योहार, गीत और नृत्य हैं, जिनके द्वारा समृद्ध परंपरा की विरासत को संरक्षित किया गया है और क्षेत्र में सांस्कृतिक निरंतरता बनाए रखी गई है। इनमें से कुछ त्योहारों ने पूरे वर्ष मनाए जाने वाले विभिन्न त्योहारों के क्षेत्रीय चरित्र को प्राप्त कर लिया है, जैसे कि मोनपा आदिवासी समुदाय का लोसर त्योहार, न्यिशी का न्योकुम, अपाटानी का ड्री, अदी का सोलुंग, गालो का मोपिन, मिश्मी का रेह और तमलाडु, खामती का सांगकेन, तांगसा का मोल, नोक्टे का चालो-लोकु और वांगचो का ओडिया। ये त्योहार किसी-न-किसी तरह से कुछ परंपराओं से जुड़े हुए हैं। कुछ त्योहार नए साल के उपलक्ष्य में मनाए जाते हैं, कुछ नई फसल की शुरुआत के लिए, कुछ फसल की कटाई का जश्न मनाने के लिए। अधिकांश त्योहार लोक नृत्यों के साथ मनाए जाते हैं, जिन्हें या तो केवल पुरुष या पुरुष और महिलाएँ मिलकर करते हैं। इन आदिवासियों द्वारा किए जाने वाले नृत्य विविध और कई हैं। इनमें से कुछ नृत्य अब पूरे राज्य में लोकप्रिय हो चुके हैं। इसी तरह लोगों का लोक-साहित्य जिसमें लोक गीत, कहानियाँ, मिथक और कहावतें शामिल हैं, वे व्यापक रूप से समृद्ध और विविधतापूर्ण हैं। लगभग सभी आदिवासियों में ब्रह्मांड की उत्पत्ति, जानवरों की रचना, विभिन्न गतिविधियों आदि जैसी विभिन्न घटनाओं से जुड़े मिथक और किंवदंतियाँ हैं।

बीज शब्द :

आदिवासी, पुरखा, मुक्लोम, मोल, लोक, रंग्फ्राह, संस्कृति।

मूल आलेख :

मुक्लोम उप-समुदाय तांग्सा समुदाय की प्रमुख उप-जनजाति में से एक है। तांग्सा आदिवासी समुदाय के अंतर्गत लोंग्चांग, मुक्लोम, तिखाक, हावी, पोंथाई, मोसांग, मोरांग, किम्सिंग, रोंरंग, जुगली, लुन्गरी, सांके, लुन्फी, शांग्वल, शांग्री, डाइमोंग, मुंगरे, लांचिंग, हाखुन, हाचेंग, चुलिम, जोंगी, थम्पांग इत्यादि उप-समुदाय शामिल हैं। तांग्सा समुदाय अरुणाचल प्रदेश के चांग्लांग का मूल-निवासी है। इस समुदाय की अपनी कोई लिपि नहीं है। वर्तमान इस पर विचार किया जा रहा है। वे मौखिक रूप से अपनी संस्कृति का बचाव-रखाव करते आ रहे हैं ।

मुक्लोम आदिवासी अपने मौखिक साहित्य में बहुत समृद्ध हैं, जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करते हैं। इससे उन्हें अपनी उत्पत्ति और प्रवासन का पता लगाने में मदद मिलती है। मुक्लोम तांग्सा चांगलांग जिले के लगभग बीस गाँवों में वितरित हैं। मुक्लोम अपने वंश को एक महान भाई और बहन द्वारा मानते हैं, जो पुरखा रान्फ्रा की कृपा से प्राकृतिक आपदा से बच गए थे। इंदिरा बरुवा मुक्लोम आदिवासी के लोक साहित्य के विषय में कहते हैं -*"The Muklom oral literature provides valuable in history of the migration and settlement of this sub-tribe. It has already been mentioned that each sub-tribe had their independent version of origin and movement. But, it has been revealed that independent account is recorded not only in the sub-tribe level but in the village level also. This has confirmed that they have migrated in different batches in different time period and established their settlement accordingly. From various interpretations, it is assumed that the Mukloms might have arrived in India in different batches, during the medieval period."* [2] अर्थात् मुक्लोम मौखिक साहित्य इस उप-समुदाय के प्रवासन और निपटान के इतिहास में मूल्यवान जानकारी प्रदान करता है। प्रत्येक उप-समुदाय की उत्पत्ति और संघर्ष का अपना स्वतंत्र संस्करण था, लेकिन यह बात सामने आई है कि स्वतंत्र खाता न केवल उप-समुदाय स्तर पर बल्कि, ग्राम स्तर पर भी दर्ज किया जाता है। इससे यह पुष्टि हो गई है कि उन्होंने अलग-अलग समय अवधि में, अलग-अलग वर्गों में प्रवास किया है और तद्नुसार अपनी बस्ती स्थापित की है। विभिन्न व्याख्याओं से यह माना जाता है कि मध्ययुगीन काल के दौरान मुक्लोम अलग-अलग समूहों में भारत आए होंगे।

मुक्लोम लोगों कहना है कि उनका मूल घर 'मोलोम सोलोम' में था, जो पूर्व में स्थित एक स्थान था। जनसंख्या

के दबाव ने अंतत: उन्हें कई दिशाओं में जाने के लिए मजबूर किया। आम तौर पर एक ही कबीले के सदस्य एक साथ चलते थे। कहा जाता है कि मुक्लोम लोग जब चांग्लांग जिला में आए थे तो उनका पहला गाँव 'लोंगशांग' था। बाद में यह एक बड़ी मुक्लोम बस्ती बन गई और धीरे-धीरे वे लोग गाँव से बाहर जाने लगे। उन्होंने आस-पास के इलाकों जैसे वाफांग, थामलोम और खिम्योंग में नई मुक्लोम बस्ती की स्थापना की। कुछ ग्रामीणों के अनुसार वे थामलोम गाँव से आए थे और बाद में जब जनसंख्या बढ़ी तो मुक्लोम लोगों ने नए गाँव बसाना शुरू कर दिया। प्रत्येक गाँव की अपनी मौखिक परंपरा होती है। मुक्लोम तांगसा के किसी निश्चित मूल स्थान को लिखित रूप में बताना बहुत कठिन है। यानमन गाँव के मुक्लोम वासियों के अनुसार अपनी उत्पत्ति साल्खोंग-को-वांग (उगते सूरज का बिंदु) से मानते हैं। मुक्लोम तांगसा भी कई बहिर्विवाही कुलों में विभाजित है।

प्रमुख त्योहार और अनुष्ठान :

रूम मोल :

यह त्योहार हर साल जून के महीने में मुक्लोम द्वारा मनाया जाता है। यह फसल कटाई से पहले का त्योहार है और कंगनी धान की कटाई से पहले मनाया जाता है। उत्सव की अवधि तीन दिन है। चावल की मदिरा को अग्रिम तैयार किया जाता है, अनुष्ठान करने के लिए सेसरी व्यवस्था की जाती है और मेहमानों तथा ग्रामीणों का मनोरंजन करते हैं। रूम मोल उत्सव के पहले दिन को लुमखट के नाम से जाना जाता है। इस उत्सव में लोग सुबह जल्दी उठते हैं और ढोल बजाते हैं ताकि इसकी तेज और गर्जना वाली आवाज पड़ोसी गाँवों तक पहुँच सके। यह ढोल बजाना सभी पड़ोसी ग्रामीणों को रूम मोल में शामिल होने के लिए एक प्रकार का निमंत्रण होता है। प्रत्येक परिवार सुबह-सुबह नाम-रोम अर्थात पत्तों की पूजा अनुष्ठान करता है। वे नम फान पौधे (ताड़ के पत्ते)

की पत्तियों में चावल रखते हैं और कुछ जाप किया जाता है। फिर इन पत्तों को वाक खुंग (सूअर पालन), वोथिल (मुर्गियों का पिंजरा), नगम वाक (शिकार किए गए जानवरों की खोपड़ी), वाक (पालतू जानवरों की खोपड़ी), कल्ल पाक (अग्नि स्थान के शीर्ष) में रख दिया जाता है। वे मेहमानों के आने से पहले यह रस्म निभाते हैं। इसके बाद रोमवा या रोमटे के घर में भी अनुष्ठान किया जाता है। रोमवा इस उत्सव के नेता हैं, जो मुक्लोम लोगों के बीच रेखुंग कबीले से होते हैं। इसके बाद सभी ढोल और संगीत वाद्ययंत्र एकत्र किए जाते हैं और समारोह के लिए उपयोग की जाने वाली प्रत्येक वस्तु में नप फान की पत्तियों को लगाया जाता है। इन अनुष्ठानों को करने के बाद पुरुष और महिलाएँ रंगीन पोशाक, टोपी, कंगन, माला और आभूषण पहनकर तैयार होते हैं। फिर सभी लोग एक जगह इकट्ठा होने के बाद औपचारिक नृत्य करना शुरू कर देते हैं। इस रस्म को निभाने से पहले किसी को भी नृत्य करने के लिए घर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होती है। वे रोमवा पुजारी के निवास से जुड़े आम सार्वजनिक मैदान में तीन चक्कर लगाते हैं। इसके बाद नृत्य दल पूरे गाँव में तीन चक्कर लगाता है। रास्ते में प्रत्येक घर के सदस्यों द्वारा नृत्य दल का आदर-सम्मान से स्वागत किया जाता है। हर जगह मोल नर्तकियों को चावल की मदिरा परोसी जाती है और गाँव के तीन चक्कर लगाने के बाद नर्तकिये रोमवा के घर वापस लौट जाते हैं। फिर प्रकृति का नाम लेकर भैंस, सूअर और मुर्गे का वध किया जाता है और मांस, मछली, चावल आदि पकाया जाता है। फिर चावल की मदिरा को मोल समूह तथा मेहमानों को परोसने के लिए तैयार किया जाता है। मोल नृत्य के पूरा होने के बाद अनुष्ठानिक अतिथियों का मनोरंजन किया जाता है। फिर ढोल को रोमवा के घर ले जाया जाता है और पुरुष नर्तक एक घेरा बनाते हैं। फिर वे सार्वजनिक मैदान में तीन चक्कर लगाते हैं। इसके साथ ही औपचारिक भाग समाप्त हो जाता है और आम जनता नृत्य में भाग ले सकती है। युवा लड़के ढोल समूह बनाते हैं, जो दिन और रात भर वृत्त और अर्ध वृत्त में नृत्य कर सकें। बुजुर्ग व्यक्ति, लड़कियाँ, महिलाएँ और आगंतुक रुनवा का निर्माण करते हैं, जो गीतों के साथ होता है। वे आम तौर पर वे गीत गाते हैं, जो उनके पारंपरिक सांस्कृतिक मानदंडों, महिमा और पौराणिक कथाओं को दर्शाते हैं, जो उनके समुदाय की उत्पत्ति को दर्शाते हैं। नृत्य-संगीत और सांस्कृतिक प्रदर्शन तीन दिनों के लिए जारी होता है। त्योहार के आखिरी दिन ग्रामीण एक साथ इकट्ठे होते हैं और त्योहार के चौथे दिन कंगनी की कटाई की तारीख तय करते हैं। फिर आमतौर पर 14 से 15 दिनों के बाद ग्रामीण पूरा आराम करते हैं और आमतौर पर कोई काम नहीं करते। इस प्रकार त्योहार समाप्त हो जाता है।

रोंगहून :

मुक्लोम द्वारा रोंगहून जुलाई-अगस्त में मनाया जाता है, जब बाजरा/चावल की फसल की कटाई खत्म हो जाती है और अनाज का भंडार घर लाया जाता है। यह त्योहार हर साल भरपूर फसल होने पर मनाया जाता है। यदि कोई गाँव अकाल, सूखे की चपेट में है और फसल की पैदावार बहुत कम या शून्य है, तो लोग इस त्योहार को मनाना पसंद नहीं करते हैं। यह त्योहार चमटुक नामक त्योहार का पर्याय है और इसलिए जिन गाँवों में चमटुक को अलग से पूर्ण त्योहार के रूप में मनाया जाता है, उन गाँवों में रोंगहून नहीं मनाया जाता है। लेकिन कभी-कभी रोंगहून के त्योहार को चमटुक के साथ जोड़ दिया जाता है। जैसे ही रोंगहून की तारीखें ग्राम परिषद द्वारा तय की जाती हैं, चावल की मदिरा बड़े पैमाने पर तैयार की जाती है। त्योहार के पहले दिन प्रत्येक परिवार/घर से समुदाय के सदस्य नप फान की पत्तियाँ इकट्ठा करने के लिए जंगल जाते हैं। वे झाड़ू बनाने के लिए सुपशांग (कंटीली झाड़ियाँ) भी इकट्ठा करते हैं। इसी झाड़ू से वे घर की सफाई करते हैं और फिर उसे बाहर फेंक देते हैं और दोबारा इस्तेमाल नहीं करते। इन चीजों को इकट्ठा करने के लिए जंगल की ओर जाने से पहले वे गाँव के एक चुने हुए घर में ढोल बजाना शुरू कर करते हैं। जंगल से लौटकर फिर से उस खास घर पर ही ढोल बजाने की कोशिश करते हैं। सभी लोग एकत्रित झपकी-पत्ती को अपने घर के खुटा (खंभे) में बांधते हैं। उस दिन शाम को प्रत्येक परिवार द्वारा हाल ही में काटी गई बाजरा या चावल की फसल को घर ले आया जाता है,

जो घर में आर्थिक धन्य के आगमन का प्रतीक होता है। आमतौर पर वे दोपहर 3 बजे से ढोल बजाना शुरू कर देते हैं। इस त्योहार में व्यक्तिगत पारिवारिक स्तर पर जानवरों का वध नहीं किया जाता है। सामुदायिक स्तर पर प्रार्थना के लिए निर्धारित स्थान पर जानवरों का वध किया जाता है। यह अनुष्ठान पुजारियों के मार्गदर्शन में किया जाता है। आमतौर पर इस अवसर पर गाय, भैंस और सूअर का वध किया जाता है। इस अवसर पर मांस की कमी न हो, इसके लिए जानवरों के वध की संख्या 4-5 तक हो सकती है। प्रकृति से आशीर्वाद पाने के लिए चावल और नप फान पौधे की पत्तियों का उपयोग करके अनुष्ठान किए जाते हैं। जानवरों के वध करने के बाद मांस को सभी के बीच समान रूप से वितरित किया जाता है। मेहमानों का स्वागत मांस, चावल, चावल की मदिरा आदि से किया जाता है। इस प्रकार यह उत्सव रात के समय समाप्ता हो जाता है ।

चमटुक :

चमटुक मुक्लोम लोगों का एक कृषि त्योहार है। यह त्योहार साल में दो बार मनाया जाता है। पहली बार यह बाजरा फसलों की कटाई से पहले जून के महीने में मनाया जाता है, और दूसरी बार यह झूम धान की फसल की कटाई से पहले अक्टूबर में मनाया जाता है। इस त्योहार का उद्देश्य पुरखों और प्रकृति के प्रति आभार व्यक्त करना होता है। जैसे ही चमटुक उत्सव की तारीख तय होते हैं, वे भारी मात्रा में चावल की मदिरा तैयार करना शुरू करते हैं। पहले दिन वे सुबह जल्दी उठते हैं और विभिन्न फसलों की पत्तियाँ इकट्ठा करते हैं, जो पककर कटाई के लिए तैयार हो जाती हैं और घर ले आती हैं। इन पत्तों को चिखुक (टोकरी) में रखा जाता है। इस समय परिवार का मुखिया समारोहपूर्वक पके हुए चावल घर के बाहर/आँगन में फैलाता है और प्रकृति तथा पुरखों से परिवार को आशीर्वाद देने के लिए शांति, समृद्धि, खुशी और अच्छा स्वास्थ्य सुनिश्चित करने के लिए प्राथना करते है। यह समारोह गाँव के सबसे ऊँचे स्थान पर किया जाता है। मांस के लिए जानवरों का वध करते समय समुदाय के कुछ वृद्ध व्यक्ति कुछ जाप करते हैं। इन मांस को ग्रामीणों द्वारा चावल की मदिरा के साथ पकाया जाता है और इसे गाँव में सामुदायिक दावत के रूप में व्यवस्थित किया जाता है। जानवर के सिर को गाँव के सबसे ऊँचे स्थान पर एक खंभे या पेड़ पर लटका दिया जाता है, जिसे मनरुंग बंग पेड़ कहा जाता है। खंभे पर रखने से पहले इस सिर को ठुड्डी, दाँत और छोटे अंगों को अलग कर गाँव के सबसे निचले स्थान पर रख दिया जाता है। इन्हें मनरुंग बंग पेड़ के एक खंभे पर बांधा जाता है। इस प्रकार सामुदायिक भोज और अनुष्ठानों के साथ यह त्योहार समाप्त हो जाता है।

थाल मोल :

यह भी एक त्योहार का नाम है, जो मुक्लोम द्वारा हर साल अप्रैल-जून के बीच तीन दिनों तक मनाया जाता है। इस त्योहार में किसी भी जानवर का वध नहीं किया जाता। गीत और नृत्य 3 दिनों तक जारी रहते हैं। यात्राओं का आदान-प्रदान होता है और त्योहार को पारंपरिक गीतों और नृत्यों के साथ मनाया जाता है, जो इस अवसर को चिन्हित करते हैं। तीसरे दिन भाई अपनी विवाहिता बहन के घर पूजा करने जाते हैं। वे अपने भतीजे के बाएँ हाथ में रेमी पेड़ की छाल का धागा और अपनी भतीजी के बाएँ हाथ में रिबेन पेड़ की छाल का धागा बांधते हैं। लेकिन आज रिबेन पेड़ की कमी के कारण लड़के और लड़कियाँ दोनों हाथ बांधने के लिए रेमी पेड़ की छाल का उपयोग करते हैं।

धागा बांधने के बाद मामा भाँजे/भाँजी के अच्छे स्वास्थ्य के लिए चूंखो (एक प्रकार का मसाला) चबाते हैं और उनके बाएँ हाथ में फूँक देते हैं। इस अनुष्ठान के पूरा होने के बाद वे चौथे दिन छुट्टी के रूप में आराम करते हैं। पाँचवें दिन सभी ग्रामीण दावत मनाने के लिए ढेर सारा चावल की मदिरा, चावल आदि लेकर नदी तट पर जाते हैं। फिर नदी से मछली पकड़ना शुरू करते हैं और पर्याप्त मछलियाँ एकत्र कर ली जाती हैं। इन मछलियों को ग्रामीणों द्वारा सामुदायिक दावत के रूप में चावल के साथ पकाया जाता है। खाना पकाने के पूरा होने के बाद वे साथी सदस्यों के साथ वहीं पर कुछ खाना और मछलियाँ खाते हैं। जबकि भोजन और मछलियों का एक हिस्सा

इस विश्वास के साथ नदी में छोड़ दिया जाता है ताकि नदी का अदृश्य मालिक या प्रकृति को ऐसा न लगे कि उसे बिना दिए ही वे अकेले उत्सव के नाम पर खाए जा रहे हैं। इस प्रकार उत्सव का औपचारिक समापन हो जाता है।

कू-मोल :

कू-मोल फसल का त्योहार है। यह हर साल अप्रैल से जून के महीने में धान की कटाई और नई खेती वाली झूम भूमि में धान बोने के लिए मनाया जाता है। यह तब मनाया जाता है, जब धान लगभग पक जाता है। यह त्योहार नए काटे गए धान को समारोहपूर्वक खाने और नए साल का स्वागत करने के लिए मनाााया जाता है। यह पौधों से कीटों को दूर रखने और प्रकृति को प्रसन्न करने के लिए मनाया जाता है, जो भरपूर मात्रा में फसल प्राप्त करने के लिए भूमि नियंत्रित हो सके। यह सुख और दुख दोनों का त्योहार है, क्योंकि इस त्योहार के दौरान स्वस्थ जीवन, समृद्धि, धन और घरेलू पशुओं की वृद्धि के लिए पुरखों और प्रकृति को प्रसन्न करने के लिए सूअर/भैंस का वध किया जाता है। दूसरी ओर, यह दुख का त्योहार इसलिए है, क्योंकि यह प्रत्येक दुखी परिवार द्वारा पिछले वर्ष दिवंगत आत्मा को अंतिम भोजन देने के लिए मनाया जाता है। यह उत्सव शुरू होने से तीन दिन पहले ही पूरी प्रक्रिया पूरी करनी होती है।

निष्कर्ष :

धार्मिक मान्यताओं और प्रथाओं के संक्षिप्त विवरण से यह स्पष्ट पता चलता है कि तांग्सा समग्र रूप से अपनी पारंपरिक धार्मिक मान्यताओं और प्रथाओं में विश्वास रखते हैं। उनके अधिकांश अनुष्ठान और प्रथाएँ कृषि पद्धतियों पर केंद्रित हैं। उनके अधिकांश पारंपरिक धार्मिक समारोहों में पशु वध को अनिवार्य माना जाता है। विभिन्न अनुष्ठानों और समारोहों का दर्शन पूरे तांग्सा में समान है, फिर भी धार्मिक अनुष्ठानों तथा समारोहों को करने के नामकरण और प्रक्रिया दोनों में थोड़ा अंतर देखा जाता है। वर्तमान उप-समुदाय स्तर पर संचार और संपर्क के विकास के साथ-साथ त्योहारों और समारोहों को बड़े पैमाने पर मिल जुलकर मनाने की प्रवृत्ति बढ़ रही है ।

आज भूमंडलीकारण और बाजारवाद का प्रभाव आदिवासी समाज और संस्कृति पर इतनी तेजी से अतिक्रमण कर रहा है कि समस्त आदिवासी समुदाय की लोक-संस्कृति पर खतरा मंडरा रहा है। जब किसी समुदाय या जाति की लोक-संस्कृति विलुप्त होती है तो अस्मिता और अस्तित्व का भी विलुप्त होना पूर्णतः तय है। ऐसे में आदिवासी समाज को अपनी अस्मिता और अस्तित्व को संरक्षित करने के लिए भूमंडलीकरण और बाजारवाद के अतिक्रमण को समझना होगा तथा संस्कृति के बचाव के प्रति जागरूक होने की अति आवश्यकता है। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. Pertin, Batem, Ethnic community of Arunachal Pradesh, Directorate of Research Government of Arunachal Pradesh, Itanagar, Arunachal Pradesh, 2014 year, page -7
2. Indira barua, 2021 Year, *'The Tangsa's of Arunachal Pradesh: A socio demographic profile'*, concept publishing company pvt. Ltd-Delhi, P - 23
3. Dhaar, bibhash, coomar, palash Chandra, *'Tribes of Arunachal Pradesh'*, Abhijit publications, new delhi, 2016 year.
4. Dutta, parul, *'The Tangsa's'*, G.M.Printers and publishers Ganga market itanager, Arunachal Pradesh, 2010 year.
5. GRIERSON, G.A, *'LINGUISTIC SURVEY OF INDIA - VOLUMN III'*, Calcutta supritendent government printing india, west Bengal, 1919 year.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विश्लेषण

असमिया उपन्यास 'जीवनर बाटत' में प्रतिफलित सामाजिक मूल्यों का टकराव : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. संजय भट्टाचार्य

एसोसिएट प्रोफेसर, बांग्ला विभाग
गुवाहाटी विश्वविद्यालय
गुवाहाटी, असम-781014
9508622280
brjsanjay24x7@gmail.com

डॉ. जाह्नवी दास भट्टाचार्य

सहायक प्रोफेसर, बांग्ला विभाग
लुमडिंग कॉलेज-782447
8638493462
dbjjahnabi@gmail.com

भूमिका :

बीसवीं सदी में चालीस के दशक के बाद असमिया उपन्यास के क्षेत्र में अत्यधिक विविधता दिखाई पड़ती है। उपन्यास के विकास पर पश्चिमी साहित्य का प्रभाव भी दिखाई देने लगा। बीना बरुवा की (बिरिंची कुमार बरुवा का छद्म नाम) 'जीवनर बाटत' (जीवन के पथ पर) उस काल की एक उल्लेखनीय कृति है। हालाँकि यह एक पारंपरिक उपन्यास है, लेकिन इसकी बनावट, विषय-वस्तु और शैली में नवीनता के साथ-साथ विविधता भी है। यह उपन्यास अव्वल दर्जे का सामाजिक उपन्यास होने के साथ-साथ उस उथल-पुथल भरे समय की उपज भी है, जिसमें यह लिखा गया था। उस समय कथा साहित्य के लेखकों ने समाज की उपेक्षित जनता पर अपनी नजरें गड़ानी कर दी थीं और उनके लेखन में उनके अनूठे सामाजिक मूल्य का आकलन करने की स्पष्ट प्रवृत्ति दिखाई देने लगी थी। 1944 में लिखा गया उपन्यास जीवनर बाटत भी असम के ग्रामीण जीवन पर आधारित एक ऐसा ही उपन्यास है।[1]

उद्देश्य :

इस शोध पत्र का उद्देश्य पुरानी परंपरा और आधुनिकता के आपसी द्वंद्व के अलावा ग्रामीण मानसिकता और शहरी मध्यम वर्गीय मानसिकता के बीच अंतर बताना है।

पद्धति :

इस शोध पत्र के प्रस्तुतिकरण में मुख्यत: विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण का पालन किया गया है।

मूल विषय-वस्तु :

आधुनिक असमिया सामाजिक उपन्यास के विकास का कुछ श्रेय अगर बिरंची कुमार बरुवा को दिया जाए तो गलत नहीं होगा। एक विद्वान आलोचकों के शब्दों में, ''बिरिंची कुमार बरुवा ने असमिया सामाजिक उपन्यास को एक दिलचस्प, आनंददायक रूप में स्थापित किया है - उपन्यास अपने विषय-वस्तु की कलात्मक

प्रस्तुति के लिए विशेष रूप से उल्लेखनीय है, पात्रों को उनके बाहरी और साथ ही आंतरिक क्षेत्रों की क्रियाओं और प्रतिक्रियाओं पर संकेत के साथ कुशलतापूर्वक चित्रित किया गया है।'' [2] इसके विवरण और कथन की आवश्यकता के अनुसार नियोजित भाषा का रूपक और प्रतीकात्मक मोड़ इस उपन्यास को और आकर्षक बनाते हैं। जीवनर बाटत उपन्यास का कथानक असमिया ग्रामीण समाज पर आधारित है। इसमें एक असमिया युवा महिला, तगर के जीवन की हृदय विदारक कहानी को दर्शाया गया है। कहानी शुरू में ऊपरी असम के गोलाघाट शहर के पास मरांगी मौजा के मरांगी गाँव में स्थापित की गई है। फिर, कहानी की प्रगति के साथ यह मध्य असम के रोहा में स्थानांतरित हो जाती है। गाँव की यह सरल, प्यारी महिला तगर अपनी सहेली आईदेउ, जो कृष्ण दत्त की बहन है, के विवाह समारोह में कमलाकांत से मिलती है। उसके बाद धीरे-धीरे दोनोंके बीच घनिष्ठता और फिर एक प्रकार का प्रेम पैदा होता है। यह विकास बिल्कुल स्वाभाविक था- यह न तो अचानक था और न ही अप्रत्याशित। उपन्यासकार ने दो प्रेमियों के दिलों में प्रेम की कामुक भावनाओं के अंकुरण को बहुत ही कुशलता से चित्रित किया है। हालाँकि, यह सब तगर के लिए हताशा में समाप्त होता है, क्योंकि उपन्यास की प्रगति के साथ कमलाकांत कस्बों में पनप रहे नए, उभरते वाणिज्यिक वर्ग के लोकाचार और जीवन शैली का पूरी तरह से प्रतिनिधित्व करते हुए स्वार्थी हो जाता है और बहुत आसानी से भूल जाता है। [3]

तगर, जो गाँव की नारी है, उसका जन्म और पालन-पोषण एक पारंपरिक असमिया गाँव में हुआ था, जहाँ के सभी निवासी सहज और ईमानदार थे और अपने धर्म और धर्मग्रंथों में दृढ़ विश्वास रखते थे। फिर भी आने वाली व्यावसायिक संस्कृति से अप्रभावित और भ्रष्ट नहीं थे, जो शहरी केंद्र में यहाँ-वहाँ फल-फूल रहे थे। वह अनिवार्य रूप से उस समय के शहरी जीवन के भ्रष्टाचार और कृत्रिमता से दूर अपने दूर-दराज के गाँव के माहौल में बंधी हुई थी। उसमें एक स्वाभाविक मासूमियत है, जो उसकी देहाती सादगी और संयम को जोड़ती है। उपन्यास की शुरुआत में, बातचीत के बीच में, जब नुमाली मजाकिया ढंग से तगर के वैवाहिक इरादों का संकेत देता है और साथ ही समारोह में कृष्ण दत्त के कॉलेज मित्र के आने की संभावना की घोषणा करता है तो तगर संकेत को समझकर नुमाली के बालों की लटें मस्ती से पकड़ लेती है। वह जो लोक कविता कहती है, वह उसके जीवन में आने वाले दुखद परिणामों का संकेत देती है। कमलाकांत का गाँव में आगमन और तगर के साथ उसकी मुलाकात, एक प्रतीकात्मक स्तर पर, आधुनिक तरीकों और दृष्टिकोणों का आगमन और पारंपरिक लोगों के साथ उसका टकराव है। प्रेम प्रसंग का दुखद अंत होगा, कम-से-कम तगर के लिए, कहानी की शुरुआत में इसके पर्याप्त संकेत दिए गए हैं। तगर और कमलाकांत एक-दूसरे से टकराते हैं, जबकि वह शहर से आए मेहमानों के मनोरंजन में व्यस्त था। घटना में तगर के माथे पर चोट लगी। यह ग्रामीण असमिया जीवन के मूल में गहराई तक जड़ें जमा चुकी परंपरा की विरोधी ताकतों और विश्व युद्ध के बाद की अवधि में असम में जीवन की शहरी धारा को प्रभावित करने वाली पश्चिम की आगामी आधुनिकता के बीच संघर्ष की पहली भौतिक अभिव्यक्ति है। [4]

निःसंदेह लेखक का उद्देश्य सामाजिक परिवर्तन नहीं है। उपन्यास में तगर के जीवन की विफलता परिवार के संघर्ष का प्रतिबिंब है। लेकिन इस पीड़ा की जड़ में मनुष्य का धोखा या हृदयहीनता है। कमलाकांत दुष्ट या क्रूर नहीं है। जमीन हाकीम होकर भी गरीबों पर दयालु है। लेकिन निम्न मध्यम वर्ग की उच्च आकांक्षाएँ उसे अंधा बना देती हैं, भौतिक सुधार की आशा उसको मंत्रमुग्ध कर देती है और जीवन के अंतिम मूल्य के प्रति अविश्वासी बना देती है।

ऐसे घटनाएँ उपन्यास में और भी हैं, जो परंपरा और

आधुनिकता के बीच विरोध की ओर इशारा करती हैं।[5] उदाहरण के लिए-उपन्यास के शुरुआत में कृष्ण दत्त अपने मित्र कमलाकांत के साथ बैलगाड़ी में बैठकर अपने पैतृक गाँव पहुँचता है। माघ की सर्दियों के महीने में सुबह के समय उसकी मुलाकात अपने बचपन के करीबी दोस्त महेंद्र से होती है, जो हरिबापू की दुकान के सामने बैठा है। महेंद्र यह तय नहीं कर पा रहा है कि वह कृष्ण दत्त के कॉलेज मित्र को कैसे संबोधित करे और असमंजस में कृष्ण दत्त से पूछता है- 'शादी के लिए?' कृष्ण दत्त भी अपने बचपन के दोस्त के साथ खुलकर व्यवहार करने में असफल रहता है और बहुत संक्षिप्त उत्तर देकर झिझकता हुआ चला जाता है - 'हाँ'.... । कृष्ण दत्त को स्वयं अपनी कमजोरी का एहसास होता है और वह तुरंत इसके लिए खुद को और अपनी तथाकथित शिक्षा की निंदा करता है।[6]

तगर उस समय के निम्न मध्यम वर्ग के असमिया समाज से थी, जबकि कमलाकांत उभरते शहरी मध्यम वर्ग से था। निम्न मध्यम वर्ग के लोग तब भी कठोर पारंपरिक मूल्य प्रणाली से बहुत जुड़े हुए थे। तगर भी उससे कोई अलग नहीं थी। तगर ने अपनी प्राथमिक परीक्षा उत्तीर्ण की, लेकिन अपनी शिक्षा जारी नहीं रख सकी। उसे शास्त्रों का ज्ञान था, जो उसने शास्त्रों के नियमित अध्ययन के माध्यम से प्राप्त किया था। जब उसके पिता बोल रहे थे, तब उसने सुनकर शास्त्रों का ज्ञान भी प्राप्त किया। वह एक आदर्श असमिया महिला थी, जो हर परिस्थिति से तालमेल बिठाने में सक्षम है। दूसरी ओर उस समय के शहरी लोग, जिस वर्ग से कमलाकांत संबंधित थे, ढीली नैतिकता और बदले हुए लोकाचार के प्रतीक थे। इस वर्ग के लोग धन इकट्ठा करने में कोई कसर नहीं छोड़ रहे थे; और इसके लिए वे किसी भी हद तक गिरने को तैयार थे। वे कुटिल एवं भ्रष्ट हथकंडे अपनाने से भी नहीं हिचकिचाते थे। एक प्रसिद्ध आलोचक ने टिप्पणी की है, कमलाकांत डिब्रूगढ़ में एक सरकारी कार्यालय में काम करने वाले एक क्लर्क का बेटा था, जो ब्रिटिश शासन के दौरान नया वाणिज्यिक केंद्र था। वह मेधावी भी था; लेकिन वह उस प्राचीन क्षेत्रीय संस्कृति के ठीक विपरीत था, जिससे तगर संबंधित थी। इसलिए कमलाकांत के साथ तगर की मुलाकात महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह संक्षेप में परंपरा के रूप में संरक्षित पुरानी विश्व व्यवस्था और नई व्यवस्था के बीच एक मुठभेड़ है, जो निचले स्तर पर बेईमान और दिशाहीन थी।[7] लेकिन दुर्भाग्य से यह नई संस्कृति तेजी से शहरी सीमाओं से परे अपना दायरा फैला रही थी। संदिग्ध नैतिकता वाले व्यक्ति और शहरी मध्यम वर्ग के प्रतिनिधि कमलाकांत को गाँव की मासूम महिला तगर के खिलाफ खड़ा किया गया है। इन दो युवा प्रेमियों के दिलों में जो प्यार विकसित होता है, वह कभी भी पूर्णता की ऊँचाई तक नहीं पहुँच पाता; कमलाकांत तगर को भूल जाता है, शायद उसे अपने जैसे परिष्कृत शिष्टाचार वाले व्यक्ति के लिए बेमेल मानता हैं। उसकी उच्च महत्वाकांक्षा उसे अपने पिता की पसंद की गई लड़की से शादी करने के लिए प्रेरित करती है। कमलाकांत द्वारा तगर को अँगूठी की पेशकश करना, जहाँ तक उपन्यास के कथानक का संबंध है, अत्यधिक महत्व की घटना है। तगर एक पारंपरिक मूल्य प्रणाली वाली महिला, ने कमलाकांत द्वारा अँगूठी की पेशकश को इसके पारंपरिक निहितार्थों के साथ अत्यंत गंभीरता से लिया। उसने सोचा कि वह बर्बाद हो गई है : तुमने मुझे क्यों बर्बाद किया है?

सचमुच उसकी चिंता का कारण है। उसके जैसे पारंपरिक समाज में उसकी उँगली पर अँगूठी को केवल एक कलंक के रूप में देखा जाएगा और इससे कम कुछ नहीं। कमलाकांत ने जल्दबाजी, अति-भावनात्मक कृत्य से उसके आत्मसम्मान को ठेस पहुँचाई। तगर जहाँ अंगूठी-भेंट को दुर्भाग्यपूर्ण मानती है, वहीं कमलाकांत के लिए यह भाग्य की कृपा है। उसने उसे आश्वासन दिया कि वह जल्द ही कुछ सकारात्मक करेगा और सुझाव दिया कि वह उससे शादी करेगा। लेकिन ऐसा कभी नहीं होता और तगर का जीवन वस्तुत: बर्बाद हो जाता है।

जैसे-जैसे उपन्यास आगे बढ़ता है, हम उन परीक्षणों और कठिनाइयों के गवाह बनते हैं, जो तगर की प्रतीक्षा कर रहे हैं। वह डेस्टिनी या नव-उभरती सामाजिक और सांस्कृतिक व्यवस्था या ब्रिटिश साम्राज्यवाद का एक असहाय शिकार बन जाती है। डॉ. हीरेन गोहाईं की राय में, जीवनार बाटत में साम्राज्यवाद ही नियति है, लेकिन इनमें

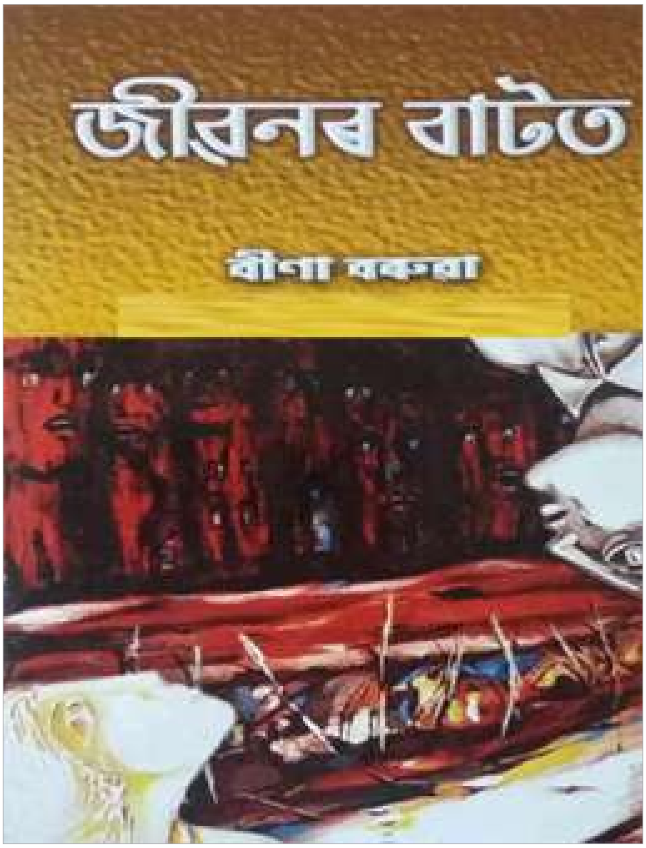

से कोई भी पात्रों को इसके बारे में नहीं पता है।[8] उसके बाद उसकी शादी पेशे से बुनाई मास्टर धरणी से कर दी जाती है।

लेकिन अपनी शादी के बाद भी वह चुपचाप अपनी सास अहिनी के हाथों सहती रहती है। हालाँकि, बच्चे को जन्म देने के बाद यह काफी हद तक कम हो जाता है। फिर उसकी सास अहिनी की मृत्यु, धरणी का स्वतंत्रता संग्राम में शामिल होना, उसकी गिरफ्तारी और कारावास, उसकी बीमारी और मृत्यु कहानी के हर मोड़ पर दुख ही तगर का साथी बना रहता है। एक ऐसी स्थिति में तगर के सीने में भूख से रो रहे कमला को देखकर तगर भगवान को संबोधित करती है, हे भगवान, हमें नष्ट कर दो। आज हम दोनों को मार डालो। तुम मुझे कष्ट सहने के लिए कब तक जीवित रखोगे? मार डालो, हे प्रभु, मार डालो।[9]

सहानुभूति रखने वाले डॉ. गोलाप या गोलाप डॉक्टर, जैसा कि उन्हें लोकप्रिय रूप से कहा जाता है, उसकी प्रतिकूलताओं में उसके साथ खड़े रहते हैं, उसे जीविकोपार्जन में मदद करने की कोशिश करते हैं, चल रही अफवाहों को दरकिनार करते हुए धरणी की गंभीर बीमारी का इलाज करते हैं। यह सब लेखक ने चित्र के दोनों पक्षों पर प्रकाश डालते हुए बहुत चतुराई से वर्णित किया है।

जैसे-जैसे उपन्यास धीरे-धीरे समाप्ति की ओर बढ़ता है, परंपरा और आधुनिकता के बीच का संघर्ष फिर से सामने आता है। हाकीम (उप-डिप्टी मजिस्ट्रेट) के रूप में गाँव में कमलाकांत के आगमन से वह दूसरी बार तगर के संपर्क में आया। जाहिर है, यह दूसरा संपर्क भी तगर के लिए बेहद अपमानजनक हो जाता है। कमलाकांत द्वारा उस अँगूठी को पहचानना, जो वर्षों पहले उसने उसे प्यार की निशानी और शादी के आश्वासन के रूप में दी थी, की घटना कहानी के इस मोड़ पर चरमोत्कर्ष पर है। वह अपने ही विश्वासघाती अतीत के आमने-सामने है, जिसने एक निर्दोष महिला को बर्बाद कर दिया। लेकिन वह अब तक अपनी पहुँच के भीतर जीवन की सभी सुविधाओं के साथ एक खुशहाल जीवन जी रहा था। उसने एक बार भी पीछे मुड़कर नहीं देखा; न ही उसे कोई पछतावे का अनुभव हुआ। कमलाकांत के चरित्र की व्याख्या करने से पहले उपन्यासकार बड़ी चतुराई से गोलाप डॉक्टर के बारे में कुछ शाश्वत सत्य प्रस्तुत करता है। यह मानव चरित्र के इस अजीब व्यवहार का विचार है कि, कमलाकांत को गोलाप डॉक्टर के चरित्र का गंदा पक्ष पता चला, जो माधव महंत के अकाट्य साक्ष्य से प्रसन्न थे।[10]

यह हृदयहीनता और प्रेमहीनता, यह उदासीनता और विस्मृति तथाकथित आधुनिकता के उपोत्पाद हैं, जिसकी जड़ें साम्राज्यवाद में हैं। तगर और परंपरा में निहित अन्य पात्र हर चीज को ईश्वर की इच्छा के रूप में स्वीकार करते हैं।[11] वे अपने साथ होने वाले किसी भी प्रकार के अन्याय को व्यर्थ की कवायद मानकर उसका विरोध भी नहीं करते हैं। समालोचक ने सही मायने में कहा है- आधुनिक

युग के पतन के बीच उन्होंने सशक्त मानवता एवं आदर्शवादी जीवन की रचना की तथा चरित्रों का नवनिर्माण किया। उपन्यास की नायिका तगर के जीवन के दयनीय चित्रण में लेखक कला और समझ दोनों का समान रूप से उपयोग करता है।[12]

निष्कर्ष :

उत्पीड़ित महिलाओं पर यह महत्व थोपना समाज पर एक आरोप है। नि:स्संदेह लेखक का उद्देश्य सामाजिक परिवर्तन नहीं है। उपन्यास में तगर के जीवन की विफलता परिवार के संघर्ष का प्रतिबिंब है। लेकिन इस पीड़ा की जड़ में मनुष्य का धोखा या हृदयहीनता है। कमलाकांत दुष्ट या क्रूर नहीं है। जमीन हकीम होकर भी गरीबों पर दयालु है। लेकिन निम्न मध्यम वर्ग की उच्च आकांक्षाएँ उसे अंधा बना देती हैं, भौतिक सुधार की आशा उसको मंत्रमुग्ध कर देती है और जीवन के अंतिम मूल्य के प्रति अविश्वासी बना देती है। कर्म का फल लंबे समय तक भोगा जाता है। हमारे चेहरे हमें व्यक्तिगत जीवन में गाँव के लोगों के प्रति उदासीन और हृदयहीन बनाते हैं, इस कहानी में उनका इतिहास भी सामने आता है। गहरे विश्वास और आशा के साथ तगर के दिल में कमलाकांत का गैर-जिम्मेदाराना पलायन हमले की खामोशी है। उसका धैर्य, साधुता, मौन वेदना, करुणा से हमारे हृदय नम, उसके चरित्र की त्रासद महिमा प्रकट होती है। ❑

संदर्भ :

1. सत्येन्द्रनाथ नाथ शर्मा : असमिया उपन्यासर भूमिका, तीसरा संस्करण, सौमर प्रिंटिंग एंड पब्लिशिंग (पी) लिमिटेड, गुवाहाटी, 1989, पृ.168
2. गोबिंदा प्रसाद शर्मा : उपन्यास आरु असमिया उपन्यास, दूसरा संस्करण, छात्र स्टोर, गुवाहाटी, 2009, पृ. 112
3. सत्येन्द्रनाथ नाथ शर्मा : असमिया उपन्यासर भूमिका, तीसरा संस्करण, सौमर प्रिंटिंग एंड पब्लिशिंग (पी) लिमिटेड, गुवाहाटी, 1989, पृ.169
4. वही, पृ. 172
5. गोबिंदा प्रसाद शर्मा : उपन्यास आरु असमिया उपन्यास, द्वितीय संस्करण, छात्र स्टोर, गुवाहाटी, 2009, पृ. 295
6. बीना बरुवा : जीवनर बाटत, 7वां संस्करण बीना लाइब्रेरी, गुवाहाटी, 1986, पृ. 20
7. गोबिंदा प्रसाद शर्मा : उपन्यास आरु असमिया उपन्यास, दूसरा संस्करण छात्र स्टोर, गुवाहाटी, 2009, पृ. 295
8. डॉ. हीरेन गोहाईं : बिरिंची कुमार बरुवार उपन्यासत समाज बास्तव, एशो बछरर असमिया उपन्यास, एड. डॉ. नागेन ठाकुर, प्रथम संस्करण, ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी 2000, पृ. 373
9. बीना बरुवा : जीवनर बाटत, वही, पृ. 200
10. बीना बरुवा : जीवनर बाटत, वही, पृ. 208
11. डॉ. हीरेन गोहाईं : बिरिंची कुमार बरुवार उपन्यासत समाज बास्तव, एशो बछरर असमिया उपन्यास, एड. डॉ. नगेन ठाकुर, प्रथम संस्करण, ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2000, पृ. 375
12. डॉ. प्रदीप कुमार बरुवा, आधुनिक असमीया उपन्यासर शिल्पारीति, शब्द प्रकाश, जोरहाट, 2005, असम, पृ. 95

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

लोकरंग

‘रोंग्मिली की मुस्कान’ उपन्यास में कार्बी लोक-संस्कृति की अभिव्यक्ति

डॉ. थेसो क्रोपी

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
विमेंस कॉलेज, तिनसुकिया, असम-786125
7086017586
kropi.theso@gmail.com

शोध-सार :

‘रोंग्मिली की मुस्कान’ सेवानिवृत्त प्रोफेसर रोंग्बोंग तेरांग का प्रसिद्ध उपन्यास है। यह एक सामाजिक उपन्यास है, जिसमें उपन्यासकार ने कार्बी जनजीवन के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला है। ‘रोंग्मिली की मुस्कान’ उपन्यास की कथा असम के पश्चिमी कार्बी आंग्लोंग के रोंग्खांग क्षेत्र से संबंधित है। इसमें लेखक ने कार्बी समाज के रीति-रिवाजों, खान-पान, रहन-सहन, पहनावे, आचार-विचार, क्रिया-कलाप, तीज-त्योहार, नृत्य-संगीत आदि पर गहन चिंतन किया है। विभिन्न नशीले पदार्थों यथा-भांग, शराब, तंबाकू आदि के सेवन से प्रभावित कार्बियों के जीवन पर भी प्रकाश डाला है। उपन्यासकार ने कार्बी समाज में व्याप्त सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों का वर्णन तो किया ही है, साथ ही परिवर्तन की आहट पर भी प्रकाश डाला है। इस परिवर्तन के साथ पारंपरिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, शैक्षिक मूल्य-बोध की टकराहट को भी अभिव्यक्त किया है।

बीज शब्द :

सामाज, आर्थिक, सांस्कृति, धर्म, आचार-विचार, परिस्थिति, परिवर्तन, पारंपरा, मूल्य-बोध।

प्रस्तावना :

सेवानिवृत्त प्रोफेसर रोंग्बोंग तेरांग असमिया तथा कार्बी के प्रसिद्ध साहित्यकार हैं। इनका जन्म 1937 ई. को कार्बी आंग्लोंग जिले में हुआ। असमिया साहित्य एवं कार्बी साहित्य दोनों में इनका बड़ा योगदान रहा है। ये एक संवेदनशील कवि, सामाजिक उपन्यासकार, कहानीकार आदि के रूप में असम के साहित्य जगत में प्रसिद्ध हैं। इनकी प्रमुख रचनाओं में - रोंग्मिली की मुस्कान, स्मृति पपोरी, जाग हरुवा पखी, लांग्सोलिएतर कुक्रूंग आदि चर्चित रही हैं। कार्बी भाषा में लिखे इनके दूसरे उपन्यास ‘हेम्तुन साम्प्रिदांग्’ भी एक सामाजिक उपन्यास है, जिसका प्रकाशन 2016 ई. में हुआ था। इन्होंने भले ही कार्बी भाषा के अलावा असमिया को भी

लेखन के रूप में अपनाया हो, पर इनके हृदय में कार्बी भाषा- साहित्य एवं लोक-संस्कृति ही उपस्थित रहती है। इनकी कथा-कहानियों में चित्रित भावाभिव्यक्ति और भावाभिव्यंजना कार्बी जनजाति को ही समर्पित है। 'रोंग्मिली की मुस्कान' मूलत: असमिया भाषा का उपन्यास है और असमिया में इस उपन्यास का नाम है- 'रोंग्मिलीर हाँही'। इस उपन्यास के लिए उनको 1981 में भारत सरकार द्वारा पद्मश्री से सम्मानित किया गया था। इस उपन्यास का हिंदी अनुवाद नवारुण वर्मा ने किया और इसका शीर्षक 'रोंग्मिली की मुस्कान' रखा। उपन्यासकार ने इस उपन्यास के माध्यम से कार्बी जनजीवन के विभिन्न पहलुओं का गंभीरतापूर्वक अध्ययन किया है। उपन्यासकार ने इस उपन्यास की कथा का आधार असम के पश्चिमी कार्बी आंग्लोंग जिले के रोंग्खांग में 'रोंग्मिली'(काल्पनिक नाम) नामक गाँव तथा उसके आस-पास के क्षेत्र को बनाया है। इस उपन्यास का कथा-फलक स्वतंत्रतापूर्व से लेकर स्वतंत्रता के बाद के कालखंड तक फैला है, जब कार्बी जनजाति पूर्ण रूप से झूम-खेती पर निर्भर थी। इन लोगों के जीवन यापन का आधार मात्र झूम खेती थी। झूम खेतों का उपजाऊपन धीरे-धीरे घट रहा था और यहीं से रोंग्मिली गाँव तथा आसपास के क्षेत्रों की समस्याएँ शुरू होने लगती हैं। खेती से संबंधित समस्या के अलावा इस उपन्यास की कथा में कार्बी लोक-जीवन की अन्य समस्याओं, स्थितियों-परस्थितियों, सामाजिक-धार्मिक आचार-व्यवहार को भी चित्रित किया गया है।

प्रविधि :

इस आलेख में उपन्यास में अभिव्यक्त कार्बी लोक-जीवन से संबंधित विविध क्षेत्रों का विश्लेषण करना अपेक्षित है। कार्बी लोक-जीवन में बिखरे हुए विविध सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक रंगों को संक्षेप में वर्णनात्मक एवं विश्लेष्णात्मक प्रविधि द्वारा प्रस्तुत किया जाएगा।

उद्देश्य :

'रोंग्मिली की मुस्कान' उपन्यास महज एक कथा नहीं है, बल्कि यह उपन्यास लेखक के अपने जातीय प्रेम, अपनी अभिरुचियों, कार्बी समाज, भाषा-संस्कृति के लिए उनके समर्पण की अभिव्यक्ति है। इसलिए इस आलेख का उद्देश्य आलोच्य उपन्यास के माध्यम से कार्बी लोक-संस्कृति की विशेषताओं को जिस विश्वसनीयता के साथ वर्णित किया है, उनको जन-जन से परिचित कराना है। कार्बी लोक संस्कृति अन्य संस्कृतियों से किसी भी मायने में कम नहीं है। चारों दिशाओं में नागा, खासी, असमिया और डिमासा जनजातियों से घिरे होने के बावजूद आज भी कार्बी संस्कृति मजबूती से खड़ी है। आज कार्बी लोक-संस्कृति किसी की पहचान की मोहताज नहीं है, निरंतर आगे बढ़ रही है। 'रोंग्मिली की मुस्कान' को कार्बी लोक-संस्कृति से परिचित कराने वाला प्रथम सफल उपन्यास कह सकते हैं। अत: इस आलेख में कार्बी लोक-संस्कृति का संक्षेप में विवेचित करने का प्रयास रहेगा।

विधा की दृष्टि से 'रोंग्मिली की मुस्कान' उपन्यास है। आकार में बहुत बड़ा नहीं है, किंतु अपने छोटे से कलेवर में भी यह उपन्यास कार्बी जनजातीय समाज और संस्कृति को बहुत गहराई तथा संवेदनशीलता से चित्रित करता है।

विषयात्मक विश्लेषण :

उपन्यास में चित्रित रोंग्मिली गाँव को व्यवस्थित और लोगों को अनुशासित रखने का दायित्व गाँव के मुखिया (बासा) कथा नायक सारइक पर था। सारइक एक सरल स्वभाव, समझदार, सच्चा-ईमानदार एवं सुलझा हुआ व्यक्ति था। वह अपने गाँव वालों की भलाई के लिए बहुत कुछ करना चाहता था। पर उसके सामने कई समस्याएँ मुँह बाए खड़ी थीं, जिनहें सुलझाना उसके लिए आसान न था। रोंग्मिली गाँव के निवासियों की जीविका का आधार मात्र झूम खेती थी। गाँव वाले एक ही क्षेत्र में झूम खेती करते थे और उसी झूम खेत के आस-पास रोंग्मिली गाँव बसा था। लेकिन दिन-ब-दिन झूम खेती की जमीन में धान की पैदावार कम होने लगती है। भूमि उपजाऊ न होने पर गाँव से दूर-दराज के पहाड़ों पर झूम खेती करनी पड़ेगी और गाँव वालों को आने-जाने में कठिनाई होगी। अत: पूरे गाँव वालों के साथ जान से भी प्यारे रोंग्मिली गाँव को हमेशा के लिए छोड़ना पड़ेगा। अपनी मिट्टी से अत्यंत प्रेम करने वाला सारइक पचास साल पहले का स्मरण करके

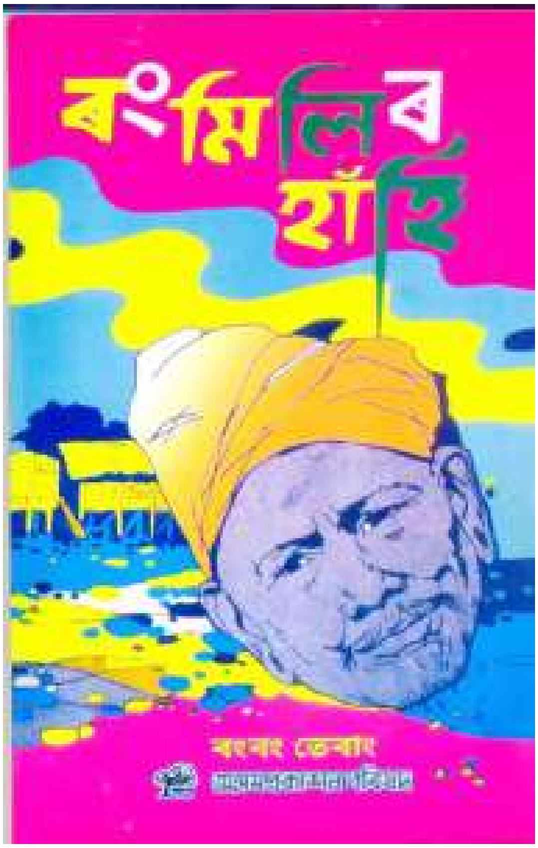

रोमांचित होता है- *''पचास साल पहले हाम्रेन-उम्तिलि की फैली हुई सूखी पहाड़ियों के अंचल को छोड़कर सारइक के पिता आदि इसलिए यहाँ आकर बस गए थे कि हाम्रेन की जमीन पर धान के पौधे साल-दर-साल छोटे होते जा रहे थे। सारकिरी (सारइक के पिता) और उसके परिजनों के सूखते-मुरझाते चेहरों पर बरापानी (नदी का नाम) के शीतल जल से फिर नई हँसी खिल उठी थी। उनके साथ-साथ रोंग्मिली गाँव भी हँसने लगा था।''* (तेरांग 1996:2) पर अब क्या होगा? उपजाऊ जमीन को बंजर जमीन में परवर्तित होते देखकर गाँव में तरह-तरह की अफवाहें फैलने लगीं। रोंग्मिली गाँव तथा प्रदेश के धार्मिक ठेकेदारों जैसे- हबेपिन्पो, हाबेसिकों ने कार्बी लोंग्री(प्रदेश) में धान की पैदावार कम होने का आरोप ईसाई मिशनरियों पर लगाया। गाँव वाले भी मानने लगे कि टीका पहाड़ पर गिरजाघर बनने के कारण ही कार्बी समाज को टीका पहाड़ के देवता का प्रकोप झेलना पड़ रहा है। पात्र कांग तिमुंग अपनी पत्नी से कहता है- *''उधर टीका पहाड़ है। गोरे साहबों ने लोहे के खंभे गाड़कर वहाँ गिरजाघर बना लिया। तभी से टीका सारपो नाराज हो उठा है।''* (तेरांग 1996:2) लेकिन सारइक अंधविश्वासों में फँसकर रहना नहीं चाहता। वह अपने प्यारे गाँव को किसी भी कीमत पर छोड़ना नहीं चाहता है, इसलिए गाँव के बुजुर्गों जैसे- रिसोबासा, लोंग्किरी, फेरांग्के जैसे महानुभावों के साथ विचार-विमर्श करता है। जब गाँव के पंडितों एवं बुजुर्गों ने उसका साथ दिया तो सारइक को एक नई ऊर्जा मिली। परंतु हाबेपिन्पो एवं हाबेसिकोकों द्वारा लोगों का विरोधी होने का आरोप लगाकर सारइक को अपमानित करने के उद्देश्य से उसे गाँव के मुखिया पद से हटा दिया गया। चूँकि सारइक गाँव के विकास करने का निश्चय कर चुका था इसलिए उसे कोई फर्क नहीं पड़ता कि वह गाँव के मुखिया पद पर रहे या न रहे।

कार्बी समाज में युवाओं और जिरसोंग् दोनों का महत्वपूर्ण स्थान है। 'जिरसोंग्' (क्रो 2019:205) अर्थात 'श्रमिक संघ' गाँव की एकता, जीवंतता और रौनक के प्रतीक हैं। गाँव के सारे बच्चे बाल्यावस्था से ही जिरसोंग् में शामिल हो जाते हैं। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण 'रोंग्मिली की मुस्कान' उपन्यास में देखा जा सकता है। रोंग्मिली गाँव के जिरसोंग् वाले किशोर-किशोरियाँ देकाचांग (प्रशिक्षण केंद्र या क्लब) में सामाजिक आचार-व्यवहार, आपसी सहयोग करने, सामूहिक कार्य में एक दूसरे का ख्याल रखने, लोक संगीत, लोक नृत्य, आदि क्रिया-कलापों का प्रशिक्षण लेते हैं।

रोंग्मिली गाँव के लोग प्रकृति की गोद में विचरण करते थे। इन लोगों के पक्षु-पक्षियों एवं वन्य प्राणियों के साथ गहरे संबंध रहे हैं। इन लोगों को ऋतुओं के आगमन की सूचना भी केतेकी, कोयल, चकोर आदि पक्षियों के माध्यम से मिलती है। संदेशवाहक केतेकी चिड़िया रोंग्मिली गाँव तथा आसपास के क्षेत्रों में उड़ती हुई 'वोथोंग् कांग्को' गीत गाकर लोगों को कर्मठ होने का संदेश देती है। इस संदेश को सुनते ही रोंग्मिली गाँव के जिरसोंग् वाले झूम खेत जाने की तैयारी में दौड़-धूप करने लगते हैं। गाँव के युवक-युवतियाँ मुखिया से अनुमति लेकर

चेंग्बुरुप (तबलानुमा यंत्र) नामक यंत्र की धुन बजाते हुए,लोक गीत गाते हुए, खिलखिलाते हुए झूम खेत की ओर चले जाते हैं। लेखक लिखते हैं – *''चेंग्बुरुप के ताल-ताल पर जिरसोंग् मंडली झूम खेती की ओर बढ़ चली। घुमावदार, टेढ़ी-मेढ़ी पगडंडी से चलते हुए वह मंडली बड़े-बड़े पेड़ों वाले घने जंगल में छिप गई। ढोल के ताल की आवाजों का सुनाई देना भी धीरे-धीरे बंद हो गया। वियोग-वेदना दिल में लिए रोंग्मिली गाँव का देकाचांग (युवाओं का प्रशिक्षण-स्थल) सन्नाटे में उनकी बाट जोहता रहा।''* (तेरांग 1996:63) लेखक ने युवाओं के बीच द्वंद्व-तनाव, ईर्ष्या, प्रेम व्यापार आदि पर भी प्रकाश डाला है। किशोर-किशोरियों को सालों तक एक साथ उठना बैठना, कार्य करना ,उत्सव मनाना होता है, इसलिए कुछ किशोर एवं किशोरियों के बीच में अगर प्रेम भावना पल्लवित हो जाती है तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं। जिरसोंग् वाले झूम खेत का कार्य समाप्त करके ही वापस गाँव लौटते हैं। इस दौरान सेंग और अम्फू के बीच प्रेम भावना अंकुरित होने लगती है और झूम खेत कार्य पूर्ण होने के बाद दोनों विवाह के पवित्र बंधन में बंधना चाहते हैं। जिरसोंग् का नेतृत्व करने वाला वोफोंग् क्लेंग्सारपो (समूह का नेता) भी अम्फू से प्रेम करता था। पर उसका प्रेम वासनायुक्त था। वह किसी भी कीमत पर अम्फू को पाना चाहता है। रिश्ते में वैसे भी मामा की लड़की होने के कारण अम्फू को पाना वह अपना अधिकार समझता है। अत: सेंग् और वोफोंग् के बीच में तनाव बढ़ने लगता है। सेंग् और वोफोंग् दोनों ने लड़ते-झगड़ते हुए झूम खेत में 'रीत् नोंग्'(क्रो 2019:205) अर्थात 'झूम खेत में धान की बुवाई' का कार्य पूरा किया।

कार्बी जनजाति के लोग धार्मिक प्रकृति के होते हैं। ये लोग प्रकृति पूजक होते हैं। ये लोग कई देवी-देवताओं की आराधना करते हैं, पर इनके देवी-देवताओं की मूर्तियाँ नहीं होती हैं। ये लोग मिट्टी, पेड़-पौधे, नदी- नाले पहाड़, प्रदेश आदि को प्रतीक रूप में पूजते हैं। यही इनकी धार्मिक पहचान है। कथाकार ने यहाँ विशेषकर 'चोजून' और 'रोंग्केर' नामक अनुष्ठान का वर्णन किया है। नायक सारइक के घर में 'चोजून' अनुष्ठान होने वाला है। उसने फागुन के महीने में 'चोजून' अनुष्ठान के आयोजन का निश्चय किया है। उसने अनुष्ठान की तारीख तय होते ही सबको निमंत्रण भेजा। अनुष्ठान के दिन सुबह से ही रोंग्मिली गाँव में उत्सव की सी चहल-पहल होने लगी। पूजा घर में गाँव के युवा लड़के-लड़कियाँ भिन्न-भिन्न कामों में व्यस्त थे। दूसरी तरफ मुख्य पुजारी अपने सहयोगियों के साथ अनुष्ठान वेदी में बारिथे (महान देवता) की स्तुति करने लगे। जैसे-

''हे-म् हेम् हेम् आर्नाम्
आर्नाम् केथे आर्नि केथे
....
केकिम् आरनाम् केराक् आर्नाम्
-हेम् हेम् हेम् आर्नाम।'' (तेरांग 1996:29)

भावार्थ : हे महान गृह देवता! तुम सूर्य-सदृश्य श्रेष्ठतम हो! बारिथे और बारिए (सबसे बड़े देवताओं का नाम) के पुत्र हो, लोरु और फोंग्रोंग् (पौधों-पेड़ों का नाम) के देवता हो! तुम्हीं सृजन और पालन करने वाले देवताओं के भी देवता हो! तुम्हें प्रणाम!

इस अनुष्ठान में कई सूअर एवं मुर्गे-मुर्गियों की विभिन्न देवी-देवताओं के नाम से बलि दी गई। महान कुलदेवता से परिवार की सुरक्षा, अच्छी फसल, अच्छे मौसम के लिए पंडितों के सामूहिक देव-मंत्रों से पूरा वातावरण गुँजायमान हो उठा। बलि दिए गए पशु एवं मुर्गे-मुर्गियों को देखकर भविष्यवाणी करते हुए वृद्ध लंकीरी बोला- *''इस बार खेती-बारी अच्छी होने का संकेत मिल रहा है। लेकिन..... यह तो समूचे गाँव में अशांति होने की निशानी है।''* (तेरांग 1996:30) पंडितों द्वारा परीक्षण के उपरांत गाँव के नौजवान सेंग् तेरोन, वोफोंग् इंग्ती तथा अन्य युवक भोज के लिए व्यंजन की तैयारी करने लगे। दूसरी तरफ अम्फू, कादम, काजिर आदि किशोरियाँ कार्बी लांग्पी नदी का निर्मल पानी पिलाने में व्यस्त हैं। आमंत्रित विशिष्ट अतिथियों को सम्मानित किया गया। इसके उपरांत पूर्वजों के लिए भोग चढ़ाए गए। फिर भोज का आरंभ हुआ। भोज में खाना और पीना दोनों साथ- साथ चलता है। अत: गाँव वालों ने इस अनुष्ठान में मांस और मदिरा का भरपूर आनंद लिया।

रोंग्मिली तथा क्षेत्र के शांत वातावरण में ईसाइयों के आगमन से कुछ हलचल होने लगी। इनके आगमन से कार्बियों की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँची। कार्बियों को अपने अस्तित्व की चिंता होने लगी कि कार्बी लोग अपने धर्म को छोड़कर ईसाई धर्म ग्रहण कर लेंगे और अपनी भाषा-संस्कृति एवं रीति-रिवाजों को खो देंगे। इसी की प्रतिक्रियास्वरूप वे समाज में ईसाई धर्म को लेकर तरह-तरह की अफवाहें फैलाने लगीं, जिससे कार्बी लोग ईसाइयों से दूर रहें। दूसरी तरफ ईसाई धर्म प्रचारक दया, प्रेम,करुणा की नदी बहाकर कार्बियों का हृदय परिवर्तन कर रहे थे। उन्होंने गरीब और भोले-भाले कार्बियों की छोटी-मोटी मदद कर अपनी मीठी वाणियों से धर्म परिवर्तन के लिए भी तैयार किया। सारइक जब अपने गाँव वालों की, जंगली जीव-जंतुओं से रक्षा के लिए नगांव बंदूक खरीदने जाता है, तब पादरी कहता है-*''ठीक है बंदूक मिल जाएगी। तुम लोग महान ईसा मसीह को भी प्यार करना। बंदूक दिलाने में ईसा मसीह ने ही मदद की है। महान ईसू तो पहाड़ के ही हैं।''* (तेरांग 1996:52) इस प्रकार ईसाई पादरी तथा उनके चेले गाँव-गाँव जाकर दया-करुणा दिखाकर ईसाई धर्म का प्रचार करते हैं ।

जनजातीय समाज में कार्य और मनोरंजन साथ-साथ चलते हैं। सामूहिक कार्य के दौरान सामूहिक गीत गाना , एक-दूसरे को कथा-कहानी सुनाना, नृत्य करना, हँसी मजाक करना इन लोगों के जीने का तरीका है। कार्बी समाज में झूम खेत कार्य समाप्त करके जब अनाज घर में लाया जाता है, तब एक विशेष तरह के 'रात्रिभोज' का आयोजन किया जाता है, जिसको 'सोक्रोय केकान' या 'हाचा केकान'(क्रो 2019:44) कहा जाता है, जिसका अर्थ है- 'धान उठाते हुए नाचना'।'रोंग्मिली की मुस्कान' उपन्यास में लेखक ने सारइक के घर में होने वाले 'सोक्रोई केकान' नामक उत्सव का जीवंत चित्र प्रस्तुत किया है। जिस दिन सारइक के घर अनाज पहुँचने वाला होता है, उस दिन सुबह से ही गाँव में सोकख्रोय केकान देखने के लिए मेले सी चहल-पहल थी। रोंग्मिली गाँव के युवक-युवतियाँ बढ़-चढ़कर अनाज पहुँचाने में मदद कर रहे थे और मुखिया सारइक गाँव वालों के प्यार, सहयोग तथा आपसी एकता को देखकर भाव-विभोर हो रहे थे। उन्होंने आभार व्यक्त करने के लिए 'सोक्रोय केकान' का आयोजन किया। रात को सोक्रोय केकान का आरंभ गाँव के युवाओं की अगुवाई करने वाले वोफोंग् और सेंग् को मदिरा की बोतल देकर सम्मानित करते हुए किया गया। इसके बाद अन्य लोगों को भी सामान वितरित किए गए। भोज का आरंभ होते ही गीत-नृत्य भी आरंभ हो गया। एक वृद्ध लक्ष्मी का स्वागत करने हेतु पुराना गीत छेड़ते हुए अपने मधुर स्वर से सबको चकित करता हुआ गाता है-

''काथी संफी पाथिर क्लों
सार मार संमेइ पांग्कांग्बोंग्
सार मार सेर हारलुंग् देंरोन
थारे जोरलांग् नांग्ले नोन।'' (तेरांग 1996:131)

भावार्थ - हे किशोरो ! काथी (धानलक्ष्मी) अपने स्थान पर आसीन हो गई हैं। वरिष्ठ लोग सभा में शोभायमान हैं और स्वर्ण चषक वितरित हो गए हैं, इसलिए चषकों में मदिरा वितरित की जाए।

कथाकार ने इस उपन्यास में कार्बी जनजाति में किए जाने वाले सबसे बड़े अनुष्ठान 'चोमांग्कान' या 'चोम्कान'(क्रो 2019:118) अर्थात- श्राद्ध संस्कार का बड़ा मनोहारी चित्रण किया है। उमरु गाँव में श्राद्ध अनुष्ठान का आयोजन होने वाला है। इस उत्सव में भाग लेने के लिए रोंग्मिली गाँव के बच्चे से लेकर बूढ़े तक सब गए। ये लोग अपने साथ 'जांबिली आथोन'(क्रो 2019:197) अर्थात 'सम्माननीय प्रतीक चिन्ह', ढोल तथा अन्य आवश्यक चीजें लेकर गए थे। कार्बी समाज में जाम्बिली आथोन गाँव के मान-सम्मान का प्रतीक तो है ही, बल्कि कार्बी जनजाति के मुख्य 'पाँच गोत्र के प्रतीक' भी है। उमरु गाँव में इन लोगों का स्वागत किया गया। श्राद्ध में उस क्षेत्र के हर गाँव वाले भाग लेने आए। बड़ा विहंगम दृश्य था। एक तरफ घर के भीतर लगातार बुजुर्ग महिलाएँ 'चारहेपी' (मृत्यु गीत गाने वाली) का चारहे (शोक गीत) द्वारा सबकी भावनाओं को उद्वेलित कर रही थीं, दूसरी तरफ 'आरी असोर' (मेजबान) तथा दूसरे गाँव से जो लोग जाम्बिली आथोन के साथ ढोल लेकर आए थे, वे सब सामूहिक रूप से ढोल बजाने लगे। रोंग्मिली गाँव के

युवाओं ने भी नृत्य-संगीत में भाग लिया। नृत्य करते हुए बी-हेंरु गाँव के युवक गाना गा-गाकर नृत्य करते रोंग्मिली गाँव के युवाओं को चिढ़ा रहे थे, उसके जवाब में रोंग्मिली गाँव के एक किशोर का जवाब देखिए -

''आंताक्सो के पु नांग्ने
थारे कांगतांग्राक साइसे!
ओ- लांसाम ओ-है-है
ओ-लांसाम ओ-है-है।'' (तेरांग 1996:171)

भावार्थ : रोंग्मिली गाँव के हम किशोरों को नन्हा-बच्चा न समझ लेना। हमारे शरीर में भी यौवन की शक्ति भरी है।

रोंग्मिली तथा उसके आसपास के क्षेत्र की प्रमुख समस्या थी- नशीले पदार्थों का प्रयोग। विभिन्न नशीले पदार्थों जैसे- भांग, अफीम, शराब, तंबाकू आदि के सेवन से कई परिवारों की स्थिति शोचनीय हो चुकी थी। दूसरी तरफ काला ज्वर जैसी महामारी ने कार्बी जनजीवन को जीर्ण-शीर्ण बना दिया था। सारइक अपने गाँव की स्थिति देखकर सोचता है- *''अफीम ने लोगों को काम करने लायक न छोड़ा, साथ ही काला ज्वर के प्रकोप ने कार्बी गाँवों को बिल्कुल झकझोर दिया।''*(तेरांग 1996:3) लेकिन सारइक के लिए इन नशीले पदार्थों को बंद करवाना आसान नहीं था। रोंग्मिली गाँव के कुछ लोग भी अफीम की चपेट में आ चुके थे। उनकी घर-गृहस्थी धीरे-धीरे बर्बाद हो रही थी। रोंग्मिली गाँव का लिंदोक नामक व्यक्ति अफीम के लिए महाजन से उधार पर उधार लेता जाता है। धीरे-धीरे घर की सारी वस्तुओं के साथ-साथ खेती-बारी, जीव-जंतु सब बेच दिए। इस बात को लेकर पत्नी कारेंग् के साथ कई दफा तू-तू मैं-मैं हो चुकी थी। पत्नी अपने दुर्भाग्य पर आँसू बहाते हुए बोली- *''अरे, अफीम के लिए तो आपने एक-एक कर घर की सारी चीजें खत्म कर डाली। अब आप भैंस भी बेचने चले हैं? अपना तो कुछ रहा नहीं, अब बच्चों का भी भविष्य नाश करने चले हैं। हाय री! मेरी किस्मत!''* (तेरांग 1996:103) अज्ञानता की अंधेरी धुँध में लिपटे कार्बी समाज में नशीले पदार्थों के प्रति जागरूकता फैलाना आसान न था। फिर भी सारइक इन समस्याओं का निदान करने के लिए अपने लड़के को नगांव में पढ़ने भेजता है। इस उम्मीद के साथ कि उसका लड़का पढ़ाई के बाद गाँव लौटेगा और अपने साथ जागरूकता लाएगा। गाँव वालों की अज्ञानता दूर करेगा और रोंग्मिली गाँव फिर से मुस्कुराने लगेगा।

उपन्यासकार ने कार्बी समाज में परिवर्तन की सुगबुगाहट को भी चित्रित किया है। उनको अंदेशा था कि परिवर्तन के साथ पारंपरिक मूल्य-बोध, धार्मिक, आर्थिक, शैक्षिक मूल्यों-मान्यताओं के बीच संघर्ष होना तय है। अत: वे पात्रों के माध्यम से सोई हुई कार्बी जनजाति को जगाना चाहते थे। रोंग्मिली गाँव का मुखिया सारइक दूरदृष्टि रखता था। वह जानता था कि कार्बी समाज अपने प्रदेश में हो रहे परिर्वतन तथा उसके परिणामों के बारे में नहीं सोच रहा है। सारइक अपनी आने वाली पीढ़ी के लिए चिंतित था। उसका अपने गाँव में एक स्कूल खोलने का विचार था। उसने अपने मन की बात क्षेत्र के पंडितों एवं अनुभवी बुजुर्गों के सामने रखी- *''समय नियमों को अपने आप बदल डालेगा। हमारे बच्चे स्कूलों में पढ़ें या न पढ़ें, जिरकेदाम (झूम खेत का सामूहिक कार्य) कार्य बना नहीं रह सकता। जरूर खत्म होगा, पहाड़ी जमीन की कमी के कारण आर (झूम खेत) की सुविधा नहीं रहेगी तो लोग पानी-खेती करने के लिए विवश हो जाएँगे। अब तो जमीन भी घटती जा रही है। पुराने रोंग्मिली में ही हमें नया रोंग्मिली बनाना होगा।''* (तेरांग 1996:41) गाँव के समझदार एवं सुलझे हुए लोगों - मेनसिंग् तिमुंग्, लोंग्किरी, साम रोंग्हांग, आदि ने सारइक का समर्थन किया। परंतु कुछ पंडितों एवं हाबेसिको को सारइक की बात पसंद नहीं आई। इन लोगों का मानना है कि कार्बी लोंग्री (प्रदेश) में शिक्षा के प्रसार तथा गिरजाघर बनने से कार्बी भाषा-संस्कृति संकट में पड़ जाएगी। हाबेसिको जैसे लोगों को यह समझाना आसान नहीं था कि शिक्षा और धर्म का प्रचार करना अलग-अलग चीजें होती हैं।

रोंग्मिली तथा उस क्षेत्र में अन्य समस्याएँ भी पनपने लगी थीं। गैर कार्बियों का प्रवेश तथा कुछ स्वार्थी लोगों द्वारा जमीन बेचने से असंतुष्ट गाँवों के कुछ मुखियाओं के विद्रोह का स्वर भी अभिव्यक्त हुआ है। रोंग्मिली गाँव के आसपास की घाटियों में जो उपजाऊ जमीन थी, उन जमीनों को कुछ स्वार्थी लोग चंद रुपयों के लिए धीरे-धीरे बेच

रहे थे, जिसके कारण कार्बी लोग समतल एवं उपजाऊ जमीनों से वंचित हो रहे थे।

उपन्यास की उपलब्धियाँ :

इस उपन्यास के अध्ययन से कार्बी लोक-संस्कृति के विषय में बहुत कुछ जानकारी मिलती है। कथाकार स्वयं कार्बी जनजाति से संबंधित हैं। इस उपन्यास में वर्णित विषय-वस्तु उनकी ईमानदारी एवं निष्पक्षता का परिणाम है। कार्बी जनजाति के विषय में, जिससे पाठक वर्ग अब तक अनजान थे, इस आलेख से इन लोगों की जीवन-शैली जैसे- गाँव की व्यवस्था मुखिया द्वारा करना, गाँव वालों को एकता के सूत्र में पिरोकर रखना, गाँव वालों के सुख-दुख में एक-दूसरे का साथ देना; परंपराओं का पालन करना; झूम खेतों में सामूहिक कार्य करना, घर में अनाज आने पर खुशियों का इजहार करने के लिए भोज का आयोजन करना, उसमें गाँव वालों द्वारा सामूहिक गीत एवं नृत्य करना; गाँव में धार्मिक अनुष्ठानों के अवसर पर जैसे- 'चोजून' जैसे बड़े अनुष्ठान के अवसर पर गाँव वालों द्वारा मिल-जुलकर काम करना; 'श्राद्ध' जैसे बड़े अनुष्ठान के अवसर पर सामूहिक नृत्य करना, इन लोगों की अभिरुचियों आदि के विषय में जानकारी मिलती है। इस उपन्यास में कार्बी जनजीवन साक्षात चलचित्र की तरह दृष्टिगोचर होता है।

निष्कर्ष :

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि उपन्यासकार ने कार्बी रीति-रिवाज, खान-पान, रहन-सहन,पहनावे, आचार-विचार, क्रिया-कलाप, तीज-त्योहार, नृत्य-संगीत आदि को प्रामाणिक रूप में अभिव्यक्त किया है। इस उपन्यास के माध्यम से हम रोंग्मिली गाँव तथा आस-पास के क्षेत्रों के लोक जीवन के उतार-चढ़ाव, सुख-दुख, हँसी-मजाक, मनोरंजन, आस्था-अनास्था, आशा-निराशा आदि विभिन्न रंगों से परिपूर्ण वातावरण से रूबरू होते हैं। सारइक जैसे जागरूक मुखिया के कारण रोंग्मिली गाँव जो मुरझा गया था, वह पुन: मुस्कुराने लगता है। ❑

सहायक पुस्तकें :

1. तेरांग, रोंग्बोंग : रोंग्मिली की मुस्कान, नई दिल्ली, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, प्रथम प्रकाशन, 1996
2. क्रो, बिदोर सिंग : अकिमी लम्थे अमारजोंग, डिफू-असम, कांग्थिर बुक हाउस एन पब्लिशर, संशोधित प्रकाशन, 2019

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

असमिया साहित्य में नारी केंद्रित उपन्यास : एक मूल्यांकन

स्मिता साह

शोधार्थी, हिंदी विभाग
मणिपुर विश्वविद्यालय
मणिपुर-795003
8486439830
smitasah15@gmail.com

शोध सार :

मनुष्य के सामाजिक प्राणी होने के कारण उनका जीवन समाज की सीमाओं में ही टूटती और बनती है। उनकी आस्थाएँ, मान्यताएँ और विचारधाराएँ सामाजिक परिवेश में ही जन्म लेती हैं, विकसित होती हैं या विच्छिन्न होकर बिखरती हैं। पुरुष और नारी दोनों से मिलकर ही समाज की संरचना पूर्ण होती है। लेकिन समाज में नारी का जीवन अत्यंत दयनीय और शोचनीय रही है। हमारे साहित्य में नारी जीवन से संबंधित विविध पहलुओं का चित्रण प्राचीन काल से ही होता आ रहा है। साहित्य और नारी का संबंध सर्वकालिक रहा है। असमीया में भी नारी प्रत्येक काल में साहित्य के केंद्र में रही है। साहित्य के विविध विधाओं कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास आदि में नारी के विभिन्न रूपों का चित्रण दिखाई पड़ता है। असमीया उपन्यास साहित्य की शुरुआत ही नारी को केंद्र में रखकर की गई। असमीया उपन्यास साहित्य में प्रारंभ से ही पुरुषों के साथ महिला लेखिकाओं ने अपनी पीड़ा को वाणी दी है और समाज में नारी के अधिकारों के प्रति जागरूकता लाने का प्रयास किया है।

बीज शब्द :

समाज, साहित्य, उपन्यास, नारी चित्रण, मूल्यांकन, विचारधारा।

मूल आलेख :

प्राचीन काल से ही नारी किसी-न-किसी रूप में साहित्य के केंद्र में रही है। साहित्य के विविध विधाओं कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास आदि में नारी के विभिन्न रूपों का चित्रण दिखाई पड़ता है। असमीया उपन्यास साहित्य के शुरुआत से ही नारी केंद्र में रही है। असमीया उपन्यास साहित्य के प्रारंभ से ही नारी-जीवन से संबंधित विविध पहलुओं का चित्रण उपन्यास में किया जा रहा है। प्रारंभ में असमीया उपन्यास साहित्य लेखन में महिला लेखिकाओं की संख्या पुरुष लेखकों की तुलना में कम थी। *''लेकिन असमीया में मौलिक उपन्यास लेखन की शुरुआत पद्मावती देवी फूकननी से माना जाता है। उनका 'सुधर्मार उपाख्यान' (1884) को*

उपन्यास विधा की कोटि में रखा जाता है।''[1] इसमें उपन्यास के संपूर्ण लक्षण न होने पर भी कहानी की सहज-सरल प्रवाह परवर्ती लेखक को उपन्यास लेखन की ओर प्रवृत्त करती है। असमीया उपन्यास साहित्य में नारी केंद्रित उपन्यासों के विकास-क्रम को दो प्रकार से देखा जा सकता है :-

1. प्राक्-युद्ध युगीन असमिया उपन्यासों में नारी चित्रण
2. युद्धोत्तर युगीन असमिया उपन्यासों में नारी चित्रण

1. प्राक्-युद्ध युगीन असमिया उपन्यासों में नारी चित्रण:

असमिया उपन्यास के जन्म से लेकर द्वितीय विश्वयुद्ध तक के समय को प्राक्-युद्ध युग कहा जाता है। इस युग में ऐतिहासिक और सामाजिक उपन्यास अधिक लिखे गए। इस युग के ऐतिहासिक एवं सामाजिक दोनों ही प्रकार के उपन्यासों में नारी-चित्रण दिखाई पड़ते हैं। ऐतिहासिक उपन्यासों में नारी के आदर्श प्रेम और वीरंगना रूप को दिखाया गया है, वहीं सामाजिक उपन्यास में नारी के संघर्ष, पीड़ा एवं त्याग का चित्रण किया गया है। पद्मनाथ गोहाईं बरुवा की सन 1891 में रचित 'भानुमती' और सन 1892 में रचित 'लाहरी' ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर रचित प्रेम-प्रधान उपन्यास है। 'भानुमती' उपन्यास की नायिका भानुमती बुद्धिमती और परंपरा का विद्रोह करने वाली स्त्री है। भानूमती मंत्री बरगोहाईं के पुत्र चारु गोहाईं से प्रेम करती है और मन-ही-मन उसे अपना पति मान लेती है। भानुमती के पिता भानुमती का विवाह राजा रुद्रसिंह के पुत्र शिवसिंह से तय करते हैं। भानुमती इस विवाह को अस्वीकार करती है और घर से भाग जाती है और मुवामरिया विद्रोह में लड़ते हुए अपने प्राण त्याग देती है। इसी कड़ी में सन 1891-1892 में प्रकाशित लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा का उपन्यास 'पदुम कुँवरी' ऐतिहासिक एवं नारी चरित्र प्रधान उपन्यास है। इसमें भी मुवामरिया विद्रोह की परिस्थिति को दिखाया गया है। इस उपन्यास में मुवामरिया विद्रोह के साथ-साथ ही एक अन्य कथा हरदेव की पुत्री 'पदुम कुँवरी' एवं हरदेव के आश्रित सूर्यकुमार और कलिया भोमोरा की पुत्री फूले की प्रेम कहानी का भी चित्रण किया गया है। इस तरह दोनों ही उपन्यासों की पृष्ठभूमि ऐतिहासिक होने से भी मूल कथा प्रेम पर आधारित है और साथ ही स्त्री के प्रेम, त्याग और संघर्ष को दिखाया गया है।

''असमीया उपन्यास साहित्य के सम्राट 'रजनीकांत बरदलै' के अधिकांश उपन्यासों में नारी चित्रण प्रधान रूप से दिखाई पड़ता है। उनके 'मनोमति' (1900), 'रंगिली' (1925), 'राधा-रुक्मिणी' (1925), 'रहदै लिगिरी' (1930) आदि उपन्यासों के मुख्य पात्र स्त्री ही रही हैं।''[2] उनके ये सारे उपन्यास ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर रचित है। 'मनोमति' की नायिका 'पदुमी' अपने प्रियतम की छवि ईश्वर रूप में अपने मन में बसाती है। वह अत्याचारी मान सैनिकों द्वारा देशवासियों तथा बंदी बनाई गईं नारियों के सतीत्व की रक्षा के लिए अपना सतीत्व विसर्जन करती है और अपना प्राण त्याग देती है। इसमें 'पदुमी' के वीरांगना रूप को चित्रित किया गया है। बरदलै जी के 'रहदै लिगिरी' उपन्यास में नारी के विद्रोह रूप को चित्रित किया गया है। 19वीं सदी में असमिया समाज में जहाँ पुरुष सत्ता नारी के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करता हैं, वहीं उपन्यासकार ने रहदै के चरित्र के माध्यम से समाज में नारी के स्थान को प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया है। असमीया समाज में 'सत्र' में नारी का प्रवेश निषेध है। रहदै दृढ़ता से इस व्यवस्था का विरोध करती है और सत्र में प्रवेश करती है। इसके अतिरिक्त रजनीकांत बरदलै के एक अन्य उपन्यास 'मिरि जीयरी' (1894) नायिका प्रधान सामाजिक उपन्यास है। 'मिरि जीयरी' उपन्यास में मिसिंग जनजाति के जीवन पद्धति, खान-पान, उनकी संस्कृति को दिखाया गया है, साथ ही मिसिंग नारी के चरित्र का सुंदर चित्रण किया गया है। उपन्यास की नायिका 'पानेइ' के नि:स्वार्थ प्रेम, संघर्ष और साहस का सुंदर वर्णन इस उपन्यास में किया गया है। बरदलै जी के प्राय: सभी उपन्यास नायिका प्रधान हैं, लेकिन उनमें व्यभिचार या अश्लीलता का चित्रण कहीं नहीं मिलता है। इस युग के अन्य उपन्यासकार दंडीनाथ कलिता के उपन्यास 'साधना' में नारीवादी भावधारा दिखाई पड़ती है। इस उपन्यास की नायिका 'प्रभावती' आजीवन अविवाहिता रहकर स्वाधीनता आंदोलन में सम्मिलित होती है और नारी के अधिकार के लिए लड़ती है। इसके अतिरिक्त दंडीनाथ कलिता के 'फूल' (1908), दैवचन्द्र तालुकदार कृत 'धुवली-कुँवली' (1922) आदि उपन्यासों में भी नारी चरित्रों का चित्रण किया गया है।

इस युग में पुरुष लेखकों के अतिरिक्त महिला लेखिकाओं ने भी उपन्यास साहित्य की रचना की है। इस युग में स्नेहलता भट्टाचार्य और चंद्रप्रभा सइकियानी– दो महिला लेखिकाओं ने उपन्यास साहित्य की रचना की है। इनमें स्नेहलता भट्टाचार्य कृत 'वीणा' (1926) और 'बेमेजाली' (1938)– दोनों ही पारिवारिक उपन्यास हैं। इसमें परिवार में स्त्री की स्थिति और उसके संघर्ष को दिखाया गया है। चंद्रप्रभा सइकियानी कृत 'पितृभिठा' (1937) भी एक पारिवारिक और सामाजिक उपन्यास है। 'पितृभिठा' उपन्यास में समाज में नारी का स्थान और समाज में नारी के अधिकार पर जोर दिया गया है। इस उपन्यास में नारी और पुरुष के समान अधिकार की बात कही गई है। इस उपन्यास की नायिका 'माधवी' पर पिता की मृत्यु के बाद घर की सारी जिम्मेदारी और पिता का ऋण उसके कंधों पर आ जाते हैं। उसके कोई भाई न होने के कारण पिता की जमीन की अधिकारिणी वह स्वयं को घोषित करती है। लेकिन गाँव के लोग इसका विरोध करते हैं, क्योंकि समाज में ऐसी मान्यता है कि पिता की जमीन पर पुत्र का अधिकार होता है लड़की का नहीं। लेकिन माधवी इसका विरोध करती है, वह अपने अधिकार के लिए लड़ती है और गिरवी रखी जमीन को छुड़ाकर अपने नाम करती है। इस तरह उपन्यासकार ने इस उपन्यास में सामाजिक मान्यता को बदलते हुए स्त्री–पुरुष के समान अधिकार की बात कही है। समाज में व्याप्त स्त्री–पुरुष के भेदभाव को मिटाने का प्रयास किया गया है।

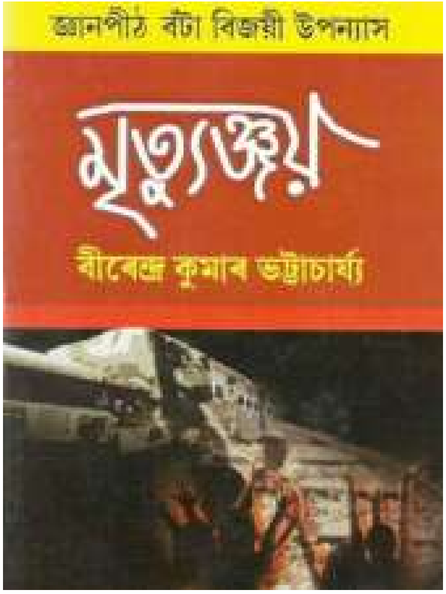

अत: उपर्युक्त विश्लेषण से यह कह सकते हैं कि प्राक्–युद्ध युग में नारी के आदर्श रूप, वीरांगना रूप और उसके विद्रोही रूप का चित्रण असमीया उपन्यासों में किया गया है।

2. युद्धोत्तर युगीन असमिया उपन्यासों में नारी चित्रण :

यह समय द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद का समय है। युद्ध के बाद मनुष्य की विचारधारा, जीवन–शैली आदि में परिवर्तन हुए, जिसका प्रभाव साहित्य पर भी पड़ा। यह समय स्वाधीनता आंदोलन का भी समय था। समाज में काफी उथल–पुथल मची हुई थी। देश कई कठिन परिस्थितियों से गुजर रहा था। समाज में स्त्रियों की दशा भी अत्यंत दयनीय थी। लड़कियों को स्वतंत्र रूप से जीने का अधिकार नहीं था, उन्हें शिक्षा से वंचित रखा जाता था। लड़कियों को घर के काम–काज सिखाने और विवाह कराने में ज्यादा ध्यान दिया जाता था। इस काल के उपन्यासकारों ने समाज में व्याप्त नारी संबंधी विभिन्न समस्याओं का चित्रण करने का प्रयास किया है, साथ ही विभिन्न जनजातीय जीवन पद्धति और जनजातीय समाज में नारी की स्थिति को भी दिखाने का प्रयास किया है। इस काल के उपन्यासकारों में बिरिंचि कुमार बरुवा का नाम विशेष रूप से लिया जा सकता है। बिरिंची कुमार बरुवा ने बीणा बरुवा छद्मनाम से 'जीवनर बाटत' (1945) और राश्ना बरुवा छद्मनाम से 'हेउजी पातर काहिनी' (1958) नामक उपन्यासों की रचना की। दोनों ही उपन्यासों में नारी जीवन का चित्रण बहुत ही सुंदर ढंग से किया गया। 'जीवनर बाटत' उपन्यास की नायिका 'तगर' को उपन्यासकार ने एक आदर्श नारी के रूप में चित्रित किया है। 'तगर' शादी के बाद ससुराल में सास के हर अत्याचार को सहती है, पर कभी उसका विरोध नहीं करती है। 'तगर' के संदर्भ में लेखक कहते हैं, *''तगर पति के घर के सभी दु:ख, अत्याचार, अपमान को चुपचाप सहन कर लेती है। पति के घर वह आई है सभी को सुख देने के लिए, स्वयं सुखी होने के लिए नहीं। स्वयं की दु:ख भरी कहानी कहकर दूसरे के मन को कष्ट देना 'तगर' का स्वभाव नहीं है। सभी*

को खुश रखना ही वह अपना कर्तव्य समझती है।''[3] 'तगर' के माध्यम से लेखक ने असमीया समाज की परंपरागत नारी का चित्रण किया है। उनके दूसरे उपन्यास 'हेउजी पातर काहिनी' में चाय-बागान में काम करने वाली श्रमिक नारी के जीवन का चित्रण किया गया है। इस उपन्यास की नायिका 'चनिया' चाय-बागान में काम करती है। वह चाय-बागान में काम करने वाले श्रमिकों पर हो रहे शोषण और अत्याचार के खिलाप आवाज उठाती है और खुलकर विद्रोह करती है। इस काल के अन्य उपन्यासकार लुम्बेर दाय ने कई उपन्यासों की रचना करके असमीया उपन्यास साहित्य के भंडार को समृद्ध किया है। उन्होंने अरुणाचल प्रदेश की पृष्ठभूमि में 'पाहारर खिले-खिले' (1960) उपन्यास की रचना की, जिसमें आदी समाज की लड़की 'बाती' के जीवन की करुण कहानी का चित्रण किया है। 'बाती' का प्रेम करना ही उसके जीवन के लिए अभिशाप बन जाता है। वह पारिवारिक और सामाजिक हिंसा का शिकार हो जाती है। इनके अन्य उपन्यास 'पृथ्वीर हाँहि' (1963) में 'गसी' और 'लियी' नामक स्त्री की व्यथा को दिखाया गया है। झूठे अपवाद का विरोध और सत्य का साहस पूर्वक समर्थन करने के कारण प्राण त्यागने वाली 'लियी' और 'गसी' के चरित्र का वर्णन इस उपन्यास में किया गया हैं। 'मन आरु मन' (1968) उपन्यास में 'गिदूम' नामक बुढ़िया की अंधविश्वास पर रहे आस्था और मानवीय संवेदना के पक्ष को उभारा गया है। 'कईनार मूल्य' (1984) उपन्यास में 'गुमबा' नामक किशोरी द्वारा बाल्य-विवाह का विरोध करते हुए दिखाया गया है। इसी तरह ठंगसी द्वारा रचित 'सनम' (1981) और 'लिंगझिक' (1983) उपन्यास में अरुणाचल प्रदेश के शेरटूकपेन समाज की स्त्रियों के समस्याओं का चित्रण किया गया है। इसी तरह रोंग्बोंग तेरांग ने 'रंग्मिलीर हाँहि' (1981) उपन्यास में कार्बी महिला के रहन-सहन, खान-पान, पहनावा एवं विभिन्न कार्यक्रमों में उनकी भूमिका का चित्रण किया है। इसके अतिरिक्त होमेन बरगोहाईं कृत 'सुबाला' (1963) उपन्यास की नायिका सुबाला मानवीय मर्यादा से वंचित विभिन्न प्रतिकूल परिस्थितियों को झेलते हुए भी विवाह के स्वप्न देखती है और जीना चाहती है। उनके अन्य उपन्यास 'मत्स्यगंधा' (1987) में निम्नकुल में पैदा होने वाली मेनका के संघर्ष से भरे जीवन का चरित्र का चित्रण किया गया है। बीरेंद्रकुमार भट्टाचार्य के प्रसिद्ध उपन्यास 'मृत्युंजय' (1970) में स्वाधीनता आंदोलन के समय के असम की पृष्ठभूमि को दिखाया गया है। उपन्यास के नारी पात्र 'डिमी' के चरित्र को प्रभावी ढंग से चित्रित किया गया है। सत्येंद्रनाथ शर्मा कहते हैं, *''अनुपमा, आरती आदि के विपरीत एक संस्कारमुक्त, स्वतंत्र स्वभाव, साहसी और नारी सुलभ कोमल मन की अधिकारी के रूप में डिमी एक सार्थक सृष्टि है।''*[4] इनके अन्य उपन्यास 'इयारूइंगमत' (1960) में नगा नारी के चरित्र का वर्णन किया गया है तथा 'आइ'(1960) और 'प्रतिपद' (1970) उपन्यास में भी नारी समस्याओं का चित्रण किया गया है। इन सब के अतिरिक्त नवकांत बरुवा कृत 'ककादेउतार हाड़' (1974), 'गड़मा कुँवरी' (1980), भवेन्द्रनाथ सइकिया कृत 'अन्तरीप' (1986), वीरेण बरठाकुर कृत 'बाईसाहेबा' (1980), बीरेण बरकटकी कृत 'मृत्यु गसकी आना जय जिनि' (1988), राधिकामोहन गोस्वामी कृत 'चाकनैया' (1954), 'बा-मारली' (1958), योगेश दास कृत 'निरुपाय' (1963), 'हेजार फूल' (1967) आदि उपन्यासों में नारी के विविध रूप, उनके त्याग, स्नेह, ममता तथा स्त्री की समस्याओं का चित्रण किया गया है।

इस काल में पुरुष रचनाकारों के अतिरिक्त महिला रचनाकारों की एक सशक्त पीढ़ी का उदय हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद नारी शिक्षा के प्रचार-प्रसार से महिलाएँ भी अपने विचार, पीड़ा, जीवन संघर्ष आदि को लेखन के माध्यम से व्यक्त करने लगी। इन लेखिकाओं ने नारी के विकास के साथ ही समाज में नारी की स्थिति को सुधारने तथा उनमें नई चेतना को जगाने का भी प्रयास किया है। इन लेखिकाओं में हिरण्मयी देवी कृत 'जीवन संग्राम' (1956) उपन्यास में असमीया समाज के पुरुष आधिपत्य और नारी शोषण के खिलाफ आवाज उठाते हुए दिखाया गया। निरूपमा बरगोहाईं के अधिकांश उपन्यास नारी समस्याओं को लेकर लिखे गए हैं। उनके उपन्यासों 'खेई नदी निरबधि' (1963), 'दिनर पिछत दिन' (1968), 'सामान्य असामान्य' (1971), 'केक्टासर फूल' (1973), 'एजन बूढ़ा मानूह' (1966), 'अन्य-जीवन' (1987),

'तिनिकन्या' (1978), 'इपारर घर हिपारर घर' (1979), 'चम्पावती' (1990), 'अभिजात्री' (1992) आदि में नारी चरित्र का चित्रण प्रधान रूप से मिलता है। इनके 'अभिजात्री' उपन्यास में स्वाधीनता आंदोलन की विशिष्ट नेत्री चंद्रप्रभा सइकियानी के जीवन का चित्रण किया गया है। इसी श्रेणी में तिलोत्तमा मिश्र कृत 'स्वर्णलता' (1991) उपन्यास में असम से कलकत्ता में शिक्षा ग्रहण करने के लिए जाने वाली पहली असमीया नारी 'स्वर्णलता' के जीवन का चित्रण किया गया है। इस तरह उक्त काल में कई जीवनीमूलक उपन्यास भी लिखे गए।

इस युग की अन्य लेखिकाओं में मामोनी रायसम गोस्वामी कृत 'नीलकंठी ब्रज' (1976) उपन्यास में हिंदू समाज में विधवा नारी के जीवन संघर्ष को दर्शाया गया है। इनके अन्य उपन्यास 'संस्कार' (1986) में विधवा नारी के जीवन, 'सीनाबर सूँत' (1972) और 'मामरे धरा तरोवाल' (1980) में श्रमिक नारी के जीवन संघर्ष को, 'नागठ शहर' (1986) और 'सापर सालर जूता' (1986) में दिल्ली महानगर में काम करने वाली अकेली नारी के जीवन को चित्रित किया गया है। इन सब के अतिरिक्त उमा बरुवा कृत 'निखार आन्धारे आवरी' (1867), अरुपा पटंगीया कलिता कृत 'मृगनाभि' (1987), शुचिब्रता रायचौधुरी कृत 'बा-मारली' (1958), नीलिमा दत्त कृत 'आकाश बंती' (1969), 'शैल-शील' (1970), प्रबीणा सइकिया कृत 'उत्तरायणों' (1967), चित्रलता फूकन कृत 'अश्रुवन्या' (1969), रुणु बरुवा कृत 'निजान घाट' और शान्त सरसी' आदि उपन्यासों में इन लेखिकाओं ने नारी-जीवन से संबंधित विविध पहलुओं का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है। इन लेखिकाओं ने आधुनिक नारी के जीवन संघर्ष को सूक्ष्मता से चित्रित करने का प्रयास किया है। परिवार, समाज, नैतिकता आदि के संबंध में नए मानदंडों की स्थापना की है।

निष्कर्षत: असमीया उपन्यास साहित्य में प्रारंभ से ही नारी जीवन को केंद्र में रखकर उपन्यास लिखे गए। प्राक्-युद्ध युग के उपन्यासों में नारी के आदर्श रूप को अधिक महत्व दिया गया है। इस युग में असमीया साहित्य में उपन्यास साहित्य की रचना कम मात्रा में हुई। इसी कारण नारी समस्या का चित्रण कमोबेश मात्रा में मिलता है। नारी जीवन से संबंधित हर पहलू का चित्रण इस काल में दिखाई नहीं पड़ता है। प्राक्-युद्धोत्तर युग में शिक्षा के प्रचार-प्रसार से अधिकांश लेखक-लेखिकाएँ उपन्यास लेखन की ओर प्रवृत्त हुए। इस युग में ऐतिहासिक नारी, जनजातीय नारी, श्रमिक नारी, अस्पृह एवं उपेक्षित नारी, सामान्य नारी एवं नारी से संबंधित जीवनीमूलक उपन्यास भी लिखे गए। इन उपन्यासकारों ने नारी की पारिवारिक, सामाजिक और आर्थिक समस्याओं के चित्रण के साथ उसके समाधान के मार्ग भी प्रस्तुत किए।

महिला उपन्यासकारों ने अपनी ही पीड़ा को वाणी दी। समाज में नारी की प्रतिष्ठा की माँग होने लगी। नारी को अपने स्वतंत्र अस्तित्व का बोध हुआ, इस बोध ने नारी के जीवन में अनेक परिवर्तन लाए। अत: इस युग के उपन्यासों में नारी के विविध पहलुओं के चित्रण के साथ ही उनके जीवन में व्याप्त परिवर्तन भी देखने को मिलते हैं। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. स. गोस्वामी, रंजितकुमार देव, असमीया साहित्यर बुरंजी : पंचम खंड, गुवाहाटी, ए.ब.इ.ल.ए.सी., 2015, पृ. सं.-445.
2. स. बरुवा, नवीन, नीलकंठी निरुपमा, गुवाहाटी, पूर्वांचल प्रकाश, 2018, पृ. स. 138.
3. स. हजारिका, डेका, करबी, तुलनात्मक अध्ययन, डिब्रूगढ़, कौस्तभ प्रिंटर्स, 2004, पृ. स. 161.
4. स. हजारिका, डेका, करबी, तुलनात्मक अध्ययन, डिब्रूगढ़, कौस्तभ प्रिंटर्स, 2004, पृ. स. 156.
5. शर्मा, सत्येन्द्रनाथ, असमीया उपन्यासर गतिधारा, सौमार प्रकाश, 2013.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

आदिवासी समाज का यथार्थ दस्तावेज 'धूणी तपे तीर'

अरविंद कुमार यादव

शोध सार :

हिंदी साहित्य स्वयं ही अत्यंत समृद्ध है। समय-समय पर हो रहे प्रयोगों ने इसकी रीढ़ को मजबूती प्रदान करने का कार्य किया है। इन प्रयोगों द्वारा नारीवादी, दलित, आदिवासी आदि बिंदुओं को केंद्र में रखकर रचनाएँ हुईं, जिसने परंपरावादी लेखन की लीक से हटकर कुछ नया रचने का साहस किया। परंपरावादी लीक से चिपक कर चलने वाले साहित्यकारों ने साहित्यिक विखंडनवाद की अवधारणा को नकारने का प्रयास किया। जब हम यह कहते हैं कि साहित्य समाज का दर्पण है, तब समाज के हर वर्ग को साहित्य के माध्यम से अपना पक्ष प्रस्तुत करने का अधिकार स्वत: प्राप्त हो जाता है। अभिव्यक्ति के उनके इस अधिकार को सहजता से स्वीकार किया जाना चाहिए। मेरी दृष्टि से इसे साहित्य का विखंडन न मानते हुए इसकी तुलना उस वट वृक्ष से की जानी चाहिए, जिसमें समय-समय पर उसकी शाखाओं से अंकुरित होने वाली लताएँ प्रारंभ में तो वृक्ष के लिए अतिरिक्त भार जान पड़ती हैं। परंतु वे जब धरातल को छूने लगती हैं, मृदा के संपर्क से पोषित हो और विकसित होती हैं, तब अतिरिक्त जड़ों के रूप में परिवर्तित होकर उस वृक्ष को पोषित करते हुए अतिरिक्त मजबूती प्रदान करने के साथ-साथ उसके आयुष्य में भी वृद्धि करती हैं। अत: आज आदिवासी साहित्य भले ही अपनी शैशव अवस्था में है, किंतु उसके मौखिक साहित्य की समृद्ध परंपरा इस बात का विश्वास दिलाती है कि उसका भविष्य उतना ही प्रकाशपूर्ण होगा।

बीज शब्द :

अभिव्यक्ति, विखंडनवाद, परंपरावाद, व्युत्पत्ति, अवधारणा, प्रश्नचिह्न, मापदंड, प्रशंसा, यथार्थ, नरसंहार, पर्यावरणविदों आदि।

शोधार्थी, हिंदी विभाग
बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय
लखनऊ, उत्तर प्रदेश-226025
9451359127
arvindkumar2161972gmail.com

प्रस्तावना :

आदिवासी शब्द की व्युत्पत्ति दो शब्दों के संयोग से हुई है- एक है 'आदि' जिसका अर्थ है-'मूल' तथा दूसरा है- 'निवासी' जिसका अर्थ है-निवास करने वाला अर्थात किसी स्थान पर रहने वाले वहाँ के मूल निवासी को आदिवासी कहा जाता है। पुरातन लेखों में इन्हें 'अत्विका' भी कहा गया है। इस प्राचीनतम समाज का अपना धर्म, अपनी संस्कृति एवं परंपराएँ होने के बावजूद वे मूलत: प्रकृति

पूजक हैं। उनकी इन परंपराओं को अभिव्यक्त करने वाले साहित्य को मोटे तौर पर आदिवासी साहित्य कहा जाता है। आदिवासी साहित्य की अवधारणा को लेकर तीन तरह के मत परिलक्षित होते हैं। गैर आदिवासी लेखकों के द्वारा आदिवासियों पर लिखित साहित्य, आदिवासी लेखकों के द्वारा आदिवासियों पर किए गए रचना कर्म तथा कुछ 'आदिवासियत' के तत्वों का निर्वाह करने वाली रचनाओं को आदिवासी साहित्य कहा जाता है।

अब यह चर्चा का विषय अवश्य हो सकता है कि आदिवासी साहित्य किसे कहा जाए, सिर्फ उसे जिसकी रचना मात्र किसी आदिवासी रचनाकार ने की हो या इसमें गैर आदिवासी रचनाकारों को भी स्थान दिया जाए। जवाब अत्यंत ही सरल है। कई बार ऐसा भी होता है कि हम अपनी स्वयं की विशिष्टताओं को जिस स्तर तक परख नहीं सकते, दूर बैठा व्यक्ति सरलता से उसे परख कर परिभाषित कर लेता है, भले ही वह मात्र ऊपरी सतह पर ही क्यों न हो। इसके विपरीत यह भी उतना ही सत्य है कि- ''जाके पांव न फटी बिवाई, सो क्या जाने पीर पराई।'' अत: आंतरिक एवं स्वाभाविक पीड़ा की अभिव्यक्ति तो वही कर सकता है, जो उस दौर से गुजरा हो। अत: मैं मानता हूँ कि बाह्य अथवा आंतरिक हर दृष्टि से उन्नति के लिए यह आवश्यक है कि हम हर रचनाकार को उनका अपना-अपना स्थान प्रदान करते हुए एक सामूहिक दायित्व के साथ इसे समृद्ध करने की दिशा में अग्रसर हों तो यह अधिक प्रशंसनीय रहेगा।

आदिवासी साहित्यकारों में एक अग्रणी साहित्यकार श्री हरिराम मीणा हैं, जिनका जन्म राजस्थान के बामनवास नामक गाँव में एक आदिवासी किसान परिवार में हुआ। अशिक्षित होने के बावजूद माता-पिता ने उनकी शिक्षा पर विशेष बल दिया। परिणामत: वे आज आई.पी.एस. के पद पर आसीन हैं। उन्हें साहित्य से विशिष्ट लगाव है, अत: पद्य तथा गद्य दोनों विधाओं से अभिव्यक्ति करते हुए साहित्य की सेवा कर रहे हैं। हरिराम मीणा जी की औपन्यासिक रचना 'धूणी तपे तीर' एक बहुचर्चित उपन्यास है।

उन्नीसवीं शताब्दी के अंत से लेकर बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ के काल में राजस्थान, गुजरात के सीमावर्ती प्रदेश में निवास करने वाले आदिवासियों के समाज, उनके जन-जीवन तथा उस काल के शासकों की सत्ता लोभ और आदिवासी समाज में फैल रही जागृति के कारण उत्पन्न भय के कारण किए गए सामूहिक नरसंहार की पृष्ठभूमि पर रचित यह उपन्यास इतिहासकारों पर एक प्रश्नचिन्ह लगाता है। इतिहास के पन्नों में, जो मात्र राजपुताना शासकों के शौर्यगान से पटी पड़ी हैं, आदिवासी समुदाय के इस संघर्ष गाथा की गैर मौजूदगी इतिहासकारों के दोहरे मापदंड को दर्शाती है। यह इस बात का भी प्रमाण है कि आदिवासी समुदाय को मात्र समाज की मुख्यधारा से ही नहीं, वरन उनके बलिदान आदि को भी साहित्य में उचित सम्मान, जिसके वे अधिकारी हैं, उससे वंचित रखा गया है। प्रारंभिक साहित्यिक रचनाओं में आदिवासी समुदाय को मात्र ऊपरी सतह तक ही स्थान दिया गया है। ऐसे में 'धूणी तपे तीर' एक बड़े अभाव की कमोबैश पूर्ति के रूप में सामने आया है।

यह उपन्यास मूलत: ब्रिटिश काल में रजवाड़ों और ब्रिटिश सत्ताधीसों द्वारा आदिवासियों पर किए जाने वाले शोषण तथा उसके संगठित रूप से किए गए विद्रोहों के साथ-साथ आदिवासी समाज में उस काल में चलाए गए जागृति अभियान का चित्रण करता है। इस उपन्यास का मुख्य पात्र गोविंद नामक बंजारा अपने गुरु से धर्म संबंधित शिक्षा ग्रहण करते हुए स्वामी दयानंद जैसे महापुरुषों के विचारों से प्रभावित होकर आदिवासी समाज के उत्थान हेतु जागृति का कार्य प्रारंभ करता है। उसके विचार, भिन्न-भिन्न आदिवासी समुदाय जैसे भील, मीणा, गरातिया, दनोत आदि लोगों को इस हद तक प्रभावित करते हैं कि वे उसे अपना गुरु मानते हुए उसके अनुयायी बन जाते हैं तथा सेवा के कार्य में उसके साथ जुड़ते चले जाते हैं। नशाबंदी, धर्म के प्रति आस्था का विस्तार, शिक्षा के प्रति जागरूकता, साफ-सफाई, डायन-वध, झाड़फूँक, जादू-टोना आदि कई आंतरिक समस्याओं संबंधी चेतना फैलाया हुआ यह एक धार्मिक एवं सामाजिक सुधार आंदोलन का रूप धारण करता है। इसके छत्र तले आदिवासी समाज से पूंछा, कुरिया, थावरा आदि आदिवासी नायक उभरते हैं तथा सम्प सभा का

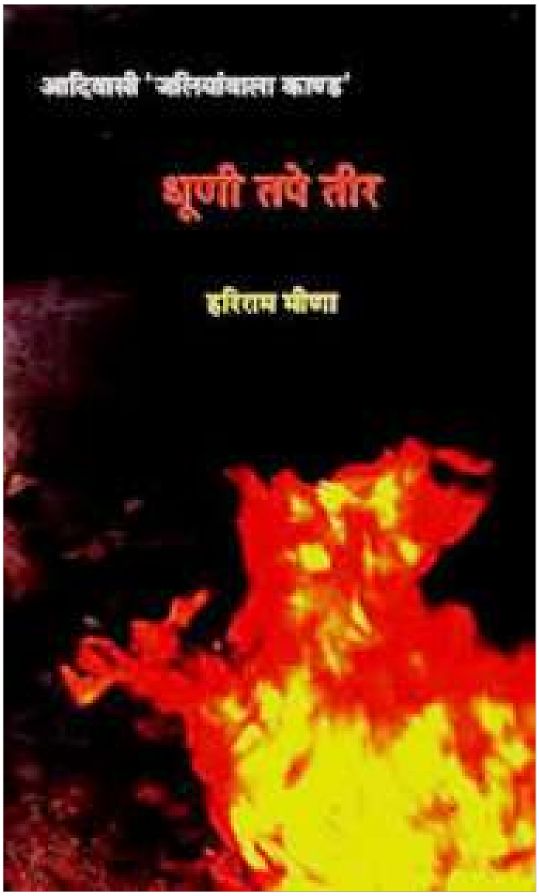

गठन किया जाता है, जिससे जुड़े सदस्य उपर्युक्त बुराइयों का स्वयं भी प्रतिकार करते हैं तथा लोगों को भी जागरूक करते हैं। धीरे-धीरे यह संगठन पहले शांतिपूर्वक राज के अत्याचारों जैसे बेगारी प्रथा, कर वसूली, वनोपज के उनके पुश्तैनी अधिकार से उन्हें वंचित किया जाना आदि का विरोध करता हुआ बाद में उग्र स्वरूप धारण करने के कगार पर पहुँचता है। आदिवासियों की यह एकजुटता राजपुताना शासकों के मन में भय उत्पन्न करती है, परिणामत: अंग्रेजी शासन की मदद से मानगढ़ की पहाड़ी पर एकत्र हुए आदिवासियों का सामूहिक नरसंहार किया जाता है। इस आखिरी आमने-सामने की लड़ाई में आदिवासी समुदाय अपने परंपरागत हथियारों जैसे तीर-कमान, भाले, गोफन आदि से इसका जवाब देता हुआ शहीद होता है, किंतु अपने घुटने नहीं टेकता।

आदिवासी जीवन एवं परंपरा :

इस संपूर्ण कथा-क्रम में लेखक जगह-जगह पर आदिवासी समाज के रहन-सहन, भौगोलिक परिवेश, धर्म तथा संस्कृति, परंपराओं, मान्यताओं तथा उनकी समस्याओं एवं उन पर किए जाने वाले अत्याचारों आदि का बड़ी ही सूक्ष्मता से चित्रण करते हैं। इस उपन्यास में आदिवासी समाज के भौगोलिक परिवेश, प्राकृतिक सौंदर्य का इस प्रकार चित्रण किया गया है कि पूरा आंचलिक परिवेश आँखों के सामने एक चित्र पटल के रूप में उभर जाता है। उदाहरणार्थ- *''वागड़ प्रदेश के जंगलों में पलाश के पेड़ों की बेतरतीब शाखाएँ फूलों के गुच्छों से लदी हुई थी। पत्ते तो नाम के थे। दहकते अंगारों से सुर्ख फूल, जैसे जंगल में चारों ओर आग लगी हो।...... पतझड़ के बाद चैत में फूटी नन्हीं कोंपलें अब किशोर हो गयी थीं। जंगल के बीच-बीच में यहाँ-वहाँ अमलतास के पेड़ अपने पीले फूलों को टहनियों के गर्भ में पाले हुए थे। सागौन के लंबे दरख्त जंगल के पहरेदारों से प्रतीत हो रहे थे। इमली, महुआ, सरेस, बरगद, पीपल, जामुन, आम के वृक्ष अपनी सघनता के कारण शांत दिखाई दे रहे थे। मौसम का मिजाज गर्म होता जा रहा था।''*[1] आदिवासी समाज का वन-प्रदेश में निवास करना अन्य के लिए एक रोमांच का विषय हो सकता है, किंतु उनके लिए कई मायनों में मुश्किल भरा जीवन है। सुदूर जंगलों के मध्य उनका जीवन प्रकृति की दया पर निर्भर करता है। अथक परिश्रम से खेतों में उपजाई गई फसल एक ही झटके में बरबाद हो जाती है, जिस पर पूरे परिवार का भरण-पोषण निर्भर करता है। ऐसी अवस्था में वनोपज जैसे कंदमूल, लकड़ियों, गोंद आदि से होने वाली आय ही उनका एक मात्र सहारा रह जाता है।

आदिवासी समुदाय अपने परिवेश को उचित सम्मान देते हुए पेड़-पौधों तथा वन में निवास करने वाले जानवरों आदि संबंधी मानवीभाव का संस्कार रखते हैं। उनकी पूजा आदि के अतिरिक्त उन्हें मानव तुल्य मानते हुए उनके प्रति आदर का भाव रखते हैं। इसी उपन्यास का पात्र थावरा जब सम्प सभा से जुड़ने के विषय में पिता से मतभेद होने के कारण घर छोड़कर निकल जाता है, तब रात्रि में, भूखे होने के बावजूद जंगल के फलों को हाथ तक नहीं लगाता।

यथा- *''उसे भूखे ही रात गुजारनी थी। दिन होता तो कोई कंद-मूल फल तलाशता। मगर रात में पेड़ों व वनस्पतियों को जगाना पाप होता है- यह उसने अपने संस्कारों से सीखा था।''*[2] यह उनके पुरखों के संस्कार में है कि वे अपने आस-पास के जानवरों को बिना वजह न सताएँ अथवा उनका संहार न करें। इसी से संबंधित एक मान्यता के विषय में गोविंद गुरु अपने मित्र कुरिया को बताते हुए कहते हैं- *''देख कुरिया, मैं यह तो नहीं कहता कि तू ढोर-अक्ल वाला आदमी है। पर किसी भी जीव को बेवजह मारना पाप है।.... हमारे पुरखे तो कहा करते थे कि इस जन्म में कोई मिनख किसी जीव को जिस तरीके से सताता या मारता है, तो अगले जनम में वह जीव आदमी की जोण में आकर उस आदमी से उसी तरह बदला लेता है...''*[3] हालाँकि पुनर्जन्म की इस मान्यता पर अंधविश्वास या अज्ञानता के नाम पर प्रश्न चिन्ह लगाया जा सकता है, परंतु इसमें विद्यमान प्रकृति के प्रति आदर-भाव तथा इससे होने वाले प्रकृति के संरक्षण, जो आज पर्यावरणविदों के लिए चिंता का विषय है, उसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है।

इस समाज के लोगों के विषय में नरभक्षी होने, जंगलीपना तथा संवेदनविहीनता आदि जैसी कई भ्रांतियाँ फैलाई गी हैं। इस उपन्यास में इस समाज के मानवीय सद्‌गुणों और परस्पर सहायता की भावना को भी उभारा गया है। मिल-जुलकर रहना इनका अपना संस्कार है। छपन्या का भीषण अकाल, जिसमें लोग दाने-दाने के लिए, पानी की बूँद-बूँद के लिए तरस गए थे। हैजा आदि बीमारियाँ फैल रही थीं, ऐसी परिस्थिति में भी इस समुदाय ने अत्यंत ही विकट अभावों से जूझने के बावजूद परस्पर सहयोग तथा एक-दूसरे के लिए त्याग की भावना का परिचय दिया तथा अपने मानवीय मूल्यों को नहीं छोड़ा। यथा- *''एक जगह चार आदिवासियों ने कुछ चाँदी के गहने बेच कर आटा खरीदा, जिससे केवल एक रोटी बनी। उन चारों व्यक्तियों ने उस रोटी के चार टुकड़े किये और बराबर बाँटकर खाया। एक अन्य जगह महुआ के पेड़ के नीचे से दो आदिवासी गुजर रहे थे। पेड़ पर उन्हें केवल एक फल नजर आया, जिसे दोनों ने आधा-आधा बाँटकर खाया।''*[4]

आदिवासी समाज अपने निवास स्थान के अतिरिक्त अन्य कई मायनों में विशिष्ट तथा अन्य की तुलना में पृथक है। उनकी बोली, पहनावा, दंत कथाओं से पटे पड़े उनके अपने लोक गीत आदि। इस उपन्यास में मानगढ़ पहाड़ी पर आयोजित मेले में शामिल हुए आदिवासियों के पहनावों का बृहद रूप से जिक्र करते हुए मीणा जी लिखते हैं- *''स्त्रियों ने हाथों में चाँदी के गजरे और चूड़े, नारियल के कासले, लाख की चूड़ियाँ, कुकड़ विलास (गिलट) के भोरिए अथवा कातरिए, लाख की कामली, काकणी, चाँदी की घूंघरी वाली बंगड़ी और चाँदी की कांसली पहन रखी थी। अपने बाजू में चाँदी का बाजूबंद, लाख का चौड़ा चूड़ा, अंगुली में चाँदी की अँगूठी और चाँदी या गिलट की बीटी पहने हुए थी। कइयों ने चाँदी की घूघरी वाला हथफूल हाथों में पहन रखा था। सिर पर चाँदी का बोरला पहने और राखड़ी गुंथे हुए थी। बालों की चोटी में काला फुंदा... कमर में चाँदी का कंदोरा... पैरों में चाँदी या कुकड़ विलास का केड़ला, चाँदी के आँवले... कुँवारी युवतियों ने लाल लूगड़ा, लाल चूनरी, राती का पड़ी, राता घाघरा और लाल छिटका की ओढ़नी पहन रखी थी।....''*[5] अभावों के मध्य जीवन जीने के बावजूद उनके शौक, पहनावे आदि इस समाज के जिंदादिली से जीवन जीने के सबूत हैं। यहाँ आदिवासी समाज में प्रचलित हाथ जोड़िया, पग पासणियाना, जालणियाना, उडणियाना, फदुक चाला, मूरिया, गैर आदि परंपरागत नृत्य कलाओं के साथ-साथ हीड़ा जैसे आदिवासी लोक गीतों का वर्णन भी दृष्टिगोचर होता है, जो आदिवासी समाज की समृद्ध सांस्कृतिक परंपरा को दर्शाता है।

आदिवासी समाज प्रकृति की पूजा-अर्चना में विश्वास रखता है। वे मूलतः शिव की भक्ति करते हैं। ऐसे में गोविंद गुरु का उन्हें धूणी की भक्ति की ओर ले जाना तथा आदिवासियों द्वारा इसका सरलता के साथ अनुमोदन करना इस समाज की सहज ग्रहणशील वृत्ति की ओर इशारा करता है। इस उपन्यास के ऐसे कई अन्य रोचक प्रसंग जैसे अजीब सी आवाज निकालकर पक्षियों को भगा देना, बारिश तथा ओलावृष्टि के समय प्रौञ औरतों का हांडियों को घर से बाहर फेंकना या चाकी को उल्टी दिशा में घुमाना आदि बाहरी जन को रोमांचित कर देती हैं। किसी की मौत की

एवज में आर्थिक हर्जाना लिया जाना (मौताणा) आदि परंपराएँ, जिससे हम सभी आज भी अनभिज्ञ हैं, उनका इस उपन्यास में समावेश हमें इस समाज को और भी करीब से जानने तथा समझने के साथ हमें उनके प्रति और भी जिज्ञासु बना देता है।

सामाजिक एवं राजनैतिक समस्याएँ :

यह उपन्यास आदिवासी समाज की आंतरिक समस्याओं एवं उससे उनके संघर्ष को भली-भाँति चित्रित करता है। अथक परिश्रम से भरे उनके जीवन में कई समस्याएँ व्याप्त हैं, जिसे वे अपनी नियति मानकर जीते चले जाते हैं। इस उपन्यास में अंधविश्वास, कुप्रथाएँ आदि के साथ-साथ व्यसन संबंधी आदि कई समस्याओं एवं उसके दुष्प्रभावों के चित्रण के साथ उसके प्रति जागरूकता लाने का प्रयास किया गया है। उदाहरण के तौर पर उस काल में शराब का सेवन आदिवासी समाज में आमतौर पर देखा जाता था। उससे उत्पन्न होने वाले स्वास्थ्य संबंधी दुष्प्रभाव को वे नजरअंदाज करते हुए वे उसे अपनी शारीरिक तथा मानसिक पीड़ा के निवारक के रूप में प्रस्तुत करते दिखाई पड़ते हैं। वे मानते हैं कि शारीरिक श्रम के उपरांत शराब का सेवन उनकी शारीरिक पीड़ा के लिए लाभप्रद है, किंतु वे उससे उत्पन्न रोगों तथा पारिवारिक समस्याओं से अनभिज्ञ हैं। गोविंद गुरु इस विषय पर कहते हैं- *''जो भी हमारे पास है, उसमें गुजारा करना तो अपनी जगह ठीक है, लेकिन ये राज के आदमी हम पर अनेक प्रकार के अत्याचार करते हैं... इन बातों पर सोचने की बजाये हमारे आदमी दारू पीकर शरीर व माथा खराब करते हैं। अपनी औरतों व बच्चों को आये दिन तंग करते रहते हैं। यह बुरी आदत है। इनका विरोध हमें करना चाहिए ना? अगर ऐसी बातें न हों तो क्या हमारा जीवन सुधर नहीं जाएगा?''*[6] गोविंद गुरु व उनके अनुयायी सम्प सभा के माध्यम से लोगों में इसके सेवन से उत्पन्न होने वाली समस्याओं के प्रति जागृति का कार्य करते हैं। उस काल में इससे संबंधित राजनैतिक स्तर की समस्या भी विद्यमान थी। चूँकि यह रजवाड़ों तथा अंग्रेजी शासन के लिए आय का एक प्रमुख स्रोत था। अत: वे महूड़ी (महुआ से बनाई जाने वाली शराब) जो कि आदिवासी स्वयं ही बनाते थे, उस पर कानूनी रोक लगाकर, विदेशों से मँगाई हुई शराब बेचते थे तथा अलग-अलग जगहों पर इसके ठेके खुलवाए जाते थे। सम्प सभा के माध्यम से राज की इस स्वार्थपूर्ण वृत्ति का भी प्रतिकार किया गया और कई जगह आदिवासी लोगों और राज के बीच हिंसक टकराव भी हुआ।

इस उपन्यास में अन्य कई सामाजिक समस्याएँ दिखाई पड़ती हैं-जैसे झाड़-फूँक के माध्यम से रोगों का इलाज करना। अशिक्षा के कारण चिकित्सा संबंधी ज्ञान का अभाव इसका मूल कारण था। द्रष्टव्य है- *''गुरल्या भोपा..... जो दिन भर झाड़-फूँक-भभूत के चमत्कार से लोगों के भूत उतारा करता था, डायनों के प्रभाव को कम करता था, उड़द के दाने 'से-से' कर कच्चे-कलुओं का आह्वान कर गाँव-घरों से अला-बला उतारा करता था।''*[7] ऐसे अंधविश्वासों के चलते, इलाज के अभाव में, व्यक्ति की मौत हो जाया करती थी। यहाँ तक कि सर्प-दंश की अवस्था में भी झाड़-फूँक का ही सहारा लिया जाता था। इस विषय पर भी गोविंद गुरु ने लोगों को जागृत करने का कार्य किया। अपने भगतों को जड़ी-बूटियों के माध्यम से इलाज किए जाने के ज्ञान का प्रचार-प्रसार किया। गोविंद गुरु स्वयं अपने भगत के पुत्र का इलाज जड़ी-बूटियों के माध्यम से करते हुए उसे मौत के मुँह से वापस खींच लाते हैं। इसी प्रकार मानसिक बीमारियों को सर पर माता आना, लाइलाज बीमारियों को दैविक प्रकोप मानना आदि अनेक अंधविश्वास एवं मान्यताएँ इस उपन्यास में दृष्टिगोचर होती हैं।

आदिवासी समाज के अपने अंदरूनी अंधविश्वास एवं मान्यताओं से उत्पन्न होने वाली समस्याओं के अतिरिक्त, उनके प्रति किए जाने वाले भेदभाव, जो आज भी विद्यमान हैं, उसकी बहुतायता उस काल में भी देखी जा सकती थी। आदिवासियों को राजपुताना और अन्य जाति के लोग स्वयं से तुच्छ समझा करते थे। यहाँ तक कि देशी रियासतों की फौज में भर्ती किए जाने वाले विदेशी *''ये पठान आदिवासियों को हेय दृष्टि से देखते थे। उन्हें 'बांदरा' शब्द से संबोधित करते थे।''*[8] अकाल और इन पठानों के अत्याचारों से पीड़ित आदिवासी लोग अपने वन प्रदेश से विस्थापित होने के लिए विवश हो गए थे। कारण भिन्न हैं,

किंतु विस्थापन आज भी इनके लिए एक समस्या है। तब कारण था, राज का अत्याचार और आज विकास के नाम पर उनके निवास स्थान का अधिग्रहण ज्यादा अंतर नहीं है।

इस उपन्यास में आदिवासी समाज से जुड़ी कई राजनैतिक स्तर की समस्याओं पर भी प्रकाश डाला गया है। उस काल में बेगारी की प्रथा आदिवासियों के लिए एक प्रमुख समस्या थी। इसमें आदिवासियों को बिना मेहनताना लिए राज के कार्यों को करना पड़ता था। भवन निर्माण आदि श्रम के कार्यों के लिए मात्र रोटी दिए जाने की प्रथा थी। आदिवासी अपने परिवार हेतु जीविकोपार्जन करने के बजाए बेगारी के कार्य में ही पिसते रह जाते थे। राज का हुक्म न मानने पर उन्हें कोड़े मारे जाते, कुछ के तो हाथ पैर तक कटवा दिए जाते थे। गमेतियों (आदिवासी मुखिया) की राज में कोई खास पैठ न होने से, उनकी सुनवाई नहीं के बराबर थी। अपनी स्वार्थ वृत्ति से प्रेरित उस समय के रजवाड़ों और अंग्रेजी शासन ने कई ऐसे कानूनों को लागू किया, जिससे आदिवासियों का जीना और भी दूभर हो गया और वे दाने-दाने के लिए मोहताज हो गए थे। वनोपज से उनके अधिकार को छीन लिया गया था तथा उसके रक्षण हेतु वनरक्षकों की नियुक्ति की गई। यानी जंगल से फल आदि की बात तो दूर, सूखी लकड़ियाँ तक उठाने का अधिकार उन्हें नहीं था। पीढ़ियों से चले आ रहे रखवाली कर (गैर आदिवासी लोगों की हिफाजत की एवज में लिया जाता था), बोलई (व्यापारियों को इलाके से सुरक्षित राह दिए जाने के बदले में लिया जाता था।) आदि पर प्रतिबंध लगाकर उनके पुश्तैनी अधिकार तथा आय के स्रोत को चोट पहुँचाई गई। 'जरायमपेशा' कानून जो मूलत: अपराधियों के लिए बनाया गया था, उसका आदिवासियों पर धड़ल्ले से प्रयोग हुआ। सूदखोरी भी आदिवासियों के लिए एक प्रमुख समस्या थी। इन सभी समस्याओं का विरोध भी गोविंद गुरु की सम्प सभा के माध्यम से किया गया।

शिक्षा किसी भी समाज के उत्थान के लिए अत्यंत ही आवश्यक है। आदिवासियों का अशिक्षित होना भी उनके लिए कई समस्याओं की जड़ थी। अत: इसके प्रति भी गोविंद गुरु ने आदिवासियों को जागृत करने का कार्य किया। गोविंद गुरु कहते हैं- *"मैं तो इनको समझा रहा हूँ कि पढ़ने-लिखने से आदमी को समझ आती है। वह भले-बुरे का फैसला कर सकता है। जीवन को अच्छा बनाने के लिए भले विचार जरूरी हैं।"*[9] सम्प सभा के भक्तों के माध्यम से गोविंद गुरु ने आदिवासी समाज में शिक्षा के प्रचार-प्रसार के कई कदम उठाए। जो पढ़ना जानते थे, उन्होंने दूसरों को पढ़ाने का बीड़ा उठाया।

स्त्री की भूमिका :

जब हम किसी भी समाज के विषय में चर्चा कर रहें हों तब उस समाज के एक महत्वपूर्ण अंग स्त्री और उसकी उस समाज में भूमिका को नजरअंदाज करना उचित नहीं होगा। आदिवासी समाज में मात्र उस काल में ही नहीं, आज भी स्त्रियों की पुरुष के समकक्ष ही भूमिका दृष्टिगोचर होती है। आज हम समाज में स्त्रियों के लिए पुरुष के समान अधिकार की माँग करते हैं, उसके लिए लड़ाई लड़ने की आवश्यकता की बात करते हैं। परंतु ऐसा प्रतीत होता है मानो यह समाज प्रारंभ से ही उन्हें यह दर्जा देकर यह साबित कर चुका है कि कई मायनों में वह मुख्यधारा के समाज से वैचारिक स्तर पर अधिक उन्नत हैं।

आज भी जहाँ समाज में विधवा नारी के पुनर्विवाह को लेकर परंपरा के नाम पर सर-फुटव्वल होता है, वहीं आदिवासी समाज में इसकी सहज-स्वीकृति प्राचीन काल में ही दृष्टिगोचर होती है। इस उपन्यास में द्रष्टव्य है कि अकाल के समय में पत्नी तथा पुत्र की मृत्यु के बाद गोविंद गुरु गुजरात के संतरामपुर रियासत में नटवा नामक गाँव में चले गए और- *"गनी नाम की एक विधवा से वहीं उन्होंने दूसरा विवाह किया..... गनी से उनके दो पुत्र पैदा हुए.... ।"*[10] इस दूसरे विवाह को आदिवासी समाज ने बिना किसी विरोध के स्वीकार किया। विधवा विवाह को सहजता से आदिवासी समाज में स्वीकार किया जाना कई मायनों में मुख्यधारा के लोगों की अपेक्षा उनकी ग्रहणशील वृत्ति का परिचायक है।

इस उपन्यास में स्त्री पर बलात्कार की समस्या का भी चित्रण हुआ है। परंतु यह दुराचार उनके अपने आदिवासी

समाज की अंदरूनी बुराई न होकर, बाहरी लोगों द्वारा किया गया अपराध है। दल्ली का बलात्कार अंग्रेजी फौज के सूबेदार लियाकत अली द्वारा किया जाता है। *''दल्ली चीखी-चिल्लायी, प्रतिरोध भी डटकर किया, सूबेदार को जोर से धक्का मारा, छाती में जमकर लात भी मारी।''*[11] इसका बदला हरिया और उसके दल ने अंग्रेजी फौज के साथ मानगढ़ की पहाड़ी पर हुई लड़ाई में लियाकत अली का सर काट कर लिया।

मानगढ़ की इसी लड़ाई में आदिवासी औरतों की पुरुषों के समकक्ष बहादुरी और उनकी सहभागिता खुलकर सामने आती है। पुरुषों के समान ही आदिवासी औरतों ने भी अपने परंपरागत हथियारों के साथ अंग्रेजी फौज का सामना बड़ी ही निर्भीकता से किया। ढालरिया गाँव की सुगनी की बुलंद आवाज में कहे गए ये शब्द- *''जब हमारे आदमी ही मर रहे हैं तो हम जी कर क्या करेंगी। संकट की इस घड़ी में हमें जान की परवाह नहीं। जो बन पड़ेगा वह हम करेंगी।''*[12] अपने लोगों के लिए सहर्ष शहादत की भावना का प्रकटीकरण करते हैं। पुंज की पुत्री कमला और उसकी सहेलियों का दल भी गोफन से अंग्रेजी फौज का सामना करते हुए शहीद हो जाता है। यह नरसंहार किसी भी मायने में जलियांवाला कांड से कम स्मरणीय नहीं है।

निष्कर्ष :

उन्नीसवीं शताब्दी के अंत से लेकर बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ के काल के आदिवासी समाज की स्थिति का उल्लेख करता हुआ यह उपन्यास आजादी के इतने वर्षों बाद भी विस्थापन तथा अनेकों मूलभूत समस्याओं एवं अपनी अस्मिता को बचाए रखने की जद्दोजहद से जूझते आदिवासियों के लिए प्रासंगिक जान पड़ता है। आज भी ये लोग वैश्विकरण के कारण समाज की मुख्यधारा से जिस प्रकार की उपेक्षा के शिकार होते हैं, यह हम सभी के लिए एक चिंता का विषय है। आदिवासी समाज की बृहद एवं सूक्ष्म अभिव्यक्ति के साथ यह उपन्यास आदिवासी साहित्य में एक मील का पत्थर है, इसमें कतई संदेह नहीं है। ❑

संदर्भ सूची :

1. धूणी तपे तीर, हरिराम मीणा, साहित्य उपक्रम, दिल्ली, संस्करण- 2018, पृ. 325
2. वही, पृ. 135, 136
3. वही, पृ. 26
4. वही, पृ. 152, 153
5. वही, पृ. 203, 204
6. वही, पृ. 25
7. वही, पृ. 146, 147
8. वही, पृ. 154
9. वही, पृ. 24, 25
10. वही, पृ. 156
11. वही, पृ. 345
12. वही, पृ. 366, 367

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

दृष्टिकोण

बंगाल के अकाल के अस्सी साल और 'तूफानों के बीच'

डॉ. अनुपम

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग
राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय
उदयपुर, राजस्थान-313001
9462091112
professoranupam@gmail.com

हाल ही में आई पूर्व नौकरशाह किशन एस राणा की पुस्तक 'चर्चिल एंड इंडिया मैनिपुलेशन आर बिट्रैअल' मे वे लिखते हैं कि चर्चिल का नस्लवाद दो जगह पर स्पष्ट दिखाई देता है। पहला जलियांवाला बाग नरसंहार और दूसरा 1942-43 का बंगाल का अकाल, जहां उन्होंने भूखे बंगालियों को देने की जगह खाद्यान्न बाहर भिजवा दिया। पुस्तक में राणा यह प्रश्न भी उठाते हैं कि स्वतंत्र भारत की सरकारों ने इस नरसंहार के मामले में कभी कोई जाँच की आवश्यकता क्यों नहीं समझी। सरकारों ने ना सही हिंदी के एक साहित्यकार ने ना केवल बंगाल अकाल का विवरण अपनी रचनाओं में दिया, बल्कि ब्रिटिश सत्ता की भूमिका को उजागर किया। वह थे राजस्थान के कथाकार रांगेय राघव। यह सब विवरण रांगेय राघव ने कल्पना के आधार पर नहीं लिखे, बल्कि वे बंगाल में एक रिपोर्टर की हैसियत से 1942 में गए थे। प्रगतिशील लेखक संघ आगरा के द्वारा डॉक्टर बी.ग. कुंठे के नेतृत्व में चिकित्सकों का एक दल बंगाल भेजा गया था, जिसमें रांगेय राघव शामिल थे। डॉक्टर कुंठे लिखते हैं कि जब भी वे रोगियों की देखभाल करते तब रांगेय राघव गाँव-गाँव घूमकर अकाल और महामारी से पीड़ित इंसानों की स्थिति के विषय में अपने रिपोतार्जो के लिए सामग्री जुटा रहे थे। यही सब विवरण कालांतर में हंस पत्रिका में रिपोतार्ज के रूप में छपे, जो 1946 में पुस्तक रूप मे 'तूफानों के बीच' में प्रकाशित हुए और इन्हीं अनुभवों पर उन्होंने उपन्यास भी लिखा था, जो 'विषाद मठ' शीर्षक से छपा था।

अकाल पहले भी पड़ते थे, जिन पर लोगों ने लिखा, लेकिन वे पूरी तरह से तंत्र की विफलता के कारण ना थे। बंकिम के 'आनंदमठ' मे भी अकाल का जिक्र आता हैं- *''फिर जब अन्न मिलना मुहाल हो गया, तब लोग पेड़ों की पत्तियाँ, घास-पात और जंगली पौधे खाने लगे। छोटी जाति के और जंगली लोगों ने कुत्ता बिल्ली और चूहा मार कर खाना शुरू किया। बहुत से लोग घर छोड़कर भाग गए।''*[1]

हिंदी में प्रायः आलोचक की यह शिकायत रही है कि हमारे रचनाकारों ने भूख और अकाल जैसे विषयों पर उतना नहीं लिखा है, जितना लिखना चाहिए-

''कविता, उपन्यास और कहानी में नई पीढ़ी की रचनशीलता से गुजरने के बाद यह देखकर बहुत आश्चर्य होता है कि किसी भी विधा में भूख जैसी ज्वलंत और महत्वपूर्ण समस्या पर कोई महत्वपूर्ण रचना नहीं दिखाई देती। भूख मनुष्य की

पहली चिंता ही और मानव सभ्यता के विकास का पहला कारण भी।''[2]

भले ही यहाँ बात नई पीढ़ी की हो रही हो, लेकिन यह कथन सभी दौर के हिंदी साहित्य पर लागू होता है। रांगेय राघव ने अकाल पर तो लिखा ही है, भूख के प्रश्न पर 'प्रोफेसर' शीर्षक से एक उपन्यास भी लिखा है, जो भिखारियों पर आधारित है। भूख से भिखारियों का क्या संबंध है यह बताने की आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार रांगेय राघव अपने दौर के अनूठे साहित्यकार हैं, जो मनुष्यता के सर्वकालिक सवालों से जूझते हैं। बंगाल के अकाल में अनुमान के अनुसार चालीस लाख लोगों की मृत्यु हुई थी। इस विषय पर लिखते रहे ऑस्ट्रेलिया के वैज्ञानिक सामाजिक कार्यकर्ता गीड़ोंन पालिया का मानना है कि बंगाल का अकाल मानव निर्मित होलोकास्ट था, क्योंकि चर्चिल इसके लिए सीधे तौर पर जिम्मेदार था। 1942 में बंगाल में अनाज की पैदावार अच्छी हुई थी, लेकिन अंग्रेजों ने व्यावसायिक मुनाफे के लिए भारी मात्रा में अनाज ब्रिटेन भेज दिया, जिससे इन इलाकों में उनका संकट हो गया। पीटर फ्रेंनकोंपन अपनी पुस्तक 'द अर्थ ट्रांसफोर्ड : एन अन टोल्ड स्टोरी' में कमजोर मानसून के साथ-साथ ब्रिटिश शासन के कुप्रबंधन को भी उस दौर में पड़े अकालों के लिए उतरदायी मानते हैं। लेखिका मधुश्री मुखर्जी ने बंगाल के अकाल में जीवित बचे कुछ लोगों से बात की, उनको खोज निकाला और अपनी पुस्तक 'चर्चिल सीक्रेट वार' में लिखा है कि माँ-बाप ने अपने बच्चों को नदियों और कुँओं में फेंक दिया था, जो बच गए उन्होंने घास पत्तियाँ खाईं। वे आगे लिखती हैं- ''*यह अकाल देख चुके एक बुजुर्ग ने बताया कि वही आदमी बचे रहे, जो रोजगार की तलाश में कोलकाता चले आए थे या वे महिलाएँ, जिन्होंने परिवार को पालने के लिए मजबूरी में वेश्यावृत्ति करना शुरू कर दिया।''*[3]

जो सच जीवित बचे लोग बता रहे हैं, वही रांगेय राघव ने लिखा है। 'तूफानों के बीच' में पहला रिपोतार्ज 'बांध भांगे दाओ' शीर्षक से है, जो नदिया जिले के कुष्टिया कस्बे के अनुभवों पर आधारित है। यहाँ आते ही रांगेय राघव समझ जाते हैं कि कलकत्ता ही बंगाल नहीं है। 'जो कुष्टिया कभी हाथ नहीं पसारता था वह आज दाने-दाने को मोहताज है।' आज अन्न का कैसा संकट है -''*लोग घरों से बाहर आते डरते थे कि एक नहीं दो नहीं, सड़कों पर अनेक भूखे दम तोड़ते होंगे और डरते थे घर जाते हुए, जहाँ अपने बच्चे भूखे बैठे होंगे। लोग घरों में मरते थे, बाजार में मरते थे, राह में मरते थे। जैसे जीवन का अंतिम दिन मुट्ठी भर अन्न के लिए तड़प-तड़प कर मर जाना ही था।''*[4]

ऐसा नहीं है कि कुष्टिया का युवा इसके लिए जिम्मेवार लोगों को नहीं जानता है। वह जानता है कि देश के पूँजीपति और सत्ता मिली हुई है, क्योंकि कुष्टिया में एक महाजन के यहाँ ढाई हजार मन अनाज पड़ा है, जिसकी रक्षा मुस्लिम दरोगा कर रहा है। युवा कहते हैं कि शोषक जब एक हैं तो शोषित क्यों नहीं। वे लोकतांत्रिक तरीके से खाद्यान्न को पाते हैं- ''*उस दिन हमने देखा कि हम हिंदू मुसलमान नहीं भूखे थे। त्रस्त और शोषित थे। जब वे दोनों हिंदू मुसलमान होकर भी हमारा रक्त चूसने के लिए एक हो सकते हैं, क्या हम अपने रक्त को बचाने के लिए अपने जीवन की रक्षा करने के लिए एक नहीं हो सकते।''*[5]

शायद आज हम रांगेय राघव की अस्सी वर्ष पूर्व दिखाई गई राह को भूल चुके हैं। जरूरत आज भी एक होकर शोषण के विरुद्ध लड़ने की है। आज भी जाति और धर्म को भूलकर साथ आने की आवश्यकता है। 'एक

रात' रिपोतार्ज में युवकों के दो दल अपने-अपने नायकों के लिए लड़ने को तैयार हैं, लेकिन लेखक चाहता है कि युवा मनुष्य के लिए लड़े। किसी धर्म या नायक के लिए नहीं। हरिपुर गाँव का किस्सा लिखते हुए रांगेय राघव बताते हैं कि वहाँ तो मृत्यु ने डेरा डाल रखा है। मर्द घर छोड़कर भाग गए। बच्चे और औरत पीछे रोने के लिए और भूख से मरने के लिए छूट गए हैं। रांगेय राघव को उस रात नींद ही नहीं आती। यह एक लेखक की संवेदनशीलता है कि वह उस रात यह सोच रहा है कि क्या वह इसके लिए जिम्मेदार है? जबकि यह प्रश्न ब्रिटिश सत्ता और उनके देसी सहयोगी के मन में आना चाहिए था। इसी रिपोतार्ज में एक बेहद लोमहर्षक कथा रूपलाल और प्राणबाला की है। रूपलाल कहीं से चावल लाकर अपनी पत्नी को भात बनाने के लिए देता है ताकि उसके बच्चे भूखे ना रहें, लेकिन जब वह वापस घर आता है तो देखता है कि बच्चे तो भूखे ही हैं और वह भात प्राणबाला अकेली ही खा गई। रूपलाल गुस्से में पागल हो जाता है और वह गंडासा लेकर अपनी पत्नी को मार देता है। वह जानता है कि उस समय वह राक्षस था। हरिपुर में बेहद सारे रूपलाल थे, लेकिन वे वहाँ से पलायन कर गए। उनकी स्त्रियाँ भूख से बचने के लिए वेश्यालयों में चली गईं। शायद पचीस या तीस फीसदी औरतों की यही कथा थी। भूख का यह मंजर देख कर तुलसी और नागार्जुन बरबस याद आ जाते हैं, परंतु शायद ऐसा कठिन दौर तो उन्होंने भी नहीं देखा होगा। लेखक को रोना आता है, पर वह रोना नहीं चाह रहा। वह संघर्ष करना चाह रहा।

राघव के बंगाल प्रवास में डॉक्टर साथ थे। डॉक्टर विद्यार्थी कृपाशंकर, जसवंत, जगदीश प्रसाद और असम से जियाउद्दीन और विद्यार्थी भुइयां भी सेवा कार्य के लिए वहाँ आए थे। रांगेय राघव कहते हैं कि वहाँ भाषा -भाव, संस्कृति के शब्द भेद टूट गए। अकाल के साथ एक और विपदा बीमारियों की थी। जो व्यक्ति भूख से बच भी जाते तो मलेरिया -हैजा जैसे रोग उन्हें नहीं छोड़ रहे थे। रांगेय राघव ने एक रात को देखा कि एक व्यक्ति रेल से कटने के लिए पटरी पर जा लेटा। उसका मानना था कि धीरे-धीरे मरने से बेहतर था एक बार में मरना। ऐसे में भिखारियों को तो कौन खाना देता? यहाँ तक की बीमार लोगों को घरवाले खाना नहीं दे रहे थे, क्योंकि उन्हें तो वैसे भी मरना था।

शिद्धिरगंज में करीब-करीब हर घर में मौत हुई। यह जरूरी नहीं कि हर कब्र में एक ही व्यक्ति हो। रहमत कहता है उसके घर में पचीस लोग थे, पाँच बचे हैं। अब्दुल रहमान के घर में सोलह में से एक। कपड़ा बनाने वाले घरों में कफन का भी कपड़ा ना मिला। यहाँ रांगेय राघव को घरों पर छत नहीं दिखती क्यों?

''अधिकांश घरों की टिनें उखड़ गई थीं और ना जाने कितनों ने भूख से लड़ने के लिए अपनी टीनें बेच दी थीं। भट्टाचार्या ने उँगली से दिखाते हुए कहा वह सामने एक भद्रलोक का घर था उसे भी टिन बेच देनी पड़ी।''[6]

रोटी तो पहले ही नसीब ना थी, कपड़ा छिन गया था और मकान भी अब ना रहा। बाजार में मुनाफाखोरी चरम पर थी। हालात इतने भयावह थे कि पेट की खातिर एक महिला को चार-चार पुरुषों को पति बनाना पड़ा। बाद में वे भी भाग गए तो वह अपने चाचा से अनुमति लेकर वेश्या बन जाती है। जीवित रहने के लिए ऐसा समय तो किसी ने ना देखा होगा। चटगांव में स्त्रियों को फौजियों से कुछ अन्न या पैसा मिल जाता है, लेकिन उसकी कीमत? यहाँ रांगेय राघव ने एक बुढ़िया को डस्टबिन में से कूड़े में से खाते देखा। लोग उससे लड़ रहे थे। उनका जज्बा दिखाते हुए रांगेय राघव लिखते हैं कि एक महिला भूख से परेशान है, पर कहती है कभी भी भीख नहीं माँगूँगी। यह है अपराजित मनुष्यता - *''युग-युग तक संसार को याद रखना पड़ेगा कि गुलामी और साम्राज्यवादी शासन के कारण बंगाल जैसी शस्य श्यामला भूमि में मनुष्य को भूख से दम तोड़ना पड़ा था और लोगों ने इसे पूरी शक्ति से इसलिए झेला था कि मानवता जीवित रहना चाहती थी। उसे कोई नहीं मिटा सकता था।''*[7]

इस प्रकार तूफानों के बीच स्थानीय पूँजीवाद और शासन की निष्क्रियता से पैदा हुए भयावह स्थिति को सामने लाता है। यदि सत्ता चाहती तो वह अपने देशवासियों को इस तरह भूख से मरने से बचा सकती थी, लेकिन साम्राज्यवादी सोच ने यह करना उचित ना समझा। रांगेय राघव लिखते हैं-*''बंगाल का अकाल मानवता के इतिहास में बहुत बड़ा कलंक है। शायद क्लियोपैट्रा धन के वैभव*

और साम्राज्य की लिप्सा में अपने गुलामों को इतना भीषण दुख नहीं दे सकी, जितना आज एक साम्राज्य और अपने ही देश के पूँजीवाद ने बंगाल के करोड़ों आदमी-औरतों और बच्चों को भूखा मार कर दिया है।''[8]

रांगेय राघव ने बंगाल के इन्हीं अनुभवों पर 'विषादमठ' नाम से एक उपन्यास भी लिखा था, जो 1946 में ही प्रकाशित हुआ था। इसमें उन्होंने अकाल और भूख के सत्य को कहानी के रूप में प्रस्तुत किया। उपन्यास में भी रांगेय राघव लिखते हैं- *''पहले तो जहाँ-तहाँ गाड़ देते थे, मगर किसमें इतनी ताकत है कि खोदने की सांसत झेले। खींच ले जाएँगे और समुद्र तीर पर छोड़ जाएँगे। लहरों में बह जाएगी लाश..... जलाने के लिए भी तो पैसा चाहिए? रोज कम-स-कम पचीस आदमी और बच्चे मरते हैं।''*[9]

रांगेय राघव के इस लेखन के बावजूद रामविलास शर्मा लिखते हैं-*''बंगाल के लाखों स्त्री पुरुषों ने जान से हाथ धोए। इस विभीषिका के अनुकूल हिंदी में प्रभावपूर्ण रिपोतार्ज नहीं लिखे गए, किंतु जो लोग वहाँ गए थे, उन्होंने साहित्य को स्थायी निधि दी है। चटगांव के बारे में उर्दू के प्रसिद्ध अली सरदार जाफरी ने एक सुंदर रिपोतार्ज लिखा था।''*[10]

इसी दौर को याद करते हुए अमृतलाल नागर लिखते हैं कि 1940 में फिल्मी लेखक बन गए। 42 तक आते-आते वे सफल लेखक भी बन गए। इस धंधे में पैसा तो मिलता था, लेकिन मन का संतोष खो गया तब- *''बयालीस में बंग दुर्भिक्ष पड़ा। कलकत्ते जाकर अकाल पीड़ितों की दुर्दशा देखी। मन इतना भर उठा कि महीनों तक उसका असर बना रहा। कलम अपने आप से विवश होकर दौड़ चली। 'भूख' उपन्यास जो उस समय महाकाल नाम से प्रकाशित हुआ था, पूरा किया। साहित्यिक मित्रों के बीच फिर से कद्र होने लगी, मैंने नए सिरे से आत्मविश्वास पाया।''*[11]

इस कथन के आलोक में यह भी विचारणीय है कि रांगेय राघव को वह कद्र क्यों ना मिली, जो कलकत्ते में बैठकर लिखने वाले को मिल गई। यह वर्ष उनका जन्म शताब्दी वर्ष भी है और हमारा दायित्व है कि इतिहास की भूलों को सामने लाएँ, फिर वो बाहर वालों की हो या अपनों की। रिपोर्ताज के अंत में रांगेय राघव आगरा वापस लौट रहे हैं, भस्म होकर नहीं जिजीविषा लेकर- *''किंतु फिर भी मन हारा हुआ नहीं है। आज भी मनुष्य को कदम-कदम पर विश्वास ही कि वह एकदम नष्ट नहीं होगा। उसका पुनः उत्थान आवश्यक ही नहीं, अवश्यंभावी है ...... जीवित रहना मेरा अधिकार है।''*[12] ❑

संदर्भ सूची :

1. बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्य, आनंदमठ, मनोज प्रकाशन, दिल्ली, सं. 2019, पृ 6
2. मैंनेजर पाण्डेय, सरोकारों से साक्षात्कार, इंडिया टुडे साहित्य वार्षिकी, 2022, न्यू दिल्ली, पृ 13
3. राकेश कृष्नन सिन्हा, भूला दिया गया हॉलोकास्ट, तहलका, दिल्ली, 15.7.04, पृ 34
4. रांगेय राघव, तूफानों के बीच, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, सं.2012, पृ 13
5. वही, पृ.15
6. वही, पृ.43
7. वही, पृ.46
8. वही, पृ.5
9. रांगेय राघव, विषादमठ, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2006 ,पृ 85
10. रामविलास शर्मा ,कथा विवेचना और गद्यशिल्प, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली,1982, पृ.149
11. अमृत लाल नागर, बूँद और समुन्द्र : संस्मरण, भीष्म सहानी (सं) आधुनिक हिंदी उपन्यास, 2010, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ 94
12. रांगेय राघव, तूफानों के बीच, पृ.95

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

चित्रा मुद्‌गल और मामोनी रायसम गोस्वामी की कहानियों के नारी-पात्रों का मनोविश्लेषणात्मक विवेचन

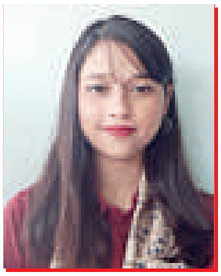

दीक्षा कोंवर

शोधार्थी, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय
गुवाहाटी (असम)/781014
7086605071
dikshakonwar55@gmail.com

सार संक्षेप :

नारी के जीवन संघर्ष और जागृत चेतना को प्रभावी ढंग से चित्रित करने में चित्रा मुद्‌गल और मामोनी रायसम गोस्वामी के नाम उल्लेखनीय हैं। साथ ही दोनों लेखिकाओं के कथा साहित्य में समसामयिक राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक पहलुओं का भी चित्रण मिलता है। चित्रा मुद्‌गल ने अपने कथा साहित्य में समाज के यथार्थ, मानव जीवन संघर्ष तथा मानवीय मूल्य को इतनी कलात्मकता के साथ अंकित किया है कि उनका साहित्य समाज के कल्याण, उच्च संकल्प की भावनाओं से परिपूर्ण है। चित्रा मुद्‌गल एक सफल साहित्यकार हैं, उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से समय के साथ चलकर समाज की प्रत्येक दिशा को दर्शाया है। एक सफल कहानीकार, उपन्यासकार, समाज सेविका के रूप में चित्रा मुद्‌गल साहित्य सेवा तथा समाज सेवा में लीन हैं। वे साहित्य-साधना के साथ ही अनेक सामाजिक संस्थाओं के साथ जुड़कर काम करती आई हैं। साहित्यिक दृष्टि से उन पर इलियट, टालस्टॉय, हेमिंगवे, प्रेमचंद, रवींद्रनाथ ठाकुर, महात्मा गांधी आदि का प्रभाव देखा जाता है। ठीक उसी प्रकार मामोनी रायसम गोस्वामी के लेखन असम तथा भारतवर्ष में ही नहीं, बल्कि पूरे विश्व में प्रचलित हैं। वे एक सर्जनात्मक लेखिका होने के साथ ही मौलिक चिंताओं से समृद्ध, अतीत-प्रिय तथा ऐतिहासिक चेतना से समृद्ध और एक सुकवि रही हैं। ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त गोस्वामी जी दिल्ली विश्वविद्यालय के आधुनिक भारतीय भाषा विभाग की अध्यापिका थीं। असमीया साहित्य जगत की इस महान साहित्यकार की रचनाओं ने जिस प्रकार पाठकों को आकर्षित किया, ठीक उसी प्रकार उनके विशाल व्यक्तित्व को देख सभी मुग्ध होते थे। मामोनी रायसम गोस्वामी का साहित्य और व्यक्तित्व नई पीढ़ी के लिए प्रेरणास्पद हैं।

चित्रा मुद्‌गल की कहानियों के नारी-पात्रों का मनोविश्लेषणात्मक विवेचन :

चित्रा मुद्‌गल की कहानियाँ पाठकों को ज्ञात करवाती हैं कि आज मनुष्य का जीवन कैसा है। वह वास्तव में समझती हैं कि लोग कैसे सोचते और महसूस करते हैं। उनकी कहानियों में ऐसे संदेश छिपे हैं, जो हमें चीजों को गहराई से सोचने और

महसूस करने पर मजबूर करते हैं। अपनी कहानियों में युगीन सत्य को उद्‌घाटित करते हुए मानव मन को समझने का प्रयास किया है।

युगीन सत्यों को उन्होंने अपने कहानियों में बड़ी मजबूती से दर्शाया है, साथ ही मानव मन को। चित्रा जी का नारी मन का विश्लेषण बड़ा ही मजबूत है। पारिवारिक और दांपत्य संबंधों में आए तनावों में ग्रस्त नारी की मनोदशा, पुरुष समाज व्यवस्था द्वारा मिले आघातों और नारी द्वारा ही शोषण का शिकार होने वाली महिलाओं की मनोदशा का चित्रण किया गया है। बदलते समय के दौरान स्त्रियों का मनोविज्ञान भी बदलता नजर आता है, परंतु स्त्री की नारी-सुलभ कोमल मन के कारण कहीं-न-कहीं बदलाव में बाधा आ ही जाती है। उनके नारी पात्र सार्वजिनक जीवन में खुद के पहचान के लिए संघर्ष कर रहे हैं और अपनी अस्मिता और अस्तित्व की खोज करते कहीं सफल हो रहे हैं तो कहीं शोषण का शिकार। अपने को आत्मनिर्भरशील बनाने हेतु पुरुष तांत्रिक समाज से विरोधिता कर स्वयं के अस्तित्व की स्थापना हेतु जूझ रही है। चित्रा जी ने अपनी कहानियों में नारी मन के उत्पीड़न और मानसिक कशमकश के विविध दशाओं का मार्मिक चित्रण पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है। साथ ही नारी के स्वतंत्र अस्तित्व के साथ ही उनके सहज मानवीय स्वरूप का भी चित्रण हुआ है।

'लाक्षागृह' कहानी की नायिका सुनीता द्वारा अविवाहित नारी मन की भावनाओं को व्यक्त किया है। शादी की उम्र ढल चुकी सुनीता के घर में सभी भाई-बहन शादी कर लेते हैं, लेकिन माँ-पिता सुनीता की शादी नहीं करते, क्योंकि वह घर की अकेली कमाने वाली है। जब उसके परिवार के लोग उसके विवाह को लेकर सवाल करने लगे, माँ पड़ोस में रहने वाले एक लड़के से उसकी शादी पक्की करती है, जो अशिक्षित और अपने पैरों से विकलांग है। सुनीता इस रिश्ते को स्वीकार नहीं करती, क्योंकि उसे अपने मन और आत्मा का अपमान लगता है। उस बीच, उसके कार्यालय में काम करने वाला सिन्हा सुनीता को विवाह का प्रस्ताव देता है और सुनीता भी उसे पसंद करने लगती है। सिन्हा और उसके दोस्तों के कथोपकथन सुनकर सुनीता हताश हो जाती है और उसके स्वाभिमान पर गहरा चोट लगता है। वह सोचती है- *'बदशकल जरूर है, किंतु पढ़ी लिखी और अच्छी पोस्ट बदशक्ली। इतनी भी आम नहीं है कि कोई भी ऐरा गैरा, नत्थू खैरा अपनी औकात भूलकर उससे शादी का ख्वाब देखने लगे।'* (मुद्‌गल, 2007: 54)

सुनीता अपने आत्मसमान का सौदा करने में बिल्कुल भी राजी नहीं होती और सिन्हा से विवाह तोड़ देती है। कहानी द्वारा चित्रा जी ने स्त्री को सौदे का साधन मानने वाले पुरुषों को नकारा है। आत्मसम्मान के वजूद को मान्यता देने वाली सुनीता उन तमाम स्त्रियों की आदर्श है, जो समाज और परिवार में नगण्य वस्तु का दर्जा देने के कारण मानसिक अशांति और शारीरिक शोषण का शिकार होती आई है।

'इस इमाम में' कहानी के मुख्य पात्र दिबा और अंजा द्वारा दो भिन्न वर्ग की नारी के जीवन संघर्ष और उनकी मानसिकता को प्रस्तुत किया है । दिबा पढ़ी-लिखी उच्चवर्ग की नारी है, जो घर के में पति द्वारा मानसिक रूप से शोषित होती आई है, वही अंजा निम्नवर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाली नारी है, जो अनपढ़ है और घर-घर काम कर बच्चों का देखभाल करती है और घर संभालती है। अंजा का पति शराबी है और रोज अंजा को मार-पीटकर उस पर शारीरिक शोषण चलाता था, जिस कारण अंजा पति को छोड़कर अलग आदमी के साथ घर बसा लेती है। कचरा उठाने वाली अंजा से जब दिबा की मुलाकात होती है, तब उसकी बातें सुनकर दिबा में भी आत्मनिर्भर बनने की प्रेरणा जागृत होती है और पति की प्रताड़ना और शुष्क मानसिकता की शिकार से मुक्त होना चाहती है। अंजा दिबा को सुझाव देते हुए कहती - *'बाई, अक्खा दिन काय कू घर में पड़ा सड़ता है! दूर किसी ऑफिस-वॉफिस में काम-धंधा देख लो न। साब जो भी बोलता हय, तुम गुप-चुप काय को मान लेता हय? तुम शिखेला-पढ़ेला है न, परवा मत करो। जितना परवा करेगा न उत्लाच वो तुमको आँख दिखाएगा, समझा।'* (मुद्‌गल, 2014:61)

अंजा की बातों ने दिबा के मन में आत्म-बोध को उजागर किया और स्वाभिमान के लिए लड़ना सिखाया। कहानी में चित्रा जी ने पुरुष की बर्बरता से प्रताड़ित नारियों के प्रति अपनी सहभावना दर्शाई है।

'प्रेतयनि' कहानी की नायिका अनीता गुप्ता नारी की हिम्मत की प्रतीक है। टैक्सी ड्राइवर द्वारा अनीता के बलात्कार की कोशिश की जाती है, अनीता उसके चंगुल से बचकर थाने जाकर उसके खिलाफ रिपोर्ट दर्ज कराती है। अगले दिन अखबार में खबर पढ़कर सभी अनीता की हिम्मत की शाबाशी देते हैं, परंतु घरवालों ने सम्मान, मान-मर्यादा आदि की सुरक्षा के लिए अपनी बेटी को शाबाशी देने के बदले घर में ही कैद कर नजरबंद कर दिया। अनीता के प्रति घरवालों का व्यवहार अमानवीय बन जाता है, बदनामी के डर से वे सबसे जब कहने लगते हैं कि जिस अनीता गुप्ता के बारे में अखबार में छपा है वह उनकी बेटी नहीं, बल्कि दूसरी लड़की है, तब अनीता के आत्मसम्मान पर ठेस पहुँचती है और वह मानसिक अशांति में घुट-घुटकर अंत में आत्महत्या का निर्णय लेती है। तभी उसे खबर मिलती है कि दिल्ली विश्वविद्यालय के सभी छात्र-छात्राएँ कल सुबह अनीता को न्याय और उस बलात्कारी टैक्सी ड्राइवर को गिरफ्तार करने हेतु शांतिपूर्ण विरोध-प्रदर्शन करेंगे। इस खबर को पढ़कर अनीता में साहस आता है कि अब वह अकेली नहीं है, उसके साथ पूरे विश्वविद्यालय के छात्र हैं। आत्महत्या का निर्णय त्यागकर वह अपने स्वाभिमान और सम्मान हेतु लड़ने का निर्णय लेती है। वह सोचती है – *'कल वही छात्र और छात्राएँ जब बॉक्स आइटम में उसके आत्मघात की सूचना पढ़ेंगे तो वे स्वयं को अपमानित और ठगा हुआ नहीं महसूस करेंगे कि वे एक निहायत कमजोर और कायर लड़की के बहाने अपनी लड़ाई लड़ रहे थे, जो उन्हें लड़ने से पहले ही हार मानने को अभिशप्त कर गई।'* (मुद्गल, 2014:130)

हमारे समाज में बलात्कार को पाप समझने की मानसिकता आज भी लोगों में है और बलात्कारियों को नहीं, बल्कि जिसके साथ बलात्कार किया जाता है उस लड़की को दोषी मानकर उसके जीवन में पाबंदी लगाई जाती है। अनीता भी ऐसी ही एक मानसिक स्थिति से गुजरती है अपने ही घर में। बलात्कार एक लड़की के शरीर का नहीं, बल्कि साथ-ही-साथ उसके मन का भी होता है। ऐसी स्थिति से गुजरने वाली औरतों के प्रति हमारा दायित्व है कि उनके गुनहगारों को सजा दिलवाने के अलावा भी हम उनके साथ मानवता दिखाएँ और उनका साहस बनकर उनकी मानसिक स्थिति को दुर्बल न होने दें। कहानी में अनीता नारी-जाति के लिए एक प्रेरणादायी स्त्री है, जो आत्महत्या की भावना से निकल कर आत्मसम्मान के लिए लड़ती है। अनीता की सबल मानसिकता समाज को उचित दिशा दिखाने में कामयाब रही है।

मामोनी रायसम गोस्वामी की कहानियों के नारी-पात्रों का मनोविश्लेषणात्मक विवेचन :

मामोनी रायसम गोस्वामी की ज्यादातर कहानियाँ मनोवैज्ञानिक हैं। पात्रों की मानसिक स्थिति का अध्ययन ही कहानियों का मूल विषय रहा है । मनुष्य के अंदरूनी सत्यों का अपनी दृष्टि से अध्ययन कर पाठकों तक पहुँचाना ही उनका मुख्य उद्देश्य रहा है। उनकी मनोवैज्ञानिक कहानियों का मुख्य विषय रहा है 'नारी मनोविज्ञान' अथवा 'नारी मनोविश्लेषण'। नारी मन के अनोखे रूप का विशद चित्रण उनकी कहानियों का मुख्य आलोच्य विषय है ।

'उदंग बाकस' कहानी में प्रकाशित हुी है तरादै की जीवन की कारुणिक दशा। तरादै एक जवान विधवा है, जो साथ ही दरिद्रता का भी शिकार है। दरिद्रता और वैधव्य का जीवन काटने के अलावा भी उसके जीवन में अपनी व्यर्थ प्रेम की अलग ही कहानी है। अपने बड़े साहब के बेटे के साथ प्रेम संबंध की असफलता ने तरादै को एक

अलग ही मानसिक यंत्रणा दी है। इस बात को मामोनी जी ने अत्यंत मर्मस्पर्शी रूप से उसके द्वारा प्रस्तुत किया है। इस मानसिक यंत्रणा और नि:संगता के साथ जीवन बिताने वाली तरादै ने जब अपने प्रेमी 'सरोबोपा' को श्मशान लाए गए बक्से को देखा, तब वह अपना समस्त भूलकर उस बक्से में घुसकर खुद को फिर एक बार 'सरोबोपा' के प्रेम में विलीन करना चाहा।

'हाय हाय बाकसटो सेंदुर आरू खोपात मरा फूल सिंचरित है परि आछे। कालि राति ताई एकेबारे छिराछिर होवा कापुर द'मर माजर परा बियात पिन्धा ब्लाउजटो लै पिंधिछिल ।.....देह आरू मनर बांचा करा प्रेमिकर सैते एके बिछनाते ताई येन राति अतिवाहित करिछिल।' (भराली, 2011: 307)

(भावार्थ– बक्से में सिंदूर और बालों में लगाने वाले फूल बिखरे हुए हैं। कल रात उसने फटे पुराने कपड़ों के बीच से शादी में पहनने वाले ब्लाउज खोजकर पहना था। शरीर और मन से चाहने वाले प्रेमी के साथ मानो एक साथ एक ही बिस्तर में रात गुजारी हो।)

उसका यह कार्य पाठकों को अत्यंत मार्मिक कर देता है। इससे तरादै की जीवन की शून्यता और अप्राप्ति की वासना की एक गंभीर प्रतिच्छवि देखी गई है।

'संस्कार' कहानी में प्रस्तुत हुआ है अंधविश्वास की बलि होने वाली नारी 'दमयंती' की मानसिक स्थिति। कहानी के पुरुष पात्र पीताम्बर महाजन की द्वितीय पत्नी से भी संतान का सुख न पाने के कारण महाजन का जीवन दु:ख यंत्रणा से भरा हुआ था। अपने वंश की वृद्धि न होने की चिंता के कारण महाजन मानसिक रूप से टूट चुके थे। उनकी इस चिंता की बलि बनी दमयंती, जो एक ब्राह्मण विधवा थी। बच्चे की आशा में पीताम्बर महाजन ने उसके साथ संबंध बनाए। जब दमयंती को पता चला कि वह महाजन के बच्चे की माँ बनने वाली है, तब उसकी मानसिक स्थिति में परिवर्तन आने लगा। वह इस मानसिक अंतर्द्वंद्व में भोगने लगी कि एक ब्राह्मण विधवा होकर उसने महाजन जैसे निचली जाति के पुरुष के साथ संबंध बनाए और उनकी संतान का माँ भी बनने वाली है। इस अंतर्द्वंद्व से निकलने के लिए दमयंती ने पेट में रही संतान के भ्रूण की हत्या कर डाला। मामोनी ने कहा है– *'ताई नष्ट करि पेलाईछे। शूदिरियार बीज ताई नकढ़ियाय। ताई शांडिल्य गोत्रीय बामुण। ताई नष्ट पेलाईछे, पीताम्बर..... पीताम्बर ।'* (भराली, 2011:347)

(भावार्थ– उसने नष्ट कर दिया है बच्चे के भ्रूण को। वह एक शांडिल्य गोत्रीय ब्राह्मिण है। किसी शूद्र के बच्चे को वह जन्म नहीं देगी।)

दमयंती के इस निर्णय ने समाज के तथाकथित संस्कार का एक स्पष्ट उदाहरण प्रस्तुत किया है। समाज के प्रति दमयंती का भय और संस्कार को बचाने हेतु लिए गए इस निर्णय ने उसकी अंधविश्वास से भरी मानसिकता को दर्शाया है।

नारी मनोविज्ञान और मनोविश्लेषण से जुड़ी मामोनी जी की अन्य एक प्रसिद्ध कहानी है 'ईश्वारीर संशय आरू प्रेम'। कहानी की मुख्य पात्र ईश्वरी एक विधवा है, जो रामायण की चर्चा करती थी और साथ ही भारत के विभिन्न जगहों में रामायण मेला घूमने जाया जाती थी। चित्रकूट से लेकर अयोध्या तक प्रत्येक जगह रामायण चर्चा और मेला में जाने वाली ईश्वरी की मुलाकात चित्रकूट में धर्म बहादुर राणा से होती है। धर्म बहादुर के साथ ईश्वरी को एक अलग ही सम्मोहन का अनुभव हुआ– *'श्रीरामचंद्र मन्दिरर शिलर प्रांगनत भरि दियार समयतो धर्म बहादुर राणा ईश्वरीर तेनेई उचरत आछिल....हातत नार्जी फुलर माला लै भीर ठेलि ठेलि येतिया ईश्वरी धर्म बहादुरर लगे लगे आगबाढ़ि गै आछिल, ताईर भाव हैचिल ताई एक विवाह मंडपलै आगबाढ़ि गैछे ।'* (भराली, 2011:374)

(भावार्थ– श्री रामचंद्र के मंदिर के प्रांगण में भी बहादुर राणा ईश्वरी एकदम नजदीक थे....हाथों में गेंदा फूल की माला लेकर भीड़ में ईश्वरी धर्म बहादुर के साथ ही आगे बढ़ती गई, उसे अनुभव हुआ वह एक विवाह मंडप की ओर जा रही है।)

यह सम्मोहन बाद में प्रेम में रूपांतरित हुआ और रामायणी सम्मेलनों की यात्राओं में दोनों के अनुभवों को एक साकार रूप मिलने लगा था, परंतु बहादुर के साथ ईश्वरी खुद को एक नए रिश्ते में विलीन नहीं कर पाई। मृत पति के प्रति रहने वाले प्रेम और श्रद्धा के कारण वह खुद

को दोषी मानने लगी। जीवन में पति की शून्यता कभी-कभी प्रेम बहादुर से पूर्ण करने की इच्छा रखने वाली ईश्वरी के हृदय का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और अंतर्द्वंद्व का लेखिका ने सहज रूप से वर्णन किया है। भारतीय हिंदू विधवाओं की करुण अवस्था यहाँ चित्रित हुई है।

तुलनात्मक विश्लेषण :

चित्रा जी के नारी पात्र विशेषकर अपने अस्तित्व, क्षमता और अस्मिता को लेकर काफी सजग हैं और समाज की चारदीवारी के प्रतिबंध से निकल कर वर्तमान युग के साथ कदम-से-कदम मिलाकर आगे बढ़ने में सचेत हैं। पुरुष प्रधान समाज की बर्बरता को नकारते हुए जीवन में आने वाली प्रत्येक मुश्किल समय का साहस के साथ सामना करना चाहती है। नारी मन की विसंगतियों को चित्रा जी ने कहानियों में खुला चित्रण किया है।

वहीं मामोनी रायसम गोस्वामी की कहानियों में नारी पात्रों की भावनाओं की विविधता देखी जाती है। चित्रा जी की तरह ही समाज के मध्य, निम्न और उच्च प्रत्येक वर्ग के नारी की संघर्षपूर्ण जीवन की समस्याओं से लेकर उनके मानसिक द्वंद्वों को कहानियों में प्रस्तुत किया है। नारी मनोविज्ञान केंद्रित कहानियों के माध्यम से नारी मन की गुप्त और अव्यक्त भावनाओं और अनुभवों को प्रस्तुत किया है। पुरुष प्रधान समाज के नग्न स्वरूप का उद्घाटन और वर्णन उन्होंने नि:संकोच करने का साहस दिखाया है। नारी पात्रों के माध्यम से उन्होंने परंपरागत हिंदू धर्म के अनुसार पवित्र नारी की जो धारणा है, उस बंधन में कैद विधवाओं की बर्दाश्त के बाहर यंत्रणा का उदाहरण प्रस्तुत किया है।

निष्कर्ष :

निष्कर्षत: चित्रा मुद्गल और मामोनीा रायसम गोस्वामी दोनों ने अपने कथा साहित्य में समाज से जुड़े अनेक विषयों को न सिर्फ प्रस्तुत किया है, बल्कि इन विषयों के बारे में पाठकों को सोचने पर मजबूर भी किया है। दोनों लेखिकाओं की रचनाएँ मानव जीवन के अनुभवों के यथार्थवादी दर्शन हैं। दोनों लेखिकाएँ भिन्न भाषाओं एवं प्रांतों के होने के बावजूद दोनों की कहानियों में नारी-जीवन के विभिन्न पहलुओं के साथ उन तमाम विषयों को भी प्रस्तुत किया गया है, जो नारी जीवन से जुड़ी हैं। इस अध्ययन के माध्यम से क्रमश: हिंदी और असमीया साहित्य की दो प्रमुख साहित्यकारों की कहानियों में चित्रित नारी-पात्रों का मनोविश्लेषणात्मक विवेचन किया गया। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. चित्रा मुद्गल, चेहरे, यात्रा बुक्स, 2007
2. हेमंत कुमार भराली (संपादन) मामोनी रायसम गोस्वामीर गल्प समग्र, बनलता प्रकाशन, 2011
3. चित्रा मुद्गल, प्रतिनिधि कहनियाँ, राजकमल प्रकाशन, 2014

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

नीरजा माधव कृत 'यमदीप' : एक विश्लेषण

पूनम पाधा

शोधार्थी, हिंदी विभाग
जम्मू विश्वविद्यालय
जम्मू-180006
9796617229
p.padha94@gmail.com

समकालीन महिला साहित्यकारों में नीरजा माधव का स्थान अद्वितीय है। सन 2002 में प्रकाशित उनका उपन्यास 'यमदीप' हिंदी साहित्य में अब तक की ज्ञात प्रकाशित औपन्यासिक कृतियों में पहला उपन्यास माना जा सकता है, जिसमें किन्नरों को कथाधार बनाते हुए उनके जीवन के अनछुए पहलुओं को आम जन के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। आज के सभ्य समाज से भी अधिक मानवता और नैतिकता इन किन्नरों में पाई जाती है। इन्हें 'हिजड़ा', 'थर्ड जेंडर', 'ट्रांसजेंडर' आदि भिन्न-भिन्न नामों से जाना जाता है। परिवार और समाज की तिरस्कार व अपमान भरी नजरें उनका जीवन नरक बना देती हैं। फिर भी ऐसी परिस्थिति में यह समुदाय एक-दूसरे के सहारे किस प्रकार जीवन यापन करता है, इसका चित्रांकन विवेच्य उपन्यास में हुआ है। 15 अप्रैल, 2014 को इस समुदाय को 'ट्रांसजेंडर' या 'थर्ड जेंडर' के रूप में कानूनी रूप से मान्यता मिली है। परंतु तब तक इनका उल्लेख भी सरकारी दस्तावेजों में नहीं था। ऐसे लोगों को जन्म से ही घृणा सहनी पड़ती है। इनके जन्म पर न माता-पिता को खुशी होती है और न ही समाज को। विवेच्य कृति में भी 'नाजबीबी' के साथ यह सब होता है।

एक मेजर के घर में जब 'नंदरानी' का जन्म होता है तब वहाँ मातम छा जाता है। उसके माता-पिता उसे पालने का निर्णय लेते हैं, परंतु सामाजिक भय के कारण इस रहस्य को छुपाने का पूर्ण प्रयास करते हैं। जब स्कूली शिक्षा के दौरान नंदरानी में शारीरिक बदलाव होते हैं तो स्कूल में वह उपेक्षा की पात्र बन जाती है, जिसका उल्लेख निम्नलिखित पंक्तियों में हुआ है- *''क्या नन्दरानी, तुम कैसे चलती हो, हम लोगों की तरह चलो- कहीं हिजड़े देख लेंगे तो तुम्हें भी वही समझ बैठेंगे।''*[1] स्पष्ट है कि किन्नरों को न केवल जैविक भिन्नता झेलनी पड़ती है, बल्कि उन्हें लिंग आधारित असमानता को भी सहना पड़ता है। नंदरानी के किन्नर होने पर भाई-बहनों का विवाह तय होने में दिक्कत होती है, जिस कारण वह घर पर भी उपेक्षित होती है। अपनी उपेक्षा भरी जिंदगी से ऊबकर वह हिजड़ों की बस्ती में रहने जाती है। वहाँ

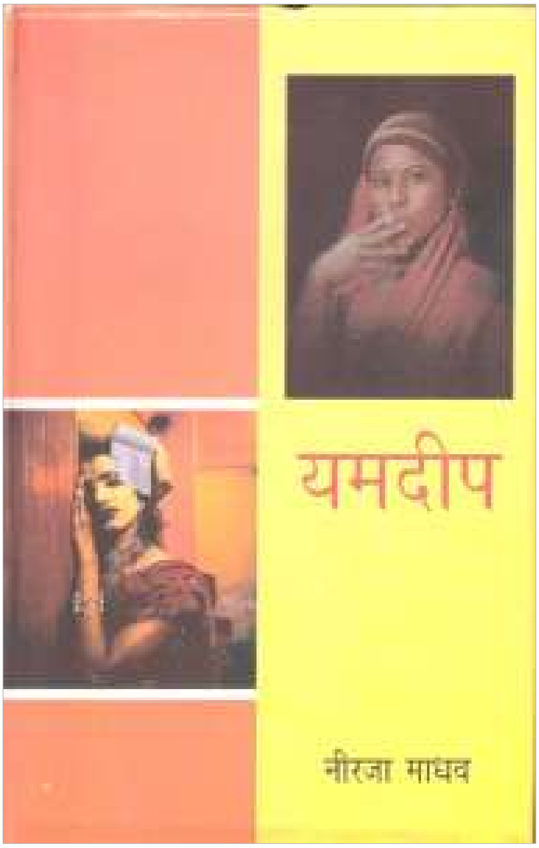

जाकर वह 'नंदरानी' से 'नाजबीबी' बन जाती है। घर त्यागते हुए उसकी मनोदशा का वर्णन करते हुए नीरजा माधव लिखती हैं– *''पर उस दिन के बाद से वह दृढ़ता विवश– सी होने लगी थी। जब नंदिनी दीदी की कई शादियाँ नंदरानी के कारण कटने लगीं। नंदन भइया के उस दिन के क्रोध और घृणा ने नंदरानी का एक झटके में वहीं निर्णय लेने को विवश कर दिया था, जिसे सोच–सोचकर उसका हृदय दहल जाता था।''*[2] इस प्रकार परिवार और समाज का तिरस्कार उसे घर त्यागने को विवश करता है। विवेच्य उपन्यास में लेखिका ने किन्नरों की सामाजिक भूमिका की ओर हमारे ध्यान को केंद्रित किया है। धन की वसूली हेतु मुंबई की एक कंपनी में जब किन्नरों को नियुक्त किया जाता है तो वर्षों से वसूल न हो रहे ऋण को वह एक चुटकी में वसूल करते हैं। लेखिका ने रोजगार उपलब्ध करने की बात की है ताकि यह समाज अपनी पारंपरिक भूमिका से बाहर निकल कर कुछ कर सके। नाजबीबी के शब्दों में– *''अगर सरकार हमें भी हथियार दे में तो लड़ूंगी। लड़ते–लड़ते हिंदुस्तान के पीछे अपनी जान दे दूँगी।''*[3]

किन्नर समाज को केवल मुख्यधारा से बाहर ही नहीं रखा गया, बल्कि कई तरह की अफवाहों को इनके प्रति समाज में भरा जाता है, जिस कारण यह समाज अलगाव व एकांत भरी जिंदगी जीने को विवश होता है। इस बात की पुष्टि पत्रकार मानवी के इन शब्दों से होती है– *''ऐसा सुना जाता है कि आप लोग युवकों को बहला फुसला कर जबरन उनका ऑपरेशन करके हिजड़ा बना देते हैं।''*[4] इन अफवाहों को नकारते हुए महताब गुरु कहते हैं कि *''हमारी बस्ती में जल्दी कोई इंसान का पूत घुसता है..... कि किसी के आते ही हम उसे तुरंत आपरेशन कर देंगे पकड़कर ? डाक्टरी खोले बैठे हैं इसी कोठरिया में क्या ? यह देखो हमारा अंग, कोई काटा है कि अल्ला–रसूले वैसे भेजा है ?''*[5] मानवी का यह प्रश्न समाज का प्रश्न था। यह भी एक कारण है कि मुख्यधारा का समाज इन्हें इंसान न मानकर हैवान मानता है और इनके साथ बात करने में भी अपना अपमान समझता है।

मुख्य समाज से भिन्न किन्नर समाज के कुछ अपने नियम–कानून होते हैं। यह लोग किसी का दिल दुखाना व जीव हत्या करना पाप समझते हैं। इस संबंध में महताब गुरु कहते हैं कि *''अरे, हम तो खुद ही डरते हैं कि कहीं हमसे किसी का दिल न दुःख जाए। एक चींटी भी पैर के नीचे पड़ जाती है तो सोचते हैं कि इसके अंड होंगे।''*[6] हिजड़ों के मानवतावादी भावुक मन का परिलक्षण भी आलोच्य उपन्यास में हुआ है।

मुख्यधारा से अधिक मानवता किन्नर समाज में देखने को मिलती है। गर्भवती पगली स्त्री के जन्मजात शिशु को मुख्यधारा के समाज द्वारा ठुकराए जाने पर नाजबीनी द्वारा अपनाना, स्त्री शोषण के प्रयास को

असफल कर उसकी रक्षा करना आदि नाजबीबी का यह व्यवहार किन्नर समाज के सत्य को उद्घाटित करता है। आलोच्य उपन्यास में नारी सुधार गृह को मानवी द्वारा बेनकाब करने की कोशिश में नेताओं का चरित्र भी सामने आता है, जिस कारण जनता के इन रक्षकों का भक्षक रूप दृष्टिगत होता है और यह प्रश्न उठता है कि जिस मानवता की बात मुख्य समाज करता है क्या स्वयं से दुर्बल व कमजोर का शोषण करना यही मानवता है। नाजबीबी कहती है, *''सोच रही हूँ, मेम साहब, कि भगवान ने मुझे हिजड़ा बनाकर ठीक ही किया। अगर यह न बनाता तो जरूर मुझे औरत बनाता और तब ये सारे अत्याचार मुझे भी झेलने पड़ते।''*[7] नाजबीबी के इन शब्दों में मुख्यधारा के लोगों की स्वार्थतता व संवेदनहीनता झलकती है और उपेक्षित किन्नर समाज की उदार मानवता दिखाई देती है। इस प्रकार कह सकते हैं कि नीरजा माधव का विवेच्य उपन्यास उपेक्षित व तिरस्कृत किन्नर समाज और उनकी मानवता का जीवन्त दस्तावेज है। इस कृति में किन्नर जीवन के विभिन्न पहलुओं का चित्रण हुआ है। ❑

संदर्भ :

1. नीरजा माधव, यमदीप, सं. 2017, पृ. 25
2. वही, पृ. 250
3. वही, पृ. 222
4. वही, पृ. 167
5. वही, पृ. 167
6. वही, पृ. 205
7. वही, पृ. 287

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

अलका सरावगी के कथा-साहित्य में नारी चेतना

मोनमी गायन

शोधार्थी, हिंदी विभाग
नगालैंड विश्वविद्यालय
कोहिमा-797004
9435390386
gayanmon@gmail.com

डॉ. अनुज कुमार

शोध-निदेशक, हिंदी विभाग
नगालैंड विश्वविद्यालय
कोहिमा-797004
7903367410

शोध सार :

आज स्त्री-विमर्श के मामलों में युवा साहित्यकार और कवि अत्यधिक जागरूक हैं। वे स्त्री के साथ हो रहे अत्याचार को समझ रहे हैं, जिसके परिणामस्वरूप स्त्री-लेखन ने पूरी व्यवस्था को हिलाकर रख दिया है। व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह करके मानो वे सबको बता देना चाहते हैं कि अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाना ही उनका ध्येय है। स्त्री के प्रति लेखकों में हमेशा से ही करुणा का भाव रहा है, परंतु आधुनिक लेखन प्रक्रिया ने स्त्री-यंत्रणा (यातना) को शब्द देते हुए संगठित होकर उसे मुक्त कराने का संकल्प लिया। हमें देखने को मिलता है तथा मौजूदा व्यवस्था में भी कुछ न कर पाने की विवशता को बड़े ही बेबाक ढंग से हमारे सामने उजागर किया है। *''समकालीन लेखिकाओं को पता है कि व्यक्ति ने व्यवस्था के हाथों सदियों से शोषण सहा है, लेकिन स्थिति अब भी बदली नहीं है। महिलाओं में एक चेतना की लहर आई तो जरूर है, लेकिन बहुत ही कम मात्रा में उन्होंने व्यवस्था का विरोध करना चाहा। इसलिए वे प्रतिनिधि बनकर व्यवस्था के प्रतिरोध में खड़ी लेखिका के दायित्व के प्रश्नों को मुखर रूप से उठाती हैं।''*[1]

अलका सरावगी समकालीन कथा-साहित्य में युगांतर उपस्थित करने वाली कथाकार हैं। इन्होंने अपनी कहानियों और उपन्यासों में स्त्री की मनोदशा का वर्णन सहज रूप में किया है। इनकी कहानियों और उपन्यासों का कथा क्षेत्र कलकत्ता शहर है और इसमें संदेह नहीं कि अलका सरावगी अपने परिवेश के रग-रग से परिचित हैं। इन्होंने आधुनिक हिंदी कथा क्षेत्र में संवेदनशीलता और वातावरण की मार्मिक तथा सूक्ष्मतलदर्शी पकड़ के कारण अपना स्मरणीय स्थान बना लिया है। *''अलका सरावगी का संपूर्ण कथा लेखन सामाजिक संस्कृति का आदर्श प्रस्तुत करता है। इनका रचना संसार अश्लीलता से परे है, क्योंकि लेखिका का मानना है कि भारतीय संरचना में मर्यादाओं का महत्वपूर्ण स्थान है। इनकी नायिकाएँ अपने पति को संभालने, परिवार को चलाने और समाज को आगे बढ़ाने की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। अल्पभाषी होते हुए भी विसंगतियों से टक्कर लेने में पीछे नहीं रहतीं। इसलिए इनके नारी पात्र सामाजिक विमर्श को नया आयाम देते हुए नई चेतना, नई उमंग, ऊर्जा और जीवन में कुछ कर गुजरने की आकांक्षा से युक्त हैं।''*[2] इस लेख के अंतर्गत अलका सरावगी की रचनाओं में आए स्त्री-पात्र किस

प्रकार खुद को तलाश रही हैं, किस प्रकार इस तलाश में संघर्षरत हैं, इन्हीं को नारी चेतना में समावेशिता कर प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

बीज शब्द :

स्त्री लेखन, अस्मिता, स्त्री-विमर्श, कथा-साहित्य, नारी चेतना, आधुनिकता, कहानी-संग्रह, उपन्यास, समकालीन, मर्यादा इत्यादि।

कहानी-संग्रह :

कई अंतरंग स्रोतों से उपलब्ध जानकारियों के अनुसार अलका सरावगी का सन 1996 में 'कहानी की तलाश में' कहानी-संग्रह का प्रकाशित हुआ, जो कि इनका पहला कहानी-संग्रह है। इस कहानी-संग्रह में छोटी-छोटी सत्रह कहानियाँ हैं, जिनमें स्त्री-विमर्श का एक नया रूप सामने उभरकर आया है। अलका सरावगी का दूसरा कहानी-संग्रह 'दूसरी कहानी' का प्रकाशन सन 2000 में हुआ। इस कहानी-संग्रह की कहानियाँ यथार्थ को तथ्य-सीमित करने की रूढ़ि को ध्वस्त करती हैं। घटनाओं का बोझिल आडंबर छोड़कर वे कहानी विधा की नई मुक्ति का ऐसा संकेत देती हैं कि हम कहानी को गद्य-कथा या कथा-निबंध की तरह पढ़ सकें। वे तथाकथित यथार्थवादी कहानी के ढाँचे को विचलित कर मानव व्यवहार और प्रकृति के आधे-अधूरे प्रारूप या पाठ की तरह दिख सकती हैं। इसी अधूरेपन, इसी अनहोनी में अलका सरावगी की कहानियों का अर्थ छिपा है।

अलका सरावगी की कहानियों में समाज की आर्थिक दशा के साथ-साथ संस्कृति के उत्थान-पतन की स्थितियाँ भी व्यंजित हुई हैं। स्त्री-पुरुष संबंधों, रूढ़ियों, परंपराओं और आधुनिकता बोध के स्वस्थ एवं अस्वस्थ पक्षों का चित्रण भी इनमें देखा जा सकता है, साथ ही नारी की स्थितियों के विविध रूप भी प्रकट हुए हैं। अधिकांश नारी पात्रों में समाज से विद्रोह करने की क्षमता है, पर उन नारी पात्रों की संख्या अधिक है, जो रूढ़ियों, अंधविश्वासों, आडंबरों और दारिद्रय की शिकार हैं। जिनकी आकांक्षाएँ, मनोकामनाएँ किन्हीं स्तरों तक उभरते-उभरते मरण का वरण करती हैं। 'कहानी की तलाश में' कहानी-संग्रह की कहानी 'बहुत दूर है आसमान' में अलका सरावगी ने ठीक ही लिखा है- "*क्या यही जिन्दगी है लड़कियों की? क्या मेरी गुल्लू बचपन में ही अपनी मर्जी से खेल-कूद नहीं सकती? क्या लड़कियों को इतना भी अधिकार नहीं है? गुल्लू कितनी ऊँची-ऊँची पैंगें लेती है झूले पर। दीवाल पर चढ़कर बिना डरे दौड़ती है। उसके बराबर के उम्र के लड़के तो घुग्गू हैं उसके सामने। कितना जीवन है उसमें! तो क्या मैं यह मान लूँ कि लड़कियों को बचपन से ही खुली हवा नहीं मिल सकती?*"[3] इन नारियों की अपनी अनूभूति का आभास, किन्हीं पात्रों को हुआ है, पर अनेक ऐसी हैं, जिनकी चीख नक्कारखाने में तूती की आवाज बनकर रह जाती हैं।

'बीज' कहानी एक ऐसी नारी की कहानी है, जो अपनी लंबी बीमारी से परेशान होकर दुनिया से नाता तोड़ लेती है और उदासी भरे जीवन को अपनाकर अकेले रहने को ही अपनी नियत मान लेती है। "*पिछले तीन महीनों से जो निपट अकेलेपन का अहसास हर समय उसके अंदर रहता था, आज वह पत्थर की तरह उसकी सांसों के बीच अटक गया था।*"[4] परंतु कुछ समय बाद वह अपनी टूटी हुई हिम्मत को बटोरकर अपनी बीमारी से लड़ते हुए एक नई चेतना के साथ फिर से जिंदगी का स्वागत करती है।

पेशे से अध्यापक एक स्त्री जो नारी होने की सजा को भुगतती है। बचपन से स्वतंत्र जीवन की चाह उसकी अभिलाषा होती है। गुल्लू, जो उसकी बेटी है, उसके लिए जब कोई अश्लील बातें दीवार पर लिख जाता है तो वही बंधन अपनी बेटी के जीवन में देखती है, जो नारी होने के कारण उसके जीवन में लगाए गए थे। 'बहुत दूर है आसमान' की नायिका का जीवन औरत होने के कारण त्रासदी से गुजरता है और जब वही परिस्थितियाँ उसकी बेटी के जीवन में आती हैं तो वह उनका विरोध करना चाहती है, पर पति द्वारा उसे समझा दिया जाता है। "*निखिल अचानक नींद में कुछ बुदबुदाया। पता नहीं उसे भ्रम हुआ था वह सचमुच ही कह रहा था- और हम कर ही क्या सकते हैं।*"[5] समाज की व्यवस्था में समझौता कर जीना ही नारी की नियति है।

'ख़िजाब' कहानी दमयंती जी की कहानी है। वृद्धावस्था के उपरांत भी दमयंती जी स्वतंत्र जीवन चाहती हैं। प्रेम और मोह में सिर्फ बंधन है, इस कारण वह अपने परिवार के साथ न रहकर एकाकी जीवन व्यतीत करती हैं। बालों में ख़िजाब लगाए रहने वाली दमयंती जी अपना जीवन अपनी शर्तों पर ही जीना पसंद करती हैं। अलका जी ने इस कहानी में आधुनिकतावादी जीवन की विसंगतियों को उजागर किया है।

'लाल मिट्टी की सड़क' कहानी नारी द्वंद्व पर आधारित है। वंदना अपने जीवन के अकेलेपन, ऊब और उदासी से निजात पाना चाहती है। *''वंदना ने करवट बदलकर अपने मन को उस बेचैनी से मुक्त करने की कोशिश की, जो आधी नींद तक पहुँचते-पहुँचते न जाने कहाँ से आकर उसे दाबने लगी थी। अधजगी सी हालत में उसका दिमाग इस बैचेनी का कोई कारण खोज नहीं पा रहा था। यह घबराहट है या एक तरह का खालीपन सा?''*[6] अपने अकेले होने की अनुभूति और खालीपन को भरने के लिए वह यायावर जीवन का विकल्प तलाशती है। *''लाल मिट्टी की सड़क उसे बुला रही थी, पर उसने सोचा कि सविता के साथ ठीक रहेगा और थोड़ी रोशनी बढ़ने का इंतजार भी।''*[7]

'''दूसरी कहानी' समकालीन कहानी के प्रचलित ढर्रे से अलग जाकर कहानी के लिए एक नई संभावना का संकेत है।''[8] 'दूसरी कहानी' एक माँ-बेटे की कहानी है। *''अपर्णा एक कहानी लिखना चाहती है पिछले पंद्रह वर्षों से। अपने जीवन की पहली और अंतिम कहानी।''*[9] नौवें साल में लिखी इस कहानी में अपर्णा ने इस बिंदु पर आकर यह महसूस किया कि माँ-बेटे की इस कहानी में दु:ख सेंध लगाने लगा है। सुदर्शन उसके सुख का आधार है और सुदर्शन की बीमारी उसके जीवन को दु:ख का घर बना देती है। माँ-बेटे की इस कहानी में अपर्णा ने दुनिया को घुसने नहीं दिया था। कहानी का अंत हालाँकि सुखात्मक है और कहानी अनिवर्चनीय आनंद पर खत्म होती है, पर यह आनंद कब तक? वह जानती है दु:ख फिर कभी चुपके से उसके जीवन में अपनी पैठ बना लेगा।

बचपन की दहलीज को पार करके जब कोई लड़की यौवनावस्था की चौखट पर कदम रखती है तो उसकी उम्र

के साथ-साथ उसके लिए असुरक्षा बोध भी बढ़ता जाता है। 'एक और नमकहराम' कहानी नारी के इस असुरक्षा बोध पर आधारित है। *''रजनी की दुनिया बहुत तेजी से बदल रही थी-इतनी तेजी से कि कई बार उसे एक अजीब किस्म का डर लगने लगता है।''*[10] नारी असुरक्षा का भाव जितना नारी के मन में होता है, उतना ही उसके परिवार के मन में भी होता है। रजनी के पिता उसका बाहर जाना व रमाकांत के साथ खेलना इसलिए बंद कर देते हैं, क्योंकि पिता का अपनी पुत्री के लिए असुरक्षा का भाव उनके मन में होता है। 'एक और नमकहराम' कहानी नारी के जीवन की विडंबनाओं के कई पन्नों को खोलने में समर्थ है।

दो स्त्रियों की मित्रता को केंद्र में रखकर रची गई कहानी 'निर्वाण' नारी की नारी के प्रति मनोवृत्ति को उजागर करती है। दोनों औरतें एक-दूसरे की मित्र होने के बावजूद अपने को बेहतर साबित करने की चेष्टा रखती हैं। दोनों एक साथ होकर भी शायद साथ नहीं हैं।

उपन्यास :

उपन्यास विधा अलका सरावगी के लेखन का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। आधुनिक उपन्यास लेखन में अलका सरावगी का नाम अग्रगण्य है। इन्होंने उपन्यास विधा में अपनी बहुमुखी प्रतिभा का पूर्ण परिचय देकर कथा साहित्य के क्षेत्र में अद्वितीय सफलता प्राप्त की है। नारी की अस्मिता के लिए आधुनिक सामाजिक परिवेश में जो लेखिकाएँ अपनी कलम से संघर्ष कर रही हैं, उनमें अलका सरावगी का नाम अग्रणी है। इनके उपन्यास यथार्थ की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम हैं। उपन्यासों में न केवल नगरीय और महानगरीय जीवन बोध मुखर हुआ है, बल्कि व्यक्ति के अंदर का द्वंद्व भी सामने आया है, जिससे वह दिन-रात जूझता है। अलका सरावगी ने अपने उपन्यासों में नारी की मानसिकता और उसकी स्थिति का चित्रण अलग-अलग दृष्टिकोण से किया है। स्त्री-पक्ष और स्त्रीवाद के प्रश्नों को लेकर अलका सरावगी ने अपने उपन्यासों में जो विमर्श प्रस्तुत किया है, वह स्त्री विमर्श का अलग ही रूप है। इनके उपन्यास में स्त्री पात्र भले ही कम आए हैं, लेकिन उनकी अनुपस्थिति उपन्यास में प्राथमिक है। नामवर सिंह का कथन है कि- *''स्थापत्य सौ साल बदलती है। अलका के उपन्यास ने स्थापत्य बदल दिया है।''*[11]

अलका सरावगी आज के समय की एक ऐसी कथा लेखिका हैं, जिनके उपन्यासों में मानवीय संवेदना का विशाल भंडार है। मानव के रूप में चित्रित नारी इनके कथा साहित्य का प्राण है। स्त्री-विमर्श के प्रति अलका सरावगी ने जो दृष्टिकोण अपनाया है वह स्त्री विमर्श की परंपरा से हटकर नए रास्तों की खोज करता है। बड़ी कुशलता के साथ लेखिका सीमित मध्य वर्गीय परिवेश में साँस लेती नारी का चित्रण करती है, जो कभी झुंझलाती बौखलाती है और कभी अपने प्रश्नों के अभावों से जूझती है तो कभी समझौता भी करती है। इसी समस्या पर डॉ. विजय द्विवेदी ने कहा है कि - *''आज की नारी अपने चतुर्दिक परिवेश से, अंतर्राष्ट्रीय माहौल से अपने को जोड़ना तो चाहती है, किंतु संस्कारवादिता परंपराबद्धता उसके आड़े आ रही है। वह उनके किसी मध्यम मार्ग की खोज अथवा समझौता नहीं कर पा रही है। यह एक विडंबनापूर्ण स्थिति है। अत: अपने ही बंधे-बंधाए परिवेश में स्वयं को साहसी क्रांतिकारी अथवा स्वतंत्र व्यक्तित्व प्रदान करने की बात करना कोई माने नहीं रखता।''*[12]

अलका सरावगी का पहला उपन्यास 'कलि-कथा : वाया बाईपास?' बड़ा चर्चित उपन्यास है। उपन्यास के केंद्र में नायक के रूप में किशोर बाबू और उनका मारवाड़ी समाज है। परमानंद श्रीवास्तव का कथन है कि- *''मैं पचास साल के उपन्यासों पर बोलूँगा नहीं। सिर्फ दो उपन्यासों पर बोलूँगा। विनोद कुमार शुक्ला का 'दीवार में एक खिड़की रहती थी' और अलका सरावगी का 'कलि-कथा : वाया बाईपास'।''*[13] मारवाड़ी परिवार की नारियों की पीड़ा का उपन्यास में कई बड़ी राजनीतिक घटनाओं का ब्योरा मिलता है। परंपरावादी मारवाड़ी समाज में पुरुषों को जितनी स्वतंत्रता प्राप्त होती है, उतनी स्त्रियों को कदापि नहीं।

राजेंद्र यादव का कथन है कि- *'''कलि-कथा : वाया बाईपास?' यथार्थवाद के बरसक कलावाद की जीत।''*[14] उपन्यास में आजादी के आंदोलन काल का अर्थात स्वाधीनतापूर्ण भारत तथा स्वाधीनता प्राप्ति के बाद के भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक परिवेश प्रस्तुत किया गया है। इस अर्थ में यह उपन्यास पूर्ण रूप से नारी पर केंद्रित उपन्यास नहीं है, फिर भी नारी समस्याओं पर और उनके प्रतिरोध पर प्रकाश डाला है। ''इसमें भले

ही मारवाड़ी समाज का माहौल दिखाई देता हो, किंतु इसके किशोर बाबू भारतीय पुरुष की मानसिकता के ही प्रतिनिधि पात्र हैं। उनका नारी विषयक दृष्टिकोण दकियानूसी कहना होगा। लेखिका ने किशोर बाबू के बाईपास के जरिए की अवस्था को उनके विचारों का बाइपास होना जरूरी समझा है। नारी शिक्षा की महत्ता, विधवा विवाह की आवश्यकता और एकाधिकारशाही की मानसिकता को छोड़कर समन्वय की वृत्ति तथा नारी स्वतंत्रता के बिना सामाजिक उन्नयन संभव नहीं यही विचार प्रस्तुत रचना का केंद्रीय विचार है।'' [15]

अलका सरावगी ने सन 2001 में प्रकाशित अपने दूसरे उपन्यास 'शेष कादम्बरी' में स्त्री जीवन की अनेक समस्याओं का और उनके प्रतिरोधों का चित्रण किया है। उपन्यास की मुख्य पात्र रुबी गुप्ता कलकत्ता शहर में समाज सेवा करती है। वह 'परामर्श' नामक संस्था का संचालन करती है। जीवन के अंतिम चरण में रूबी दी सामाजिक दृष्टि से पूर्ण रूप से सक्रिय है। *''उपन्यास की नायिका सत्तर साल की रूबी दी का आख्यान स्त्री विमर्श का एक नया पक्ष है, जो स्वानुभूति और सहानुभूति के द्वंद्व से अपने को बचा नहीं पाया है।*

यह रचना निश्चित ही सहानुभूति का परिणाम है, पर इसका आस्वाद स्वानुभूति का आभास देता है। अलका सरावगी की कुशलता यही है कि बिना भोगे हुए जीवन का यथार्थ इस जादुई तकनीक के साथ उन्होंने पेश किया है कि वह विश्वसनीयता का आभास तो देता है, पर उसमें संदेह और संभावनाओं के कई कई छेद हैं।'' [16] रूबी गुप्ता को अपने जीवन में अनेक विषमताओं का सामना करना पड़ता है, वह चाहे अपने ही घर में हो या फिर उसके ससुराल में। बचपन में तेरह साल की उम्र में जब उसे मालूम होता है कि उसके माँ-बाप उसके अपने नहीं हैं तो वह आइडेंटिटी क्राइसिस का शिकार हो जाती है। तब से वह अपने होने के अर्थ को तलाशने लगती है। अपने ससुराल में भी उसे कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। शिक्षित होने के बावजूद रूबी अपने ससुराल में भी मानसिक संतुष्टि नहीं पा सकी।

अलका जी का उपन्यास 'कोई बात नहीं' एक दृष्टि से नारी भावना को नई जमीन प्रदान करता है। उनका कहना यह है कि स्त्री-पुरुष में समानता हो। इसमें स्त्री अधिक मानवीय और अधिकार संपन्न हो। *''औरत की जिंदगी भी क्या सचमुच। बीस साल बाद भी वह पराए घर की ही रहती है। यहाँ तक कि अपने बच्चों की नजर में भी''। माँ की दुखती रग पर उसने हाथ रख दिया है, शशांक ने समझ लिया। ''नो माँ! बिल्कुल नहीं! ऐसी बात नहीं है। बात सिर्फ इतनी है कि मैं और मेरे ख्याल से पापा भी, तुम्हें दुनिया से अलग मानते हैं। इसलिए तुम जब किसी भी आम औरत की तरह पुराने विचारों के लिए अपनी सास की बुराई करती हो, तो हम लोग सह नहीं पाते, तुम्हें 'पेडेस्टल' से उतारना पड़ता है, हमें।''* [17]

स्त्री मुक्ति के सवाल से जुड़े मौजूदा सवालों से निहित लेखिका की आधुनिक दिशा तय करता, स्वच्छंद विचार वर्तमान लेखन के परिप्रेक्ष्य में सदीक्षाओं और मनोकांक्षाओं के अनुरूप स्त्री चिंतन की बुनियादी लेखन की नींव हिंदी साहित्य जगत में अलका सरावगी के उपन्यास साहित्य को अद्वितीय रूप प्रदान करता है। आधुनिक युग में नारी का घर की दहलीज से बाहर कदम रखना एक साधारण सी बात है। किंतु वह कदम कितने संशय और विडंबनाओं को जन्म देता है। अलका जी ने अपने उपन्यास 'जानकीदास तेजपाल मैनशन' में उन विडंबनाओं का चित्रण भली-भाँति किया है। आधुनिक नारी के स्वच्छंद विचारों को उन्होंने इस उपन्यास में बड़ी ही कुशलता से प्रस्तुत किया है। *''दुनिया तुम्हें जयदीप से कुछ और बना दे, यह दुनिया की ताकत नहीं। यह तुम्हारी गलती है। मैं सब कुछ सह सकती हूँ, पर तुम कुछ और बन जाओ, यह नहीं सह सकती। यदि तुम्हें जानकीदास तेजपाल मैनशन में ही रहना है या अपने हक की लड़ाई जारी रखनी है, तो मैं तुम्हारे साथ हूँ। हम हर मुसीबत झेलेंगे। देखेंगे कि वे हमें कितना डरा सकते हैं। पर तुम मिटू चौधरी जैसे लोगों के फंदे में फँसकर कुछ और बन जाओ, यह मैं नहीं सह सकती।''* [18]

निष्कर्ष :

अलका सरावगी ने अपनी रचनाओं में नारी चेतना को

स्पष्ट तौर पर व्याख्या करने का प्रयास किया है। उनका मानना है कि पहले के समय में तो स्त्रियों को और भी कई तरह की समस्याएँ झेलनी पड़ती थीं। अपना सब कुछ बचाए रखने की उसकी सबसे बड़ी चिंता जिसके लिए वह दिन-रात प्रयासरत रहती है और डरती रहती है कि उसके हाथों से कुछ छूट न जाए। संयुक्त परिवार में सबको लेकर चलते हुए उसे परंपरागत रूढ़ियों का पालन करना पड़ता है। पहले तो लड़कियों को शिक्षित होने से रोका जाता है, यदि किसी तरह वे शिक्षित हों भी जाएँ तो विवाहोपरांत जिम्मेदारियों के नाम पर फिर उसका मानसिक शोषण किया जाता है। कभी वह हिंसा का शिकार होती है तो कभी उसके प्रति समाज द्वारा क्रूरता का व्यवहार किया जाता है। हमारा पुरुष समाज स्वयं एक अलग ही सिद्धांत पर जीता है और स्त्री के लिए कोई दूसरा ही सिद्धांत निर्धारित करता है, जैसे यह अधिकार वह जन्म से ही लेकर आया है।

एक ओर पुरुषवादी मानसिकता स्त्रियों को सदैव कमतर समझता है, वह स्वयं को श्रेष्ठ और स्त्री को बुद्धिहीन मानता है। प्राय: घरेलू औरतें पुरुषों की इस मानसिकता का शिकार होती हैं। घर में उन्हें सदैव चुप कराया जाता है, उन्हें विरोध करने की छूट नहीं होती है। उसका त्याग व बलिदान किसी को दिखलाई नहीं देता न ही कोई मूल्य देता है। जबकि उसकी सहनशीलता और अपने स्व को ताक पर रखकर स्वयं को रिश्तों में झोंक देने की तीव्र चेष्टाएँ ही परिवार को बनाए रखने में अहम भूमिका निभाती हैं, जिससे गृहस्थी चल पाए। ❑

संदर्भ सूची :

1. डॉ. रेशमी रामदोनी, समकालीन हिंदी लेखिकाओं की कहानियों में अभिव्यक्त बहुआयामी विद्रोह, पृ.147
2. वीर बैसवारा (11 दिसंबर 2010), पृ.4
3. अलका सरावगी, कहानी की तलाश में, राजकमल प्रकाशन, 2005, पृ.14
4. अलका सरावगी, कहानी की तलाश में, राजकमल प्रकाशन, 2005, पृ.40
5. अलका सरावगी, कहानी की तलाश में, राजकमल प्रकाशन, 2005, पृ.61
6. अलका सरावगी, कहानी की तलाश में, राजकमल प्रकाशन, 2005, पृ.128
7. अलका सरावगी, कहानी की तलाश में, राजकमल प्रकाशन, 2005, पृ.132
8. अलका सरावगी, कहानी की तलाश में, राजकमल प्रकाशन, 2005, पृ.15
9. अलका सरावगी, कहानी की तलाश में, राजकमल प्रकाशन, 2005, पृ.38
10. अलका सरावगी, दूसरी कहानी, राजकमल प्रकाशन, 2010, पृ.133
11. पल प्रतिपल - पत्रिका, आधार प्रकाशन, पंचकुला, हरियाणा
12. डॉ. रेशमी रामदोनी, समकालीन हिंदी लेखिकाओं की कहानियों में अभिव्यक्त बहुआयामी विद्रोह, पृ.245
13. परमानंद श्रीवास्तव - संस्मरण, जुलाई 2004, पृ.53
14. राजेंद्र यादव, हंस पत्रिका, जनवरी 1999
15. डॉ. अर्जुन चव्हाण - समकालीन उपन्यासों का वैचारिक पक्ष (हिंदी तथा मराठी उपन्यासों के तुलनात्मक विमर्श के संदर्भ में) पृ.148
16. डॉ. शोभा वेरेकर, हिंदी उपन्यास : नारी विमर्श, अभय प्रकाशन, 2010, पृ.75
17. अलका सरावगी, कोई बात नहीं, राजकमल प्रकाशन, 2015, पृ.94
18. अलका सरावगी, जानकीदास तेजपाल मैनशन, राजकमल प्रकाशन, 2015, पृ.81

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

लोकरंग

नाटकों के रंगमंचीय प्रस्तुति में ज्योतिप्रसाद अगरवाला की भूमिका

रूपरेखा पाटगिरि

शोधार्थी, हिंदी विभाग
असम विश्वविद्यालय डिफू परिसर
डिफू, कार्बी आंग्लोंग-782462
9957162368
r.patgiri2014@gmail.com

शोध-सार :

साहित्य समाज व मनुष्य के जीवन तथा मनोदशा का प्रतिफलक होता है। साहित्य के अनेक आयामों में से नाटक की विशेषताओं को देखने पर यह लगता है कि नाटक एक अत्यंत प्रभावपूर्ण विधा में परिवर्तित होता है, जब उसे रंगमंच के साथ जोड़ा जाता है। पठन शैली केवल साक्षर व्यक्तियों के लिए होता है, परंतु दृश्य और श्रव्य विधि सभी स्तरों की जनता को आकृष्ट करती है। रंगमंच के साथ जोड़ने पर नाटक, साहित्य की सभी विधाओं में से सबसे अधिक सार्वजनिक पहुँच की क्षमता रखने वाली विधा बन जाता है। नाटक के विकास के साथ ही मंचन कला के भी विकसित होने का प्रमाण मिलता है। असम में भी नाटक के लिखित रूप का पता शंकरदेव के समय से मिलता है। शंकरदेव ने नाटकों का प्रदर्शन 'भाओना' के रूप में किया था, जिसे रंगमंच के वर्तमान स्थिति के प्रथम सोपान के रूप में देखा जाता है। आधुनिक रंगमंच का स्वरूप सन 1800 के बाद आता है, जिसके विकास में ज्योतिप्रसाद अगरवाला का महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने असमीया संस्कृति और परंपरा को आधुनिक रंगमंच के साथ जोड़ा। शिक्षित और शहरी जनता को अवहेलित परंपरा और विधाओं के साथ जोड़ने का सार्थक प्रयास किया। उन्होंने नाटकों के माध्यम से रंगमंच के द्वारा विस्तृत जनता एकत्रित कर उनमें देशप्रेम, अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह उत्पन्न करने के साथ ही असमीया संगीत और परंपरागत वस्तुओं के विकास का कार्य भी किया। उन्होंने अपने नाटकों को रंगमंच में खेलने के योग्य बनाया। ज्योतिप्रसाद अगरवाला के समय में ही थिएटर कंपनियाँ बनीं और उनमें नाटकों का प्रदर्शन होने लगा। उन्होंने प्रथम चलचित्र निर्माण के द्वारा असम में रंगमंच की इस नई शैली का पथ प्रशस्त किया। अत: आज थिएटर का रूप असम प्रदेश में गाँव से लेकर शहरों तक इतना लोकप्रिय बन चुका है कि हर साल इसका प्रदर्शन होता है। इसके विकास में और असम में चलचित्र निर्माण के पथ प्रदर्शक के रूप में ज्योतिप्रसाद अगरवाला की भूमिका महत्वपूर्ण रही है।

नाटकों के रंगमंचीय उपस्थापन में ज्योतिप्रसाद अगरवाला की भूमिका :

साहित्य मानव जाति के विकासशील गतिविधि की बुद्धिनिष्ठ उपज है। वैश्विकरण के इस दौर में आधुनिक भावबोध भौतिक जगत के साथ ही व्यक्ति विशेष के

आंतरिक जगत में भी प्रतिबिंबित होता है। साहित्य में आंतरिक जगत का पूर्ण प्रतिफलन मिलता है। नाटकों के साथ मंच कला के विकास ने नाटक को सर्वाधिक प्रभावपूर्ण साहित्यिक विधा बना दिया है। नाटकों की पठन शैली की तुलना में दृश्य-श्रव्य शैली अधिक से अधिक लोगों को प्रभावित करती है। नाटक व्यक्ति की मनोदशा और समाज की छवि को प्रतिफलित करने का सबसे ज्यादा प्रभावी तथा सशत विधा है और इसे मनोरंजक और लोकप्रिय बनाने में मंचन कला प्रमुख भूमिका निभाती है। रंगमंच में मनुष्य के रचनात्मक कार्य को मूर्त रूप में प्रतिफलित किया जाता है। अत: नाटक के साथ रंगमंच के संयोग से उत्पन्न रसात्मक अनुभूति लोकमन में गहरा और स्थायी प्रभाव डालने को सक्षम होता है। जयशंकर प्रसाद ने नाटक और रंगमंच के संबंध के बारे में बताते हुए कहा है कि *''रंगमंच के संबंध में यह भारी भ्रम है कि नाटक रंगमंच के लिए लिखा जाए। प्रयत्न तो यह होना चाहिए कि नाटक के लिए रंगमंच हो।''* [1] डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल के वक्तव्यों से लगता है कि वह नाटक को जीवन की समग्रता को प्रदर्शित करने के एक माध्यम के रूप में देखते हैं। उन्होंने नाटक और रंगमंच के घनिष्ठ आपसी संबंध पर जोर देते हुए कहा है कि, *''नाटक ही तो अपने मूर्त और व्यापक अर्थ से रंगमंच है और नाट्य प्रकृति इसका प्राण।... नाट्य कृति और रंगमंच एक-दूसरे के कार्य और कारण हैं। दूसरे स्तर पर एक-दूसरे के पूरक और यहाँ तक कि एक-दूसरे के पर्याय भी हैं।''*[2] उन्होंने अपने इस कथन से नाटक और रंगमंच को एक-दूसरे के परिपूरक के रूप में देखा है। किसी विषय को अगर हर स्तर के व्यक्तियों तक पहुँचाना हो तो रचनाकार रंगमंच के उपयोगी नाटकों की रचना करता है। इसीलिए नाटकों का कथानक और संलाप रंगमंच के अनुकूल होता है। साक्षर जनता तो पुस्तकों के द्वारा मनोरंजन प्राप्त कर अपने ज्ञान का भंडार बढ़ा लेती है, परंतु भारतवर्ष में अनेक ऐसे स्थल हैं, जहाँ अभी भी शिक्षा का प्रसार नहीं हुआ है, अत: वहाँ पर जनता को शिक्षित तथा जागरूक बनाने का प्रमुख काम नाटक करता है। आधुनिकता के चलते रंगमंच के विकास ने आज थिएटर का रूप ले लिया है। यह थिएटर आज गाँव के साथ-साथ शहरों में भी अपनी मंचन शैली को लोकप्रिय बनाकर अपना प्रसार करता चला जा रहा है।

असम में नाटकों का लेखन शंकरदेव के समय से होने का प्रमाण मिलता है। पंद्रहवीं शती में शंकरदेव ने असमीया नाट्य परंपरा का आरंभ किया था, इस परंपरा को अनेक प्रमुख नाट्यकारों ने अपनी प्रतिभा से समृद्ध किया। शंकरदेव द्वारा रचित नाटकों को 'अंकिया नाटक' अर्थात एक अंकवाला नाटक कहा जाता है। इन नाटकों को 'भाओना' नाम से खेला जाता है। भाओना का अर्थ है हाव-भाव द्वारा दर्शकों के सम्मुख नाटक को प्रस्तुत करना। इन अंकिया नाटकों की आधारभूमि पौराणिक कथाएँ होती थीं। शंकरदेव के इन नाटकों की सृष्टि उनके सृजनशील बुद्धि का परिणाम है। प्रारंभिक समय में जब भाओना को खेला जाता था, तब मंच के नाम पर गोलाकृति में बैठे दर्शकों के बीच की खाली जगह ही होतो थी। आज के आधुनिक मंचकला का विकास उन्नीसवीं शती के अंतिम दशक के बाद शुरू हुआ है।

असमीया साहित्य जगत में एक चिर-परिचित नाम है ज्योतिप्रसाद अगरवाला। नात्यगुणों से नाटक को सुसमृद्ध बनाने के क्षेत्र में उनका प्रमुख स्थान रहा है। ज्योतिप्रसाद अगरवाला के एक सुप्रसिद्ध साहित्योपासक परिवार से संबंधित होने के कारण साहित्य और संगीत में उनकी रुचि पारिवारिक वातावरण के परिणामस्वरूप बचपन से ही थी। इस रुचि ने उन्हें चौदह साल की उम्र में ही नाट्य और गीत लेखन की ओर प्रेरित किया। अल्पायु में लिखे 'शोणित कुँवरी' नाटक का संवाद और इसकी व्यवस्थापना भले ही उनके बाकी नाटकों की तुलना में कम प्रौढ़ नजर आती हो, परंतु इतनी कम उम्र में उन्होंने जिस सृजनशील प्रतिभा का परिचय दिया चाहे वह कथानक की दिशा निर्माण के क्षेत्र में हो या गीतों की सृष्टि के परिप्रेक्ष्य में हो- असमीया साहित्य के विकासक्रम में बाद के रचनाकारों के लिए मिल का पत्थर साबित हुई। ज्योतिप्रसाद अगरवाला से पूर्व

लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा, हेमचन्द्र गोस्वामी, पद्मनाथ गोहाईंबरुवा, चन्द्रधर बरुवा, दुर्गाप्रसाद मजिंदर बरुवा आदि मनीषियाँ असमिया साहित्य को समृद्ध बनाने के कार्य में पहले से ही लगी थीं। इन महारथियों ने भी नाटकों के क्षेत्र में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया था। परंतु उनका उद्देश्य नाटकों के लेखन के द्वारा जनता को जागरूक करना और समाज में फैली विषमताओं का निर्मूलन रहा। अत: उनका ध्यान नाटकों के मंचन शैली की ओर बिल्कुल ही नहीं गया। लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा ने चिकरपति निकरपति, लितिकाई, पासनी आदि हास्य-व्यंग्यात्मक रचना द्वारा समाज में फैली विषमताओं, राजनैतिक भ्रष्टाचारों को रेखांकित किया। अंग्रेजों के शासन में जनता के खोए हुए आत्मबोध और मनोबल को पुन: जगाने हेतु लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा ने जयमती कुँवरी, चक्रध्वज सिंह, बेलिमार, गदाधर राजा आदि नाटकों की रचना की। पद्मनाथ गोहाईंबरुवा ने जयमती, गाँओबूढ़ा, गदाधर, तेतोंन तामुली, बानरजा, साधिनी आदि नाटकों की रचना से जनता में ऐतिहासिक ज्ञान प्रदान के साथ देशप्रेम को जगाने का प्रयास किया। अत: इन लेखकों ने अपनी लेखन कला से लोगों के विचारों में परिवर्तन लाने का कार्य किया। लेखक एवं कलाकारों ने अपने विचार तथा रचना से लोगों का ध्यान पौराणिक और ऐतिहासिक प्रेक्षापटों से हटाकर वास्तविकता पर केंद्रित किया। इन नाटकों को भी अनेक बार खेला गया, परंतु उनमें रंगमंच के तत्वों की दृष्टि से कमी पाकर खेलने के अनुपयोगी माना गया। इस बात की पुष्टि हीरेन गोहाईं द्वारा संपादित पुस्तक 'ज्योतिप्रसादर रचनावली' की भूमिका में ज्योतिप्रसाद अगरवाला के कथन से होता है। उन्होंने उनसे पूर्व लिखित नाटकों की मंचन व्यवस्था के बारे में बताते हुए कहा है कि *"साहित्यगुरु पद्मनाथ गोहाईंबरुवा जी की लेखनी से निर्मित मौलिक नाटकों का अभिनय भले ही किया गया था- परंतु असमिया अभिनेतागन उनके नाटकों की भाषा में नाटकीयता न होना मानकर इन नाटकों का अभिनय बहुत कम करते थे। साहित्यरथी लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा जी के नाटको में असमीया जीवंत चरित्र और जातीयता प्रस्फुटित हो उठी थी तथा नाट्य-साहित्य और गीत की दृष्टि से असमीया विशिष्टता से पूर्ण थी - परंतु उनके नाटक रंगमंच के अनुपयोगी समझकर बहुत ज्यादा अभिनीत न होता था।"*[3] अत: देखा जाता है कि ज्योतिप्रसाद अगरवाला के नाटकों की तुलना में मंचन कला की दृष्टि से यह नाटक इतना समादृत नहीं हो पाया। ज्योतिप्रसाद अगरवाला ने अपने नाटकों की रचना मंचन कला के तत्वों को ध्यान में रखकर किया। उस समय उनके जन्म स्थान तेजपुर में नाटकों के प्रदर्शन का एक महत्वपूर्ण स्थल बाण थिएटर था। ज्योतिप्रसाद अगरवाला जी बाण थिएटर के एक प्रमुख कार्यकर्ता के रूप में निर्वाह कर रहे थे। अभिनय, गीत में सुर प्रदान आदि द्वारा वह इस रंगमंच के साथ प्रारंभ से ही जुड़े हुए थे। 'शोणित कुँवरी' का प्रथम मंचन उन्होंने बाण थिएटर में ही कराया और स्वयं लिखित गीतों को असमीया सुर और ताल से संबद्ध कर नए रूप में दर्शकों के सामने प्रस्तुत किया। असमिया परंपरागत गीतों के सुर और लयात्मकता को स्वयं रचित गीतों में ढालकर उसे एक नवीन लोकप्रिय रूप प्रदान किया। रंगमंच के साथ उनका संबंध उनकी किशोरावस्था से ही था।

स्वतंत्रतापूर्व असमीया नाट्य जगत में ज्योतिप्रसाद अगरवाला एक शक्तिशाली व्यक्तित्व हैं। पौराणिकता के आधारभूमि में सृष्ट उनके नाटक 'शोणित कुँवरी' पुरातन में नवीन सौंदर्यबोध आरोपण का सफल प्रयास है। चौदह वर्ष में लिखे इस नाटक में गीत भी उनके खुद के द्वारा रचित थे। इसमें पुराण की कथा को आधुनिक भाव भंगिमा तथा दृष्टिकोण के साथ प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया था। 'शोणित कुँवरी' के पात्र में अलौकिकता के स्थान पर आज की परिस्थिति के अनुकूल लौकिक धरातल के घटनाक्रम के अनुरूप रखकर उनका सृजन किया गया था। अल्पायु में ही अलौकिकता को लौकिक घटनाक्रम में सार्थकता के साथ प्रस्तुत करने की गहरी समझ उनमें आ गई थी। 'शोणित कुँवरी' नाटक के प्रथम मंचन के दौरान उन्होंने अभिनय आदि में भी सहयोग दिया था तथा गीतों को भी मंच और अभिनय के उपयोगी बनाकर प्रस्तुत किया। द्वितीय विश्वयुद्ध और सन 1942 के आंदोलन की पृष्ठभूमि पर रचित 'लभिता' नाटक पर उनके क्रांतिकारी विचारों का प्रतिफलन मिलता है। नाटक में उन्होंने अपने विद्रोही मनोभाव को तथा समाज के पराधीन जनता की विवशता और विद्रोह को इतनी बारीकी से रंगमंच में

उतारा कि उसके संवादों से दर्शकों के मन में देशप्रेम और कुछ कर मिटने की अभिलाषा जागृत हो उठती है। 'कारेंगर लिगिरी' और 'रूपालिम' नाटक भी मंचोपयोगी रूप में लिखा गया है, जिसमें सामंती समाज के रहन-सहन और परंपराओं के मध्य उनके आधुनिक भावबोध और विचारों का प्रतिफलन मिलता है। उनके प्रथम नाटक से लेकर अंतिम तक उनके आधुनिक दृष्टिकोण का परिचय मिलता है। नाट्य साहित्य को ज्योतिप्रसाद अगरवाला ने अपने स्वतंत्र प्रयोग से एक अलग मुकाम दिया। कथानक, संगीत, मंचन कला, स्थापत्य आदि सभी क्षेत्र में नवीन प्रयोग कर इसे रंगमंच में सार्थकता के साथ प्रदर्शित किया। उन्होंने असमीया नाटकों की बहती धारा में असमीया लोकगीत, परंपरागत विवाह के गीत, बिहूगीत के सुर और ताल का नए ढंग से संयोजन कर असमिया समाज के शहरी शिक्षित जनता से दूर होते और तिरस्कृत इन परंपरागत गीतों को उनके सम्मुख लोकप्रिय बनाने की चेष्टा की। असमीया समाज के परंपरागत मूल्यों के साथ आधुनिक दृष्टिकोण के समन्वय उनकी विकसित विचारधारा का प्रमाण है। अत: उन्होंने असमीया संस्कृति को साहित्य को साथ जोड़कर असमीया नाटकों की इस धारा को एक नया रूप प्रदान किया। उनके समय में असमीया नाट्य साहित्य में बंगला नाट्य परंपरा का पूर्ण प्रभाव विद्यमान था। नाटकों के मंचन में भी नाटककार अनुदित बंगला नाटकों को अधिक महत्व देते थे और यदि मौलिक नाटकों का मंचन किया भी जाए तो उसमें किसी-न-किसी तरह बंगला नाटक का पुट अवश्य मिलता था। ज्योतिप्रसाद अगरवाला ने असमीया नाट्य साहित्य में इस प्रभाव को कम करने का प्रयास किया और इसे स्वतंत्र और मौलिक रूप दिया। उसी प्रकार उन्होंने असमीया संस्कृति के प्रतीक जापि, ताल आदि को जो उस समय लोगों के घरों और हृदय में अवहेलित वस्तु का स्थान ले लिया था, उसे अपनी रचनाओं द्वारा लोगों की दृष्टि में नवीन रूप प्रदान किया। जापि का व्यवहार किसान खेतों में काम करते समय वर्षा से या धूप से बचने के लिए करते थे, जो शहरी लोगों के लिए किसी काम की वस्तु न थी। परंतु ज्योतिप्रसाद अगरवाला ने अपने नाटकों में इसका प्रयोग कर जापि को लोकप्रिय बनाया। इसके बाद जापि का प्रयोग शहरी शहरी समाज के बैठकखाने में सजाने की वस्तु के रूप में होने लगा। आज भी असमीया समाज में जापि को आदर सहित सांस्कृतिक प्रतीक रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

ज्योतिप्रसाद अगरवाला ने अपने वास्तवमुखी चिंतन-मनन से तत्कालीन सामाजिक समस्याओं को अपने नाटकों में उजागर किया और इससे जनता के सामाजिक और मानसिक स्थिति में परिवर्तन लाने का सशक्त प्रयास किया। स्वतंत्रता संग्राम में भागीदारी के समानांतर साहित्य चर्चा विशेषकर नाटक और गीतों के विकास में उन्होंने सक्रीय भूमिका अदा की। लोगों को स्वतंत्रता संग्राम से जोड़ने हेतु भी रंगमंच एक आवश्यक और प्रभावपूर्ण माध्यम था। रंगमंच के विकास द्वारा उन्होंने न केवल कला का विकास किया, अपितु स्वतंत्रता संग्राम को विस्तारित करने का भी प्रयास किया। प्रथम असमीया चलचित्र 'जयमती' के निर्माण और संपादन कार्य से उन्होंने रंगमच को एक विकसित स्थिति प्रदान की। अत: कहा जा सकता है कि ज्योतिप्रसाद अगरवाला ने नाटकों के जिस मंचन कला को आधुनिक दृष्टिकोण प्रदान किया, उसे चलचित्र के रूप में भी नई दिशा प्रदान कर रंगमंच को आज की स्थिति तक पहुँचाने के मार्गदर्शक बने। थिएटर से लेकर चलचित्र तक का उनका यह सफर असमीया साहित्य और असम के रंगमंच के विकास का मुख्य स्रोत है। उन्होंने अपने इस सफर में असम के रंगमंच को आधुनिक दृष्टि और तकनीकी विकास के साथ अवगत कराया और अपने विकसित विचारधारा से असमीया समाज के परंपरागत मूल्यों के साथ आधुनिक दृष्टिकोण का समन्वय कर समाज और साहित्य को समृद्ध बनाया। ❑

संदर्भ सूची :

1. प्रसाद जयशंकर, काव्य और कला तथा अन्य निबंध, लोकभारती प्रकाशन, 2016
2. लाल डॉ. लक्ष्मीनारायण, रंगमंच और नाटककार की भूमिका, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, प्रथम संस्करण, दिल्ली, 1965
3. बदीउज्जमा, पारंपरिक भारतीय रंगमंच : अनंत धाराएँ, नेशनेल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, 1995
4. गोहाइँ, डॉ. हीरेन, ज्योतिप्रसादोर रचनावली, असम प्रकाशन परिषद, छठा प्रकाशन, 2003
5. बरुवा, डॉ. प्रह्लाद कुमार, ज्योति मनीषा, बनलता प्रकाशन, छठा प्रकाशन, 2022

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

रणेंद्र के कथा साहित्य में व्यक्त सामाजिक स्वर और आदिवासी जनजीवन

डिम्पी बरगोहाईं

शोधार्थी, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय, असम-781001
6000820383
dimpee96131@gmail.com

डॉ. परिस्मिता बरदलै

सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय, असम-781001
9864753226

शोध सार :

साहित्यकार रणेंद्र अपने समय के यथार्थ से दूर नहीं भागते, बल्कि खुली आँखों से यथार्थ को जानने का प्रयास करते हैं। आदिवासी समाज से उनका गहरा लगाव इस बात का पोषक है कि वह आदिवासी लोगों के सामाजिक जीवन की सच्चाई को पाठकों के सामने प्रस्तुत करने में सफल रहे हैं। आज आदिवासी समाज में फैले आतंक, मारपीट, लूटमार जैसी घटनाएं, उनके समाज में आए दिन नए-नए बाहरी ताकतों का प्रवेश होता जा रहा है। जिसके कारण उनका समाज बिखराव की स्थिति तक पहुँच गया है। समाजवादी जनचेतना को लेकर चलने वाला रणेंद्र का साहित्य मानव के सामूहिक भावों की अभिव्यक्ति हैं। उनका सामजिक विचार आदिवासी समाज की सामजिक संरचना के मूल भावों को उल्लिखित करता है। आदिवासी समाज की अपनी सामाजिक पहचान है, जो दूसरे समाज से उन्हें भिन्न बनाती है। चूँकि समाज में घटित घटनाओं के काल्पनिक एवं तार्किक विचारों के आधार पर ही साहित्य का सृजन होता हैं। कथाकार रणेंद्र ने भी अपने कथा साहित्य में आदिवासी समाज दर्शन को प्रगतिशील विचारों के आधार पर यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है।

बीज-शब्द :

यथार्थ, सामजिक जीवन, आदिवासी, जनचेतना, सामजिक संरचना, प्रगतिशील विचार।

मूल आलेख :

साहित्य समाज का दर्पण है। समाज में घटित घटनाओं का काल्पनिक एवं तार्किक विचारों के आधार पर साहित्य का सृजन होता हैं। एक व्यक्ति पर अपने व्यक्तित्व निर्माण में जिस प्रकार समाज और उसके आस-पास के परिवेश का प्रभाव पढ़ता हैं, उसी प्रकार साहित्य में भी समाज का यथार्थ चित्रण मिलता है। रणेंद्र एक ऐसे साहित्यकार है, जिन्होंने आदिवासी समाज की सामाजिक जीवन तथा उनके जीवन में आने वाले समस्याओं का वर्णन यथार्थ रूप से अपने कथा साहित्य में अभिव्यक्त किया हैं। दरअसल किसी भी मानव समुदाय और उनके परिस्थितियों को लेकर सजग भूमिका निभाने की दिशा में प्रत्येक साहित्यकार

जागरूक तथा संवेदनशील रहता हैं। उनके साहित्यिक अभिव्यक्ति में समाज एक महत्वपूर्ण इकाई होती है, तथा उसके लेखन में समाज से जुड़ी हुई सभी नकारात्मक चीजों के प्रति सुधारात्मक मार्ग देने की एक प्रबल इच्छा होती है। उनके कथा साहित्य में व्यक्त आदिवासी समाज दर्शन को निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर देखा जा सकता हैं-

खेतिहर एवं मेहनती समाज :

भारत में लगभग अधिकांश लोग खेतों पर निर्भरशील हैं। रणेंद्र के कथा साहित्य आदिवासी गाँव तथा ग्रामीण परिवेश की तस्वीर खींचते हुए यथार्थ समाज का अंकन है। प्रो. वीर भारत तलवार आदिवासी समाज के मूल्यों की प्रशंसा करते हुए कहते है कि –*'आदिवासियों की अपनी विशिष्टताएं हैं, अपने मूल्य हैं जो कई अर्थों में सभ्य समाज के मूल्यों से कहीं अधिक स्वस्थ और प्रगतिशील हैं।'*[1] यह समाज खेतिहर तथा सालों भर खेतों में ही डूबा रहने वाला समाज है। जंगलों के अधिरक्षक आदिवासीयों के पूर्वजों ने ही जंगल काटकर खेत तथा गाँव बसाने वाले हैं। 'छप्पन छुरी बहत्तर पेंच' कहानी संग्रह की 'बाबा, कोए और काली रात' नामक कहानी में यह दर्शाया गया है कि आदिवासियों ने किस प्रकार गाँव निर्माण करके दैनिक जनजीवन एवं पारिवारिक जीवन शैली को आगे बढ़ाया था–*'गाँव तो हमारे पूर्वजों ने ही बसाया था। भूईहर परिवार था हमारा, जंगल काटकर खेत-गाँव बसाने वाला। सो धनहर खेत भी बहुत थे। आजा (दादा) रामेश्वर उरांव अपने बाबा के इकलौता बेटे थे और हमारे बाबा अपने बाबा के इकलौते। सो साढ़े सात एकड़ एक नंबर दोन, धनहर जमीन । खाने की कोई कमी नहीं।'*[2] यह एक मेहनती समाज है तथा कहानी में भी यह स्पष्ट उल्लेख मिलता है कि- *'वैसे भी आदिवासी समाज में मेहनत करने को दूसरे समाज की तरह छोटा काम नहीं माना जाता, अच्छी नजर से देखा जाता। हाँ! बिना मेहनत किए खाने वाले को जांगर-चोर, दिकु टाईप माना जाता।'*[3]

पारंपरिक त्योहारों का पालन एवं सामूहिकता का दर्शन :

आदिवासी समाज में उत्सव एक प्रकार से आनंदमयी क्षण माना जाता है। गाँव परिवारों के बीच स्नेहिल भावों की आदान-प्रदान के साथ ही उत्सव को बड़े ही आदर के साथ मनाते हैं । उनके कहानियों में परंपरा से चली आ रही आदिवासियों की त्योहारों का जिक्र भी इस प्रकार मिलता हैं –*'भादों चाँद एकादशी को करम पर्व। गाँव-टोला, दूँगरी-पतरा, दोन-टांड, अखड़ा-सरना मानो सब अपने-अपने साजो-सिंगार में लग गए थे। आखिर करम देव का स्वागत करना है। अखड़ा-मांदर की तो बात ही कुछ और। वे तो महीनों से इसी पर्व के इंतजार में थे। तरह-तरह के गीत, तरह-तरह के संगीत। धुन-थाप-राग-लय-रंग।'*[4] उनके उपन्यास 'गायब होता देश' में भी आदिवासी मुंडाओं के ह्रदय में बसने वाले 'जट-जटिन (शिव-पार्वती) अनुष्ठानों का जिक्र भी मिलता हैं- *'घर की औरतें दो गोल में बंट कर घर के आंगन में जट-जटिन का गीत गाती, झूमर नाचती हैं।'*[5] जहाँ उनके कथा साहित्य पारम्परिक त्योहारों को पहचान दिलाते हैं, वहाँ दूसरी ओर किस प्रकार सामूहिकता के बल पर उन्हें सफल बनाने में कामयाब होती हैं, उसी बात को कहते हुए लिखते है कि –*'करम पर्व आने के हफ्तों पहले से अखड़ा में रीझरंग, खुशी-उल्लास। तीसरा पहर बीतते मांदर-झांझ गूँजने लगते। केवल गाँव-टोलों के ही नहीं, अगल-बगल गाँव-टोलों के नवयुवक-युवतियाँ जुटने लगतीं। संगी-सहिया की बुलावट(निमंत्रण) का तो बहाना था, दरअसल, अपने गोत्र, अपने गाँव के बाहर ही तो जीवन संगी-संगिनी, अपने तोता, अपनी मैना-रूपा-सोना की तलाश करनी थी, तो करम पर्व और अखड़ा नाच से बेहतर और क्या अवसर हो सकता था! सो एक से एक मांद, बांसुरी-झाँझ बजवैया, एक से एक रसिका, एक से एक रसकिन। लड़कियों की सिंगार-पतार की तो बात ही मत पूछिए। पूजा के बहाने डलिया भर फूल चुनतीं और आधा तो खुद को सजाने में खर्च कर देतीं।'*[6]

'हाट' भी आदिवासी समुदाय की सामूहिकता का एक निदर्शन है। उपन्यास 'गायब होता देश' में इस प्रकार वर्णन मिलता है कि हाट केवल मुंडा जनजाति के बीच खरीद-विक्री का जगह नही, बल्कि स्नेहिल बंधनों के आदान-प्रदान का भी एक जड़िया हैं। जहाँ एक दूसरे अपने सुख-दुख बाँटते है- *'बताया गया था कि आज हीराहातु में हाट है। बड़ा हाट। आसपास के दस-बीस*

कोस तक के गाँव के लोग हाट में आते हैं। ननिहाल-ददिहाल-ससुराल के सब लोगों से हाट में ही भेंट होती है। हड़िया-चुलैया के दोनों के साथ गिले-शिकवे, शोक-शिकायत, खुशी-गम सब बांटे जाते हैं।'[7]

बाहरी समाज का आदिवासी समाज के प्रति संकीर्ण मानसिकता :

असल में आदिवासी समाज कहने से लोगों के मन में कई सारे नकारात्मक भाव आने लगते है। एक तो आदिवासी कहने से ही उनके रंग-रूप तथा शक्ल पर संदेह के नजरों से देखते है। दूसरी और उनकी अस्मिता पर भी प्रश्न उठाते है। यहाँ तक कि आदिवासी समाज के लोगों के लिए बनाए गए कानून भी अलग हैं। उनके अधिकांश कहानियों के पात्र विशेष में यह आरोप स्पष्ट रूप से देख सकते हैं - *'ट्रेफिक के सिपाही गोर-चिट्टे, चिकने-चुपड़े, महँगे पहनावा-पोशाक वाले या धनी-मानी घर के लड़कों की बाईक जाँच करने के लिए नहीं रोकते। लेकिन दूर से ही दिख जाता कि कोई काला-सांवला, सस्ते कपड़ा पहने, देहाती वेशभूषा, गमछी-उमछीकंधा पर रखे या दाड़ी वाला आ रहा है तो हेलमेट पहना हो या न पहना हो, उसकी बाइक जरुर रोकी जाती। कागज-पत्तर में खोद-खोद कर कमी निकाली जाती। बिना सौ-पच्चास ऐंठे छोड़ा नहीं जाता।'*[8] इस प्रकार के भेदभाव इस समाज के संदर्भ में देखने को मिलता है। असल में आदिवासी समाज को किस प्रकार के भेदभाव का शिकार होना पड़ता है, संकीर्णता के दीवार के नीचे दबी हुई इस मानव समुदाय की जीवन परिस्थिति किस परिणाम तक पहुँच रहे है उसी का यथार्थ स्वरूप उनके कथा साहित्य के संदर्भ में देख सकते है।

'रात बाकी' नामक कहानी में चेरो आदिवासी रामावतार सिंह की बेटी पुष्पा उर्फ सोमारी को लेकर समूचे आदिवासी लोगों के प्रति तथा उनके बाहरी रंग, रूप तथा बनावट को लेकर रहने वाले हीन मानसिकता को कहानी में देखा जा सकता हैं - *'लेकिन रामावतार चेरो की बेटी पुष्पा सिंह के बार में नहीं सुना था। मालूम हुआ कि यही सोमारी है। पुकारू नाम है सोमारी। स्कूल का नाम पुष्पा सिंह ही है। मैं भकुआ गया। क्या-क्या छवि बना रखी थी। ठीक काली माय वाली। गले में मुंडमाल, साँवली-काली चमकती, खड्ग धारिणी रक्त भरे खप्पर वाली। कहाँ ये फूलों सी किशोरी। रजनीगंधा की डंठल-सी काया।'*[9] 'गायब होता देश' में यह देख सकते हैं कि *मुंडा समाज को में कर्म से व्यक्ति का पहचान नहीं मिलता, बल्कि जाति, चेहरे के रंग से उनका स्थान निर्धारित किया जाता हैं। काबिलियत बनने पर भी उनके डिग्री को लेकर सराहना नही किया जाता। इस बात से भी मुंडा समाज अच्छे से परिचित है तथा 'जानते हैं कि आदिवासी में जनम लिए हैं, तो कुर्सीवाला नौकरी तो कोई आसानी से देगा नहीं। चमड़ी का रंग देखकर लेबर-कुली से ज्यादा कोई बुझता नहीं है। चमड़ी का रंग देखकर लेबर-कुली से ज्यादा कोई बूझता नहीं है।'*[10]

स्त्रियों की स्थिति :

'स्त्रियाँ' आदिवासी समाज में अपनी एक स्वतंत्र अस्तित्व निभाती है। इस समाज की स्त्रियों के संबंध में काफी संतोषजनक भूमिका निभाती हुई कहानियों में देखने को मिलता हैं। दरअसल स्त्रियों को किसी भी समाज की परम्परा को निभाने वाली धरोहर माना जाता है। परंतु स्त्री को समाज में पुरुष से कम माना जाता है, कम अधिकार और पर्याप्त स्वतंत्रता प्राप्त है। आदिवासी समाज में स्त्रियों को पुरुष से कम नहीं बल्कि एक समान माना जाता है। यहाँ के स्त्रियों में मिलने वाले कुछ विशेषताओं का जिक्र कहानियों में इस प्रकार मिलता हैं- *'यहाँ की बेटियां बहुत जब्बर, बहुत मेहनती, बहुत खटने वाली। खेती-खलिहानी की तो पंडिताइन। किंतु जोर-जबरदस्ती, हुकुम के आगे नहीं दबने वाली। बारह-चौदह घनता खटती हैं, जांगर चलाती हैं तो खाती हैं। दबेंगी काहे।'* [11] कथाकार रणेंद्र ने न केवल आदिवासी स्त्री जीवन को लेकर ही सजग है, बल्कि पुरे स्त्री जाति में आनेवाले संकटों को सम्बोधित करती हुई यह प्रश्न करता हैं कि- *'न जाने रोने वाली पहली स्त्री कोन थी? उसने क्या-क्या और कितना सहा होगा, कैसे टूटी होगी? कहाँ किस सुनसान-बियाबान में, सबसे नजरें बचाकर चुपचाप रोई होगी। केवल धरती ही गवाह होगी, जहाँ वे आंसू गिरे होंगे। न जाने कितने-कितने युगों से कितनी-किनती स्त्रियाँ कितना-कितना रोई होंगी कि सातों समुद्र खारे आँसुओं से लबालब हो गए।'*[12]

स्त्रियों के स्वाभिमानी स्वरूप को दर्शाते हुए अपनी वैयक्तिक प्रतिभा के विकास में आगे बढ़ने वाली मनस्थितियां उनके कथानक में सहज ही देखने को मिलती हैं। इतिहास गवाह है कि तथाकथित समाज ही केवल स्त्रियों को पुरुषों से कम मानते हैं, पर हकीकत कुछ अलग ही है। आज स्त्रियाँ पुरुषों के समान हकदारी निभा रही है। इसी स्थिति के बारे में जिक्र करते हुए 'सोमा कुजूर' नामक आदिवासी स्त्री के बारे में 'वह बस धूल थी' नामक कहानी में उल्लेख किया है, जो एशियाई कप में भारत के महिला हॉकी टीम की सबसे तेज फोरवर्ड, जिनके गोल से भारत को स्वर्ण पदक मिला था। परंतु उनकी पहचान को दबाने का प्रयास इस कहानी के अंतर्कथा में देखने को मिलता है। आदिवासी समाज में स्त्री और पुरुष का समानाधिकार है। *'महिलाएँ इस समाज में सियानी कहलाती थी, जनानी नहीं। जनानी शब्द कहीं-न'-कहीं केवल जनन, जन्म देने की प्रक्रिया तक उन्हें संकुचित करता, जबकि सियानी शब्द उनकी विशेष समझदारी-सयानेपन को इंगित करता मालूम होता।'* [13] 'ग्लोबल गाँव के देवता' उपन्यास आदिवासी स्त्रियों के शोषण को उजागर करता है। उपन्यास में शिवदास बाबा असुर जनजाति की लड़कियों का यौन शोषण करता है। वह असुरों की बच्चों के शिक्षा के लिए आवासीय विद्यालय का निर्माण करता है और छात्रावास में रहने वाली लड़कियों को पैर दबाने के बहाने से बुलाकर अपनी वासना पूर्ति करता है। इतना ही नहीं आदिवासी क्षेत्र में आने वाली शिंडाल्कों जैसी बाहरी कम्पनियां भी आदिवासी औरतों का शोषण करती हैं। किशन कन्हेया पांडे अपने गेस्ट हाउस में अपनी वासनापूर्ति के लिए घरेलू काम-काज करने के बहाने आदिवासी लड़कियों को लाता है और उनका शारीरिक शोषण करता है। उपन्यास में उसकी कामुक प्रवृत्ति का वर्णन इस प्रकार हुआ है- *'जहाँ कोई अक्षतयौवना मिलती, वे बड़े मनोयोग से तंत्र साधना में डूब जाते हैं। कभी-कभी तो सारी रात यह घनघोर साधना चलती रहती है।'*[14]

आदिवासी समाज में इस कदर गरीबी फैल गई है कि आज आदिवासी लड़कियों को चंद पैसों के लिए दलालों के हाथों बेच दिया जाता हैं। उनको सिर्फ उपभोग की वस्तु समझा जाता है। अनेक प्रलोभन देकर उन्हें बड़े-बड़े शहरों में बेच दिया जाता है। रणेंद्र ने इस उपन्यास में लड़कियों को बेचने की सच्चाई को समाज के सामने लाने का प्रयास किया है। असुर समाज की लड़कियों को दलाल ले जाकर कहीं दूर बाजार में बेच देते हैं। उपन्यास 'गायब होता देश' में आदिवासी स्त्री पर बाहरी लोगों के द्वारा किए जाने वाले शोषण का जिक्र भी मिलता है। पात्र 'वीरेंद्र प्रताप' के द्वारा योन शोषण के सम्बन्ध में यह उल्लेख मिलता है कि-*'अधिक से अधिक महीना-दो-महीना से ज्यादा वह किसी औरत को अपने बिस्तर पर बर्दास्त ही नहीं कर पाता था। या फिर थाना के पिछवाड़े यूकिलिप्ट्स के झुण्ड के बीच के सुनसान कमरे में बंद अकेली औरत सहने की सीमा पार कर जाती।'*[15]

मिथकीय विश्वास एवं अंधविश्वास :

ग्रामीण समाज में सामान्य तौर पर अंधविश्वास की मान्यता ज्यादा होती है। चाहे आदिवासी समाज हो या गैर आदिवासी समाज। 'ग्लोबल गाँव के देवता' उपन्यास में वर्णित असुर समाज में भी मिथक व अन्धविश्वास ने लोगों के मन को घेर कर रखा है। *'दरअसल अब भी कुछ लोगों के मन में यह बात बैठी हुई है कि धान को आदमी के खून में सानकर बिचड़ा डालने से फसल बहुत अच्छी होती है।'* [16] जिसके कारण धान उगने के समय में मुड़ीकटवा लोग घूमते रहते हैं। अंधविश्वास के नाम पर प्रचलित बलि प्रथा को भी यहाँ लेखक ने दिखाया है। *'देवी को जब बलि की जरूरत होती है तो गुफा से नगाड़े की आवाज आने लगती है।'*[17] मिथक लोक समाज एवं लोक साहित्य से जुड़ी हुई एक एक विश्वास है। इतिहास में मानव सृजन से ही मिथक का उदगम हुआ है, ऐसा माना जाता है। मनुष्य के मन में आनेवाले कौतूहल प्रवणता से सृजित कथाओं का आधार स्तंभ ही मिथकीय इतिहास में श्रेय है। मिथक शब्द की उत्पत्ति अंग्रेजी के मिथ और ग्रीक शब्द 'माइथोस' से निर्मित है। आदिवासी समुदाय में मिथकीय जिक्र प्राचीन काल से ही मौजूद है। आदिवासी समाज में मिथकीय अवधारणा एक विशेष भूमिका निभाती है। मिथक का जिक्र रणेंद्र के उपन्यास 'गायब होता देश' में देखने को मिलता है। उनका यह मान्यता है कि बोंगा (देवी) कुलाचंडी' समय अनुसार बाघ का रूप धारण करती है और उनलोगों के ऊपर बुरे प्रभाव को दूर करते है। उंबुल-अदेर के संदर्भ में भी यह विश्वास है कि देह, जियु(आत्मा) और रौवा (छाया) तीनों मिलकर होड़ो (इन्सान) बंटे हैं। हर होड़ों एक निश्चित उम्र लेकर आता है, उसे 'जोम-सकम' कहते हैं। यद्दपि इन मिथकों को दूसरे लोग कल्पित

समझ सकते हैं कितु आदिवासी मुंडा समाज की इन मिथकों के प्रति गहरी आस्था होती है। यहाँ ऐसे ही मिथक 'चांदर-बांदर' का जिक्र किया गया है। जिसका अर्थ उलटबग्घा है। आदिवासी मुंडा समाज का यह मानना है कि उनके समाज के विशेष लोगों के पास संकट के समय बाघ में बदलने की शक्ति होती है। अदिंग बोंगको के संदर्भ में लेखक कहता है – *'हमारे जुझारू पूर्वज भी ऐसे थे जो मृत्यु के बाद किसी स्वर्ग-नरक में नहीं जाते, हमारे साथ ही रहते हैं, अदिंग बोंगको बन कर। हमारा रास्ता दिखाते, हमारी रक्षा करते। सो हम लड़ेंगे। हमारे साथ प्रकृति, इतिहास, मिथक, पूर्वज-पुरनिया सब के सब मिल कर लड़ेंगे। उलगुलान...हो उलगुलान। धरती से आकाश तक गूंजे उलगुलान।'*[18]

निष्कर्ष :

यह कहा जा सकता है कि रणेंद्र का सामाजिक विचार आदिवासी समाजों की सामाजिक संरचना के मूल भावों को प्रस्तुत करता हैं। आदिवासी समाज की अपनी विशिष्ट सामाजिक पहचान मौजूद है, जो दूसरे समाजों से उन्हें भिन्न बनाती हैं। परंतु उन पर बाहरी शक्ति का लगातार बढ़ता प्रभाव ही संभवत: आज आदिवासी विमर्श का प्रमुख कारण है। वैश्वीकरण वह प्रक्रिया है, जिससे कोई भी अछूता नहीं हैं। इसका प्रत्यक्ष प्रभाव आज आदिवासी जनजीवन पर पड़ रहा है। प्रकृति के पूजक आदिवासी अंचलों के प्राकृतिक संसाधनों को लूटने की अपार लालसा से भरे हुए भूमंडलीकरण ने आदिवासी समाज की समूचे जीवन को नारकीय बना दिया है। उनके अस्तित्व को गहरे संकट में डाल दिया है। आदिवासी का अपने वन, जंगलों से जो प्रतीकात्मक सम्बन्ध और अधिकार था उस पर भी आज सरकार ने हस्तक्षेप कर दिया है। जिसके कारण आज जनजातियों के जीवन में तनाव बढ़ रहा हैं। वर्तमान समय में संविधान की पांचवी और छठी अनुसूची में जिन संवैधानिक अधिकारों का उल्लेख हैं वे धरातल पर लागू नहीं हो रहे हैं। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने आदिवासियों की भूमि पर अपना हक जमा लिया है। लगभग बिना मुआवजें के उनलोगों को बेदखल कर दिया गया हैं। देश के मूल निवासियों से ही उनकी जमीन छीनकर अपने मुनाफा के लिए तरह-तरह की कम्पनियां बनवाई जा रही हैं। अर्थात आज अपनी पहचान होते हुए भी यह समाज उपेक्षित है। विस्थापन ने आदिवासी सामजिक-सांस्कृतिक अस्मिता को पूरी तरह निगल लिया है। रणेंद्र का कथा साहित्य आदिवासी समुदाय की इन्हीं चुनौतीयों से भरे उनके सामाजिक अस्मिता के प्रति सचेत स्वर का यथार्थ अभिव्यक्ति है। ❑

संदर्भ सूची :

1. वीर भारत तलवार, झारखंड के आदिवासियों के बीच, एक एक्टीविस्ट के नोट्स, भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, 2019, पृ.सं.33
2. रणेंद्र, छप्पन छुरी बहत्तर पेंच, आधार प्रकाशन, हरियाणा, प्र. सं.2020, पृ.सं.12
3. वही, पृ.सं.21
4. वही, पृ.सं.35
5. रणेंद, गायब होता देश, पेंगुइन बुक्स प्रकाशन, प्र. सं.2014, पृ.सं. 69
6. रणेंद्र, छप्पन छुरी बहत्तर पेंच, आधार प्रकाशन, हरियाणा, प्र. सं.2020, पृ.सं.35
7. रणेंद, गायब होता देश, पेंगुइन बुक्स प्रकाशन, प्र. सं.2014, पृ.सं. 43
8. रणेंद्र, छप्पन छुरी बहत्तर पेंच, आधार प्रकाशन, हरियाणा, प्र. सं.2020, पृ.सं. 40
9. रणेंद्र, रात बाकी एवं अन्य कहानियाँ, राजकमल प्रकाशन, प्र. सं.2020, पृ.सं. 11
10. रणेंद, गायब होता देश, पेंगुइन बुक्स प्रकाशन, प्र. सं.2014, पृ.सं.106
11. रणेंद्र, छप्पन छुरी बहत्तर पेंच, आधार प्रकाशन, हरियाणा, प्र. सं.2020, पृ.सं.59
12. वही, पृ.सं.73
13. रणेंद्र, ग्लोबल गाँव के देवता, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नयी दिल्ली, दूसरा सं.2010, पृ.सं.23
14. वही, पृ.सं.54
15. रणेंद, गायब होता देश, पेंगुइन बुक्स प्रकाशन, प्र. सं.2014, पृ.सं.76
16. रणेंद्र, ग्लोबल गाँव के देवता, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नयी दिल्ली, दूसरा सं.2010, पृ.सं.12
17. वही, पृ.सं.13
18. रणेंद, गायब होता देश, पेंगुइन बुक्स प्रकाशन, प्र. सं.2014, पृ.सं.243

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विरासत

विश्व में भारतीय-सभ्यता एवं संस्कृति की प्रासंगिकता

आनंद कुमार
प्रवक्ता, इतिहास विभाग
महर्षि दयानंद विद्यापीठ
(पता - गांव व पोस्ट शाहपुर
निज-मोरटा, जिला-गाजियाबाद,
उत्तर प्रदेश, पिन-201003
7409652402
anandsharma14214@gmail.com

डॉ. के. के. शर्मा
प्रोफेसर, इतिहास विभाग
चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय
मेरठ, उत्तर प्रदेश

शोध-सार :

संस्कृति के अंतर्गत मानव के समस्त क्रियाकलाप आते हैं, जबकि सभ्यता के अंतर्गत उसके भौतिक पहलुओं पर विशेष जोर दिया जाता है।[1] भारतीय संस्कृति पूरे विश्व में अपना एक विशेष स्थान रखती है। वैसे तो सभी संस्कृतियाँ और सभ्यताएं सम्माननीय और पूजनीय है, किंतु यदि व्यापक तौर पर हम भारतीय मूल्य परंपराओं और अपनी संस्कृति की विशेषताओं का आकलन करें तो जो पूर्णता हमारी भारतीय संस्कृति में है, वह अन्य कहीं पर दुर्लभ है। मनुष्य के संपूर्ण जीवन उसके कर्मों जीवन के उद्देश्यों और उसके दायित्व तथा पूरे ब्रह्मांड से उसके समन्वय का जितना सुंदर वर्णन भारतीय संस्कृति में मिलता है अन्य कहीं पर मिलना दुर्लभ है। आज पूरा विश्व अनेक कठिनाइयों से गुजर रहा है विभिन्न जातियां धर्म के बीच वैमनस्य उत्पन्न हो रहा है। एक देश दूसरे देश पर आक्रमण कर रहा है। साम्राज्यवाद उपभोक्तावाद अपने चरम पर है। जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग जैसे मुद्दे तथा प्रदूषण की समस्याएं दिन प्रतिदिन भयावह होती जा रही हैं। ऐसे में यदि हम भारतीय संस्कृति और सभ्यता के मूल्यों का अनुकरण और आकलन करें तो हमें पता चलता है कि केवल और केवल भारतीय संस्कृति ही ऐसी है, जिसके आचरण से हम मनुष्य जाति को और इस पृथ्वी को कल्याण की ओर ले जा सकते हैं। मेरे शोध पत्र का उद्देश्य यही है कि भारतीय संस्कृति के मूल्य आज भी पूरे विश्व के लिए प्रासंगिक हैं, हजारों वर्ष के पश्चात भी इन मूल्यों के अनुसरण के द्वारा ही विश्व को और मनुष्य जाति को भय मुक्त बनाया जा सकता है, सबके कल्याण की कामना की जा सकती है।

मूल शब्द:

वैमनस्य, सभ्यता, संस्कृति, सार्वभौमिकता, संसाधन, औषधि, सदानीरा, प्राणदायिनी, पारलौकिकता।

उद्देश्य :

प्रस्तुत शोध पत्र में भारतीय सभ्यता और संस्कृति के उन गुणों और विशेषताओं को वर्णित किया गया है, जिसमें पूरे संसार को सही मार्ग पर ले जाने की क्षमता और सामर्थ है। व्यक्ति के निजी जीवन, उसका समाज, परिवार जनों के साथ संबंध, अन्य धर्म संप्रदायों के साथ उसका समन्वय, देश प्रांत और पर्यावरण समेत

समस्त जीवधारियों के साथ उसके कर्तव्यों की दिशा का बोध मनुष्य को कराया जाए, वह क्या करें अथवा क्या ना करें, इसका बड़े ही सुंदर ढंग से वर्णन भारतीय संस्कृति में किया गया है। साथ ही साथ भारतीय ऋषि मुनियों ने अपने आचरण से भी इन मूल्यों को स्थापित करके दिखाया है। विश्व में भारतीय संस्कृति की प्रासंगिकता शोध पत्र के जरिए शोधार्थी का उद्देश्य यही है कि सभी यह जान पाए कि हमारी संस्कृति कितनी महान और प्रासंगिक है और केवल भारतीयों को ही नहीं अपितु पूरे विश्व को इसका अनुसरण करने की आवश्यकता है।

प्रविधि :

प्रस्तुत शोध लेखन के दौरान शोधार्थी ने विश्लेषणात्मक, समीक्षात्मक, वर्णनात्मक व उदाहरणात्मक शोध प्रविधि अपनाई है।

विषय वस्तु :

भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति और विचार पूरे विश्व में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के विचारों में, दर्शन में ऐसी पूर्णता पाई जाती है। जो मानव के जीवन को उत्तम से सर्वोत्तम की ओर ले जाती है। यह भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के मूल में गूढ़ दार्शनिक चिन्तन की ही देन है, जो व्यक्ति को मानव से महामानव, पशु से मानव और मानव से देवता की ओर लेकर जाती है। आइए इस संस्कृति के मूलभूत सिद्धांतों की चर्चा करते हैं।

विश्व शांति के लिए प्रार्थना यह भारत की भूमि और उसके विचार ही हैं जो कि पूरे विश्व के कल्याण और शांति की बात करती है। इसीलिए हिंदुओं की पूजा पद्धति में शांति पाठ किया जाता है।

ओम द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शांतिः
पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शांतिः।
वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शांतिर्ब्रह्म शांतिः
सर्वं शांतिः, शांतिरेव शांतिः सा मा शांतिरेधि॥
ओम शांतिः शांतिः शांतिः॥[2]

यजुर्वेद के इस शांति पाठ मंत्र में सृष्टि के समस्त तत्वों व कारकों से शांति बनाये रखने की प्रार्थना की गई है। इसमें यह गया है कि द्युलोक में शांति हो, अंतरिक्ष में शांति हो, पृथ्वी पर शांति हों, जल में शांति हो, औषध में शांति हो, वनस्पतियों में शांति हो, विश्व में शांति हो, सभी देवतागणों में शांति हो, ब्रह्म में शांति हो, सब में शांति हो, चारों और शांति हो, शांति हो, शांति हो, शांति हो।

इस शांति पाठ में पृथ्वी, जल, आकाश, औषध, सभी की मंगल कामना की जाती है।

ओम पूर्णमदः पूर्णमिदम् पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥
ओम शांतिः शांतिः शांतिः॥[2]

(वृहदारण्यकोपनिषद एवं ईशावास्योपनिषद)

ऐसा दर्शन और ऐसे विचारों की अभिव्यक्ति अन्यत्र कहीं भी दुर्लभ है।

पूरा विश्व हमारा घर भारतीय धर्म संस्कृति और विचारों में पूरी पृथ्वी को एक घर माना गया है। देश, महाद्वीप और सीमाओं के बंधन से परे भारतीय ऋषि मुनियों ने 'वसुंधैव कुटुंबकम्' का आह्वान किया है। यदि हम पृथ्वी को अपना घर मानें तो बहुत सारी परिस्थितियां और समस्याएं स्वतः ही हल हो सकती हैं क्योंकि मानव के लिए पृथ्वी ही उसका घर है इसका कोई भी भाग है यदि समस्या ग्रस्त होता है तो पूरी मानव जाति के लिए ही संकट खड़ा होगा, हमारे पूर्वज इस को पहले ही समझते थे, इसलिए उन्होंने पूरी पृथ्वी को एक घर की मान्यता दी थी।

वसुधैव कुटुंबकम् सनातन धर्म का मूल संस्कार तथा विचारधारा है, जो महा उपनिषद सहित कई ग्रन्थों में लिपिबद्ध है। इसका अर्थ है- धरती ही परिवार है '(वसुधा एव कुटुंबकम्)। यह वाक्य भारतीय संसद के प्रवेश कक्ष में भी अंकित है।

अयं निजःपरोवेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैवकुटुंबकम्॥[3]

(महोपनिषद्, अध्याय 6, मंत्र 71)

अर्थ - यह मेरा अपना है और यह नहीं है, इस तरह की गणना छोटे चित्त (संकुचित मन) वाले लोग करते हैं। उदार हृदय वाले लोगों के लिए तो (सम्पूर्ण) धरती ही परिवार है।

सत्य एकम विप्रा बहुदा वदंति[4]

ऋग्वेद के प्रथम मंडल के 164वें सूक्त की 46वीं ऋचा कहती है-

इंद्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्य: स सुपर्णो गरुत्माम्।
एकं सद्विप्रा बहुधा वदंत्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहु: ॥ [4]

इसका अर्थ है- 'जिसे लोग इंद्र, मित्र, वरुण, अग्नि कहते हैं, वह सत्ता केवल एक ही है, ऋषि लोग उसे भिन्न-भिन्न नामों से पुकारते हैं। अनेक सभ्यताएं धर्म और संस्कृतिया ईश्वर की अनेक रूपों में उसकी व्याख्या करती हैं। कोई ईश्वर के निर्गुण स्वरूप को मानता है तो कोई सगुण स्वरूप को मानता है। किसी के लिए ईश्वर अवतार रूप में है तो किसी के लिए ईश्वर निराकार है और उसका कोई स्वरूप नहीं है। वेद का वाक्य सत्य एकम विप्रा बहुदा वदंति।

यह प्रमाणित करता है कि इस संसार में ईश्वर एक ही है और वही सत्य है, किंतु उसे विद्वान अनेक प्रकार से कहते हैं। यह उक्ति सभी के दार्शनिक विचारों का सम्मान करती है और यह प्रमाणित करती है कि जिस प्रकार समस्त नदियां अनेक रास्ते से होकर अंतत: सागर में विलीन हो जाती हैं। उसी प्रकार अनेक सभ्यता एवं संस्कृतियों के धर्म- विचार अनेक रूप में प्रभु की भक्ति करते हुए। अंतत: ईश्वर में विलीन हो जाते हैं। अथातो भक्ति व्याख्यास्याम: (नारद भक्ति सूत्र 1.1)

यल्लब्ध्वा पुमान् सिद्धो भवति,
अमृतो भवति, तृप्त भवति। [5]

(नारद-भक्ति - सूत्र 1.3)

सा परानुरक्तिश्वरे अर्थात् वह भक्ति ईश्वर के प्रति अनुरागरूपा है।[6] (शाण्डिल्य - भक्ति - सूत्र 1.1)

यह एक सार्वभौमिक सत्य है, जो हमारे ऋषियों ने हजारों साल पहले ही बता दिया था।

स्त्री के देवी स्वरूप की कल्पना पूरे विश्व में अनेक सभ्यताएं और संस्कृति के रूप में विकसित हुई, किंतु भारतीय संस्कृति उन संस्कृतियों में से एक है, जिन्होंने नारी के देवी स्वरूप की कल्पना की है। प्रसिद्ध धर्मशास्त्र ग्रन्थ मनुस्मृति के अध्याय तीन में 56 वें श्लोक में कहा गया है।

यत्र नार्यस्तु पूज्यते रमंते तत्र देवता (3.56) [7]

अर्थात् जहां नारी की पूजा होती है उस घर में देवता विराजमान होते हैं।

वेद साक्षी है कि हमने सदैव प्राकृतिक संसाधनों की पूजा की और कहा गया है कि-

'यो देवोद्रग्नौ, योदूप्सु यो विश्व भवनमाविवेश।'[8]
यो ओषधिक्ष यो वनस्पतिषु तस्मै देवाय नमो नम: ॥'

अथर्ववेद (12/1/31)

अर्थात् जो अग्नि, जल, आकाश, पृथ्वी एवं वायु से आच्छादित है तथा जो औषधियो एवं वनस्पतियों में भी विद्यमान हैं, उस (पर्यावरण) देव को हम नमस्कार करते हैं। ऋग्वेद (1/23/248) में 'अप्सु अन्त: अमृतं, अप्सु भेषजं' के रूप में जल का वैशिष्ट्य बताया गया है। अर्थात, जल में अमृत है, जल में औषधि-गुण विद्यमान रहते हैं। अस्तु, आवश्यकता है जल की शुद्धता-स्वच्छता को बनाए रखने की। जनसंख्या वृद्धि तथा अन्य कारणों से पीने का पानी धीरे-धीरे कम होता जा रहा है, जिसमें प्रमुख कारण जल प्रदूषण भी है। नदियों के किनारे ही हमारी सभ्यता का विकास हुआ परंतु आज हम इन नदियों को प्रदूषित करने में पीछे नहीं हैं। अत: आज हम वेदों का अनुसरण कर जल प्रदूषण जैसी समस्या का समाधान कर पायेंगे, क्योंकि हमारी पुरातन संस्कृति में स्वच्छ पेयजल की प्राप्ति के लिए ऋषि जल तत्व पर विचार करते हुए प्रार्थना करता है-

''शुद्धा न आपस्तन्वे क्षरंतु''[9]

(अथर्ववेद, 12/1/30)

इसीलिए नदियों, तालाबों व पोखरों आदि में मल-मूत्रादि विसर्जन को पाप कर्म समझा जाता है। जल प्रदूषण के प्रति इतनी जागरूकता आज से सैकड़ों वर्ष पूर्व हमारी संस्कृति में देखने को मिलती है जल की गुणवत्ता का हमारे ऋषियों को पहले से ज्ञान था। सदानीरा नदियाँ इस धरा के वक्षस्थल को निरंतर सींचती रहती हैं और प्राणिमात्र को पेयजल उपलब्ध कराती हैं, अत: वे भी हमारे लिए वंदनीय हैं । इन पापनाशिनी नदियों के तटों एवं संगम स्थलों पर पवित्र तीर्थ स्थान है । पतित पावनी गंगा, यमुना, सरस्वती आदि नदियों की स्तुति की गई है-

''इमं मे गंगे यमुने सरस्वति शतुद्रि स्तोमे सचतापरूष्णया।
असिकन्या मरूदृधे वितस्तयाजीर्कीये श्रृबुह्वाया सुषोमया ॥''[10]

(अथर्ववेद, 12/1/31)

आज वायु प्रदूषण मानव अस्तित्व के लिए एक बड़ा संकट बना हुआ है । हम बिना अन्न-जल के कुछ समय के लिए जीवित रह सकते हैं, परन्तु प्राण वायु के बिना एक पल भी जीवित नहीं रह सकते। लोकोक्ति है कि 'जब तक सांस, तब तक आस।' इसलिए वेद में वायु को न केवल देवतुल्य माना गया है बल्कि जीवनदाता, मित्र व पालनकर्ता भी माना गया है। वेदों के अनुसार स्वच्छ वायु प्राणदायिनी औषधि के समान है, जिससे हमारा जीवन स्वस्थ एवं नीरोग रह सकता है। इसीलिए ऋग्वेद में स्तुतिकर्ता उपासक वायुदेवता से प्रार्थना करता है-

''वात आ वातु भेषजं शम्भू मयोभु नो हृदे।
प्राण आयूषि तारिषत॥''

(ऋग्वेद, 10/10/186)

वैदिक साधको ने साक्षात्कार कर लिया था कि पर्यावरण रक्षा ही स्वात्मरक्षा है।

आश्रम व्यवस्था

प्राचीन काल में व्यक्तिगत व्यवस्था के दो स्तंभ थे - पुरुषार्थ और आश्रम। सामाजिक प्रकृति-गुण, कर्म और स्वभाव-के आधार पर वर्गीकरण चार वर्णों में हुआ था। व्यक्तिगत संस्कार के लिए उसके जीवन का विभाजन चार आश्रमों में किया गया था। ये चार आश्रम थे- (1) ब्रह्मचर्य, (2) गृहस्थ, (3) वानप्रस्थ और (4) संन्यास

अमरकोश (7.4) पर टीका करते हुए भानु जी दीक्षित ने 'आश्रम' शब्द की व्याख्या इस प्रकार की है: आश्राम्यन्त्यत्र। अनेन वा। श्रमु तपसि। घ्ं। यद्वा आ समंताच्छमोऽत्र। स्वधर्मसाधनक्लेशात्। अर्थात् जिसमें सम्यक प्रकार से श्रम किया जाए वह आश्रम है। आश्रमव्यवस्था का जहाँ शारीरिक और सामाजिक आधार है, वहाँ उसका आध्यात्मिक अथवा दार्शनिक आधार भी है। भारतीय मनीषियों ने मानव जीवन को केवल प्रवाह न मानकर उसको सोद्देश्य माना था और उसका ध्येय तथा गंतव्य निश्चित किया था। मनुस्मृति (अध्याय 3, 4, 5)

पुरुषार्थ - चतुष्ट्य

धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष भारतीय धर्म संस्कृति मनुष्य के जीवन के चार उद्देश्य (पुरूषार्थ चतुष्ट्य) निर्धारित करती है। यहां उद्देश्य का मतलब जीवन जीने के ढंग से है। पहला धर्म पूर्वक जीवन जीने से है अर्थात् धर्म का आचरण करते हुए जीवन जिया जाए।

यतो अभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः। [11]

(कणाद, वैशेषिकसूत्र, 1.1.2)

'अभ्युदय' से लौकिक उन्नति का तथा 'निःश्रेयस' से पारलौकिक उन्नति एवं कल्याण का बोध होता है।

अर्थ -

मनुष्याणां वृत्तिः अर्थः। (कौटिल्यीय अर्थशास्त्र)

अर्थात जो भी विचार और क्रियाएं भौतिक जीवन से संबंधित है उन्हें 'अथ' की संज्ञा दी गयी है। दूसरा जीवन जीने के लिए धन की आवश्यकता भी बहुत आवश्यक है और इसके अभाव में व्यक्ति किसी प्रकार की सुख सुविधाओं का भोग नहीं कर सकता। धर्म के दायरे में रहकर मनुष्य को धन कमाना चाहिए।

काम -

महर्षि वात्स्यायन कामसूत्र में काम के विषय में कहते हैं -

श्रोत्रत्ववचक्षुर्जिह्वा घ्राणानामात्म संयुक्ते नमन साधिष्ठितानां स्वेषु स्वेषु विषयेष्वानुकूल्यतः प्रवृतिः कामः। अर्थात्

आत्मा से संयुक्त मन से अधिष्ठित तत्व, चक्षु, जिव्हा, तथा घ्राण तथा इन्द्रियों के साथ अपने अपने विषय - शब्द, स्पर्श, रूप, रस, तथा गंध में अनुकूल रूप से प्रवृत्ति 'काम' है।

काम किसी भी संसार को चलाने के लिए नई पीढीयाँ जब तक नहीं आएंगी तो वह संसार शून्य हो जाएगा। धर्म, अर्थ ,काम, के तीनों चरण पूरे करने के पश्चात व्यक्ति को अंत में मोक्ष प्राप्ति के लिए सन्यास के चरण में प्रवेश करना पड़ता है। जीवन का अंतिम लक्ष्य मोक्ष है। जिसमें व्यक्ति जन्म मरण के बंधन से मुक्त हो जाता है।

आदि गुरु शंकराचार्य ने

ब्रह्म सत्यं जगत् मिथ्या जीवो ब्रह्म नापरः [12]

अर्थात् ब्रह्म ही सत्य है, जगत् मिथ्या है, जीव ही स्वयं में ब्रह्मस्वरूप है।

इत्युक्तम् अन्ततः मोक्ष प्राप्ति को ही जीवन का परम लक्ष्य स्वीकार किया है।

इस प्रकार विभिन्न भारतीय दार्शनिक सम्प्रदायों में

विविध मोक्ष मार्ग पद्धतियों के प्रमाण प्राप्त होते हैं।

निष्कर्ष :

हजारों वर्षों से भारतीय संस्कृति गतिशील और प्रवाहमयी है। इतना समय बीत जाने के पश्चात भी आज भी भारतीयों के आचरण में भारतीय संस्कृति और सभ्यता के तत्व विराजमान है। अनेक उदाहरण है जिसमें पाया गया है कि पाश्चात्य जगत में दिनों दिन भारतीय संस्कृति को अपनाने की प्रवृत्ति बढी है क्योंकि केवल और केवल भारतीय संस्कृति में ही ऐसे गुण समावेशित हैं जो सबको साथ लेकर चलने और समन्वय की भावना से परिपूर्ण है। केवल और केवल भारतीय संस्कृति ही यह कहती है कि सत्य एक ही है सब उसे अनेक प्रकार से कहते हैं। भारतीय संस्कृति यह बताती है कि मनुष्य को पूरी पृथ्वी को एक घर के समान ही समझना चाहिए। अपने साथ-साथ समस्त जीवधारियों को कल्याण की कामना भारतीय संस्कृति का मूल तत्व है। निष्कर्षत: यही प्रमाणित किया जा सकता है कि वर्तमान समय में जब पूरी दुनिया अनेक समस्याओं से गुजर रही है ऐसे में लोगों के बीच भारतीय संस्कृति के मूल्यों को प्रसारित करके ही इन सब समस्याओं का समाधान ढूँढ़ा जा सकता है। ❑

संदर्भ सूची :

1. एस.के. पांडेय, प्राचीन भारत, प्रयाग एकेडमी इलाहाबाद,
2. यजुर्वेद 36/17
3. महोपनिषद अध्याय 6, मंत्र 71वां
4. ऋग्वेद प्रथम मंडल 164वां सूक्त 46वीं ऋचा।
5. नारद भक्ति सूत्र 1-3
6. शांडिल्य भक्ति सूत्र 1-1
7. मनुस्मृति श्लोक 3/56
8. ऋग्वेद (1/23/248)
9. अथर्ववेद (12/1/30)
10. ऋग्वेद (10/75/5)
11. कणाद वैशेषिक सूत्र (1/1/2)
12. डॉ. आर पी शर्मा भारतीय दर्शन, भारतीय भवन प्रकाशन पेज 158

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

হোমেন বৰগোহাঞিৰ উপন্যাস ‘হালধীয়া চৰায়ে বাওধান খায়’ ঃ এক পৰ্যালোচনা

ড° নন্দিতা গোস্বামী

সহকাৰী অধ্যাপিকা, অসমীয়া বিভাগ
ৰহা মহাবিদ্যালয, নগাঁও
৯৯৫৭৯৯৫৪৫৫
nanditanita@gmail.com

অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যক সমৃদ্ধিশালী কৰি থৈ যোৱা মহান ঔপন্যাসিক সকলৰ ভিতৰত হোমেন বৰগোহাঞি অন্যতম। তেখেতে কেইবাখনো উপন্যাস লিখিছিল। ১৯৬৩ চনত প্ৰকাশিত ‘সুবালা’ তেখেতৰ প্ৰথম উপন্যাস। তাৰ পিছত তান্ত্ৰিক (১৯৬৭), কুশীলব (১৯৭০), হালধীয়া চৰায়ে বাওধান খায় (১৯৭৩), পিতাপুত্ৰ (১৯৭৫), তিমিৰ তীৰ্থ (১৯৭৫), অস্তৰাগ (১৯৮৬), সাউদৰ পুতেকে নাও মেলি যায় (১৯৮৭), মৎস্যগন্ধা (১৯৮৭), নিঃসঙ্গতা (২০০০), বিষন্নতা (২০০০) আৰু এদিনৰ ডায়েৰি (২০০৩) আদি উপন্যাস ৰচনা কৰিছিল।

আমাৰ আলোচ্য উপন্যাস ‘হালধীয়া চৰায়ে বাওধান খায়’। উপন্যাসখন গ্ৰাম্য জীৱনৰ আধাৰত ৰচিত এখন সুন্দৰ সামাজিক উপন্যাস। উপন্যাসখনত এজন কৃষকৰ জীৱনলৈ অহা সংঘাতক মূল বিষয় হিচাপে লৈ কাহিনীভাগ আগবাঢ়িছে। উপন্যাসখন দৰিদ্ৰতাই শোচনীয় অৱস্থা কৰা এজন কৃষকৰ জীৱন সংগ্ৰামৰ বাস্তৱ কাহিনী। এঘাৰটা ভাগত কাহিনীভাগ উপস্থাপন কৰিছে।

প্ৰথম অধ্যায়টো আৰম্ভ কৰিছে খৰাং বতৰৰ পৰিৱেশৰ বৰ্ণনাৰে। উপন্যাসখনৰ প্ৰধান চৰিত্ৰ ৰসেশ্বৰ নামৰ খেতিয়কজনক এই অধ্যায়তে উপস্থাপন কৰিছে। মেঘৰ ঢেৰেকনিয়ে ৰসেশ্বৰৰ মনত আশাৰ সঞ্চাৰ কৰিছে। অতীত আৰু বৰ্তমানৰ বিভিন্ন কথাই তাৰ মনত দোলা দিয়ে। এই অধ্যায়ত ৰসেশ্বৰৰ জীৱিকাৰ প্ৰধান উপায় কৃষি কাৰ্যৰ কথা উল্লেখ কৰিছে। বৰষুণৰ অভাৱত মাটি ছন পৰি থকাত কি যন্ত্ৰণা পাইছল সেই কথা মনলৈ আহিছে। সেয়ে ঢেৰেকনিৰে সৈতে বৰষুণজাক দিওঁতে সি সুখৰ মুখ দেখিছে। বৰষুণজাক চাই আনন্দ লভিছে। আনন্দতে ভগৱানক স্মৰণ কৰিছে— “উস্ ভগৱান দয়াময় কৰুণাসিন্ধু, এইবাৰলৈ অন্ততঃ নিচলাক ৰক্ষা কৰিলা। (হালধীয়া চৰায়ে বাওধান খায়, পৃ.৯)

দ্বিতীয় অধ্যায়ত ৰসেশ্বৰৰ খেতি কৰাৰ আনন্দ নিমিষতে নোহোৱা হয়। সি হালবাই থাকোতে সনাতন শৰ্মা নামৰ ব্যক্তিজন আহি তাৰ মাটিখিনি তেওঁৰ তাত বন্ধকত আছে বুলি খেতি কৰিবলৈ বাধা দিয়ে। ৰসেশ্বৰে সেই মাটিখিনি বন্ধক খুলিলে বুলি সাব্যস্ত কৰে। “পিতা ঢুকাবৰ ঠিক আগৰ বছৰ - আপোনাক সকলো টকা-শিকা আদায় কৰি দি মাটি ডোখৰ মুকলি কৰা হৈছিল। এই কথা মই নিজেই ভালকৈ জানো। আপুনি কথাটো ভালকৈ

মনত পেলাই চাওক দেউতা।” (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.১৫-১৬) ৰসেশ্বৰৰ কোনো কথাই তেওঁক সৈমান কৰিব নোৱাৰিলে।

তৃতীয় অধ্যায়ত ৰসেশ্বৰে দুখ মনেৰে ঘৰলৈ আহি ঘৰৰ কাষৰ কঠিয়াডৰা গৰুৱে খাই থকাৰ অজুহাত লৈ ঘৈণীয়েকক গাৰ সমস্ত শক্তি প্ৰয়োগ কৰি কোবাই। তাই চুবুৰীয়া ডম্বৰুৰ ঘৰলৈ গৈহে ৰক্ষা পায়। ঘৈণীয়েকক মাৰি ৰসেশ্বৰ অনুতপ্ত হয় যদিও প্ৰকাশ নকৰে। মাটিখিনি কেনেকৈ দখল কৰিব পাৰিব তাৰ পৰামৰ্শ ল'বলৈ মণ্ডলৰ ওচৰলৈ যায়। মণ্ডলক দিবলৈ ঘৈণীয়েকে বৈ থোৱা এৰী চাদৰখনো লৈ যায়। এৰী চাদৰখন ৰাখিও মণ্ডলৰ লোভ নকমিল আৰু কিবা বস্তু পোৱাৰ আশাত পিছদিনা পৰামৰ্শ দিবলৈ আকৌ মাতে।

চতুৰ্থ অধ্যায়ত মণ্ডলৰ ওচৰৰ পৰা ঘৰলৈ আহি ৰসেশ্বৰে গোটেই পৰিয়ালটো শুই থকা দেখে। সিহঁতৰ আগত তাৰ মাটিৰ লটিঘটিৰ কথা কৈ থাকে যদিও কোনেও তাৰ কথাত সহাৰি নিদিয়ে। পঞ্চম অধ্যায়ত আধিবৰ্ডত কেচ দিবৰ বাবে পৰামৰ্শ ল'বলৈ ৰসেশ্বৰ পুনৰ মণ্ডলৰ ঘৰলৈ যায়। সি লগত লৈ যায় এচুঙা গাখীৰ। মণ্ডলে কাক কেনেকৈ কিমান টকা দিব লাগিব তাক বুজাই কয়। মণ্ডলৰ কথা শুনি টকাৰ যোগাৰ কৰাৰ উদ্দেশ্যে তাৰ খীৰতী গাইজনী এশ টকাৰ বিনিময়ত মণ্ডলক দিবলৈ সাজু হয়। ষষ্ঠ অধ্যায়ত ঘৰৰ সকলোৱে মনত দুখ পালেও ৰসেশ্বৰে খীৰতী গাইজনী মণ্ডলৰ ঘৰত দি এশ টকা ল'বলৈ বাধ্য হয়।সপ্তম অধ্যায়ত গাইজনী মণ্ডলক দি পোৱা টকাকেইটা বাপুৰাম শইকীয়া আৰু চাব ডেপুটি হাকিমক দিবৰ বাবে মণ্ডলক দিয়ে। ইমানতো মণ্ডল সন্তুষ্ট নহৈ হাকিমক কুকুৰাৰ পৰিবৰ্তে হাঁহ এজনী আনি দিবলৈ ৰসেশ্বৰক বাধ্য কৰে।অষ্টম অধ্যায়ত ৰসেশ্বৰে টকা যোগাৰ কৰি মোকৰ্দমা কৰিবলৈ সাজু হয় মানে শাওন মাহ শেষ হ'বৰ সময় হ'ল। মানুহবোৰে হাল বাবলৈ যোৱা দেখি আৰু সিহঁতে ৰসেশ্বৰে কৰা প্ৰশ্নত সি তীব্ৰ যন্ত্ৰণা অনুভৱ কৰে। অৱশেষত ৰসেশ্বৰে জনাৰ্দন বাপুৰ ওচৰত ভাল দিন চোৱাই কাছাৰীত গোচৰ দিবলৈ যায়।নৱম অধ্যায়ত ৰসেশ্বৰে তৰণী আৰু পিয়নৰ পাক চক্ৰত পৰি সৰ্বশ্ৰান্ত হোৱাৰ কথা বৰ্ণনা কৰিছে। দশম অধ্যায়ত মোকৰ্দমাৰ তাৰিখ সোনকালে পেলাই গোচৰটো নিজৰ পক্ষত লোৱাৰ আশাত ৰসেশ্বৰে পচিশ টকা গোটাবলৈ অপ্ৰাণ চেষ্টা কৰে। টকা গোটাব নোৱাৰিলে ঘৰৰ গোটেইবোৰক মাৰি সি নিজেও আত্মঘাটী হ'ব বুলি ঘৈণীয়েকৰ আগত প্ৰকাশ কৰে।

এঘাৰ নং অধ্যায়ত ৰসেশ্বৰক সহায় কৰিবলৈ ঘৈণীয়েক নানান চিন্তাত মগ্ন হয়। পুতেকক আনৰ ঘৰত কাম কৰা ল'ৰা ৰখাৰ কথা, ঘৰ ভেটি বন্ধকত থোৱাৰ কথাও ভাবে। শেষত তাইৰ মাক-দেউতাকে দিয়া থুৰীয়াজোৰ বিক্ৰি কৰাৰ সিদ্ধান্ত লয়। বাৰ নং অধ্যায়ত ৰসেশ্বৰৰ আশা ভংগৰ কথা উপস্থাপন কৰিছে। অশেষ কষ্ট কৰি টকা যোগাৰ কৰিও কেচৰ তাৰিখ আগুৱাব নোৱাৰি অধৈৰ্য্য হৈ পৰে। কেৰাণিৰ লগত তৰ্কত লিপ্ত হয়। শেষত পিয়নে ৰসেশ্বৰক চৰ ভুকু দি অফিচৰ পৰা বাহিৰলৈ উলিয়াই দিয়ে। অফিচৰ পৰা ঘৰলৈ উভতি আহোতে সি বুজি পালে তাৰ মোকৰ্দমাটো ভাল নহ'ব।

তেৰ নং অধ্যায়ত সি মোকৰ্দমাৰ চিন্তাত টকা যোগাৰৰ আন বাট নেদেখি পুতেকক আনৰ ঘৰত কাম কৰা ল'ৰা হিচাপে ৰাখি টকা ব্যৱস্থা কৰাৰ কথা ভাবে। ঘৈণীয়েকে তাৰ কথাত তীব্ৰ আপত্তি কৰে।

চৈধ্য নং অধ্যায়ত ৰসেশ্বৰে সোণতিয়ে পড়ি থকা দেখি বৰ বেজাৰ পায়। মাকেও অসহায় ভাবে তাক ক'বলৈ বাধ্য হয় দেউতাকে তাক সৰ্বেশ্বৰ গাওঁবুঢ়াৰ ঘৰত থৈ আহিব। সি মনৰ দুখত চোতালত কিতাপ পত্ৰবোৰ জুই লগাই দিয়ে।পোন্ধৰ নং অধ্যায়ত ৰসেশ্বৰে সৰ্বেশ্বৰ গাওঁবুঢ়াৰ ঘৰত সোণটিক থৈ যাঠি টকা আগধন হিচাপে আনিলে। টকাকেইটা আনি ৰসেশ্বৰে ভাৱে ভেটিয়ে কেৰাণিৰ ঘৰলৈ যায়। কেৰাণিৰ ঘৰৰপৰা আহি সি বেছি হতাশ হৈ পৰে সকলোতে টকাৰ দৰকাৰ।যোল্ল নং অধ্যায়ত ৰসেশ্বৰ ঘৰলৈ আহিও শান্তি নাপায়। ল'ৰা ছোৱালী কেইটাই খোৱাৰ বাবে কৰা কাজিয়াত, মাখনীৰ অসুখ আদিত সি অতিষ্ঠ হৈ পৰে।সোতৰ নং অধ্যায়ত ঘৰখনৰ অপায় অমঙ্গলৰ বাবে ৰসেশ্বৰৰ ঘৈণীয়েকে গণেশ্বৰ বাপুটিৰ ঘৰত পঞ্জিকা চোৱালে। বিধান মনা নমনাক লৈ ৰসেশ্বৰৰ মনতো দোদুল্যমান হয়। “পুৰণি বিশ্বাস আৰু সংস্কাৰো সি সম্পূৰ্ণৰূপে এৰিব পৰা নাই।” (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৯৬)ওঠৰ নং অধ্যায়ত বিধান মানোতে তাৰ সকলো টকা শেষ হয়। মাখনীৰ অসুখৰ বাবে হালৰ গৰু এটা বেছি চিকিৎসা কৰিব লগা হয় কিন্তু মাখনীক বচাব নোৱাৰিলে। ঊনৈশ নং অধ্যায়ত মোকৰ্দমাৰ তাৰিখ পৰাত সি খৰচ পাতি কৰি চহৰৰ পৰা উকীল আনিলে যদিও মোকৰ্দমা শেষ নহ'ল আকৌ নতুন তাৰিখ দিলে অৱশেষত সি ভাত মুঠিৰ কথা ভাবি ঘৈণীয়েকক কালিনাথ মৌজাদাৰৰ ঘৰত ধানদোৱা আৰু সি ডাঙৰি চপোৱা কাম কৰিবলৈ বাধ্য হয়।বিশ নং অধ্যায়ত ৰসেশ্বৰ আৰ্থিকভাবে বেছি শোচনীয় হয়। ধানদোৱা কাম শেষ হোৱাৰ পিছত কেতিয়াবা কাম পায় কেতিয়াবা নাপায়। তেতিয়া “ভোকৰ জুইত তিলে তিলে দগ্ধ হৈ মাক-বাপেক আৰু ল'ৰা-ছোৱালী আটায়ে নীৰৱ আৰু নিৰ্মম যন্ত্ৰণাৰ মাজত টোপনি কাৰণে ব্যাকুলভাবে অপেক্ষা কৰি থাকে। (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ,১০৪)

ইলেকচনৰ মিটিং এখনত সি গম পাই সনাতন শৰ্মাৰ মুখত দৰিদ্ৰ ভূমিহীন কৃষকক মাটি দিয়াৰ কথা। প্ৰাণেশ্বৰ চুটীয়া নামৰ ব্যক্তিজনক ভোট দিয়াৰ কথা ক'বলৈ ৰসেশ্বৰৰ ওচৰলৈ মানুহ আহে।

একৈশ নং অধ্যায়টো ৰসেশ্বৰৰ দৰিদ্ৰতাৰ ছবি প্ৰকাশ কৰিছে। গোটেই দিনটো ঘূৰি একো কাম নোপোৱাত ৰসেশ্বৰে বন আলু কেইটামানকে খান্দি আনে। ঘৰত আহি দেখে সনাতন শৰ্মা তাৰ ঘৰত বহি আছে। সনাতন শৰ্মাই তাৰ হাতত পঁচিশ টকা দিয়ে আৰু প্ৰকাৰন্তৰে তেওঁক ভোটটো দিয়াৰ কথা কয়। ইলেকচনৰ বাবে সেইকেইদিন তেওঁৰ ঘৰত কাম কৰিবলৈ মাতে। ৰসেশ্বৰে সনাতনৰ কথাত ভোল গৈ পোষ্টাৰ মাৰি ফুৰিছিল সি বুজি পোৱা নাছিল তাৰ আগন্তুক বিপদৰ কথা। উপন্যাসিকে ৰসেশ্বৰৰ অজ্ঞতাৰ কথা এনেদৰে লিখি উপন্যাসখন শেষ কৰিছে — "আচলতে সি নিজৰ ফাঁচী কাঠ নিজেই বহন কৰি লৈ গৈছিল কিন্তু একমূহুৰ্তৰ কাৰণেও সি সেই কথা জনা নাছিল। মনৰ আনন্দত তাৰ মুখেদি গুণ গুণকৈ এটা গান ওলাই আহিছিল।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.১১৯ পৃ.)

উপন্যাসখনত প্ৰতিফলিত বিষয়বস্তুৰ পৰ্যালোচনা ঃ

এই উপন্যাসখনত দৰিদ্ৰতাই গ্ৰাস কৰা এজন কৃষকৰ জীৱন সংগ্ৰাম উপস্থাপন কৰিছে। ৰসেশ্বৰ নামৰ কৃষকজন উপন্যাসখনৰ প্ৰধান চৰিত্ৰ। এই চৰিত্ৰটোৱে উপন্যাসখনৰ আৰম্ভণিৰ পৰা শেষলৈকে প্ৰধান ভূমিকা লৈছে। ৰসেশ্বৰৰ জৰিয়তে অসমৰ গ্ৰাম্য সমাজৰ দৰিদ্ৰ কৃষকৰ সমস্যাপীড়িত জীৱন সংগ্ৰামৰ ছবি ৰূপায়িত কৰিছে। দৰিদ্ৰতাই গ্ৰাস কৰা ৰসেশ্বৰৰ জীৱনৰ ৰং আনন্দ নোহোৱা হৈছে। সাতটা ল'ৰা-ছোৱালী আৰু পত্নীৰ সৈতে পৰিয়ালটোৰ ভৰণ পোষণ দিছিল তেওঁৰ পৈত্ৰিক মাটিডৰাত খেতি বাতি কৰি। কিন্তু সেই মাটিখিনি সনাতন শৰ্মাই চক্ৰান্ত কৰি কাঢ়ি নিয়াৰ পিছৰ পৰাই তাৰ জীৱনটো অভাৱে জুৰুলা কৰি দিশহাৰা কৰি দিয়ে। মাটি মুকলি কৰাৰ আশাত সি ঘৰৰ সম্পদ বিক্ৰি কৰিবলগা, নিজ সন্তানক আনৰ ঘৰত কাম কৰা ল'ৰা হিচাপে ৰখা, নিজৰ আত্ম সন্মান বিসৰ্জন দিব লগা হোৱা পৰিস্থিতিৰো সৃষ্টি হৈছে। ৰসেশ্বৰৰ এই সংঘাতময় জীৱন উপন্যাসখনৰ মূল বিষয়বস্তু। ৰসেশ্বৰৰ কষ্টকৰ জীৱন যাপনৰ ছবি চিত্ৰিত কৰিবলৈ যাওঁতে উপন্যাসখনত মানুহৰ মূল্যবোধৰ অৱক্ষয়, চৰকাৰী বিষয়াৰ কপটতা, ভণ্ড সমাজকৰ্মীৰ চিত্ৰ, সমাজৰ বিশ্বাস, লোকাচাৰ আদিৰ সুন্দৰ প্ৰতিফলন ঘটিছে। এই সম্পৰ্কে তলত আলোচনা কৰা হ'ল —

দৰিদ্ৰ কৃষকৰ দুৰ্দশাগ্ৰস্ত ছবি ঃ

উপন্যাসখনত ৰসেশ্বৰ নামৰ কৃষকজনৰ জৰিয়তে কৃষকৰ জীৱনৰ বাস্তৱ ছবি উপস্থাপিত কৰিছে। কৃষকৰ জীৱনৰ সুখ সমৃদ্ধি নিৰ্ভৰ কৰে খেতিৰ ওপৰত। খেতি ভাল হ'বলৈ বতৰৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰে। সেয়ে কৃষকৰ আনন্দ বতৰৰ লগত। বতৰ খেতিৰ উপযোগী নহ'লে কৃষিভূমি ছনে পৰি থাকিলে কৃষকৰ জীৱন যাপনৰ সমস্যা হৈ পৰে। উপন্যাসখনত কৃষকৰ এই আনন্দ ৰসেশ্বৰৰ জৰিয়তে বৰ্ণনা কৰিছে। ৰসেশ্বৰে বৰষুণ অহাৰ আনন্দত আত্মহাৰা হৈ পৰিছে। জীৱিকাৰ সম্বলৰ আশা প্ৰতিভাত হৈছে। ৰসেশ্বৰৰ মনত আনন্দ হৈছে — "আকাশত মেঘে গৰজি উঠিল। ৰসেশ্বৰৰ হিয়াখনে যেন আনন্দতে দামুৰি পোৱালি এটাৰ দৰে জঁাপ মাৰি উঠিল। উস্ ভগৱান, দয়াময় কৰুণা -সিন্ধু, এইবাৰলৈ অন্ততঃ নিচলাক ৰক্ষা কৰিলা। আৰু এটা মেঘৰ গাজনি শুনিবলৈ সি কাণখন থিয় কৰি ৰ'ল। তাৰ মনত অনুভৱ হ'বলৈ ধৰিলে যে মেঘৰ গাজনীৰ দৰে মধুৰ শব্দ যেন পৃথিৱীত আৰু একোৱেই নাই। তাৰ পিছত আকাশখন হঠাৎ ভাগি পৰাৰ দৰে বৰষুণ নামি আহিবলৈ ধৰিলে অজস্ৰ ধাৰাৰে — তৃষ্ণাৰ্ত মাটি আৰু ৰসেশ্বৰৰ সমস্ত চেতনাক আনন্দ ধাৰাৰে প্লাবিত কৰি।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৯) "দুমাহৰ অগ্নি-বৃষ্টিৰ মূৰত আজি যে আকাশে সঁচাকৈ পানী বৰষিছে সেই কথা যেন সি বিশ্বাসেই কৰিব পৰা নাই। ইমান দিনে কঁপি কঁপি মৃত্যুৰ দিন গণি থকা মানুহটোৱে আজি যেন নতুনকৈ জীয়াই থকাৰ অধিকাৰ ঘূৰাই পাইছে। মনৰ আনন্দত ৰসেশ্বৰে বুকু ভৰি দীঘলকৈ এটা উশাহ ল'লে।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.১১)

জীৱিকাৰ সম্বল মাটিডৰা হাতৰপৰা হেৰাই যোৱাত ৰসেশ্বৰে দৰিদ্ৰতাৰ গ্ৰাসৰ পৰা মুক্তিৰ আশা নেদেখি খঙত হিতাহিত জ্ঞান হেৰুৱাই ঘৈণীয়েকক অমানুষিক ভাবে প্ৰহাৰ কৰিছে। "ৰসেশ্বৰে তাইক দেখিয়েই বিজুলী বেগেৰে খেদা মাৰি গৈ গৰু কোবোৱাৰ দৰে মানুহজনীক কোবাবলৈ ধৰিলে।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.১১)

মাটিখিনি সনাতন শৰ্মাৰ পৰা উদ্ধাৰ কৰাৰ আশাত ঘৈণীয়েকে বৈ থোৱা বিপদত কামত আহিব বুলি সাঁচি ৰখা এৰীচাদৰখন মণ্ডলৰ ঘৰত ভেটি দিবলৈ বাধ্য হৈছে। দৰিদ্ৰতাৰ যাতনাত ৰসেশ্বৰৰ মনলৈ আহিছে "বিছনাত শুই থাকোতেই এদিন তহঁত গোটেই মখাকে এটা এটাকৈ কাটি পিছত মই নিজেও নিজৰ ডিঙিত দাৰে ঘপিয়াই সকলো জ্বালা যন্ত্ৰণাৰ শেষ কৰিম।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.২৯)

দৰিদ্ৰতাৰ বাবে সি ভাবিবলৈ বাধ্য হৈছে সকলোৰে মৃত্যুৰ কথা। তাৰ দৰে মানুহৰ সংসাৰত স্থান নাই বুলি ভাবিছে— "নটা প্ৰাণীৰ তেজ খাই সনাতন ঠিকাদাৰহঁতেই সংসাৰৰ সুখ ভোগ কৰক, আমাৰ নিচিনা মানুহৰ কাৰণে এই সংসাৰত কোনো ঠাই নাই।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.২৯)

আৰ্থিক দুৰৱস্থাৰ বাবে ৰসেশ্বৰে মাটিৰ কেচ কৰিবৰ বাবে ঘৰৰ লক্ষ্মী বুলি ভবা গাইজনী মণ্ডলৰ হাতত গতাই

দিবলৈ বাধ্য হৈছে। দৰিদ্ৰতাৰ পৰা পৰিত্ৰাণ পাবলৈ এই পদক্ষেপ লৈ ৰসেশ্বৰে ভগৱানকে দোষাৰোপ কৰিছে। "উস্ উস্ এই কণা বিধাটোও কম তেজ খোৱা পিশাচ নহয় দেই।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৩১)

ৰসেশ্বৰে সনাতন শৰ্মাৰ পৰা মাটিডৰা আইনৰ সহায়ত মোকলাবলৈ সা-সম্পত্তি বিক্ৰি কৰি, ভেটি দিবলৈ গৈ দিশহাৰা হৈ ভাগৰি পৰিছে। ভাগৰুৱা মনটোলৈ তাৰ অভাৱগ্ৰস্ততাৰ পৰা মুক্তি পোৱাৰ আশাত মনলৈ অনৈতিক চিন্তা আহিছে। অফিচাৰৰ মনোবাঞ্ছা পূৰণ কৰি তাৰ মাটিডৰা মুকলি কৰাৰ আশা কৰিছে। — "তাৰ টকা নাই, টকা নহ'লে মদো যোগাৰ কৰিব নোৱাৰি, থকাৰ ভিতৰত তাৰ আছে মাত্ৰ এজনী তিৰোতা। এটা উন্মাদ মুহূৰ্তত হঠাৎ তাৰ মনত এই চিন্তাই টৌ খেলি গ'ল ঃ আন কোনো উপায়েই যেতিয়া নাই, হাকিমৰ হাতত এৰাতিৰ কাৰণে নিজৰ তিৰোতাজনীক গতাই দিবগৈ নেকি? মাটি ডৰাকেই যদি সি হেৰুৱাবলগীয়া হয় তেন্তে তিৰোতাজনী ৰাখি সি কৰিব কি? তাইক সি খুৱাব কেনেকৈ দিকচিহ্নহীন অন্ধকাৰৰ মাজত হঠাৎ এটা পোহৰৰ ক্ষীণ বিন্দু দেখাৰ দৰে ৰসেশ্বৰে মুহুত্বৰ কাৰণে সামান্য স্বস্তি অনুভৱ কৰিলে।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৬২)

কিন্তু পিছমুহূৰ্তত সি অনুতপ্ত হৈছে — "সি আজি সঁচাকৈয়ে এনে এটা অৱস্থা উপনীত হ'লহিনে যে অগ্নিসাক্ষী কৰি বিয়া কৰোৱা তিৰোতাজনীক সম্পত্তি ৰাখিবৰ কাৰণে বেশ্যা বৃত্তিত লগোৱাৰ কথা সি চিন্তা কৰিব লগা হ'ল?" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৬৩)

কৃষকৰ উপাৰ্জনৰ পথ খেতিৰ মাটি ডৰা নোহোৱা হৈ গ'লে খাদ্যৰ অভাৱত কি দুৰ্দশা হয় তাক বাস্তৱ ৰূপ দিছে এনেদৰে — ৰসেশ্বৰে দিনটো কাম বিচাৰিও যেতিয়া কাম কৰিবলৈ নাপায় তেতিয়া ঘৰখনত সকলো অনাহাৰে থাকিব লগা হয়। দুখীয়া কৃষকৰ ঘৰৰ এই কৰুণ পৰিৱেশৰ বৰ্ণনা এনেদৰে দিছে— "যি দিনা ওৰে দিনটো টলৌ টলৌকৈ ঘূৰিও কতো কাম নাপাই গধূলি পৰত সি শুদা হাতেৰে ঘৰলৈ ঘূৰি আহে, সেইদিনা ৰসেশ্বৰৰ ঘৰখনত মৰিশালিৰ অন্ধকাৰ আৰু নীৰৱতা বিৰাজ কৰে। কেৰাচিন তেলৰ অভাৱত চাকি নজ্বলে, চাউলৰ অভাৱত চৰুৰ তললৈ জুই নাযায়, ফুট গধূলিতে আটাইকেইটা প্ৰাণীয়ে বিছনাৰ আশ্ৰয় লয়। জীৱনৰ এই ভয়ংকৰ ৰূপ দেখি সৰু ল'ৰাছোৱালীকেইটাও ভয়ত এনেকৈ বোবা হৈ গৈছে যে সিহঁতেও কোনো দিন ভোক লাগিছে বুলি আপত্তি নকৰে। ভোকৰ জুইত তিলে তিলে দগ্ধ হৈ মাক-বাপেক আৰু ল'ৰা-ছোৱালী আটায়ে নীৰৱ আৰু নিৰ্মম যন্ত্ৰণাৰ মাজত টোপনিৰ বাবে ব্যাকুলভাবে অপেক্ষা কৰি থাকে।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.১০৪)

অভাবে জুৰুলা কৰা কৃষক ৰসেশ্বৰৰ মনলৈ একোবাৰ ভাব আহে সকলো সমস্যাৰ যেন ওৰ পৰিব কেৱল পৰিয়ালৰ সকলো সদস্যৰ মৃত্যুৰ জৰিয়তে — "দাখনেৰে ঘৈণীয়েক আৰু ল'ৰা-ছোৱালী আটাইকেইটাকে কাটি শেষ কৰি অৱশেষত নিজৰ ডিঙিত ঘাপ এটা মাৰিলেই তাৰ সকলো চিন্তা ভাবনা আৰু সমস্যাৰ ওৰ পৰিব।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৬৩)

মাটি পুনৰ ঘূৰাই পোৱাৰ আশাত ৰসেশ্বৰে মৰমৰ পুতেকক লোকৰ ঘৰত কাম কৰা ল'ৰা হিচাপে ৰখাৰ কথা ভাবিবলৈ বাধ্য হৈছে। ঘৈণীয়েক আৰু ৰসেশ্বৰেও আনৰ ঘৰত হাজিৰা কৰিবলৈ বাধ্য হয়। ৰসেশ্বৰৰ অভাৱগ্ৰস্ত পৰিৱেশৰ ছবি উপন্যাসিকে এনেদৰে দিছে— "এহাল মানুহৰ ভাত সিহঁত পাঁচটা ল'ৰা-ছোৱালীয়ে ভাগ কৰি খাব লগা হৈছে। আঞ্জাৰ নামত আছে কেৱল পানী আৰু নিমখ দি সিজোৱা এমুঠি ঢেঁকীয়া। তাৰে ভগা-ভগি লৈ সিহঁতৰ মাজত মাৰপিট আৰম্ভ হৈ গৈছে।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৯৩) এনেদৰে ৰসেশ্বৰ চৰিত্ৰটোৰ জৰিয়তে দৰিদ্ৰতাই বিপৰ্যস্ত কৰা কৃষকৰ সংঘাতময় জীৱনযাত্ৰাৰ বাস্তৱ ছবি চিত্ৰিত কৰিছে।

উপন্যাসখনত এই দৰিদ্ৰতাৰ কাৰক হিচাপে পৰোক্ষভাবে চিত্ৰিত কৰিব বিচাৰিছে অজ্ঞতা। এই অজ্ঞতাৰ বাবে গ্ৰাম্য সমাজত কৃষকসকল শোষণকাৰী বলি হৈ যন্ত্ৰণাদায়ক জীৱন যাপন কৰিব লগা হয়।

মানবীয় মূল্যবোধৰ অৱক্ষয়ৰ চিত্ৰ ঃ

সমাজত এনে কিছুমান ব্যক্তি আছে যাৰ মানবীয় মূল্যবোধৰ অৱক্ষয় ঘটিছে। তেনেলোকে আনৰ দুখ দুৰ্দশাৰ কথা অনুভৱ নকৰে। নিজৰ স্বাৰ্থসিদ্ধিৰ প্ৰচেষ্টাত থাকে। স্বাৰ্থসিদ্ধিৰ বাবে নৈতিকতা বিসৰ্জন দিবলৈও কুণ্ঠাবোধ নকৰে। উপন্যাসখনত সমাজৰ এনে ব্যক্তিৰ স্বৰূপ চিত্ৰিত কৰিছে সনাতন শৰ্মা, ডিম্বেশ্বৰ মণ্ডল, কানুৰাম পিয়ন, হাকিম আদি চৰিত্ৰৰ জৰিয়তে।

সনাতন শৰ্মা তেনে এজন ব্যক্তি যাৰ কূট কৌশলৰ বাবে ৰসেশ্বৰৰ জীৱন বিপৰ্যস্ত হৈ পৰিছে। তেওঁ ৰসেশ্বৰক প্ৰতাৰণা কৰি জীৱন ধাৰণৰ একমাত্ৰ সম্বল মাটিখিনি কাঢ়ি লৈছে। যিখিনি মাটিৰে ৰসেশ্বৰে পৰিয়ালটো পোহপাল দিছিল। সনাতন শৰ্মাৰ দৰে ব্যক্তি আমাৰ সমাজত বেছি সংখ্যকেই আছে। এনে ব্যক্তিয়ে স্বাৰ্থ সিদ্ধিৰ বাবে বহু ঘৃণনীয় কাম কৰিব পাৰে। যিজন সনাতন শৰ্মাই ৰসেশ্বৰৰ পৈত্ৰিক মাটিখিনি কাঢ়ি লৈ পৰিয়ালটোক পেটৰ ভাতমুঠিৰ পৰা বঞ্চিত কৰিছে সেইজনেই আকৌ নিৰ্বাচনৰ সময়ত সমাজ সংস্কাৰকৰ ভূমিকা লৈছে। ৰসেশ্বৰক কেইটামান টকাৰ লোভ দি নিৰ্বাচনৰ কামত লগাইছে। ৰসেশ্বৰক মিছা প্ৰলোভন দিবলৈ সংকোচ

কৰা নাই। — “দেশৰ চৰকাৰেই যেতিয়া তহঁতক মাটি দিম বুলি কৈছে তেনেস্থলত মই নিদিবলৈ কোন?” এনেদৰে ৰসেশ্বৰক ভোটৰ আশাত প্ৰলোভন দিছে কিন্তু মনতে ভাবিছে- “গাধা বুৰ্বক ক'ৰবাৰ। আঠুৰা তলৰ মহ হৈ তই মোৰ বিৰুদ্ধে মোকৰ্দমা কৰ? ইলেকচনটো আগতে পাৰ হৈ যাবলৈ দে, ভালকৈ তোক মাটি খুৱাম।” (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.১১৭)

“নিজৰ মাটি-সম্পত্তি আনক বিলাই সৰ্বস্ব ত্যাগ কৰি ভঙুৰা শিৰ হ'বলৈ সনাতন মহাজনে বুঢ়া বয়সত সমাজবাদী হোৱা নাই। ইলেক্‌চনটো আগতে পাৰ হৈ যাবলৈ দে। কুকুৰ-ধূলি হেন মানুহ এটা হৈ সনাতন মহাজনৰ বিৰুদ্ধে মোকৰ্দমা কৰিবলৈ সাহস কৰাৰ প্ৰতিফল হাতে হাতে পাবি।” (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.১১৮)

ৰসেশ্বৰে নিজৰ মাটিখিনি পুনৰ ঘূৰাই লোৱাৰ বাবে যিখিনি মানুহৰ ওচৰত পৰামৰ্শ বিচাৰিলে সেই মানুহখিনিয়ে তাক সহায় কৰাৰ পৰিবৰ্তে শোষণ কৰাতহে গুৰুত্ব দিলে। উপন্যাসিকে ডিম্বেশ্বৰ মণ্ডল, কানুৰাম পিয়ন, কেৰাণী আদিৰ চৰিত্ৰ সমূহৰ মানবীয় মূল্যবোধৰ অৱক্ষয় ঘটা একো একোজন ব্যক্তিৰূপে চিত্ৰিত কৰিছে। তেওঁলোক প্ৰত্যেকজনেই ৰসেশ্বৰক ঠগি নিজৰ স্বাৰ্থসিদ্ধিতহে গুৰুত্ব দিছে। মণ্ডলে ওচৰত পৰামৰ্শ ল'বলৈ যাওঁতে এৰীচাদৰ এখন দিবলৈ অনা দেখিহে ৰসেশ্বৰৰ কথাত গুৰুত্ব দিয়ে। মণ্ডলে বস্তুৰ আশাত ৰসেশ্বৰক আকৌ পিছদিনা পৰামৰ্শ দিবলৈ মাতে। তেওঁ জানে যে ৰসেশ্বৰ তেওঁৰ ঘৰলৈ আকৌ এবাৰ আহিব লগা হ'লে শুদা হাতে কেতিয়াও নাহে। আন একো নহ'লেও গাখীৰ এচুঙা বা বাৰীৰৰ পাচলি এটাকে হাতত লৈ আহিব। বস্তু আহিবৰ বাটটোনো তেওঁ এতিয়াই কিয় বন্ধ কৰি দিয়ে?” (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.২৬)

মণ্ডলে মাটি মোকলোৱা কেচত জিকিবৰ বাবে কাক কি দিব লাগিব দীঘলীয়া তালিকা দি ৰসেশ্বৰক তেওঁৰ ঘৰত তাৰ খীৰতী গাইজনী দিয়াৰ পৰিস্থিতিৰ সৃষ্টি কৰে। মণ্ডলে ৰসেশ্বৰক গৰুজনীৰ বিনিময়ত দিয়া টকা কেইটা কাক কেনেকৈ দিব লাগিব বুলি কৈ তেওঁৰ হাতত পুনৰ ঘূৰাই লোৱাৰ ব্যৱস্থা কৰে। তথাপিও যেন মণ্ডলৰ টকা দিয়াৰ হিচাপ নিকাচ শেষ নহয়। ৰসেশ্বৰক হিচাপ নিকাচ দেখুৱাই কাক কেনেকৈ দিব শেষত ৰসেশ্বৰক বাধ্য কৰে ঘৰৰ হাঁহ এজনী হাকিমৰ বাবে আনি দিবলৈ। ৰসেশ্বৰে বহুত অনুনয় বিনয় কৰোতেও মণ্ডল সন্মত নহয়— “মণ্ডলে কোনোমতে নেৰে। বহুতো খট-বান্ধ কৰাৰ মূৰত ঠিক হ'ল যে কুকুৰাটোৰ দামৰ পৰিবৰ্তে ৰসেশ্বৰে ঘৰেৰে হাঁহ এজনী আনি মণ্ডলক দি যাবহি।” (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৪১)

অফিচৰ তৰণী, কেৰাণীৰ চৰিত্ৰৰ জৰিয়তেও সমাজৰ এচাম স্বাৰ্থপৰ, মানবীয় মূল্যবোধৰ অৱক্ষয় হোৱা মানুহক উপস্থাপন কৰিছে। এইচাম মানুহৰ বাবে টকাই সকলো। ক্ষমতাত থকা এইসকল লোকে হোজা মানুহক লুণ্ঠন কৰিবলৈ সংকোচ নকৰে। তাৰ বাস্তৱ ছবি কানুৰাম পিয়ন, কেৰাণী আদি। কানুৰাম পিয়নে ৰসেশ্বৰক এনেদৰে কয়— “ঘৰত যি খোৱা খাই থাকা, কিন্তু অফিচ কাছাৰিলৈ আহিলে জেপত চিগাৰেট এপেকেট থাকিবই লাগে বুজিছা? -- তোমালোকৰ জহতে যদি তামোল এখন চিগাৰেট এটা নাখাও, তেনে আমি খাম কেনেকৈ? (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৫৪)

চৰকাৰী কাম কৰিবলৈ গ'লে দৰিদ্ৰ মানুহ টকা খৰচ কৰি কৰি জুৰুলা হৈ পৰে। অথচ সেই দৰিদ্ৰ ব্যক্তিজনৰ প্ৰতি অফিচৰ কৰ্মচাৰী সকলৰ অলপো মৰম নাথাকে। তেওঁলোকে কেনেকৈ টকা লুণ্ঠন কৰিব পাৰে তাৰ প্ৰচেষ্টাত হে থাকে। হাকিম জনৰ বিষয়ে পিয়নজনে কোৱা কথাৰ জৰিয়তেও মানবীয় মূল্যবোধৰ স্খলন ঘটা ব্যক্তিৰ চৰিত্ৰ চিত্ৰিত কৰিছে — “মানুহটো হেনো বৰ তিৰোতা লুভীয়া। তুমি তেওঁক এহাজাৰ টকা আনি দিলে যিটো কাম নহ'ব, এঘণ্টামানৰ কাৰণে তিৰোতা এজনী যোগাৰ কৰি দিব পাৰিলে তাতকৈ বেছি কাম হ'ব।” (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৫৭)

ৰসেশ্বৰৰ পৰা পিয়নজনে কেৰাণীক দিব লাগে বুলি টকা ল'বলৈ সংকোচ কৰা নাই। মুখেৰে সহানুভূতি সূচক মন্তব্য কৰিও টকাৰ লোভ এৰা নাই। —“মোক বাৰু বেছি দিব নালাগে তুমি দুখীয়া মানুহ, ময়ো দুখীয়া মানুহ, দুখীয়াই দুখীয়াৰ তেজ খাব নাপায়। মোক পাঁচটামান টকা দিলেই হ'ব।” (৫৮পৃ.)

অথচ এই ভেটি খোৱা পিয়নেই কেৰাণিৰ বিপক্ষে যোৱা ৰসেশ্বৰক চৰ ভুকু মাৰি অফিচৰ পৰা উলিয়াই দিবলৈ সংকোচ কৰা নাই — “পিয়নে জোৰকৈ চৰ ভুকু কেইটামান মাৰি তাৰ মুখৰ পৰা ভালকৈ কথা ওলাব নোৱাৰা কৰি দিলে।” (৭৩ পৃ.)

ৰসেশ্বৰে কেৰাণিক সন্তুষ্ট কৰিবলৈ তেওঁৰ ঘৰলৈ যাওঁতে ৰসেশ্বৰক দেখি কেৰাণিৰ খং উঠি গৈছিল। “কিন্তু পিছ মুহুৰ্তত ভেটি ভাৰখিনিত চকু পৰাত নিমিখতে তেওঁৰ মুখৰ ভাব সলনি হ'ল।”

এনেদৰে উপন্যাসখনত মানবীয় মূল্যবোধৰ অৱক্ষয় ঘটা ব্যক্তিৰ চৰিত্ৰ বাস্তৱ সন্মতভাৱে চিত্ৰিত কৰিছে। কাৰো প্ৰতি মৰম দয়া নথকা এচাম ব্যক্তি যাৰ কৰ্মই সাধাৰণ শ্ৰেণীৰ জনগণৰ জীৱন জটিল কৰি তোলে। এই চাম ব্যক্তিৰ স্বৰূপ

উপন্যাসখনত সুন্দৰভাৱে অংকণ কৰাত লিড্ৰ সাৰ্থক হৈছে।

লোকজীৱনৰ বিশ্বাস, ৰীতি-নীতিৰ চিত্ৰণ ঃ

উপন্যাসখনৰ বিষয়বস্তু গ্ৰাম্য জীৱনৰ পটভূমিত ৰচিত সেয়ে ইয়াত লোকজীৱনৰ বিশ্বাস, ৰীতি নীতিৰ আদি সুন্দৰভাৱে প্ৰতিফলিত হৈছে।

কোনো এটা কাম কৰিবলৈ আগবঢ়াৰ আগতে শুভক্ষণ চোৱাটো অসমৰ লোকজীৱনৰ বিশ্বাস। উপন্যাসখনৰ প্ৰধান চৰিত্ৰ ৰসেশ্বৰে মাটিখিনি পুনৰ নিজৰ অধীনলৈ আনিবলৈ গোচৰ দিবলৈ যোৱাৰ আগতে ভাল দিন এটা চাই — “তামোল-পাণ এটা আৰু পইচা চাৰি অনা লৈ ৰসেশ্বৰে এদিন দলৈ চুক গাঁৱৰ জনাৰ্দন বাপুৰ ওচৰত ভাল দিন এটা চোৱাবলৈ গ'ল।” (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ৪৬)

অসমীয়া সমাজত বিশ্বাস যে কোনো এটা ভাল কামত যাবলৈ ওলালে ভগৱান আৰু ন পুৰুষৰ ওচৰত সেৱা এটা অন্তৰেৰে কৰি যাত্ৰা আৰম্ভ কৰে। ৰসেশ্বৰে ডেপুটি হাকিমৰ ওচৰত গোচৰ দিবলৈ যাত্ৰা কৰাৰ আগতে তেনেদৰে কৰিছে — “সেইদিনা ৰাতিপুৱাই গা-পা ধুই সি ভগৱান সত্ৰৰ গোঁসাই আৰু ন-পুৰুষৰ উদ্দেশ্যে সেৱা এটা কৰি চাব ডেপুটি হাকিমৰ কাছাৰিত গোচৰ দিবৰ কাৰণে ঘৰৰ পৰা যাত্ৰা কৰিলে।” (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৪৭)

কোনো এটা কামত সুফল পোৱাৰ আশা কৰি ভগৱানলৈ মূল্যৱান বস্তু আগবঢ়াব বুলি সংকল্প কৰি থয়। এই বিশ্বাসৰ কথা উপন্যাসখনতো উল্লেখ কৰিছে — “ৰসেশ্বৰৰ ঘৈণীয়েকে গিৰিয়েকক নজনোৱাকৈয়ে মনে মনে সংকল্প ল'লে যে মোকৰ্দমাত জিকিলে তাই আই কামাখ্যালৈ এপাহ সোণৰ ফুল আগবঢ়াব।” (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৪৭)

গৰুক অসমীয়া সমাজত বৰ আদৰ কৰে। কৃষকৰ বাবে গৰু অতি মূল্যৱান। গৰু কিনি আনিলে বা বেছিবলৈ পথালে কিছুমান নীতি নিয়মৰ মাজেৰে আদৰে বা বেছিবলৈ পথাই। ৰসেশ্বৰে গৰুজনী মণ্ডলৰ ওচৰলৈ নিয়াৰ সময়ত ৰসেশ্বৰৰ ঘৈণীয়েকে এনেদৰে কৰিছে — “ঘৈণীয়েকে আহি চোতালত থিয় হৈছেহি। তাইৰ সোঁহাতত এচৰিয়া পানী, বাওঁহাতত এখন কলপাতত অলপ নিমখ, কান্ধত এখন নতুন গামোচা। ৰসেশ্বৰে আচৰিত হৈ চাই থাকে মানে ঘৈণীয়েকে ৰাঙলীৰ মুখৰ আগত মাটিতে নিমখেৰে সৈতে কলপাতখন থ'লে আৰু তাৰ পিছত ৰাঙলীয়ে নিমখখিনি খায় মানে তাই চৰিয়াৰ পানীৰে ৰাঙলীৰ আটাইকেইখন ভৰি ধুৱাবলৈ ধৰিলে। ভৰি ধুৱাই শেষ কৰি তাই নতুন গামোচাৰে ৰাঙলীৰ ভৰিকেইখন মচি দিলে। তাৰ পিছত নতুন গামোচাখন ৰাঙলীৰ ডিঙিত বান্ধি দিলে।” (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৩৯)

ঘৰখনত বিপদ আপদ, অপায় অমঙ্গলৰ পৰা হাত সাৰিবলৈ গণকৰ ওচৰত দিন বাৰ, গ্ৰহ নক্ষত্ৰ চোৱাই। গণকে ঘৰখনৰ মঙ্গলৰ বাবে যি বিধান দিয়ে সেই বিধানমতে পৰিচালিত হয়। এইয়া অসমীয়া লোক জীৱনৰ বিশ্বাস। উপন্যাসখনত এই বিশ্বাসৰ কথাও উপস্থাপিত হৈছে — “মই বহুত দিন ধৰি ভাবি আছিলো, ইটোৰ পিছত সিটো বিপদ আমাৰ ঘৰলৈ এনেই আহি থকা নাই। নিশ্চয় কিবা গ্ৰহ-দোষ লাগিছে বা উপৰিপুৰুষৰ দোষ লাগিছে। --- মই গণেশ্বৰ বাপুটিৰ ঘৰলৈকো গৈছিলো - পঞ্জিকাখন চোৱাবলৈ। বাপুটিয়ে গণি-পিটি ক'লে আমাৰ ঘৰত বোলে ন-পুৰুষৰ দোষ লাগিছে। তেওঁ ন-পুৰুষৰ নামত ন জন ভকতক ক'লা ছাগলী, ক'লা হাঁহ বা যিকোনো এবিধ ক'লা মাছেৰে চাউল একঠা খুৱাবলৈ দিহা দিছে। লগতে বামুণ এজনক ক'লা ছাগলী এটা বা তাকে নোৱাৰিলে ক'লা হাঁহ এটা দান দিবলৈ দিছে। --- কাইলৈ মঙ্গলবাৰ, ভকতক চাউল খুৱাবলৈ ভাল দিন। ৰাতিপুৱাই বামুণৰ ঘৰত হাঁহটো দান দি আহি দুপৰীয়ালৈ ভকতক চাউল কঠা খুৱাব লাগিব।' (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৯৫) লোক সমাজত বেছিভাগ দেৱী দেৱতাক বিশ্বাস কৰে — সেই দেৱদেৱতাৰ কৃপাত নিৰাপদে থাকিব পাৰি বুলি বিশ্বাস কৰে। ৰসেশ্বৰৰ ঘৈণীয়েকৰ প্ৰসঙ্গৰে এই কথা উল্লেখ কৰিছে — “তাৰ ঘৈণীয়েকে এতিয়াও জলখাই-থলখাই অপেশ্বৰী আইসকল, শনি, মঙ্গল, উপৰিপুৰুষ আদি সকলো দেৱতা উপদেৱতাত সম্পূৰ্ণভাৱে বিশ্বাস কৰে, সহজ বিশ্বাসৰ স্থিৰ দৃঢ় ভূমিত তাই সম্পূৰ্ণ নিশ্চিন্ত আৰু নিৰাপদ।” (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৯৬)

লোক সমাজত বিশ্বাস, পৰম্পৰাত গুৰুত্ব দিয়ে যদিও এচামে নতুন যুগৰ নতুন কথা বতৰাৰ দ্বাৰা প্ৰভাৱিত হৈ লোক বিশ্বাস, পৰম্পৰা আদি মানিব নে নামানিব দুই দোমোজাত পৰে। এফালে ভয় আৰু আনফালে বিশ্বাসৰ তাড়নাত দোধোৰ মোধোৰ অৱস্থা হয়। ৰসেশ্বৰৰ জৰিয়তে সমাজৰ কিছুমান ব্যক্তিৰ এই ভাবধাৰা প্ৰকাশ কৰিছে — “ৰসেশ্বৰে মাজে সময়ে মেলে মিটিঙে গৈ আৰু কাৰ্তিকৰ দোকানত ট্ৰেনজিষ্টৰ ৰেডিঅ' শুনি শুনি নতুন দিনৰ নতুন কথাৰ কিছু আওভাও পোৱা হৈছে, অথচ পুৰণি বিশ্বাস আৰু সংস্কাৰো সি সম্পূৰ্ণৰূপে এৰিব পৰা নাই। তাৰ অৱস্থা এতিয়া দুই নাৱত দুই ভৰি থকাৰ নিচিনা, এফালৰ ভয় আৰু আনফালৰ বিশ্বাসৰ টনা-আঁজোৰাত সি দোদুল্যমান।” (৯৬ পৃ.)

লোকজীৱনত বিশ্বাস কৰে ঘৰত কাৰোবাৰ বেমাৰ আজাৰ হ'লে উপৰিপুৰুষৰ দোষ লাগিছে বুলি দোষ দূৰ কৰিবলৈ অন্নদান আৰু বামুণক দক্ষিণা দিয়ে। ৰসেশ্বৰে মনলৈ ভাব আহিছে জীয়েক মাখনীৰ বেমাৰ উপৰিপুৰুষৰ দোষ।

সেয়ে সি ভাবিছে — "এইটো উপৰি-পুৰুষৰেই কিবা এটা সংকেত। ন-পুৰুষৰ চাউল-কঠা আৰু বামুণৰ দক্ষিণাৰ ব্যৱস্থা আজিৰ ভিতৰতে যেনে তেনে কৰিবই লাগিব।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৯৭)

লোকসমাজত বেমাৰ সম্বন্ধে কিছুমান মানুহ অন্ধবিশ্বাসৰ দ্বাৰা পৰিচালিত হৈছিল। সেই চিত্ৰও উপন্যাসখনত উপস্থাপন কৰিছিল। ডম্বৰুৰ মাকৰ জৰিয়তে — "ৰসেশ্বৰ, তই পিছে এতিয়া কি কৰিম বুলি ভাবিছ? ডাক্তৰ অনাৰ কথা যদি ভাবিছ, তেন্তে কিন্তু কথা বেয়া হ'ব। তাইৰ আন একো হোৱা নাই, আইসকলৰ দোষ লাগিছে। -- গাটো ধুই আহি আইসকললৈ টোপোলা এটা আগবঢ়া। একো চিন্তা নকৰিবি, পুৱালৈ তাই ভাল হৈ আহিব।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৯১)

ৰ'বা ৰ'বা, তুমি ইমান লৰা-ঢপৰাখন নকৰিবাচোন। ডাক্তৰে আন সকলো ভাল কৰিব পাৰিলেও আইসকলৰ দোষ লাগিলে সেইটো কেতিয়াও ভাল কৰিব নোৱাৰে। (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৯১)

সমাজত ধৰ্মীয় বিশ্বাসৰ লগত জড়িত অন্ধবিশ্বাস কিছুমানো মানুহৰ মুখে মুখে প্ৰচলিত হৈ থাকে। তাৰ উল্লেখো উপন্যাসখনত পাওঁ। — "সিহঁতৰ ঘৰখন হ'ল, ৰাতিখোৱা সম্প্ৰদায়ৰ ভকত, ৰসেশ্বৰৰ বাপেক আছিল সেই অঞ্চলৰ ভকত প্ৰবৰ্তাৰ পৰা চাৰিসেৰা উত্তীৰ্ণ হোৱা সাধু। বছৰে বছৰে সিহঁতৰ ঘৰত বৰসেৰা হয়। অভকতীয়া মানুহক বৰসেৰাত বহিবলৈ দিয়া দূৰৰ কথা, চাৰি ঢাপৰ ভিতৰতো থাকিবলৈ দিয়া নহয়। ৰসেশ্বৰহঁত খুব সৰু হৈ থাকোঁতে সিহঁতৰ দুমাইল দুৰৰ চৰকাৰী মজলীয়া স্কুলখনলৈ চতিয়া নে ক'ৰবাৰ মানুহ এজন শিক্ষক হৈ আহিছিল। তেওঁ বোলে ৰাতিখোৱা সম্প্ৰদায়ৰ নাম গুণবোৰ গোটাই এখন কিতাপ লিখিব খুজিছিল। এদিন তেওঁ ৰসেশ্বৰৰ বাপেকৰ ওচৰলৈ আহিল। — তেওঁৰ মতে অভকতীয়া মানুহক শাস্ত্ৰৰ এনে গুপুত কথা বেকত কৰাতকৈ ডাঙৰ পাপৰ কথা আন একো নাই। সেই বছৰৰ কোনোবা এটা মাহত ৰসেশ্বৰহঁতৰ ঘৰত বৰসেৰা বহিল। শিক্ষকজনে ৰাতি কোনেও নজনাকৈ মনে মনে আহি বেৰৰ জলঙাইদি বৰসেৰাৰ অনুষ্ঠান চাই আছিল। পিছদিনা পুৱালৈ তেওঁ সম্পূৰ্ণ অন্ধ হৈ গ'ল।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৯৭)

লোকসমাজত প্ৰচলিত এনেধৰণৰ বিশ্বাস, ৰীতি-নীতি আদিৰ উপন্যাসখনৰ মাজেৰে উপন্যাসিকে প্ৰতিফলিত কৰিছে।

গণতান্ত্ৰিক সমাজবাদৰ স্বৰূপ চিত্ৰণ ঃ

উপন্যাসখনত গণতন্ত্ৰত সমাজবাদৰ প্ৰতিষ্ঠাৰ নামত চলা এচাম স্বাৰ্থপৰ মানুহৰ স্বাৰ্থন্বেষী মনোভাব প্ৰকাশ পাইছে। সমাজবাদ প্ৰতিষ্ঠা কৰি দৰিদ্ৰতা দূৰ কৰাৰ একমাত্ৰ উপায় বুলি জনগণক পতিয়ন নিয়াবলৈ চেষ্টা কৰিছে। সেই সকল ব্যক্তিয়ে যিয়ে দৰিদ্ৰক শোষণ কৰি নিজৰ হাতলৈ সকলো দৰিদ্ৰৰ সম্পত্তি দখল কৰিছে। নিৰ্বাচনৰ সময়ত সমাজবাদৰ সপোন দেখুৱাই পিছ মূহুৰ্ত্ততে সনাতন শৰ্মাৰ দৰে নিৰ্বাচনত প্ৰতিদ্বন্দ্বিতা কৰা নেতাই ভাবিব পাৰিছে — "গাধা বুৰ্বক ক'ৰবাৰ! আঠুৱা তলৰ মহ হৈ তই মোৰ বিৰুদ্ধে মোকৰ্দমা কৰ? ইলেক্‌চনটো আগতে পাৰ হৈ যাবলৈ দে, ভালকৈ তোক মাটি খুৱাম।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.১১৭) এনেদৰে গণতান্ত্ৰিক সমাজবাদ প্ৰতিষ্ঠাত শাসকীয় দলৰ লোকৰ অনীহা উপন্যাসখনত উপস্থাপন কৰিছে। ইয়াৰ জৰিয়তে ক্ষমতাৰ বলত এচাম লোকেৰ দৰিদ্ৰৰ প্ৰতি থকা শোষণৰ মনোভাব প্ৰকাশ কৰিছে।

'হালধীয়া চৰায়ে বাওধান খায়' উপন্যাসখনত গোন্ধৰ বৰ্ণনাঃ

হোমেন বৰগোহাঞিৰ উপন্যাসত গোন্ধে এক বিশেষ স্থান লাভ কৰে। এই উপন্যাসখনতো গোন্ধৰ বৰ্ণনা উপস্থাপন কৰিছে। গোন্ধৰ বৰ্ণনাৰ জৰিয়তে উপন্যাসখনৰ ভাবৰ গভীৰতা বৃদ্ধি কৰিছে। ইয়াত উল্লেখ কৰা গোন্ধৰ বৰ্ণনা অৰ্থপূৰ্ণ। কৃষকৰ গোন্ধৰ অনুভূতি বৰ্ণনাৰে প্ৰকৃতিৰ প্ৰতি লিড্ৰ ৰ আত্মিক অনুভূতিৰে উমান পাওঁ।

বহুদিনৰ মূৰত বৰষুণ দিলে কৃষক আনন্দিত হয়। মাটিডৰা জীপাল হৈ উঠিলে শস্য ভাল হ'ব। উপন্যাসখনত ৰসেশ্বৰে বৰষুণৰ আগমনত আনন্দিত হৈছে। —"বৰষুণৰ সুগন্ধখিনি আৰু শীতলতাখিনি সি যেন ভালকৈ অনুভৱ কৰি চাব খোজে। ঠিক সেই সময়তে এজাক সজল বতাহ জোৰেৰে তাৰ গাৰ ফালে বৈ আহিল। বোকাৰ গোন্ধ, পানীত ভিজা গোবৰৰ গোন্ধ, ভঁৰালৰ কাষত থকা গেন্ধাই ফুলবোৰৰ গোন্ধ এই আটাইবোৰ পৰিচিত গোন্ধ মিহলি হৈ তাৰ নাকত লাগিলহি। সেইবোৰৰ লগতে সি আৰু এটা গোন্ধ পালে আৰু সেইটো গোন্ধেহে তাক চঞ্চল কৰি তুলিলে। সি স্পষ্ট অনুভৱ কৰিলে - সেমেকা বতাহৰ কান্ধত উঠি ভাঁহি আহিছে গোহালিৰ গৰুবোৰৰ গাৰ গোন্ধ।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.১১)

"মাজে মাজে একোজাক সজল বতাহ বৈ আহে। সেই বতাহত সি কুকুৰৰ নিচিনাকৈ এটা পৰিচিত গোন্ধ অনুভৱ কৰিবলৈ চেষ্টা কৰে ঃ পথাৰৰ বোকাৰ গোন্ধ, গেলা ঘাঁহৰ গোন্ধ বৰষুণত ভিজি হালোৱা গৰুৰ গাৰ পৰা ওলোৱা গোন্ধ।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৪৬)

"লাহে লাহে তাৰ নাকৰ পৰা ঘৈণীয়েকৰ শৰীৰৰ গোন্ধ নোহোৱা হৈ গ'ল, কিন্তু তেতিয়াও লাগি থাকিল পকা ধানৰ

গোন্ধ ঘাঁহ আৰু বোকাৰ গোন্ধ, চৰাইৰ পাখিৰ গোন্ধ, আঘোণ-মহীয়া আবেলিৰ ৰ'দৰ গোন্ধ।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৮৯)

"কেইদিনমানৰ পিছতেই ধান দোৱাৰ সময় হ'ব, গাঁৱৰ আকাশ-বতাহ পকাধানৰ গোন্ধেৰে আমোল-মোলাই উঠিব।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৮৯)

এনেদৰে গোন্ধৰ বৰ্ণনাৰে লিখকে উপন্যাসৰ চৰিত্ৰটোৰ অন্তৰৰ অনুভূতিৰ চিত্ৰিত কৰিছে।

উপন্যাসখনৰ ভাষা ঃ

এই উপন্যাসখনৰ ভাষা বৰ্ণনামূলক। এই বৰ্ণনামূলক ভাষাই উপন্যাসখনৰ পৰিৱেশ, পৰিস্থিতি, চৰিত্ৰ আদিক বাস্তৱসন্মতভাৱে উপস্থাপন কৰিছে। সুন্দৰ ভাষা শৈলীয়ে বৰ্ণনীয় বিষয়ক আকৰ্ষণীয় কৰি তুলিছে। ৰসেশ্বৰ নামৰ কৃষকজনৰ দৰিদ্ৰ পীড়িত জীৱনৰ বৰ্ণনা বাস্তৱসন্মতভাৱে চিত্ৰিত কৰোতে ভাষা বৰ্ণনাধৰ্মী হৈছে ফলত উপন্যাসখনৰ বিষয়বস্তু অতি সজীৱ হৈ চকুৰ আগত ভাহি উঠে। ভাবৰ গভীৰতা প্ৰকাশত বৰ্ণনাধৰ্মী ভাষাই সহায় কৰিছে। উদাহৰণ স্বৰূপে ক'ব পাৰো — ভাষাৰ সুন্দৰ উপস্থাপনে হালবোৱাৰ বৰ্ণনা চকুৰ আগত ভাঙি উঠে — "ন-পানী পৰাৰ লগে লগেই ভেকুলীবোৰে সমস্বৰে টোৰ টোৰাবলৈ আৰম্ভ কৰাৰ দৰে গাঁৱৰ খেতিয়কবোৰৰ মাজতো এটা বিৰাট ব্যস্ততা আৰু চাঞ্চল্য জাগি উঠিল। পুৱতি নিশাৰপৰা দিনৰ ভৰ দুপৰলৈকে ওচৰৰ আটাইকেইখন পথাৰ হালবোৱা মানুহৰ চিঞৰ বাখৰেৰে মুখৰিত হৈ থাকে ঃ হেই হেই , ঘূৰ্ ঘূৰ্, উস্ এই মৰাটো কটা, নাঙলটোকে সি টানিব নোৱাৰে, ঘূৰ কজলা ঘূৰ্ ইত্যাদি। ঝম্ ঝম্ বৰষুণৰ শব্দ, কলাফুলীয়া পানীত গৰু আৰু মানুহৰ খোজ কঢ়াৰ ছলাং ছলাং শব্দ হালোৱাবোৰৰ মুখত হেই হেই, ঘূৰ্ ঘূৰ্ শব্দ সকলো মিলি এটা অদ্ভুৎ সুৰ-সমলয়, খেতিয়কৰ জীৱনৰ ছন্দত যেন এটা নতুন উন্মাদনা জগাই তোলে।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৪৫)

ঘৈণীয়েকক ৰসেশ্বৰে প্ৰহাৰ কৰাৰ বৰ্ণনাত ওচৰ চুবুৰীয়া আৰু ল'ৰা ছোৱালী কেইটাৰ মানসিক স্থিতি বাস্তৱ সন্মতভাৱে ফুটাই তুলিছে — "অত ত'ত সোমাই থকা ৰসেশ্বৰৰ ল'ৰা-ছোৱালী কেইটাই মাকৰ গগন ফলা কান্দোন শুনি উধাতুখাই ডম্বৰুহঁতৰ চোতাল পালেহি আৰু মাকৰ অৱস্থা দেখি আটাইকেইটাই একেলগে হুৰাও ৰাৱে কান্দিবলৈ ধৰিলে। তাত জুমবন্ধা তিৰোতাবোৰেও মৰা কাউৰী দেখিলে শ শ কাউৰীয়ে ইফালে সিফালে ইচাট্ বিচাট্ কৰি একেলগে ৰমলিয়াবলৈ আৰম্ভ কৰাৰ দৰে ৰসেশ্বৰৰ ঘৈণীয়েকক ঘেৰি ধৰি কলকলাবলৈ ধৰিলে।" (১৯পৃ.)

নিজৰ সন্তানৰ অভাৱ পূৰ কৰাৰ সলনি সন্তানৰ জৰিয়তে অৰ্থনৈতিক সমস্যা সমাধান কৰিবৰ বাবে পদক্ষেপ ল'ব লগা হোৱাত ৰসেশ্বৰৰ ঘৈণীয়েকৰ অসহায় অৱস্থাৰ মৰ্মান্তিক বেদনা ভাষাৰ সুপ্ৰয়োগত অন্তৰস্পৰ্শী হৈ উঠিছে। — "ঘৈণীয়েক নিজকে এনে অসহায় যেন অনুভৱ কৰিলে যে তাইৰ গোটেই দেহ-মন মৰা মানুহৰ দৰে অসাৰ হৈ পৰিল। ৰাতিৰ অন্ধকাৰতকৈ সহস্ৰগুণে বেছি গভীৰ ভয়ংকৰ এক অন্ধকাৰে পাষাণ ভাৰৰ দৰে তাইক হেঁচা মাৰি ধৰিলে। তাই অনুভৱ কৰিলে যে সেই অন্ধকাৰৰ হেঁচাই তাইৰ হাঁড় মূৰবোৰ ভাঙি গুৰি কৰি পেলাবলৈ উপক্ৰম কৰিছে আৰু যেন অন্তহীন দূৰৰ পৰা তাইৰ বুকুৰ গভীৰৰ পৰা এটা ক্ষীণ অস্ফুট আৰ্তনাদ বাহিৰ হৈ আহিছে— 'ভগৱান!' (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ৭৯)

বৰ্ণনামূলক ভাষাই দুখীয়া পৰিয়ালৰ ক্ষুধাৰ তাড়না জীৱন্ত ৰূপত উপস্থাপন কৰিছে — "এহাল মানুহৰ ভাত সিহঁত পাঁচটা ল'ৰা-ছোৱালীয়ে ভাগ কৰি খাব লগা হৈছে। আঞ্জাৰ নামত আছে কেৱল পানী আৰু নিমখ দি সিজোৱা এমুঠি ঢেঁকীয়া। তাৰে ভগা ভগি লৈ সিহঁতৰ মাজত মাৰপিট আৰম্ভ হৈ গৈছে।" (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৯৩)

উপন্যাসখনৰ পটভূমি যিহেতু গ্ৰাম্যজীৱন সেয়েহে ইয়াত লোকভাষাই প্ৰধান্য লাভ কৰিছে। অসমীয়া লোকজীৱনত সদায় প্ৰয়োগ কৰি থকা খণ্ডবাক্য, জতুৱাঠাঁচ, গালি-গালাজ ফকৰা আদিৰ সমাবেশ ঘটিছে। এইবোৰৰ প্ৰয়োগে উপন্যাসখনৰ ভাষা সৌন্দৰ্যশালী কৰিছে। তলত উদাহৰণ দিয়া হ'ল —

ফকৰা যোজনা ঃ

বেটীৰ খং বাঢ়নীত জৰাৰ দৰে (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ১৩)

জুলা জুইত ঘিউ পৰাৰ দৰে (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.১৭) উঁৰহৰ খং ভগা ঢৰাৰ মৰাৰ দৰে (পৃ. প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.২২) জোৰ যাৰ মুলুক তাৰ (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.২৩) খং নামে চণ্ডাল (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ২৬) তালু ফুটি জীউ যোৱাৰ দৰে (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ৫০) আদাৰ বেপাৰীয়ে জাহাজৰ খবৰ লৈ কি কৰিম (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ৫৭) হয় গুৱাহাটী নহয় ৰঙামাটি (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ৭২) নগাৰ চাং তলেই বাট (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ৭৩) পানীত হাঁহ নচৰা অৱস্থা (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,৯৬) ধান পকে মানে টুনীৰ মৰণ (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ১০৩) অচিন কাঠৰ খোৰাকো নলগাবা (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ১১৭) ছেগ চাই কঠীয়া পেলোৱা (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,১১৭ পৃ.) হাতীৰ আগত মাখি , মোৰ পো দুষ্ট মোকে কাটে মোকে মাৰে, মোকে কৰে তষ্ট (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. **৬৬**) গেদাৰে পোৰে তল যোৱা মহাপাপ (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ৭৭)

গছত গৰু উঠা হোলোঙাৰে কাণ বিন্ধোৰা (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ.১০৮) গছত গৰু উঠা হোলোঙাৰে কাণ বিন্ধোৰা (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ১০৮)

খণ্ডবাক্যৰ প্ৰয়োগ ঃ

নিবোকা চামোন (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ৮৩) আঠুৰা তলৰ মহ (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ.১১৭) মূৰত বজ্ৰঘাত পৰা (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ৮) ব্ৰহ্ম তালুত ফেটী সাপে খোঁট মৰা (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ১৬) মূৰত স্বৰগ ভাগি পৰিছে (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ২০) মৰা সাপকো নেদোৰা (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ২৩,৭২) বুদ্ধিত বৃহস্পতি (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ২৪) বজ্ৰসৃষ্টি (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ৫২) ৰৌ ৰৌ নৰক (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ৮০) লত্ৰৌৰ প্ৰসাদ (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ.১১১) তীৰকঁপে (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,২০) জ্বলা জুইত ঘিউ পৰাৰ দৰে (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ.১৭,৭৬) বিজুলী বেগেৰে (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ.১৮) সাতাম পুৰুষীয়া (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ.২৫) মৰণ-পণ গৰ্জন (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,১৬) কিংকৰ্তব্য বিমূঢ় (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ.২৭) কুকুৰ ধূলি হেন মানুহ(প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ.১১৮)

যুৰীয়া শব্দৰ প্ৰয়োগ ঃ

সেমেনা সেমেনি (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ৮৩) ঢেক্ ঢেক্কৈ (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ৫৯) ড্ৰ মক (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ৫৮) লুতুৰি-পুতুৰি (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ. ২০) কেটেৰা-জেঙেৰা, তিতি-বুৰি (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ.১৪) আধি-সন্ধি (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৪০) খেদি-কুৰি (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ.৩৮) দাউ-দাউকৈ (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৬৩) ইচাট-বিচাট (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.১৯) ঢিপ ঢিপাই (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ.৫৩) আমা-ডিমা (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.১৩) থৰক-বৰক (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.১৭) হায়ে-বিয়ে (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.২১) হাউ-মাওকৈ (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.২৫) লাংলাং ঠাং ঠাং (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ২৬) পুলুক-পালক (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৫০) আলাই-আথানি (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ,পৃ.৪৫) পোলোকা-পোলোক (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৫৭) ইলুটি-সিলুটি (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.৬৫) দিক-বিদিক (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.১৮) কুচি মুটি (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.২০) ইত্যাদি।

উপন্যাসখনত গালি-শপনিৰো উল্লেখ আছে। যেনে- তেজখোৰা ৰাক্ষস (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.১৮), গৰু-পিটন (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ১৮) মেচি দাৰে একে ঘাপতে দুছেও কৰি দিম (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ২৫) ছালছিগা টোকোনা (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ২৯) কুলক্ষণীয়া তিৰোতা (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ৩১) তেজখোৰা পিশাচ (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ৩১) অন্ধলা (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ৫২) হাৰামজাদা (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ৭২) লাঠুৰা বলিয়া (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ৭২) বাঘ ঢকা (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ৭৫) গাধা বুৰ্বক (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ. ১১৭) অলগৰ্ধ ভূত (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, ৫০) কেলেহুৱা (প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ, পৃ.১০৮) ইত্যাদি।

'হালধীয়া চৰায়ে বাওধান খায়' হোমেন বৰগোহাঞিৰ এক সুন্দৰ সৃষ্টি। উপন্যাসখনত গ্ৰাম্য জীৱনৰ স্বৰূপ চিত্ৰিত কৰিছে। দৰিদ্ৰ কৃষক ৰসেশ্বৰৰ জৰিয়তে শোষণকাৰীৰ কবলত পৰি যন্ত্ৰণাময় জীৱন যাপন কৰিব লগা কৃষকৰ জীৱনৰ বাস্তৱ ছবি উপস্থাপন কৰিছে। নিৰ্বাচনৰ কথা উল্লেখ কৰি গণতান্ত্ৰিক সমাজবাদৰ বিষয়ে উপস্থাপন কৰিছে। কিন্তু এই সমাজবাদ প্ৰতিষ্ঠাত স্বাৰ্থপৰ ব্যক্তিসকলৰ বাবে যে সফল হ'ব নোৱাৰে তাকো উপন্যাসখনত উপস্থাপিত কৰিছে।

ৰসেশ্বৰৰ সংঘাতময় জীৱনৰ জৰিয়তে লিখকে যেন বুজাব খুজিছে - শিক্ষাৰ প্ৰয়োজনীয়তাৰ কথা, অশিক্ষিত বাবেই ৰসেশ্বৰৰ জীৱন যন্ত্ৰণাময় হৈ উঠিছে। সনাতন শৰ্মাৰ চক্ৰান্তৰ বলি হৈ আইন আদালতৰ পাকচক্ৰত পৰিবলগা হৈছে, জ্ঞানৰ অভাৱৰ বাবেই সনাতন শৰ্মাৰ চক্ৰান্তৰ পুনৰ বলি হ'ব লগা হৈছে।

উপন্যাসখনৰ বৰ্ণনা শৈলীয়ে, বিষয়বস্তুৱে, পাঠকৰ অন্তৰত গভীৰ চাপ পেলাবলৈ সক্ষম হৈছে। সেয়ে অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যৰ বুৰঞ্জীত 'হালধীয়া চৰায়ে বাওধান খায়' উপন্যাসখনে এক উচ্চস্থান দখল কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থ ঃ

বৰগোহাঞি, হোমেন ঃ হালধীয়া চৰায়ে বাওধান খায়, প্ৰকাশক শ্ৰী অজয় কুমাৰ দত্ত, ষ্টুডেণ্টচ্ ষ্ট'ৰচ

শৰ্মা, গোবিন্দ প্ৰসাদ ঃ উপন্যাস আৰু অসমীয়া উপন্যাস, দশম সংস্কৰণ নবেম্বৰ ২০২১, গুৱাহাটী, ষ্টুডেণ্টচ্ ষ্ট'ৰচ, প্ৰথম প্ৰকাশ ১৯৯৫

শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰ নাথ ঃ অসমীয়া উপন্যাসৰ ভূমিকা গুৱাহাটী, সৌমাৰ প্ৰকাশ, পুনৰ মুদ্ৰণ, ২০০৪

শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰনাথ ঃ অসমীয়া উপন্যাসৰ গতিধাৰা গুৱাহাটী ঃ সৌমাৰ প্ৰকাশ, পুনৰ মুদ্ৰণ ২০০৪

ডেকা, নমিতা, সম্পা. ঃ হোমেন বৰগোহাঞিৰ সন্ধানত গুৱাহাটী ঃ ষ্টুডেণ্টচ ষ্ট'ৰচ ১৯৯৮ মুদ্ৰিত

ঠাকুৰ, নগেন, সম্পা. ঃ এশ বছৰৰ অসমীয়া উপন্যাস গুৱাহাটী ঃ জ্যোতি প্ৰকাশন, মুদ্ৰিত, দ্বিতীয় প্ৰকাশ ২০১২

দাস, দুলাল চন্দ্ৰ সম্পা. ঃ হোমেন বৰগোহাঞিৰ সাহিত্য আৰু সাধনা প্ৰথম প্ৰকাশ ২০২২)

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

আহোম বুৰঞ্জীৰ আধাৰত টাই-আহোম ভাষাৰ বিশেষণ শব্দৰ প্ৰকাৰ আৰু গঠন

ড° উদয়ন বড়া

সাৰাংশ ঃ

নামপদৰ এক উল্লেখনীয় ভাগ হ'ল— বিশেষণ শব্দ। বিশেষণ শব্দই বিশেষ্যকে ধৰি আন আন শব্দৰ দুখ, গুণ, অৱস্থা, পৰিমাণ আদি প্ৰকাশ কৰে। বিশেষ্য শব্দ আৰু বিশেষণ শব্দৰ মাজত বিশেষ পাৰ্থক্য দেখিবলৈ পোৱা নাযায়। তদুপৰি বিশেষ্যৰ দৰে বিশেষণ শব্দৰ সৈতেও বিভক্তি, প্ৰত্যয়, বচন আদি সংযোগ হোৱা দেখা যায়। সাধাৰণতে গঠনৰ ফালৰ পৰা বিশেষণ শব্দবোৰত মৌলিক আৰু সাধিত ৰূপত পোৱা যায়। সাধিত বিশেষণৰ তুলনাত মৌলিক বিশেষণ সংখ্য অধিক পৰিলক্ষিত হয়। আনহাতে টাই-আহোম ভাষাৰ ভাষিক প্ৰকৃতি তথা গঠনৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি টাই-কাদাই ভাষা পৰিয়ালৰ অন্তৰ্গত কৰা হয়। নৃতাত্ত্বিক দৃষ্টিভংগীৰ পৰা মংগোলীয় প্ৰজাতিৰ। টাই-আহোম জনগোষ্ঠীয় লোকসকল বৰ্তমান উত্তৰ-পূব ভাৰতৰ অসম ৰাজ্যৰ উজনি অসমত বিশেষভাৱে প্ৰচলন পোৱা যায়। ইয়াৰ ভিতৰত শিৱসাগৰ, চৰাইদেউ, যোৰহাট, গোলাঘাট, ডিব্ৰুগড়, ধেমাজি, লখিমপুৰ, তিনিচুকীয়া, শদিয়া আদি উল্লেখযোগ্য।

টাই ভাষাসমূহ মূলতঃ সুৰীয়া ভাষা। আনহাতে টাইমূলীয়া ভাষা হিচাপে টাই-আহোম ভাষাৰ বিশেষণ শব্দৰ ক্ষেত্ৰতো এনে বৈশিষ্টসমূহ পৰিলক্ষিত হয়। বৰ্তমান অসমত টাই-আহোম ভাষাই যথেষ্ট পৰিমাণে বিকাশ লাভ কৰিছে। একেদৰে বিদ্যালয়, মহাবিদ্যালয় আৰু বিশ্ববিদ্যালয় পৰ্যায়তো যথেষ্ট পৰিমাণে টাই-আহোম ভাষাৰ অধ্যয়ন আৰম্ভ হৈছে। অন্যান্য ভাষাৰ দৰে টাই-আহোম ভাষাৰো এক অন্যতম অংগ হৈছে— বিশেষণ শব্দ। এনে বিশেষণ শব্দবোৰক প্ৰধানতঃ দুটা ভাগত ভাগ কৰা হয়। যেনে— মৌলিক আৰু সাধিত। একেদৰে প্ৰকাৰৰ ক্ষেত্ৰত টাই-আহোম ভাষাৰ বিশেষণ শব্দৰ তিনিটা প্ৰকাৰ পোৱা যায়। অৱশ্যে সুৰীয়া ভাষা হ'লেও টাই-আহোম ভাষাটো বহুতো ব্যাকৰণিক দিশ যেনে—বিশেষ্য, বিশেষণ, সৰ্বনাম, ক্ৰিয়া, বিভক্তি, কাৰক, বচন আদি প্ৰতিফলিত হয়। এনে ৰূপতাত্ত্বিক দিশৰ অংগ হিচাপে টাই-আহোম ভাষাৰ বিশেষণ শব্দৰ অধ্যয়ন গুৰুত্বপূৰ্ণ।

টাই ভাষাৰ শিক্ষক, ভাষা অধ্যয়ন কেন্দ্ৰ, ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়
পিন ঃ ৭৮৬০০৪
৯১০১০৩৬১২৩
udayan1204@gmail.com

বীজ শব্দ ঃ

টাই-কাদাই, বিশেষণ, বিশেষ্য, সৰ্বনাম, কাৰক, বিভক্তি, মৌলিক, সাধিত আদি।

০.১ অৱতৰণিকা ঃ

বিষয়ৰ পৰিচয় ঃ

উত্তৰ-পূব ভাৰতৰ এক ঐতিহ্যপূৰ্ণ ভাষা হ'ল— টাই ভাষা। এই ভাষাই দক্ষিণ-পূব এছিয়াৰ চীনদেশৰ য়ুনান প্ৰদেশৰ পৰা আৰম্ভ কৰি উত্তৰ ভিয়েটনাম, লাওচ, থাইলেণ্ড, ম্যানমাৰৰ লগতে উত্তৰ ভাৰত পৰ্যন্ত বিস্তৃতি লাভ কৰিছে। ভাৰত তথা অসম প্ৰদেশত টাই ভাষাৰ ছটা শাখাৰ ভাষাৰ ব্যৱহাৰ পোৱা যায়। যেনে— টাই-আহোম, টাই-আইতন, টাই-টুৰুং, টাই-খামতি, টাই-খাময়াং আৰু টাই-ফাকে। এই ভাষাকেইটাৰ ভিতৰত টাই-আহোম ভাষা ভাষিক সংস্কৃতিক দিশৰ পৰা যথেষ্ট চহকী। নৃতাত্বিক দৃষ্টিকোণৰ পৰা টাই-আহোমসকল মংগোলীয় প্ৰজাতিৰ। টাই-আহোম ভাষা ভাষিক প্ৰকৃতি তথা বৈশিষ্ট্য অনুসৰি 'টাই-কাদাই' আৰু ভৌগোলিক অৱস্থান ভিত্তিত 'চীন-তিব্বতীয়' ভাষাপৰিয়ালৰ অন্তৰ্গত।

টাই জনগোষ্ঠীবোৰৰ ভিতৰত টাই-আহোমসকল ইতিহাস অতি পুৰণি। "ত্ৰয়োদশ শতিকাৰ প্ৰাৰম্ভতে ১২২৮ খ্ৰীষ্টাব্দত আহোমৰ আদি ৰজা ছুকাফাৰ নেতৃত্বত টাই মানুহৰ ঠাল এটাই উত্তৰ-পূব গিৰিপথেদি অসমত প্ৰৱেশ কৰে। সুদীৰ্ঘ ছশটা বছৰ সংঢালনিকৈ অসমত শাসন কৰা এই লোকসকলকেই থলুৱা লোকসকলে আহোম বোলে"।[১] টাই-আহোমসকল ভাষা-সাহিত্য-সংস্কৃতি ফালৰ পৰা এক পৰিপূৰ্ণ তথা সম্ভ্ৰান্ত জাতি আছিল। সেইদৰে অসমতো টাই-আহোমসকলে আজিৰ পৰা কেইবাশ বছৰৰ পূৰ্বে অৰ্থাৎ ১২২৮ খ্ৰীষ্টাব্দত আহোম ভাষাতে বাৰ্তালাপ কৰাৰ লগতে সাহিত্য চৰ্চা তথা বুৰঞ্জী আৰু বিভিন্ন পুথি-পাঁজি লিখাৰ পৰম্পৰা অব্যাহত ৰখাৰ তথ্য প্ৰমাণ পোৱা যায়। একেদৰে আজিও টাই-আহোমসকলৰ মহন, দেউধাই, বাইলুং আদি পুৰোহিত শ্ৰেণীয়ে পূজা-পাতল অনুষ্ঠানৰ জৰিয়তে অসমৰ সম্প্ৰতিক প্ৰেক্ষাপটত টাই-আহোম ভাষাক পৰম্পৰাগতভাৱে ব্যৱহাৰ কৰি আছে। অৱশ্যে টাই-আহোম জনগোষ্ঠীয়ে অসমীয়া ভাষাকেই মাতৃভাষাৰূপে ব্যৱহাৰ কৰে যদিও শিৱসাগৰ আৰু চৰাইদেউ জিলাৰ টাই-আহোম লোকসকলে ব্যৱহাৰ কৰা অসমীয়া ভাষাৰ মাজত যথেষ্ট পৰিমাণে 'টাই-আহোম' ভাষাৰ শব্দৰ ব্যৱহাৰ দেখিবলৈ পোৱা যায়। যেনে- সম্বন্ধবাচক শব্দ, নামবাচক শব্দ, সংস্কৃতি বিষয়ক শব্দ আদি। আনহাতে এই ভাষাৰ প্ৰকৃত ভাষিক প্ৰতিচ্ছবিসমূহ লিখিত সাহিত্য তথা সাঁচিপতীয়া বুৰঞ্জী পুথি, অভিধান আদিৰ মাজতহে স্পষ্ট ৰূপত প্ৰতিফলিত হোৱা দেখিবলৈ পোৱা যায়।

টাই-আহোম ভাষাৰ সাহিত্য-সংস্কৃতিৰ লগতে ভাষা সম্পৰ্কে ইতিমধ্যে বৰ্ণনাত্মক দৃষ্টিভংগীৰে বিজ্ঞানসন্মত অধ্যয়ন হৈছে। কিন্তু ভাষাটোৰ লিখিত সমল তথা টাই ভাষাত লিখিত আহোম বুৰঞ্জীৰ আধাৰত শব্দৰ গঠন সম্পৰ্কে বৰ্তমানেও বিস্তৃত ৰূপত অধ্যয়ন হোৱা নাই। আনহাতে ৰাজকীয় ভাষা হিচাপে টাই-আহোম ভাষাৰ বুৰঞ্জীসমূহৰ অধ্যয়নত যথেষ্ট গুৰুত্ব আছে। সেয়ে টাই-ভাষাত লিখা আহোম বুৰঞ্জীসমূহত ব্যৱহৃত শব্দৰ আধাৰত টাই-আহোম ভাষাৰ বিশেষণৰ শব্দৰ প্ৰকাৰ আৰু ইয়াৰ গঠন সম্পৰ্কে বিস্তৃত ৰূপত আলোচনা কৰা হৈছে।

০.২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

আহোম বুৰঞ্জীৰ আধাৰত টাই-আহোম ভাষাৰ বিশেষণঃ শব্দৰ প্ৰকাৰ আৰু গঠন— শীৰ্ষক বিষয়ৰ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্যসমূহ হ'ল—

- সঁচিপতীয়া বুৰঞ্জীৰ সহায়ত টাই-আহোম ভাষাৰ বিশেষণ শব্দৰ প্ৰকাৰসমূহ বিশ্লেষণ কৰা।
- সাঁচিপতীয়া বুৰঞ্জীৰ সহায়ত টাই-আহোম ভাষাৰ বিশেষণ শব্দৰ গঠন প্ৰক্ৰিয়াসমূহ বিচাৰ কৰা।

০.৩ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি আৰু পৰিসৰ ঃ

আহোম বুৰঞ্জীৰ আধাৰত টাই-আহোম ভাষাৰ বিশেষণ ঃ শব্দৰ প্ৰকাৰ আৰু গঠন— শীৰ্ষক বিষয়ৰ অধ্যয়নৰ বাবে সুকীয়া সুকীয়া পদ্ধতি গ্ৰহণ কৰা হৈছে। তথ্য আহৰণৰ ক্ষেত্ৰত সাক্ষাৎকাৰ আৰু নমুনা সংগ্ৰহ পদ্ধতি ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। আনহাতে ঐতিহাসিক পদ্ধতি আৰু বৰ্ণনাত্মক ভাষাবৈজ্ঞানিক পদ্ধতি সহায়ত অধ্যয়নৰ বিষয়টোৰ সামগ্ৰিক বিশ্লেষণ আগবঢ়োৱা হৈছে। ইয়াৰ উপৰি গঠনাত্মক ভাষাবিজ্ঞান পদ্ধতিৰ সহায়ত বিশেষণ শব্দৰ গাঁথনিক দিশৰ বিশ্লেষণ দাঙি ধৰা হয়। মূলতঃ টাই-আহোম ভাষাৰ সাঁচিপতীয়া বুৰঞ্জী যেনে— চ্যাও চন্দ্ৰ কোঁৱৰৰ 'তাই-আহোম বুৰঞ্জী', জ্ঞানানন্দ ফুকনৰ 'আহোম বুৰঞ্জী', বিনন্দ মহনৰ 'চাও-ফা-খাও-প'-লক্-ছী-খুঙ্-ফা', Rai Sahib Gulap Chandra Barua ৰ 'Ahom Buranji' পৰা লাভ কৰা ভাষিক তথ্যৰ

ভিত্তিত এই অধ্যয়ন আগবঢ়োৱা হৈছে।

আনহাতে বিষয় বিশ্লেষণৰ সময়ত উল্লেখ কৰা উদাহৰণসমূহৰ সৈতে তথ্য সংগ্ৰহ কৰা মূল বুৰঞ্জীসমূহৰ নাম সংক্ষিপ্ত ৰূপত উল্লেখ কৰা হৈছে।

০.৪ অধ্যয়নৰ উৎস ঃ

আহোম বুৰঞ্জীৰ আধাৰত টাই-আহোম ভাষাৰ বিশেষণ ঃ শব্দৰ প্ৰকাৰ আৰু গঠন— শীৰ্ষক বিষয়ৰ অধ্যয়নৰ বাবে মূলতঃ দুই ধৰণৰ উৎসৰ পৰা তথ্য সংগ্ৰহ কৰা হয়।

- মুখ্য সমল
- গৌণ সমল

মুখ্য সমল ঃ চৰাইদেউ জিলাৰ মৰাণহাটত অৱস্থিত টাই-অধ্যয়ন আৰু গৱেষণা প্ৰতিষ্ঠানৰ লগতে টাই-আহোম জনগোষ্ঠীৰ ভিন্ন সমল ব্যক্তিৰ ঘৰৰ পৰা লাভ কৰা আহোম ভাষাৰ সাঁচিপতীয়া বুৰঞ্জীসমূহক মুখ্য সমল হিচাপে গ্ৰহণ কৰা হৈছে।

গৌণ সমল ঃ ইণ্টাৰনেট তথা চৰকাৰী বা বে-চৰকাৰী বিভিন্ন সংস্থাৰ জৰীপ আদিৰ পৰা লাভ কৰা তথ্যসমূহ পুংখানুপুংখ বিচাৰ-বিশ্লেষণ কৰি গৌণ তথ্য হিচাপে সংগ্ৰহ কৰা হৈছে। ইয়াৰ উপৰি কেমেৰা, ম'বাইল, লেপটপ আদি যন্ত্ৰপাতিৰ সহায়ত লাভ কাৰ তথ্যসমূহক গৌণ সমল হিচাপে গ্ৰহণ কৰা হয়।

১.০ বিশেষণ শব্দৰ প্ৰকাৰ ঃ

কোনো এক ভাষাত নাম শব্দৰ দোষ-গুণ, অৱস্থা, পৰিমাণ আদিক বিশেষভাৱে বুজোৱা শব্দবোৰক বিশেষণ শব্দ বুলি কোৱা হয়। টাই-আহোম ভাষাতো এনে শব্দৰ ব্যৱহাৰ পোৱা যায়। তলত টাই-আহোম ভাষাৰ বিশেষণ শব্দৰ ভিন্ন প্ৰকাৰসমূহ দাঙি ধৰা হ'ল—

- বিশেষ্যৰ বিশেষণ
- বিশেষণীয় বিশেষণ
- ক্ৰিয়া বিশেষণ

১.১ বিশেষ্যৰ বিশেষণ ঃ

সাধাৰণতে টাই-আহোম ভাষাৰ প্ৰায়বোৰ শব্দই মৌলিক যদিও বিশেষ্যৰ বিশেষণ শব্দবোৰ সাধিত ৰূপতহে ব্যৱহাৰ হয়। বিশেষ্যৰ দোষ, গুণ, অৱস্থা, পৰিমাণ আদি প্ৰকাশ কৰা বিশেষণ শব্দবোৰ বিশেষ্যৰ পিছত ব্যৱহাৰ কৰা হয়। তলত বিশেষ্যৰ বিশেষণ শব্দৰ উদাহৰণ দাঙি ধৰা হ'ল—

ছেঙ 'ধুনীয়া'

(ৰূ. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৩৩)

দেঙ 'ৰঙা'

(ৰূ. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ২২)

নই 'সৰু'

(ৰূ. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৩৩)

লুঙ 'ডাঙৰ'

(ৰূ. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৬০)

বিশেষ্যৰ বিশেষণৰ প্ৰয়োগ ঃ

১. বান **নই** ফুক ছিঃ লুক।

'চাৰিটা **সৰু** বাটি পঠালে'।

(ৰূ. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৩৩)

২. হাউ খুত ৰাঁউ **দিন দেঙ** আউ মা।

'**ৰঙামাটি** খান্দি আনি দিলে।'

(ৰূ. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৫৫)

৩. **মাঁউ নীন** ছিপ এইত চাউ ফা তিঃ লুঙ পাই।

'**সেই বছৰৰ** একাদশ মাহত স্বৰ্গদেউ বৰনগৰলৈ গ'ল।'

(ৰূ. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৬০)

৪. চাউ ফা জই ছেঙ হাউ মা **দেঙ** লৌঙ।

ৰজা জয়সিংহই এটা **ৰঙা** ঘোঁৰা দিলে।

(ৰূ. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৭১)

১.২ বিশেষণীয় বিশেষণ ঃ

টাই আহোম ভাষাত বিশেষণীয় বিশেষণ অতি কম পৰিমাণে ব্যৱহাৰ হোৱা পৰিলক্ষিত হয়। এই ভাষাত বিশেষণক অধিক স্পষ্ট ৰূপত প্ৰতিফলিত কৰিবৰ বাবে বিশেষণীয় শব্দবোৰ ব্যৱহাৰ কৰা হয়। তলত এনে শব্দসমূহ উদাহৰণসহ দাঙি ধৰা হ'ল—

টাই-আহোম ভাষাত **'খীঞ'** বৰ শব্দটোৰ জৰিয়তে বিশেষণীয় বিশেষণ শব্দৰ ধাৰণা দিয়া পৰিলক্ষিত হয়।

খীঞ 'বৰ' + দিঃ 'ভাল' = খীঞ দি 'বৰ ভাল'

(ৰূ. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ১৯)

বিশেষণীয় বিশেষণৰ প্ৰয়োগ ঃ

১. মান বা খাম নে তাক **খীঞ** দিঃ।

তেওঁ কথাযাৰ **বৰ ভাল** হ'ব বুলি ক'লে।

(সাঁ. দি. বু. পু. ফ. নং. ১১১)

১.৩ ক্ৰিয়া-বিশেষণ ঃ

ক্ৰিয়াৰ কাৰ্য, সময়, গুণ বা অৱস্থা বুজোৱা শব্দবোৰেই

ক্ৰিয়া-বিশেষণ। আনহাতে গঠনৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি কিছুমান ক্ৰিয়া বিশেষণক সৰ্বনামজাত ক্ৰিয়া বিশেষণ বোলা হয়। টাই-আহোম ভাষাতো এনে সৰ্বনামজাত ক্ৰিয়া বিশেষণ শব্দৰ ব্যৱহাৰ পোৱা যায়। আনহাতে টাই-আহোম ভাষাৰ সৰ্বনামজাত ক্ৰিয়া বিশেষণক আকৌ দুটা ভাগত ভাগ কৰা হয়। যেনে —

- ➢ স্থানবাচক ক্ৰিয়া-বিশেষণ
- ➢ পৰিমাণবাচক ক্ৰিয়া-বিশেষণ

• **স্থানবাচক ক্ৰিয়া-বিশেষণ ঃ**

তিঃ 'স্থান' + নাই 'এই' = তি নাই 'ইয়াত / ইয়ালৈ'

(সাঁ. দি. বু. পু. ফ. নং. ৯০)

তিঃ 'স্থান' + নান 'সেই' = তিঃ নান 'তাত / তালৈ'

তিঃ 'স্থান' + থাউ 'ক'ত' = তিঃ থাউ 'ক'ত /ক'লৈ'

(গো. চ. ব. দে. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৪২)

• **পৰিমাণবাচক ক্ৰিয়া-বিশেষণ ঃ**

চন 'অলপ' + চন 'অলপ' = চন চন 'অলপ অলপ'

নাম 'বহুত' + নাম 'বহুত' = নাম নাম 'অনেক'

(ৰু. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৩৩)

সৰ্বনামজাত ক্ৰিয়া বিশেষণৰ প্ৰয়োগ ঃ

১. চাউ লুক মান ৰিক **তিঃ নান**।

'ৰজাই তেওঁৰ পুত্ৰক **তালৈ** মাতিলে'

(সাঁ. দি. বু. পু. ফ. নং. ১৬)

২. তিঃ বান মা চাম জুঃ **তিঃ নান**।

'গাঁৱলৈ আহিল আৰু **তাতে** ৰ'ল।'

(সাঁ. দি. বু. পু. ফ. নং. ১৬)

৩. কুন ৰাউ ক তুক লা কুন ছঙ কুন বাউ জাউ **তিঃ নাই**।

'আমাৰ ডেকা মানুহ দুজনো **ইয়াতে** ৰণত পৰিল।'

৪.হেত পাক পুঙ ছেঙ **নাম নাম** চুম নাম খা ছিঃ জাউ।

'**অনেক** ঠাইৰ পানী আনি পানী কাটিলে।'

(ৰু. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৩৩)

২.০ বিশেষণ শব্দৰ গঠন ঃ

টাই-আহোম ভাষাৰ বিশেষণীয় শব্দবোৰ লিংগ, বচন অনুসৰি অপৰিৱৰ্তিত ৰূপত বিশেষ্যৰ সৈতে প্ৰয়োগ কৰা হয়। এই বিশেষণ শব্দবোৰ বিশেষ্য শব্দৰ পাছত ব্যৱহৃত হোৱা দেখা যায়। তদুপৰি টাই-আহোম ভাষাৰ বিশেষণ শব্দবোৰৰ অধিকাংশই এক ৰূপবিশিষ্ট হয় যদিও বহু সময়ত দুই বা তিনি ৰূপবিশিষ্ট বিশেষণ শব্দৰো ব্যৱহাৰ পোৱা যায়। অৱশ্যে এনে শব্দ অতি সীমিত পৰিমাণে ব্যৱহাৰ হয়।

টাই-আহোম ভাষাৰ বিশেষণ শব্দৰ গঠন প্ৰক্ৰিয়াসমূহক প্ৰধানতঃ দুটা ধৰণে দেখুৱাব পাৰি—

- ➢ মৌলিক বিশেষণ শব্দ
- ➢ সাধিত বিশেষণ শব্দ

২.১ মৌলিক বিশেষণ শব্দ ঃ

টাই-আহোম ভাষাৰ প্ৰায়বোৰ বিশেষণ শব্দই এক ৰূপবিশিষ্ট। তলত এনে কিছু বিশেষণ শব্দৰ উদাহৰণ দাঙি ধৰা হ'ল—

টাই-আহোম	**অসমীয়া**
তাম	চাপৰ
	(সাঁ. দি. বু. পু. ফ. নং.১০)
চা	বেয়া
	(গো. চ. ব. দে. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৮)
দিঃ	ভাল
	(ৰু. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ২৩)
নঙ	সৰু
	(গো. চ. ব. দে. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৩)
বান	মিঠা
	(ৰু. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৩৫)
ছা	সুস্থ
	(ৰু. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ২৯)
না	ডাঠ
	(ৰু. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৪২)
খেঙ	টান
	(ৰু. দি. বু. সাঁ. পুথি, পৃ. নং. ৬২)
পিঃ	শকত
	(গো. চ. ব. দে. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৩)
থিঃ	ঘন
	(গো. চ. ব. দে. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৪)
চা	বেজাৰ
	(ৰু. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৫৭)
কে	বৃদ্ধা
	(ৰু. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৭০)

ছে	ক্ষীণ
ফাই	চোকা

(সাঁ. দি. বু. পু. ফ. নং. ৮৯)

তাউ	তল

(গো. চ. ব. দে. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৯)

নাউ	ভিতৰ

(গো. চ. ব. দে. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৭)

নুঙ	বাহিৰ

মৌলিক বিশেষণৰ প্ৰয়োগ ঃ

১। লাক নিঃ মৌঙ কাউ চাম চাঙ মৌঙ হেত চে তিঃ **তাম** দই।
'লাক নী মৌঙ কাউ বছৰত **চাপৰ** পাহৰত নগৰ পাতিলে।'

(সাঁ. দি. বু. পু. ফ. নং. ১০)

২। লুক বান **দিঃ** খৌন ৰৌন।
'**ভাল** দিন বাৰ এটা চাই শিঙৰী ঘৰত উঠিলে।'

(ৰু. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ২৩)

৩। লুক মান ফুঃ **নই** হেত খুন জাউ। '
তেওঁৰ **সৰু** সন্তানজন ৰজা হ'ল।'

(গো. চ. ব. দে. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৩)

৪। মৌঙ **তাউ** পাই মিঃ কিএঃ খাউ খা।
'**তলৰ** দেশত কৰ দিয়া ৰজা নাছিল।'

(গো. চ. ব. দে. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৯)

২.২ সাধিত বিশেষণ শব্দ ঃ

টাই-আহোম ভাষাত সাধিত বিশেষণ শব্দবোৰ প্ৰায়বোৰেই দুই ৰূপবিশিষ্ট অৱশ্যে কিছুমান বিশেষণ শব্দ গঠনত চাৰিটা পৰ্যন্ত মৌলিক শব্দ ব্যৱহাৰ পোৱা যায়। আনহাতে এনে সাধিত শব্দবোৰ গঠন অনুসৰি দুটা ভাগত ভাগ কৰিব পৰি। তলত এনে শব্দসমূহ উদাহৰণসহ দাঙি ধৰা হ'ল—

- দুটা বা ততোধিক মুক্ত ৰূপৰ সংযোগত সাধিত বিশেষণ
- অভ্যাস বা পুনৰুক্তিৰ দ্বাৰা সাধিত বিশেষণ

২.২.১ দুটা বা ততোধিক মুক্ত ৰূপৰ সংযোগত সাধিত বিশেষণ ঃ

টাই-আহোম ভাষাৰ অন্যান্য সাধিত শব্দবোৰৰ দৰে বিশেষণ শব্দবোৰতো সুকীয়া অৰ্থপূৰ্ণ দুটাৰ পৰা চাৰিটা পৰ্যন্ত মৌলিক শব্দৰ সংযোগ ঘটা পৰিলক্ষিত হয়। তলত টাই-আহোম ভাষাৰ বিভিন্ন সাধিত শব্দসমূহক উদাহৰণসহ দাঙি ধৰা হ'ল—

দুই ৰূপবিশিষ্ট বিশেষণ শব্দঃ

(ক) বিশেষ্য বিশেষণ ঃ

মুক্তৰূপ	**মুক্তৰূপ**	**সাধিত বিশেষণ**
কঙ 'বন্দুক' +	লুঙ 'ডাঙৰ' =	কঙ লুঙ 'বৰ হিলৈ'

(ৰূ. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং.১৯)

কঙ 'বন্দুক' +	নই 'সৰু' =	কঙ নই 'সৰু হিলৈ'

(ৰূ. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং.১৯)

(খ) বিশেষণীয় বিশেষণ ঃ

মুক্তৰূপ	**মুক্তৰূপ**	**সাধিত বিশেষণ**
খৌঞ 'বৰ' +	ফাই 'চোকা' =	খৌঞ ফাই 'মেধাৱী'
খৌঞ 'বৰ' +	ৰা 'ৰোগ' =	খৌঞ ৰা 'ৰুগীয়া'

(ৰূ. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং.২৮)

(গ) সৰ্বনামবাচক ক্ৰিয়া বিশেষণ ঃ

স্থানবাচক ক্ৰিয়া বিশেষণ ঃ

মুক্তৰূপ	**মুক্তৰূপ**	**সাধিত বিশেষণ**
তিঃ 'স্থান' +	নান 'সেই' =	তিঃ নান 'তাত'

(সাঁ. দি. বু. পু. ফ. নং. ৯০)

তিঃ 'স্থান' +	কাই 'দূৰ' =	তিঃ কাই 'দূৰত'
পা 'তলি' +	খা 'সোঁ দিশ' =	পা খা 'সোঁফাল'

(গো. চ. ব. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৬০)

পা 'তলি' +	ছা 'বাওঁ দিশ' =	পা ছা 'বাওঁফাল'

(গো. চ. ব. দে. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৬০)

(ঘ) পৰিমাণবাচক ক্ৰিয়া বিশেষণ ঃ

মুক্তৰূপ	**মুক্তৰূপ**	**সাধিত বিশেষণ**
নাম 'অনেক' +	নাম 'অনেক' =	নাম নাম 'অসংখ্য'

(চ. কোঁ. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৪৩)

উল্লিখিত দুই ৰূপবিশিষ্ট টাই-আহোম ভাষাৰ বিশেষণ শব্দবোৰৰ উপৰিও তিনিৰ পৰা চাৰি ৰূপ বিশিষ্ট সাধিত বিশেষণ শব্দৰ ব্যৱহাৰো টাই-আহোম ভাষাত পোৱা যায়। তলত এনে বিশেষণ শব্দৰ উদাহৰণ দাঙি ধৰা হ'ল—

তিনি ৰূপবিশিষ্ট বিশেষণ শব্দ ঃ

মুক্তৰূপ	**মুক্তৰূপ**	**মুক্তৰূপ**	**সাধিত বিশেষণ**
ফা 'ভাগ' +	খুঙ 'সমান ভাগ' +	কাঙ 'মাজ' =	ফা খুঙ কাঙ 'আধা'

চাৰি ৰূপবিশিষ্ট বিশেষণ শব্দ ঃ

মুক্তৰূপ মুক্তৰূপ মুক্তৰূপ মুক্তৰূপ সাধিত বিশেষণ

কু 'প্ৰত্যেক' + মৌউ 'সময়'+কু 'প্ৰত্যেক'+বান 'দিন'= কু মৌউ কু বান 'সদায়'

(ৰু. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ১২)

২.২.২ অভ্যাস বা পুনৰুক্তিৰ দ্বাৰা সাধিত বিশেষণ ঃ

টাই-আহোম ভাষাৰ বিশেষণ শব্দবোৰ অভ্যাস বা পুনৰুক্তিৰ জৰিয়তে গঠন হোৱা দেখা যায়। অৱশ্যে এনে বিশেষণ শব্দ অতি কম পৰিমাণে ব্যৱহাৰ হয়। তলত এনে শব্দসমূহৰ উদাহৰণ দাঙি ধৰা হ'ল—

পুনৰুক্তিৰ দ্বাৰা সাধিত বিশেষণ ঃ

দিঃ 'ভাল' + দিঃ 'ভাল'' = দিঃ দিঃ 'ভালকৈ'

(সাঁ. দি. বু. পু. ফ. নং. ১২৬)

ঙাম 'ধুনীয়া' +ঙাম 'ধুনীয়া' = ঙাম ঙাম 'সুন্দৰ'

লই 'ধীৰে ''+ লই 'ধীৰে ' = লই লই 'ধীৰে-ধীৰে'

(ৰু. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ২১)

সাধিত বিশেষণৰ প্ৰয়োগ ঃ

১. চে **লুঙ** পাই জু লুক তিঃ চে বিঃ ছু নাথ।

'**বৰ** নগৰৰ পৰা বিশ্বনাথত গৈ থাকিলে।'

(ৰু. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৫৩)

২. ফু কন **লুঙ** হাউ থৌক চাঙ।

'**বৰ**ফুকনে মতা হাতী দিলে।'

(ৰু. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৩৩)

৩. ফু কন **লুঙ** হাউ চাঙ তু মে।

'**বৰ**ফুকনে মাইকী হাতী দিলে।'

(ৰু. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৩৩)

৪. হাউ **খাই ফৌক** তাঙ ফা নৌউ ৰৌউ।

'উপৰিপুৰুষলৈ **বগা** ম'হ দিলে।'

(সাঁ. দি. বু. পু. ফ. নং. ১৮৯)

৫. হাউ **পিত ফৌক** তাঙ ফা নৌউ ৰৌউ।

'উপৰিপুৰুষলৈ **বগা** হাঁহ দিলে।'

(সাঁ. দি. বু. পু. ফ. নং. ১৮৯)

৬. হাউ **কাই ফৌক** তাঙ ফা নৌউ ৰৌউ।

'উপৰিপুৰুষলৈ **বগা** কুকুৰা দিলে।'

(সাঁ. দি. বু. পু. ফ. নং. ১৮৯)

৭. তিঃ নাঙ **অন** খ ৰিপ ছিঃ হাউ।

'**সৰু** কুঁৱৰীৰ দিঙি চেপি দিলে।'

(সাঁ. দি. বু. পু. ফ. নং. ১১৯)

৮. তিঃ নাঙ **লুঙ** খ ৰিপ ছিঃ হাউ।

ডাঙৰ কুঁৱৰীৰ দিঙি চেপি দিলে।

(সাঁ. দি. বু. পু. ফ. নং. ১১৯)

৯. হেত মুন হেত খীন **নাঙ নাই** ।

'**এইদৰে** আনন্দ- ফূৰ্তি কৰিলে।'

(ৰু. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৩৬)

১০. মৌঙ পাই **পা খা**।

দেশৰ **সোঁফালে** গ'ল।

(গো. চ. ব. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৬০)

১১. মৌঙ পাই **পা ছা**।

দেশৰ **বাওঁফালে** গ'ল।

(গো. চ. ব. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৬০)

১২. ছিউ হাউ কুন ক **নাম নাম** ক জু তিঃ লা মৌঙ।

'দক্ষিণ পাৰে ধৰিবলৈ **অসংখ্য** মানুহ থাকিল।'

(চ. কোঁ. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৪৩)

১৩. ছিউ হাউ কুন ক **নাম নাম** ক জু তিঃ ৰু মৌঙ।

'উত্তৰ পাৰে ধৰিবলৈ অসংখ্য মানুহ থাকিল।'

(চ. কোঁ. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ৪৩)

১৪. **কু মৌউ কু বান** ছুঙ ছিঃ হাউ তিঃ কিন।

'**প্ৰতিদিনে** চাৰি সাঁজকৈ খাবলৈ যোগাৰ দিছিল'

(ৰু. দি. বু. সাঁ. পু. পৃ. নং. ১২)

১৫. হাউ ফা কিন **দিঃ দিঃ** জাউ।

'ৰজাই **ভালকৈ** খাবলৈ দিলে।'

(সাঁ. দি. বু. পু. ফ. নং. ১২৬)

৩.০ বিশেষণৰ তুলনা ঃ

যি কোনো ভাষাত বিভিন্ন বিশেষ্য বা নামবাচক শব্দৰ গুণৰ ৰিজনি দিয়াকে বিশেষণৰ তুলনা বুলি কোৱা হয়। টাই-আহোম ভাষাৰ সাঁচিপতীয়া বুৰঞ্জী পুথিত এনে বিশেষণৰ তুলনা বুজোৱা শব্দৰ ব্যৱহাৰ পোৱা নাযায়। অৱশ্যে বৰ্তমান সময়ত ব্যৱহৃত হৈ থকা টাই-আহোম ভাষাৰ বিভিন্ন পুথিসমূহত এনে শব্দৰ ব্যৱহাৰ দেখা যায়। সাধাৰণতে টাই-আহোম ভাষাত বিশেষণৰ তুলনা দিবৰ বাবে হাঙ 'যদি'

খাঁএঃ 'বৰ' আৰু লুক বা ছে '-তকৈ' আদি সহায়ক শব্দ ব্যৱহাৰ কৰা হয়। ইয়াৰে হাঙ 'যদি' আৰু খাঁএঃ 'বৰ' সহায়ক শব্দ বিশেষণীয় শব্দৰ আগত আৰু লুক বা ছে '-তকৈ' বিশেষণীয় শব্দৰ পাছত ব্যৱহাৰ কৰা হয়।

৪.০ সামৰণি ঃ

ভাষাৰ শব্দৰ গঠন সম্পৰ্কীয় প্ৰায়বোৰ আলোচনাতে বিশেষ্যৰ সমানে বিশেষণ শব্দবোৰকো গুৰুত্ব প্ৰদান কৰা হয়। সাধাৰণতে নাম শব্দৰ দোষ-গুণ, অৱস্থা, পৰিমাণ আদিক বিশেষভাৱে বুজোৱা শব্দবোৰক বিশেষণ শব্দ বুলি কোৱা হয়। টাই-আহোম ভাষাত বিশেষণ শব্দৰ তিনিটা প্ৰকাৰৰ পোৱা যায়। গঠনৰ ক্ষেত্ৰত মৌলিক আৰু সাধিত ৰূপত গঠন হয়। অৱশ্যে এই প্ৰকাৰসমূহৰ ভিতৰত বিশেষ্যৰ বিশেষণৰ শব্দৰ সংখ্যাই বেছি। একেদৰে গঠনৰ ক্ষেত্ৰতো মৌলিকৰ আৰু সাধিত দুয়োটা প্ৰক্ৰিয়াই দেখা যায় যদিও মৌলিক বিশেষণৰ পৰিমাণ বেছি।

তলত এই অধ্যয়নৰ অন্তত লাভ কৰা সিদ্ধান্তসমূহ দাঙি ধৰা হ'ল—

সিদ্ধান্ত ঃ

- টাই-আহোম ভাষাত বিশেষণ শব্দৰ তিনিটা প্ৰকাৰ দেখিবলৈ পোৱা যায়। যেনে—বিশেষ্যৰ বিশেষণ, বিশেষণীয় বিশেষণ, ক্ৰিয়া বিশেষণ।
- টাই-আহোম ভাষাত বিশেষণীয় বিশেষণ বুজাবৰ বাবে বিশেষভাৱে খাঁএঃ 'বৰ' সহায়ক শব্দ ব্যৱহাৰ কৰা হয়।
- টাই-আহোম ভাষাত ক্ৰিয়া-বিশেষণ শব্দৰ দুটা ভাগ পোৱা যায়। যেনে— স্থানবাচক ক্ৰিয়া বিশেষণ আৰু পৰিমাণবাচক ক্ৰিয়া বিশেষণ।
- টাই-আহোম ভাষাৰ স্থানবাচক আৰু পৰিমাণবাচক ক্ৰিয়া-বিশেষণ বুজাবৰ বাবে সু-নিৰ্দিষ্ট বিশেষ্য শব্দ ব্যৱহাৰ কৰা হয়।
- টাই-আহোম ভাষাৰ বিশেষণ শব্দবোৰ মৌলিক আৰু সাধিত ৰূপত গঠন হয়। আনহাতে সাধিত ক্ৰিয়া বিশেষণ শব্দক আকৌ দুটা ভাগ কৰিব পাৰি। যেনে— (ক) দুটা বা ততোধিক মুক্ত ৰূপৰ সংযোগত সাধিত বিশেষণ শব্দ (খ) অভ্যাস বা পুনৰুক্তিৰ দ্বাৰা সাধিত বিশেষণ শব্দ।
- টাই-আহোম ভাষাত এক অক্ষৰৰ পৰা চাৰি অক্ষৰ বিশিষ্ট শব্দ পোৱা যায়। অৱশ্যে এনে বিশেষণ শব্দ আহোম ভাষাত একেবাৰে সীমিত বুলি ক'ব পাৰি।
- টাই-আহোম ভাষাত সাধিত বিশেষণ শব্দৰ অনুপাতে অভ্যাস বা পুনৰুক্তিৰ দ্বাৰা গঠন হোৱা বিশেষণৰ পৰিমাণ কম। ❑

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

মুদ্ৰিত সাঁচিপতীয় বুৰঞ্জী পুথি ঃ

কোঁৱৰ, চ্যাও চন্দ্ৰ. *তাই-আহোম বুৰঞ্জী.* ধেমাজি ঃ চ্যাও চন্দ্ৰ কোঁৱৰ প্ৰকাশক, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০১৫

ফুকন, জ্ঞানানন্দ. *আহোম বুৰঞ্জী.* পূৰ্বাঞ্চল সাহিত্য সভা, প্ৰথম প্ৰকাশ, ফেব্ৰুৱাৰি, ২০১৫

মহন, বিনন্দ. *চাও-ফা-খাও-প'- লক্-ছী-খুঙ্-ফা.* মৰাণহাট ঃ টাই-অধ্যয়ন আৰু গৱেষণা প্ৰতিষ্ঠান, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০০৯

Barua, Rai Sahib Gulap Chandra. *Ahom Buranji*. Spectrum Publication, Pan Bazar : Guwahati, 1985

বুৰঞ্জী গ্ৰন্থ ঃ

অসমীয়া

গোস্বামী, হেমচন্দ্ৰ (সম্পা.). *পুৰণি অসম-বুৰঞ্জী*, গুৱাহাটী ঃ লয়াৰ্ছ বুক ষ্টল পাণবজাৰ দ্বিতীয় প্ৰকাশ,১৯৯৭

ছেঙ্ লুঙ্, বিমল. *দেও বুৰঞ্জী. বান-অক-পাপ-লিক-মৌঙ-টাই*, প্ৰথম প্ৰকাশ

ভূঞা, সূৰ্য্যকুমাৰ. *সাতসৰী অসম বুৰঞ্জী.* গুৱাহাটী ঃ বাণী মন্দিৰ, দ্বিতীয় প্ৰকাশ, ২০১৪

অন্যান্য গ্ৰন্থ ঃ

গগৈ, পুষ্প আৰু বগেন গগৈ (সম্পা). *তাই সংস্কৃতি.* ধেমাজি ঃ পূৰ্বাঞ্চল তাই সাহিত্য সভা, প্ৰথম প্ৰকাশ, ১৯৮৯

গোহাঁই, আইম্যাখেং. *টাই ভাষাৰ প্ৰাথমিক পাঠ ব্যাকৰণেৰে সৈতে.* ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয় ঃ অসমীয়া বিভাগ, দ্বিতীয় প্ৰকাশ,অক্টোবৰ, ১৯৯৭

গোহাঁই, ভি পেথৌন আৰু আমছন গোহাঁই . *টাই ভাষাৰ কথোপকথন (প্ৰাথমিক পাঠ).* ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয় ঃ ভাষা অধ্যয়ন কেন্দ্ৰ, প্ৰথম প্ৰকাশ, ছেপ্টেম্বৰ, ২০১১

বৰুৱা, ভীমকান্ত. *টাই ভাষা আৰু সংস্কৃতি.* গুৱাহাটী ঃ অশোক বুক ষ্টল, প্ৰথম প্ৰকাশ, ছেপ্টেম্বৰ, ২০১৩

বৰুৱা, ঘনকান্ত. *আহোম প্ৰাইমাৰ.* গুৱাহাটী ঃ বুৰঞ্জী আৰু পুৰাতত্ত্ব বিভাগ, ১৯৮৭

Gogoi, Padmeswar. *The Tai and the Tai Kingdoms*. Guwahati University : Dept.of Publication, 1968

Diller, Anthony, V. N Jerold A.Edmondson and Yongxian Luo.*The Tai-Kadai Language*. Routledgegs, First Publishse, 2008

Benedict, P.K. *Sino-Tibettan A Conspectus.* Cambridge : University press, 1972

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

অসমৰ কন্যাক নগাসকলৰ ঋতুকালীন উৎসৱ

ড° বনিতা বুঢ়াগোহাঁই

অংশকালীন অধ্যাপিকা
শিৱসাগৰ ছোৱালী ক'লেজ
শিৱসাগৰ, অসম- ৭৮৫৬৪০
৯৫৭৭১১৯৩৪৯
buragohain.bonita@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

অসমত স্বকীয় সাংস্কৃতিক বৈশিষ্ট্যৰে কন্যাক নগাসকলে বসবাস কৰি আছে। তেওঁলোকে আওলিং, ঔনী আৰু পামৌঃ নামৰ তিনিটা ঋতুকালীন উৎসৱ পালন কৰে। এই তিনিটা উৎসৱ কৃষিকৰ্মৰ লগত জড়িত কন্যাকসকলৰ এই উৎসৱ তিনিটাৰ মাজত অতীতৰ পৰা প্ৰচলিত পৰম্পৰা আৰু ৰীতি-নীতিৰ লগতে জনগোষ্ঠীটোৰ সামাজিক জীৱনৰ ছবি এখন প্ৰতিফলিত হয়। গৱেষণা পত্ৰখনত কন্যাকসকলে পালন কৰা ঋতুকালীন উৎসৱ সমূহৰ লগত জড়িত ৰীতি-নীতিৰ লগতে সমাজত এই উৎসৱসমূহৰ গুৰুত্ব সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হৈছে। লগতে বৰ্তমান সময়ত উৎসৱসমূহ পালনৰ ক্ষেত্ৰত অহা পৰিৱৰ্তন সম্পৰ্কেও অধ্যয়ন কৰা হৈছে। ক্ষেত্ৰ অধ্যয়নত পোৱা সমলৰ ভিত্তিত বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰে বিষয়টো আলোচনা কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ

কন্যাক, নগা, পৰম্পৰা, উৎসৱ, পৰিৱৰ্তন

০.০১ অৱতৰণিকা

ভাৰতবৰ্ষৰ উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চল বিভিন্ন জাতি-জনগোষ্ঠীৰ বসতি অঞ্চল। এই উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলৰে নগালেণ্ড ৰাজ্যখন হ'ল নগা জনগোষ্ঠীৰ প্ৰধান বাসভূমি। নগালেণ্ড ৰাজ্যৰ লগতে অৰুণাচল প্ৰদেশ, মণিপুৰ আৰু অসমত নগা জনগোষ্ঠীৰ কিছুসংখ্যক লোকে বসবাস কৰি আছে। কন্যাক নগাসকল হ'ল নগালেণ্ডত বসবাস কৰি থকা নগা জনগোষ্ঠীসমূহৰ ভিতৰত এক অন্যতম জনগোষ্ঠী। বৰ্তমান তেওঁলোকে প্ৰধানকৈ নগালেণ্ডৰ মন জিলাত বসবাস কৰি আছে। কন্যাক নগাসকলে স্বকীয় উৎসৱ-অনুষ্ঠান পালন কৰে। তেওঁলোকে পৰম্পৰাগতভাৱে পালন কৰি অহা উৎসৱ-অনুষ্ঠানৰ মাজত স্বকীয় সংস্কৃতিৰ বিভিন্ন দিশ জড়িত হৈ আছে।

০.০২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য

"অসমৰ কন্যাক নগাসকলৰ ঋতুকালীন উৎসৱ" - শীৰ্ষক বিষয়টো অধ্যয়ন কৰাৰ উদ্দেশ্য হ'ল -

- অসমৰ কন্যাক নগাসকলে পালন কৰা ঋতুকালীন উৎসৱসমূহ পালন কৰাৰ উদ্দেশ্য সম্পৰ্কে অধ্যয়ন কৰা।
- উৎসৱসমূহৰ পালনৰ জৰিয়তে জনগোষ্ঠীটোৱে পৰম্পৰাগত সাংস্কৃতিক

বৈচিত্র্যক কেনেদৰে জীয়াই ৰাখিছে, সেই সম্পৰ্কে অধ্যয়ন কৰা।

- বৰ্তমান সময়ত কন্যাক নগাসকলৰ ঋতুকালীন উৎসৱসমূহলৈ অহা পৰিৱৰ্তন আৰু সমাজত উৎসৱ সমূহৰ গুৰুত্ব সম্পৰ্কে অধ্যয়ন কৰা।

০.০৩ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি

"অসমৰ কন্যাক নগাসকলৰ ঋতুকালীন উৎসৱ" - শীৰ্ষক বিষয়টো বিশ্লেষণাত্মক আৰু বৰ্ণনামূলক পদ্ধতিৰ সহায়ত আলোচনা কৰা হৈছে। বিষয়টো অধ্যয়নৰ মুখ্য উৎস হ'ল ক্ষেত্ৰ অধ্যয়ন। ক্ষেত্ৰ অধ্যয়নৰ যোগেদি তথ্য আহৰণ কৰোতে পৰ্যবেক্ষণ আৰু সাক্ষাৎকাৰ পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে। অসমত কন্যাক নগাসকলে শিৱসাগৰ জিলাৰ তিনিখন গাঁৱত বসবাস কৰি আছে। এই গাঁও তিনিখন হ'ল -

- হাঁহচৰা নগাগাঁও
- মনাইটিং নগাগাঁও
- নামঠাই নগাগাঁও

উক্ত তিনিখন গাঁৱক ক্ষেত্ৰ অধ্যয়নৰ স্থান হিচাপে লোৱা হৈছে আৰু পৰ্যবেক্ষণ তথা সাক্ষাৎকাৰৰ যোগেদি সমল সংগ্ৰহ কৰা হৈছে। গৌণ উৎস হিচাপে বিষয়ৰ লগত সংগতি থকা বিভিন্ন পুথি আৰু আলোচকৰ লেখাৰ সহায় লোৱা হৈছে।

১.০০ অসমৰ কন্যাক নগাসকলৰ পৰিচয় ঃ

কন্যাকসকল প্ৰধানকৈ নগালেণ্ডৰ মন জিলাৰ লগতে টুৱেনচাং জিলাত বসবাস কৰি আছে। বৰ্তমান অসমৰ শিৱসাগৰ জিলাৰ তিনিখন গাঁৱত কন্যাকসকলে বসবাস কৰি আছে। অসমলৈ কন্যাকসকল কেতিয়া আৰু কেনেকৈ আহিছিল, এই সম্পৰ্কে কোনো লিখিত তথ্য পোৱা নাযায়। তেওঁলোকৰ মাজত পূৰ্বপুৰুষসকলৰ সময়ৰ পৰা মুখে মুখে প্ৰচলিত কথাহে প্ৰচলন হৈ আছে। তিনিওখন গাঁৱতে ক্ষেত্ৰ অধ্যয়ন কৰি পোৱা তথ্যৰ আধাৰত ক'ব পাৰি যে, অসমলৈ কন্যাকসকলে ১৮০০ শতিকাৰ মাজভাগত অতীতৰ নৰমুণ্ড চিকাৰ কৰা প্ৰথাৰ পৰা ৰক্ষা পোৱা আৰু অৰ্থনৈতিক কাৰণত অসমলৈ প্ৰব্ৰজন কৰিছিল।

কন্যাকসকল মংগোলীয় প্ৰজাতিৰ অন্তৰ্গত। তেওঁলোকৰ মাজত কেইবাটাও ফৈদ আছে। অসমত বসবাস কৰা কন্যাকসকল টিং, টিংফই, ৱাংহো আৰু লুক - এই চাৰিটা ফৈদত বিভক্ত।[১] ভাষাগতভাৱে কন্যাকসকল তিব্বত-বৰ্মী ভাষা পৰিয়ালৰ অন্তৰ্গত। তেওঁলোকৰ নিজা লিপি নাই বাবে লিখিবৰ বাবে ৰোমান লিপি ব্যৱহাৰ কৰে। অসমৰ কন্যাকসকলে অসমীয়া ভাষাৰ লগতে নিজা দোৱান ব্যৱহাৰ কৰে। তেওঁলোকে লংকাই আৰু ৱাক্‌চিং নামৰ দুটা দোৱানত নিজৰ মানুহখিনিৰ লগত ভাৱ বিনিময় কৰে।[২] কন্যাকসকলে মূলতঃ পৰম্পৰাগত ধৰ্ম পালন কৰে। তেওঁলোকৰ উপাস্য দেৱতা হ'ল কাৱাং। এই কাৱাং হ'ল আকাশৰ দেৱতা।[৩] বৰ্তমান অসমৰ আধাসংখ্যক কন্যাকলোকে কাল সংহতিৰ অন্তৰ্গত শিৱসাগৰ জিলাৰ হাঁহচৰাত অৱস্থিত মৈৰামৰা সত্ৰৰ শৰণ গ্ৰহণ কৰিছে। অৱশ্যে তেওঁলোকে নিজৰ পৰম্পৰাগত ধৰ্মক এৰি দিয়া নাই। তেওঁলোকৰ প্ৰত্যেকৰে ঘৰত লাইখুঁটা আছে। এই লাইখুঁটাক তেওঁলোকে ইষ্টদেৱতাক 'কাৱাং'ক উপাসনা কৰে। আন আধাসংখ্যক কন্যাকলোকে খ্ৰীষ্টান ধৰ্ম গ্ৰহণ কৰিছে আৰু তেওঁলোকে গীৰ্জাঘৰত ইষ্টদেৱতাক উপাসনা কৰে।

অসমৰ শিৱসাগৰ জিলাত কন্যাকসকলে বসবাস কৰি থকা হাঁহচৰা নগাগাঁওখন শিৱসাগৰ নগৰৰ পৰা পূব দিশত বাৰ কি.মি. দূৰত্বত অৱস্থিত। গাঁওখন শিৱসাগৰ মহকুমাৰ হাঁহচৰা মৌজাৰ অন্তৰ্গত। এই গাঁওখনত বসবাস কৰি থকা কন্যাকসকলে পৰম্পৰাগত ধৰ্ম পালন কৰি অহাৰ লগতে নৱবৈষ্ণৱ ধৰ্মও পালন কৰে। মৰংঘৰ হৈছে তেওঁলোকৰ ধৰ্মীয় উপাসনা গৃহ। কন্যাকসকলে অসমত বসবাস কৰি থকা মনাইটিং গাঁওখন নাজিৰা মহকুমাৰ গেলেকী অঞ্চলত অৱস্থিত। এই গাঁওখনৰ বাসিন্দাসকল খ্ৰীষ্টানধৰ্মী। সেইদৰে নামথাই গাঁওখনৰ বাসিন্দাসকলো খ্ৰীষ্টানধৰ্মী। এই গাঁওখন বৰ্তমান চৰাইদেউ জিলাত অৱস্থিত। গাঁওখন অসম আৰু নগালেণ্ড ৰাজ্যৰ সীমান্তৱৰ্তী অঞ্চলত অৱস্থিত। এই তিনিখন গাঁৱত প্ৰায় তিনিহাজাৰমান কন্যাকলোকে বসবাস কৰি আছে।

কন্যাকসকলৰ সমাজ-সংস্কৃতিৰ প্ৰাণকেন্দ্ৰ হ'ল মৰংঘৰ। তেওঁলোকে মৰংঘৰক 'পাম' বুলি কয়। এই মৰংঘৰ এফালে তেওঁলোকৰ ধৰ্মীয় উপাসনা গৃহ আৰু আনফালে ডেকাচাং। উল্লেখযোগ্য যে কন্যাকসকলৰ সমাজত মৰংঘৰৰ ভিতৰত নাৰীৰ প্ৰৱেশ নিষিদ্ধ। কন্যাকসকলৰ সমাজ-সংস্কৃতিৰ লগত মৰংঘৰ ওতঃপ্ৰোতভাৱে জড়িত হৈ আছে।

২.০০ কন্যাক নগাসকলৰ উৎসৱ ঃ

লোক-সংস্কৃতিৰ এক অংগ হৈছে উৎসৱ-অনুষ্ঠান। প্ৰকৃতিৰ পৰিৱৰ্তন, কৃষিভূমি, গ্ৰাম্যজীৱনৰ আনন্দ, ধৰ্ম, মানৱ-জীৱনৰ পৰিৱৰ্তিত ঘটনাক্ৰম আদি প্ৰক্ৰিয়াৰ ভিত্তিত উৎসৱ-অনুষ্ঠানসমূহে জন্ম আৰু বিকাশ লাভ কৰিছে। লোক সংস্কৃতিবিদ Robert Jerome Smith য়ে উৎসৱ-অনুষ্ঠান সম্পৰ্কে কৈছে —

"These recurring moments of special significance, with the celebration that fill them, are called festivals."

উক্ত কথাষাৰৰ আলমত লোক সংস্কৃতিবিদ নবীন চন্দ্ৰ শৰ্মাই উৎসৱ-অনুষ্ঠানৰ বিষয়ে কৈছে যে,

বিশেষ ধৰণৰ তাৎপৰ্য বিশিষ্ট সময়ত অনুষ্ঠিত অনুষ্ঠানৰ পৌনঃপুনিকতাই উৎসৱ।

উৎসৱ-অনুষ্ঠান সম্পৰ্কে লীলা গগৈয়ে মত প্ৰকাশ কৰিছে এনেদৰে —

উৎসৱৰ মূল উৎস আনন্দ। ব'হাগত পোৱাৰ আনন্দ, মাঘত পোৱাৰ, পাই সামৰাৰ আনন্দ। এই আনন্দ প্ৰকৃতিৰ আনন্দ, জীৱনক উপলব্ধি কৰাৰ আনন্দ।

উল্লিখিত মতৰ আধাৰত ক'ব পাৰি যে কৃষিকৰ্মৰে জীৱন-নিৰ্বাহ কৰা জনসমাজে ৰীতি-নীতি, পূজা-সেৱা, আচাৰ-ব্যৱহাৰ, গীত, নৃত্য, বাদ্য আদি মাধ্যমেৰে যিবিলাক অনুষ্ঠান পৰম্পৰাগতভাৱে পালন কৰে, সেইবিলাককে উৎসৱ-অনুষ্ঠান বোলে। উৎসৱ-অনুষ্ঠানসমূহে জনসাধাৰণৰ সমাজ জীৱনৰ ছবি প্ৰকাশ কৰে।

কন্যাক নগাসকলে পৰম্পৰাগতভাৱে নিজৰ উৎসৱসমূহ পালন কৰে। তেওঁলোকে পালন কৰা উৎসৱকেইটা হ'ল।

ঋতুকালীন উৎসৱ - আওলিং, ঔনী, পামৌ ঃ

ধৰ্মীয় উৎসৱ - ফ'য়াম (যাঠি পূজা), ৰাংগনৌ ৰাংছা (আইসকাম)

২.০১ ঋতুকালীন উৎসৱ ঃ

২.০১.০১ আওলিং

কন্যাক নগাসকলে আওলিং উৎসৱ বসন্ত ঋতুত পালন কৰে। এই উৎসৱৰ যোগেদি তেওঁলোকে নতুন বছৰক আদৰণি জনায়। তেওঁলোকে এই উৎসৱ আকাশত নতুন জোন ওলোৱাৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰি পালন কৰে। এই উৎসৱ তেওঁলোকে পাঁচদিনীয়াকৈ পালন কৰে। উৎসৱৰ প্ৰথম দিনা কন্যাকসকলে প্ৰতিটো বংশই একোটাকৈ গাহৰি মৰংঘৰত গোটেই ৰাতি বান্ধি থয়। সন্ধিয়া ডেকাসকলে মৰংঘৰত টুখুং বজায়। দ্বিতীয় দিনা প্ৰতিটো বংশই আগদিনা বান্ধি থোৱা গাহৰিটো মৰংঘৰৰ পৰা বংশৰ এঘৰলৈ লৈ গৈ ইষ্টদেৱতালৈ উচৰ্গা কৰি ভোজ খায়। উৎসৱৰ তৃতীয় দিনা প্ৰত্যেকৰে ঘৰতে বংশ পূজা কৰে আৰু বংশভিত্তিক পুৰুষ আৰু নাৰীসকলে গোটেই গাঁওখনতে হুচৰি কৰে। ৰাতিপুৱাই প্ৰথমতে গাঁৱৰ বয়োজ্যেষ্ঠ পুৰুষসকলে মৰংঘৰত নৃত্য-গীত আৰম্ভ কৰে। গৃহস্থই পৰম্পৰাগত পানীয় 'যু' আৰু গাহৰিৰ মাংসৰে হুচৰি গোৱাসকলক আপ্যায়ন কৰে। সন্ধ্যা হোৱাৰ লগে লগে গাঁৱৰ ৰাইজ মৰংঘৰৰ সন্মুখত গোট খায়। গাঁৱৰ সকলোৱে পৰম্পৰাগত সাজপাৰ পৰিধান কৰি আহে আৰু পুৰুষসকলে মৰংঘৰৰ চোতালত নৃত্য কৰে। এই দিনটোত গাঁৱৰ সকলোৱে ৰাতি বাৰ বজাৰ পাছত বিহু উৰুৱাৰ পাছতহে ঘৰলৈ যায়। উৎসৱৰ পঞ্চম দিনা পুৰুষসকলে ৰাজহুৱাকৈ চিকাৰলৈ যায়। চিকাৰত যি জন্তুৰে পায় তাৰ মূৰটো কাটি লৈ আহে আৰু মৰংঘৰত টুংখুঙৰ তলত পুতি দিয়ে। সেইসময়ত টুংখুং বজাই পুৰুষসকলে নৃত্য কৰে। এই দিনটোৰ পাছৰ দিনা অৰ্থাৎ ষষ্ঠ দিনা কন্যাকসকলে ৰাজহুৱাকৈ পূজা কৰে। পূজা কৰাৰ সময়ছোৱাত গাঁৱৰ প্ৰৱেশ পথ দুটা বন্ধ কৰি দিয়ে। পথটোৰ দুয়োফালে ৰঙা কুকুৰাৰ পোৱালি আৰু ৰঙা কুকুৰাৰ কণী উচৰ্গা কৰি বছৰটোৰ ভাল-বেয়া সম্পৰ্কে মঙল চায়। পূজা কৰা সময়ছোৱাত নাৰী আৰু সৰু ল'ৰা-ছোৱালীক ঘৰৰ পৰা ওলাবলৈ দিয়া নহয়। পূজা কৰাৰ পাছত তেওঁলোকে গেনা পালন কৰে। সেইদিনা তেওঁলোকে গাঁৱৰ পৰা বাহিৰলৈ ওলাই নাযায় আৰু আনক বস্তু দান নকৰে। এই দিনটোতে আওলিং উৎসৱৰ সামৰণি হয়।

আওলিং উৎসৱৰ লগত কন্যাকসকলৰ পৰম্পৰাগত ৰীতি-নীতি, গীত, বাদ্য, নৃত্য জড়িত হৈ আছে। এই উৎসৱত কন্যাকসকলে দুদিন নৃত্য কৰে। পুৰুষসকলে কৰা নৃত্যক "ঐয়া চাইপ" আৰু মহিলাসকলে কৰা নৃত্যক 'ঐয়া এয়েবু' বুলি কয়। এই নৃত্যৰ লগত বিভিন্ন ধৰণৰ গীত-মাত জড়িত হৈ আছে। পুৰুষ আৰু নাৰীভেদে গীতসমূহৰ ভাৱ আৰু সুৰ ভিন্নধৰণৰ। গীতসমূহত

আওলিং উৎসৱক আদৰিবলৈ কৰা প্ৰস্তুতিৰ বতৰা, প্ৰকৃতিৰ বিভিন্ন চিত্ৰৰ লগতে কন্যাকসকলৰ অতীতৰ যুদ্ধপ্ৰিয় তথা চিকাৰী জীৱনক প্ৰকাশ কৰে। তলত পুৰুষে আওলিং উৎসৱত নৃত্য কৰোঁতে গোৱা এটা গীত নমুনা হিচাপে দিয়া হ'ল ঃ

অ' টেপৰে লুংখাই হামলুং তেংতাই যাক মিমৱা ঃ
চাজি পানলাম আওলিংহা ঃ
অসমীয়া ভাঙনি
আমি সকলোৱে বাঁহ-কাটি, কাঠি-কামি তৈয়াৰ কৰি
ঘৰ-দুৱাৰ সাজি লওঁ আহাঁ
আমাৰ অতিকৈ মৰমৰ আওলিং আহি আছে।[৭]

আওলিং উৎসৱৰ প্ৰধান বাদ্য হ'ল 'টুংখুং'। এই বাদ্যবিধ মৰংঘৰত থাকে। এই বাদ্যবিধক গছৰ ডাঙৰ কুন্দাৰ পৰা এখন ডাঙৰ নাও আকৃতিত তৈয়াৰ কৰা হৈছে। এই বাদ্যবিধক কাঠেৰে তৈয়াৰী ডম্বৰু আকৃতিৰ কাঠৰ টুকুৰাৰে পোন্ধৰ বিশজনমান যুৱকে খুন্দা মাৰি বিভিন্ন সুৰ আৰু লয়ত বজায়। পুৰুষসকলে আওলিং উৎসৱত ব্যৱহাৰ কৰা আন এবিধ বাদ্যযন্ত্ৰ হ'ল 'এঞাম'। এঞাম হৈছে কাঁহেৰে নিৰ্মাণ কৰা এখন বৰকাঁহৰ নিচিনা। এই বাদ্যবিধকো মৰংঘৰত ৰখা হয়। অৱশ্যে কন্যাক মহিলাসকলে নৃত্য কৰোঁতে বাদ্যযন্ত্ৰৰ ব্যৱহাৰ নকৰে। কন্যাকসকলে উৎসৱ-অনুষ্ঠানত পৰম্পৰাগত সাজপাৰ পৰিধান কৰে। কন্যাক পুৰুষে আওলিং উৎসৱত নৃত্য কৰোঁতে ফাক্ছু (চোলা), ঞিপাক (কান্ধত লোৱা বস্ত্ৰ), খেদ (কঁকালত পৰিধান কৰা ক'লা ৰঙৰ বস্ত্ৰ) পৰিধান কৰে। তেনেদৰে নাৰীসকলে ঞিঃহা (ক'লা ৰঙৰ মেখেলা) আৰু ঞিঃনাম (ৰঙা আৰু ক'লা ৰঙৰ চাদৰ) পৰিধান কৰে। কন্যাক পুৰুষ আৰু নাৰীসকলে পৰম্পৰাগত সাজপাৰৰ লগত বিভিন্ন ধৰণৰ অলংকাৰ পৰিধান কৰে। পুৰুষসকলে পৰিধান কৰা অলংকাৰসমূহ সৰু-ডাঙৰ মণি, বনৰীয়া গাহৰিৰ দাঁত, কড়ি ব্যৱহাৰ কৰি তৈয়াৰ কৰা হয়। নাৰীসকলে সৰু-সৰু কমলা বৰণৰ মণিয়ে অলংকাৰ তৈয়াৰ কৰি পৰিধান কৰে।

২.০১.০২ ঔনী ঃ

কন্যাসকলে এই উৎসৱ শৰৎকালত পালন কৰে। আওলিং উৎসৱৰ ছমাহৰ পাছত এই উৎসৱ পালন কৰা হয়। ঔনী উৎসৱ অমাৱস্যাৰ পাছত নতুনকৈ জোন ওলোৱাৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰি পালন কৰে। ভাদমাহৰ পূৰ্ণিমাৰ আৰু পূৰ্ণিমাৰ দিনা এই উৎসৱ পালন কৰা হয়। উৎসৱৰ প্ৰথম দিনা প্ৰতিটো ফৈদে এটাকৈ গাহৰি মৰংঘৰত গোটেই ৰাতিটো বান্ধি থয়। পুৰুষসকলে মৰং ঘৰত ইষ্টদেৱতালৈ ৰঙা কুকুৰা উচৰ্গা কৰে। দ্বিতীয় দিনা প্ৰতিটো ফৈদে পৰিয়ালৰ এঘৰত ভোজৰ যোগাৰ কৰে। তেওঁলোকে প্ৰত্যেক বছৰে পাল পাতি পৰিয়ালৰ এঘৰত ভোজ খায়। ৰাতিপুৱা মৰংঘৰৰ পৰাৰ প্ৰতিটো ফৈদে ভোজৰ আয়োজন কৰা ঘৰলৈ গাহৰি কেইটা লৈ আহে আৰু ভোজ খায় আনন্দ কৰে। এই উৎসৱ হ'ল গাঁৱৰ সকলোৱে কৃষিকৰ্মৰ অন্তত ভোজ-ভাত খাই স্ফূৰ্তি কৰা উৎসৱ। এই উৎসৱত নৃত্য-গীত গোৱা নহয়।

২.০১.০৩ পামৌ ঃ

কন্যাকসকলে এই উৎসৱ শীতকালত পালন কৰে। কৃষিকৰ্মৰ অন্তত দুদিনীয়াকৈ পামো ঃ উৎসৱ পালন কৰা হয়। এই উৎসৱো অমাৱস্যাৰ পাছত নতুন জোন ওলোৱাৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰে। মাঘ মাহৰ পূৰ্ণিমাৰ আগদিনা আৰু পূৰ্ণিমাৰ দিনা কন্যাকসকলে এই উৎসৱ পালন কৰে। প্ৰথম দিনা কন্যাক পুৰুষসকলে মৰংঘৰত এটা গাহৰি আৰু যুৱে ভোজ-ভাত খায়। দ্বিতীয়দিনা পুৰুষসকলে সমজুৱাকৈ চিকাৰ কৰিবলৈ যায়। চিকাৰ কৰি যি পায়, তাকে চিকাৰ কৰা স্থানতে ৰান্ধি খায়। চিকাৰ কৰা স্থানৰ পৰা সকলোৱে মৰংঘৰলৈ আহে আৰু টুখুং বজোৱাৰ পাছতহে ঘৰলৈ যায়। এই দিনটোত মহিলাসকলে লগলাগি ভোজ-ভাত খায়।

৩.০০ কন্যাক নগাসকলৰ সমাজত ঋতুকালীন উৎসৱৰ গুৰুত্ব ঃ

কন্যাকসকলে পালন কৰা ঋতুকালীন উৎসৱ তিনিটা কৃষিকৰ্মৰ লগত জড়িত। কন্যাকসকলে কৃষিকৰ্মৰ আৰম্ভ কৰাৰ আগতে আওলিং উৎসৱ পালন কৰে। কঠোৰ পৰিশ্ৰম কৰাৰ আগতে এই উৎসৱত সকলোৱে ভোজ-ভাত খাই নৃত্য-গীত কৰি স্ফূৰ্তি কৰি লয়। এই উৎসৱৰ লগত জড়িত হৈ থকা বংশভিত্তিক ভোজ খোৱা, হুচৰি গোৱা আৰু সমূহীয়া চিকাৰ কৰাৰ নিয়মে তেওঁলোকৰ সমাজত একতাৰ ভাৱ গঠন কৰাত সহায় কৰে। কন্যাকসকলে পথাৰত কঠিয়া ৰুই শেষ হোৱাৰ পাছত ঔনী উৎসৱ পালন কৰে। আওলিং উৎসৱ পালন কৰাৰ পাছত সকলোৱে কৃষিকৰ্মত ব্যস্ত হৈ পৰে। কঠোৰ পৰিশ্ৰম কৰাৰ পাছত ঔনী উৎসৱ পালন কৰাৰ জৰিয়তে

গাঁৱৰ ৰাইজ পুনৰ মৰংঘৰত একগোট হয়। তেনেদৰে কৃষিকৰ্মৰ শেষ হোৱাৰ পাছত পামৌঃ উৎসৱ পালন কৰি মৰংঘৰত একেলগে ভোজ খাই ৰং-ৰহইচ কৰে। উৎসৱ-অনুষ্ঠানসমূহে কৰ্মত ব্যস্ত হৈ থকা জনসাধাৰণক গতানুগতিক জীৱনৰ পৰা উলিয়াই আনি আমোদ-প্ৰমোদ দিয়াত সহায় কৰে। উৎসৱৰ লগত জড়িত হৈ থকা খোৱা-বোৱা, নৃত্য-গীত আদিয়ে জনসাধাৰণৰ মানসিক আৰু শাৰীৰিক অৱসাদ দূৰ কৰাত সহায় কৰে। কন্যাকসকলে পালন কৰা ঋতুকালীন উৎসৱসমূহে তেওঁলোকক নিজ কৰ্মত আগবাঢ়ি যাবলৈ উৎসাহিত কৰাৰ লগতে সামাজিক সংহতি ৰক্ষা কৰাতো সহায় কৰে। এই উৎসৱসমূহে কন্যাকসকলৰ সমাজত সাংস্কৃতিক পৰম্পৰা ৰক্ষা কৰাত সহায় কৰিছে।

৪.০০ কন্যাকসকলৰ ঋতুকালীন উৎসৱলৈ অহা পৰিৱৰ্তন ঃ

উৎসৱ-অনুষ্ঠানসমূহ এটা জাতি-জনগোষ্ঠীৰ পৰম্পৰাগত সংস্কৃতিৰ ধাৰক আৰু বাহক। এইসমূহে এটা জাতি-জনগোষ্ঠীৰ পৰম্পৰাগত ধ্যান-ধাৰণা, ধৰ্মীয় বিশ্বাস, মানসিক ৰুচি-অভিৰুচিক লোকমানসৰ আগত প্ৰকাশ কৰে। কিন্তু সংস্কৃতি গতিশীল হোৱা হেতুকে নানান কাৰণ আৰু কাৰকৰ প্ৰভাৱত সংস্কৃতিৰ অন্তৰ্গত বিভিন্ন দিশসমূহলৈ পৰিৱৰ্তন আহে। তেনেদৰে কন্যাকসকলে পৰম্পৰাগতভাৱে পালন কৰি অহা উৎসৱ-অনুষ্ঠানসমূহৰ মাজলৈও পৰিৱৰ্তন আহিছে। অসমত বসবাস কৰিবলৈ লোৱাৰ পাছত কন্যাকসকল অসমীয়া জনসাধাৰণৰ লগত বসবাস কৰিবলৈ লোৱাৰ পাছত তেওঁলোকৰ সমাজত অসমীয়া সংস্কৃতিৰ প্ৰভাৱ পৰিছে। আনহাতে অসমত বসবাস কৰা আধাসংখ্যক কন্যাক লোকে খ্ৰীষ্টান ধৰ্ম গ্ৰহণ কৰে। তেওঁলোকে পৰম্পৰাগত ৰীতি-নীতিক এৰি খ্ৰীষ্টান ধৰ্মৰ নীতি-নিয়মৰ প্ৰতিহে আগ্ৰহী হৈছে। এই দুয়োটা কাৰণতে কন্যাকসকলৰ উৎসৱসমূহলৈ পৰিৱৰ্তন আহিছে। খ্ৰীষ্টানধৰ্মী কন্যাকসকলে কেৱল আওলিং উৎসৱহে পালন কৰে। এই উৎসৱ পালন কৰাৰ ৰীতি-নীতি পৰম্পৰাগতধৰ্মী কন্যাকসকলতকৈ বেলেগ। তেওঁলোকৰ গাঁৱত মৰংঘৰ নাই; সেয়ে মৰংঘৰৰ লগত জড়িত উৎসৱসমূহ আৰু নীতি-নিয়মসমূহ তেওঁলোকৰ সমাজত নাইকিয়া হৈছে। কন্যাকসকলৰ ঋতুকালীন উৎসৱৰ লগত পৰম্পৰাগত নৃত্য, গীত, বাদ্য আৰু সাজপাৰ আদি বিভিন্ন দিশ জড়িত হৈ আছে। খ্ৰীষ্টানধৰ্মী কন্যাকসকলে স্বকীয় উৎসৱসমূহ পালন কৰিবলৈ এৰি দিয়াৰ ফলত উক্ত দিশসমূহ সমাজত পৰা হেৰাই গৈছে।

৫.০০ উপসংহাৰ ঃ

"অসমৰ কন্যাক নগাসকলৰ ঋতুকালীন উৎসৱ"। শীৰ্ষক বিষয়টো অধ্যয়ন কৰাৰ পাছত কেইটামান সিদ্ধান্তত উপনীত হ'ব পাৰি। সেইকেইটা হ'ল।

- কন্যাকসকলৰ ঋতুকালীন উৎসৱ তিনিটা। সেইকেইটা হ'ল - আওলিং, ঔনী আৰু পামৌঃ।
- তেওঁলোকে উক্ত উৎসৱকেইটা অমাৱস্যাৰ পাছত ন-জোন ওলোৱাৰ লগত নিৰ্ভৰ কৰি পালন কৰে।
- ঋতুকালীন উৎসৱকেইটাৰ লগত মৰংঘৰৰ সম্পৰ্ক আছে আৰু নাৰীতকৈ পুৰুষেহে উৎসৱত সক্ৰিয়ভাৱে অংশগ্ৰহণ কৰে।
- উৎসৱসমূহৰ লগত জড়িত বংশপুজ, সমূহীয়া ভোজ আৰু চিকাৰ কৰিবলৈ যোৱা নীতি-নিয়মে সাংস্কৃতিক পৰম্পৰা ৰক্ষা কৰাৰ লগতে সামাজিক একতা বৃদ্ধিতো সহায় কৰিছে।
- ঋতুকালীন উৎসৱসমূহ পালনৰ ক্ষেত্ৰত পৰম্পৰাগত ধৰ্মী কন্যাকসকলতকৈ খ্ৰীষ্টানধৰ্মী কন্যাকসকলৰ মাজত পৰিৱৰ্তনৰ প্ৰভাৱ বেছি।

এটা জাতিৰ সামাজিক পৰম্পৰাৰ ছবিখন প্ৰকাশ পায় উৎসৱ-অনুষ্ঠানৰ মাজত। ঋতুকালীন উৎসৱসমূহৰ যোগেদি কন্যাকসকলৰ সমাজত সাংস্কৃতিক পৰম্পৰা ৰক্ষা হোৱাৰ লগতে ঐক্য আৰু সম্প্ৰীতি বৃদ্ধি হোৱাত সহায়ক হৈছে। ❑

প্ৰসংগ সূত্ৰ ঃ

১. তথ্যদাতা - লেমৱাংকন্যাক, হাঁহচৰা নগাগাঁও
২. উল্লিখিত
৩. N. Saha, Kawang is also called sky-God, People of India, (ed.) Patkai Singh, P. 108
৪. Richard M. Dorson (ed.), *Folklore and Folklife-An Introduction*, p. 159
৫. নবীনচন্দ্ৰ শৰ্মা, *অসমীয়া লোক-সংস্কৃতিৰ আভাস,* পৃ. ৩১৭

৬. লীলা গগৈ, *অসমৰ সংস্কৃতি,* পৃ. ১৮৭
৭. তথ্যদাতা - চনজিং কন্যাক, হাঁহচৰা নগাগাঁও

গ্রন্থপঞ্জী ঃ

অসমীয়া

গগৈ, লীলা ঃ *অসমৰ সংস্কৃতি* ডিব্ৰুগড়, বনলতা অষ্টম প্রকাশ, ২০১১

গগৈ, লোকেশ্বৰ ঃ *অসমৰ লোকসংস্কৃতি* - ২ নগাঁও, ক্রান্তিকাল প্রথম প্রকাশ, ২০১১

শৰ্মা, নবীনচন্দ্র ঃ *অসমীয়া লোক-সংস্কৃতিৰ আভাস,* গুৱাহাটী, চন্দ্র প্রকাশ, পৰিবৰ্দ্ধিত আৰু পৰিশোধিত সংস্কৰণ, জানুৱাৰী, ২০১৩

ইংৰাজী

Bareh, H.M. (ed.) : *Encyclopedia of North-East India-Nagaland*, New Delhi, Mittal Publications, First Edition, 2001

Dorson, Richard M. (ed.) : *Folklore and Folk Life an Introduction,* Chicago and London, The University of Chicago, Press, Paperback edition, 1982

Kumar, B.B. : *Naga Identity*, New Delhi, Concept Publishing Company, First Published, 2001

Singh, Patkai (ed) : *People of India-Nagaland*, New Delhi, National Book Trust, First Published, 1972

তথ্যদাতাৰ পৰিচয়

ঠাইৰ নাম	নাম	লিংগ	বয়স	বৃত্তি
হাঁহচৰা নগাগাঁও	লেমৰাং কন্যাক	পুৰুষ	৭০	কৃষক
	আইটেম কন্যাক	পুৰুষ	৪০	শিক্ষক
	চনজিং কন্যাক	নাৰী	৪৮	গৃহিনী
মনাইটিং নগাগাঁও	মুংপা কন্যাক	পুৰুষ	৬৬	কৃষক
	ৰানচাই কন্যাক	নাৰী	৬২	গৃহিনী
নামঠাই নগাগাঁও	আচাং কন্যাক	পুৰুষ	৬২	কৃষক
	তৌঙাম কন্যাক	নাৰী	৫৫	গৃহিনী

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

শিশুৰ মানসিক স্বাস্থ্য বিকাশত ঘৰখনৰ ভূমিকা

ড° লিমা বৰুৱা

সহকাৰী অধ্যাপিকা, শিক্ষা বিভাগ
লক্ষীমপুৰ বাণিজ্য মহাবিদ্যালয়
ডাক - উত্তৰ লক্ষীমপুৰ
পিন - ৭৮৭০০১
৯৪৩৫৭৬১৮২০, ০০৩৫৩৯২৮৭
limabaruah123@gmail.com

প্ৰস্তাৱনা ঃ

দাৰ্শনিক এৰিষ্টট এ কৈছিল, — "Sound mind creates sound body and sound body creates sound mind". অৰ্থাৎ সুস্থ শৰীৰতহে সুস্থ মনৰ সৃষ্টি হ'ব পাৰে আৰু সুস্থ মন থাকিলেহে দেহ সুস্থহৈ থাকিব পাৰে। ব্যক্তিয়ে দৈহিক প্ৰয়োজন পূৰণ কৰিবলৈ কৰাৰ চেষ্টাৰ নিচিনা মানসিক প্ৰয়োজন পূৰণ কৰিবলৈও চেষ্টা কৰে। মনটোৰ সম্পূৰ্ণ সুস্থ ভাৰসাম্যযুক্ত অৱস্থাটোকে মানসিক স্বাস্থ্য বোলা হয়। আমাৰ ভিতৰত থকা জন্মগত আৰু অৰ্জিত গুণ সমূহৰ আটাইবোৰে যেতিয়া সমিলমিলেৰে কাম কৰি যায় তাৰ প্ৰতিফলন ব্যক্তিৰ ব্যক্তিত্বত প্ৰতিফলিত হয়। এই জন্মগত আৰু অৰ্জিত গুণসমূহে নিজৰ মাজত সমিলমিল তথা ভাৰসাম্যতা ৰক্ষা কৰি মানসিক স্থিৰতা তথা সুস্থতা বজাই ৰখা অৱস্থাটোকে মানসিক স্বাস্থ্য বুলি কোৱা হয়। ব্যক্তিৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ অৰ্থ ব্যক্তিগত পাৰ্থক্যৰ (Indivisual differences) ওপৰতো বহুখিনি নিৰ্ভৰশীল। ব্যক্তিয়ে যি পৰিবেশত ডাঙৰ দীঘল হয়, সেই পৰিবেশৰ ওপৰত বিশেষকৈ মানসিক স্বাস্থ্য নিৰ্ভৰ কৰে। যিহেতু প্ৰত্যেকজন ব্যক্তিয়ে ইজনতকৈ সিজন বেলেগ, গতিকে, প্ৰত্যেকজন ব্যক্তিৰ মানসিক স্বাস্থ্য বেলেগ হোৱা স্বাভাৱিক। মানসিক স্বাস্থ্য বিজ্ঞান এনে এক অধ্যয়নৰ বিষয়, যি মানুহক ব্যক্তিৰ অপসমাযোজনৰ জাটিল অৱস্থাৰ পৰা ৰক্ষা কৰিব পাৰে। মানসিক স্বাস্থ্য বিজ্ঞানৰ ধাৰণাটো তুলনামূলকভাৱে এক নতুন ধাৰণা। ১৯০০ শতিকাৰ পৰাহে এই ধাৰণাটো এক সু-সংগঠিত ৰূপত আমাৰ মাজলৈ আহে। এড'লফ মেয়াৰ (Adlof Mayer) আছিল মানসিক স্বাস্থ্য বিজ্ঞান আন্দোলনৰ গুৰি ধৰোতা। ১৯০৯ চনত মনোৰোগ বিশেষজ্ঞ Adlof Mayer ৰ তত্ত্বাবধানত নেচনেল কমিটি ফৰ মেনটেল হাইজিন (National Committee for Mental Hygiene) নামৰ এখন ৰাষ্ট্ৰীয় কমিটি গঠন কৰা হয়। গতিকে আমি ক'ব পাৰো যে মানসিক স্বাস্থ্য বিজ্ঞানে প্ৰতিজনলোককে এক সুন্দৰ আৰু সুখী জীৱন নিৰ্বাহৰ বাবে প্ৰয়োজন হোৱা কেতবোৰ কলা-কৌশল তথা উপায় প্ৰদান কৰে।

ক্ৰো আৰু ক্ৰো (Crow and Crow) ৰ মতে মানসিক স্বাস্থ্য বিজ্ঞানে প্ৰধানকৈ তিনিটা উদ্দেশ্যৰে কাম কৰে। সেইকেইটা হ'ল —

*জীৱনৰ অভিজ্ঞতা আৰু ব্যক্তিত্বৰ পূৰ্ণবিকাশৰ সমন্বয়ৰ জৰিয়তে মানসিক অসুস্থতা দূৰীকৰণৰ ব্যৱস্থা।

*ব্যক্তি আৰু দলৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ সংৰক্ষণ।

*মানসিক ৰোগ নিৰাময়ৰ বাবে চিকিৎসা বিষয়ক ব্যৱস্থাৰ উদ্ভাৱন আৰু ব্যৱহাৰ।

মানসিক স্বাস্থ্যৰ দুটা গুৰুত্বপূৰ্ণ দিশ আছে। যেনে— ব্যক্তিগত দিশ (Individual) আৰু সামাজিক (Social) দিশ। ব্যক্তিগত দিশ অন্তৰ্ভাগৰ সু-সমন্বয়ত গঢ়ি উঠা বিষয়। এজন ব্যক্তিৰ অন্তৰ্ভাগৰ বিভিন্ন দিশসমূহৰ সমন্বয় সাধন হ'লে ব্যক্তি জন আত্মবিশ্বাসী, দূৰদৰ্শী, সুচিন্তক, সৃষ্টিশীল হোৱা দেখা যায়। তেওঁ যি কোনো অন্তৰ্দ্বন্দ্ব আৰু মানসিক সংঘাতৰ পৰা মুক্ত তথা যিকোনো পৰিস্থিতিতে নিজক খাপ খুৱাব পৰা যোগ্যতা তেওঁৰ থাকে। আনহাতে সামাজিক দিশে ব্যক্তিক সমাজৰ নীতি-নিয়ম, মূল্যবোধ, শৃংখলা মানি চলাত সহায় সহযোগ কৰে। সামাজিক দিশে ব্যক্তিক সমাজৰ যি কোনো পৰিস্থিতিতে নিজক খাপখুৱাই চলাই নিবলৈ সুবিধা কৰি দিয়ে। যিহেতু ব্যক্তিৰ অন্তৰ্নিৰ্হিত সমাযোজন সমাজে নিৰ্ণয় কৰে, সেয়েহে এনে ব্যক্তিক সমাজে সহজে আদৰি লয়। গতিকে আমি ক'ব পাৰো যে মানসিক স্বাস্থ্য বিজ্ঞানে প্ৰতিজন লোককে সুস্থ, সুন্দৰ আৰু সুখী জীৱন নিৰ্বাহৰ বাবে প্ৰয়োজন হোৱা কেতবোৰ কলা—কৌশল তথা উপায় প্ৰদান কৰে।

শিক্ষাৰ দ্বাৰা সুস্থ মানসিক স্বাস্থ্য ৰক্ষা কৰিব পাৰি। শিক্ষাৰ দ্বাৰা মানসিক স্বাস্থ্য সুস্থ নীতিবোৰক দুটা ভাগত ভাগ কৰিব পাৰি যেনে —

*নিজে নিজৰ লগত সমাযোজন স্থাপনৰ নীতি অৰ্থাৎ নিজে নিজক জনা তথা নিজৰ সবলতা, দুৰ্বলতাবোৰ জনা আৰু পৰিবেশৰ লগত সমাযোজন কৰিবলৈ সক্ষম কৰি তোলা। আত্মজ্ঞানেহে শিক্ষাৰ্থী তথা ব্যক্তিৰ সুস্থ মানসিক স্বাস্থ্য ৰক্ষা কৰাত সহায় কৰে। সেয়েহে উপযুক্ত শিক্ষাৰ দ্বাৰা শিক্ষাৰ্থীক বা ব্যক্তিক আত্মজ্ঞান লাভ কৰিবলৈ অৰ্থাৎ নিজৰ বিষয়ে বা নিজক নিজে সম্পূৰ্ণভাৱে চিনি পাবলৈ সক্ষম কৰি তুলিব লাগে।

নিজৰ পৰিবেশৰ লগত সমাযোজনৰ নীতি ঃ

জীৱনৰ প্ৰতি ধনাত্মক বা যোগাত্মক দৃষ্টিভংগীয়ে ব্যক্তিৰ মানসিক স্বাস্থ্যক প্ৰভাৱিত কৰে আৰু সম্পূৰ্ণ সমাযোজন কৰিব পৰা মানসিক স্বাস্থ্যৰ বাবে ব্যক্তি সদায় সক্ৰিয় হৈ থাকি আৰু সক্ৰিয়ভাৱে কাৰ্য সম্পাদন কৰিব লাগে। সুস্থ মানসিক স্বাস্থ্যৰ বাবে সৃজনাত্মক অভিজ্ঞতা আহৰণ কৰাটো অত্যন্ত মহত্বপূৰ্ণ, লগতে জীৱনৰ সমস্যাবোৰৰ প্ৰতি বৈজ্ঞানিক দৃষ্টিভংগী গ্ৰহণ কৰিব পৰা দৃষ্টিভংগী গঢ়ি তুলিব লাগে। আবেগিক শক্তিৰ উচিত প্ৰয়োগে ব্যক্তিৰ সুস্থ মানসিক স্বাস্থ্য লাভ কৰাত যোগাত্মক প্ৰভাৱ পেলায়। সুস্থ স্বাস্থ্য বজাই ৰাখিবৰ বাবে, মানসিক সুস্থ স্বাস্থ্যৰ বাবে ব্যক্তিৰ সামাজিকিকৰণ হোৱাটো অতি প্ৰয়োজন। ব্যক্তিৰ নিজ নিজ কৰ্মক্ষেত্ৰত সফল সমাযোজন নিৰ্ভৰ কৰে তেওঁৰ মানসিক স্বাস্থ্যৰ ওপৰত।

মানসিক স্বাস্থ্যক প্ৰভাৱিত কৰাৰ ক্ষেত্ৰত গৃহৰ ভূমিকা ঃ

পেষ্টাল'জিৰ মতে—"গৃহ হ'ল মৰম আৰু ভালপোৱাৰ কেন্দ্ৰ, শিক্ষাৰ শ্ৰেষ্ঠ স্থান আৰু শিশুৰ শিক্ষাৰ প্ৰথম বিদ্যালয়।" ঘৰ খনেই হ'ল শিশুৰ সুস্থ বিকাশৰ মূল কঠিয়াতলি। ভাল বেয়া শুদ্ধ-অশুদ্ধ আদি বিচাৰ কৰিব পৰা গুণসমূহো শিশুৱে ঘৰ খনৰ পৰাই আয়ত্ব কৰে। শিশুৰ সামাজিকিকৰণত পৰিয়ালৰ ভূমিকা আটাইতকৈ তাৎপৰ্যপূৰ্ণ আৰু গুৰুত্বপূৰ্ণ। জন্মৰ পাছৰ পৰাই শিশুৱে পৰিয়ালৰ সদস্য সকলৰ লগত আদান প্ৰদানৰ জৰিয়তে ভাষা, ভাৱ, ভংগিমা, ৰীতি-নীতি, আচাৰ-ব্যৱহাৰ, প্ৰেম-প্ৰীতি, ভাল-বেয়া, উচিত-অনুচিত, দয়া-মৰম, সহযোগিতা, ধৈৰ্য, ত্যাগ আদি গুণবোৰ আহৰণ কৰে সেয়ে শিশুৰ ওপৰত ঘৰ বা পৰিয়ালৰ সদস্যসকলৰ প্ৰত্যক্ষ প্ৰভাৱ পৰে। এটি গছ পুলিয়ে ৰ'দ, পোহৰ, বতাহ, সাৰ, পানীৰ অভাৱত যেনেদৰে উপযুক্ত বৃদ্ধি আৰু বিকাশ নহয় ঠিক তেনেদৰে ঘৰখনতো যদি উপযুক্ত পৰিৱেশ নাপায়, তেনেহ'লে ব্যক্তিৰ সুস্থ শাৰীৰিক আৰু মানসিক বিকাশ আশা কৰিব নোৱাৰি। সৰুকালতে পিতৃ-মাতৃ তথা পৰিয়ালৰ লোক সকলৰ পৰা পোৱা আদৰ, যতন, মৰম-চেনেহ শিশুৰ মনত ভবিষ্যৎ জীৱনলৈকে মচিব নোৱাৰা সাঁচ বহুৱাব পাৰে।

*পৰিয়ালত মাকৰ লগতেই শিশুৰ প্ৰথম পৰিচয় ঘটে। গতিকে মাকেই হ'ল শিশুৰ সামাজিকিকৰণৰ প্ৰথম আৰু প্ৰধান মাধ্যম। বিখ্যাত শিক্ষাবিদ বেঞ্জামিন ফ্ৰেংকলিন এ কৈছিল যে — ঘৰখনেই শিশুৰ প্ৰথম শিক্ষানুষ্ঠান আৰু মাকেই হ'ল ঘাই শিক্ষয়িত্ৰী। মাতৃ গৰাকীয়েই শিশুৰ নৈতিক চৰিত্ৰ গঠনত বিভিন্ন শিক্ষা দিয়ে। শিশুৰ সুপ্ত প্ৰতিভা বিকাশ, ব্যক্তিত্বৰ বিকাশ সাধন, সহজাত তাড়ণাবোৰ সংযতকৰণ, সচেতনতাৰ বৃদ্ধি, ধৰ্মৰ প্ৰতি সহনশীল মনোভাৱ সৃষ্টি ইত্যাদিৰ দিশসমূহৰ সুস্থ বিকাশ পৰিয়ালতেই সম্ভৱ হয়। সুস্থ ঘৰুৱা তথা সামাজিক পৰিৱেশত ডাঙৰ দীঘল হোৱা ল'ৰা-ছোৱালীৰ শাৰীৰিক আৰু মানসিক দিশ সদায়েই শৃংখলিত আৰু সুস্থ হয়। সেয়ে শিশুক সুস্থ ভাৱে সামাজিকিকৰণ কৰি তোলাৰ বাবে পৰিয়ালে বিশেষ দায়িত্ব আৰু কৰ্তব্য পালন কৰিব লাগে।

মহান মনোবিজ্ঞানী চিগমণ্ড ফ্ৰয়েড (Sigmund Frued)এ

নিচেই সৰু অৱস্থাতে শিশুক অৱসাদমুক্ত কৰি ৰাখিব লাগে বুলি কয় যাতে শিশুৰ সুস্থ মানসিক স্বাস্থ্য গঢ়লৈ উঠে। শিশুৰ মানসিক স্বাস্থ্যক প্ৰভাৱিত কৰা ঘৰখনৰ উপাদান বোৰ হ'ল —

***পৰিয়ালৰ বান্ধোনত দুৰ্বলতা** (Poor family relationship) - বৰ্তমান সমাজত যৌথ পৰিয়ালৰ ঠাইত একক পৰিয়ালৰ সৃষ্টি হ'ল। ফলত শিশুৱে পিতৃ-মাতৃৰ পৰা সম্পূৰ্ণ মনোযোগ নাপায়। পিতৃ-মাতৃ উভয়েই কৰ্মসূত্ৰে ব্যস্ত হোৱাৰ বাবে ঘৰখনত শিশুসকলক সম্পূৰ্ণ চোৱা-চিতা কৰিব নোৱাৰে বা যত্নও ল'ব নোৱাৰে। ফলত শিশুসকলে প্ৰয়োজনীয় মৰম সহানুভূতিৰ পৰা বাঞ্চিত হয়, ফলত লাহে লাহে তেওঁলোকৰ মগজুত হতাশা, নিৰাশা আদি ৰোগসমূহ বাঁহ ল'বলৈ ধৰে।

***অনুশাসন** (Discipline) জোৰ-জুলুমকৈ জাপি দিয়া বাহ্যিক অনুশাসন বিৰাজ কৰা ঘৰখনত শিশুৰ অসুস্থ মানসিক স্বাস্থ্যই গা কৰি উঠাৰ সম্ভাৱনা থাকে। সেয়ে ঘৰখনত স্ব-অনুশাসন তথা স্ব-নিয়ন্ত্ৰণৰ এক সুন্দৰ পৰিবেশে বিৰাজ কৰিব লাগিব। গৃহ পৰিবেশত শিশুক দৈহিক ভাৱে শাস্তি প্ৰদান কৰি, দমন মূলক আৰু কঠোৰ নিয়ন্ত্ৰণমূলক পৰিবেশত ৰখাৰ পৰিৱৰ্তে আত্মোপলব্ধি আৰু আত্মনিয়ন্ত্ৰণমূলক কৰি তুলিব পৰা পৰিবেশ সৃষ্টিৰ প্ৰতিহে দৃষ্টি ৰাখিব লাগে।

***পৰিয়ালৰ দৰিদ্ৰতা** (Poverty) ব্যক্তিৰ মানসিক স্বাস্থ্যত প্ৰভাৱ পেলোৱা অন্যতম এক কাৰক হ'ল পৰিয়ালৰ দৰিদ্ৰতা। দৰিদ্ৰতাই ব্যক্তিৰ অভাৱ অভিযোগবোৰ বিচৰা মতে পূৰণ হ'ব নিদিয়ে। যথা সময়ত ব্যক্তিয়ে নিজৰ প্ৰয়োজন সমূহ পূৰণ কৰিব নোৱাৰি হতাশাত ভোগে। সমাজত যেতিয়া শিশুৱে আনৰ সমানে সমানে নিজৰ প্ৰয়োজন সমূহ পূৰণ কৰিব নোৱাৰে তেতিয়াই আত্মবিশ্বাস হেৰুৱাই মানসিক অশান্তিত ভোগে।

***গৃহ কন্দল** (Home Conflict) - ঘৰখনত অনবৰতে পৰিয়ালৰ ব্যক্তি সকলৰ মাজত হোৱা কাজিয়া পেচালেও ব্যক্তিৰ মানসিক স্বাস্থ্যত যথেষ্ট প্ৰভাৱ পেলায়। সেয়ে পিতৃ-মাতৃৰ মাজত হোৱা সংঘাত সমূহ বা পৰিয়ালৰ সদস্যসকলৰ মাজত হোৱা সংঘাত আদিয়েও ব্যক্তিৰ মনত হতাশাৰ বা মানসিক অশান্তিৰ সৃষ্টি কৰি মানসিক স্বাস্থ্যৰ বিকাশত বাধাৰ সৃষ্টি কৰে।

***নিৰাপত্তাৰ অভাৱ** (Lack of security) — প্ৰত্যেক শিশুৱেই আশা কৰে যে তেওঁলোকৰ পিতৃ-মাতৃৰ মৰমে শিশুক আবেগিক নিৰাপত্তা দিয়ে। যেতিয়াই এটি শিশু মৰম-চেনেহৰ পৰা বঞ্চিত হ'ব তেতিয়াই মনত নিৰাপত্তাহীনতা গঢ়লৈ উঠে।

***অৱহেলা** (Negligence) — ঘৰখনত শিশুৰ দেহ-মানসিক প্ৰয়োজনীয়তা সমূহ পূৰণত গুৰুত্ব নিদিয়া, পিতৃ-মাতৃৰ ব্যস্ত কৰ্ম জীৱনৰ বাবে শিশুক মনোযোগ নিদব নোৱাৰা আদি দিশ বোৰে শিশুৰ সুস্থ মানসিক স্বাস্থ্য গঢ়ি তোলাত বাধাৰ সৃষ্টি কৰে। শিশুক পিতৃ-মাতৃয়ে ইচ্ছাকৃতভাৱে বা অনিচ্ছাকৃতভাৱে কৰা অৱহেলাই শিশুৰ দেহ-মানসিক স্বাস্থ্যত বিৰূপ প্ৰভাৱ পেলায়, যাৰফলত শিশু মানসিকভাৱে ৰোগগ্ৰস্ত হৈ উঠিব পাৰে।

ঘৰুৱা পৰিৱেশত শিশুৰ সুস্থ মানসিক স্বাস্থ্য ৰক্ষাৰ বাবে পিতৃ-মাতৃ তথা ঘৰৰ সকলোলোকে কিছুমান বিশেষ দিশৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখিব লাগিব। যেনে —

*শিশুৰ শাৰীৰিক, মানসিক আৰু সামাজিক প্ৰয়োজন সমূহ যাতে সুস্থ ভাৱে আৰু যথোপযুক্ত ভাৱে পূৰণ কৰিব পাৰি তাৰ বাবে উপযুক্ত ব্যৱস্থা গ্ৰহণ কৰিব লাগে।

*শিশুৰ স্বভাৱ সুলভ প্ৰকৃতিৰ সুস্থতা, সুন্দৰতা আৰু স্বতঃস্ফুৰ্ত্ততা ৰক্ষা কৰি পৰিয়ালৰ সদস্যসকলৰ মাজত মৰম-চেনেহ, বুজাবুজিৰ ভাৱ আৰু সুস্থ পাৰস্পৰিক সম্পৰ্ক থাকিব লাগে।

*শিশুৰ সুস্থ বিকাশৰ বাবে শিশুৰ মনত আত্মবিশ্বাসৰ ভাৱ গঢ়ি তুলিব লাগিব।

*শিশুক কঠোৰ নিয়ন্ত্ৰণ মূলক পৰিৱেশত ৰখাৰ পৰিৱৰ্তে আত্ম-অনুশাসননেহে শিশুৰ সুস্থ মানসিক স্বাস্থ্য ৰক্ষাত সহায় কৰিব।

*শিশুসকলক ঘৰত যথেষ্ট মৰম আৰু ভালপোৱা প্ৰদানৰ ব্যৱস্থা কৰিব লাগে।

*শিশুৱে কৰা কোনো বেয়া আচৰণ বা কামৰ বাবে সমালোচনা কৰাৰ পৰিৱৰ্তে শুদ্ধ আচৰণ কৰাৰ বাবে ঘৰুৱা পৰিবেশক অনুকূলভাৱে গঢ় দি তুলিব লাগে।

*শিশুৱে যদি কোনো কামত সফলতা লাভ কৰাত ব্যৰ্থ হৈছে তাৰ কাৰণ উদ্‌ঘাটন কৰি উপযুক্ত ব্যৱস্থা কৰিব লাগে।

*ঘৰখনৰ সদস্য সকলৰ সামাজিক সংস্পৰ্শ তথা শিশুক সামাজিকিকৰণ কৰি তোলাৰ মানসিকতাই শিশুৰ সুস্থ বজাই ৰখাত সহায় কৰে। গতিকে শিশুক তেনে ক্ষেত্ৰত অংশ

লোৱাৰ পূৰ্ণ সুযোগ প্ৰদান কৰিব লাগে।

*শিশুৰ যিকোনো সমস্যা আলোচনা-বিলোচনাৰ মাজেৰে সমাধান কৰাৰ বাবে উপায় উদ্ভাৱন কৰাৰ ওপৰতহে গুৰুত্ব দিব লাগে।

*শিশুৰ মানসিক স্বাস্থ্য সমন্ধীয় সমস্যাৰ উমান পালেই তৎপৰতাৰে প্ৰাথমিক যত্ন, উপযুক্ত পৰামৰ্শ আৰু নিৰ্দেশনা প্ৰদান কৰিব লাগে।

*শিশুকলৈ অপ্ৰয়োজনীয় উচ্চাকাঙ্খা গ্ৰহণ কৰাৰ পৰিৱৰ্তে আকাংক্ষাৰ স্তৰ বা পৰ্যায় উপযুক্ত ভাৱে স্থিৰ কৰিব লাগে।

*পিতৃ-মাতৃ শিশুৰ প্ৰতি ইতিবাচক মনোভাৱ গ্ৰহণ কৰাৰ মনোভাৱ, শিশুৰ প্ৰতি দায়িত্বশীল মনোভাৱ গ্ৰহণ কৰিব লাগে।

*পিতৃ-মাতৃয়ে শিশুৰ সমনীয়াবোৰ কেনেকোৱা ধাৰণৰ তাক নিৰীক্ষণ কৰিব লাগিব আৰু সেইবোৰ সংশোধন কৰাৰ যথাযথ ব্যৱস্থা গ্ৰহণ কৰিব লাগে।

গতিকে ঘৰৰ সকলোৰেই শিশুৰ সুস্থ মানসিক স্বাস্থ্যৰ ৰক্ষাৰ প্ৰতি দৃষ্টি ৰাখিব লাগে। ঘৰখনে শিশুক কেনে ধৰণৰ পৰিৱেশ দিছে তাৰ ওপৰত শিশুৰ সুস্থ বা অসুস্থ মানসিক স্বাস্থ্যৰ দিশ প্ৰতিফলিত হয়। শিশুৰ সামাজিকিকৰণত পৰিয়াল বা ঘৰখনেই হ'ল প্ৰথম, প্ৰধান আৰু আটাইতকৈ গুৰুত্বপূৰ্ণ মাধ্যম। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

- Chauhan, S.S Advancedeucational Psychology, Vikas Publishing House Pvt Ltd New Delhi.
- Kundu,C.L. and Tutoo, D.N. educational Psychology. Sterling Publishers Pvt. Ltd.(2005)
- Bahadur, Mal Mental Health in Theory and Practice. Hoshiarpur:V.V.R.I

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত নাৰীবাদী চিন্তা ঃ ইয়াৰ প্ৰাসংগিকতাৰ ওপৰত সাহিত্য পৰ্যালোচনাৰ পৰা পোৱা ফলাফল

ড° পাপৰি ডেকা

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

প্ৰেমচন্দ এগৰাকী কালজয়ী লেড্ৰ। কালজয়ী লেড্ৰ বুলি তেওঁকেই কোৱা হয়, যাৰ ৰচনা তদানীন্তন প্ৰজন্মৰ লগতে ভৱিষ্যৎ প্ৰজন্ময়ো পঢ়ে। এনে তেতিয়াই হয় যেতিয়া সেই লেড্ৰ গৰাকীয়ে সৃষ্টি কৰা সাহিত্যকৰ্মৰ বিষয়বোৰ নতুন প্ৰজন্মৰ বাবেও প্ৰাসংগিক হয়। মানৱ কল্যাণ আৰু সমাজ সংস্কাৰৰ বাবে নিজৰ সময়ৰ প্ৰয়োজনবোৰক যেতিয়া লেড্ৰ এগৰাকীয়ে তেওঁৰ সাহিত্যৰ মাধ্যমেৰে উত্থাপন কৰে তেতিয়াই তেনে লেড্ৰ নাইবা সাহিত্যৰ প্ৰয়োজন প্ৰতিটো প্ৰজন্মই অনুভৱ কৰে আৰু সেই লেড্ৰ জন আমাৰ বাবে সমকালীন হৈ পৰে। প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসৰ দ্বাৰা অনুপ্ৰাণিত হৈ তেওঁৰ সমসাময়িক বহুতো ঔপন্যাসিকে তেওঁৰ ৰচনা-ৰীতি অনুসৰণ কৰি উপন্যাস সাহিত্যক সমাজমুখী কৰাৰ প্ৰয়াস কৰিছে।

হিন্দী উপন্যাস সাহিত্যত প্ৰেমচন্দৰ অৱদান অতুলনীয়। প্ৰেমচন্দে তেওঁৰ উপন্যাস সাহিত্যৰ মাধ্যমেৰে তদানীন্তন সময়ৰ নাৰীয়ে সন্মুখীন হোৱা সমস্যাসমূহৰ উপস্থাপনৰ লগতে সমস্যাসমূহ সৃষ্টি হোৱাৰ প্ৰধান কাৰণ আৰু সমস্যাসমূহৰ সময়োপযোগী সমাধানৰ পথ প্ৰদৰ্শন কৰাও দৃষ্টিগোচৰ হয়।

আমাৰ গৱেষণা কৰ্মৰ জৰিয়তে প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত প্ৰতিফলিত হোৱা নাৰীবাদী চিন্তা আৰু ইয়াৰ প্ৰাসংগিকতাৰ ওপৰত বিভিন্ন গৱেষক আৰু সমালোচক পণ্ডিতে আগবঢ়োৱা মতামত সম্বন্ধে আলোচনা কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

গৌণ সমলৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি প্ৰস্তুত কৰা আমাৰ এই গৱেষণা কৰ্মত বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হৈছে আৰু প্ৰধানতঃ মূলগ্ৰন্থ সম্বন্ধীয় বিশ্লেষণ (Textual Analysis) পদ্ধতিৰ ওপৰত ভিত্তি কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ

সাহিত্য, নাৰীবাদী চিন্তা, সমাজ ব্যৱস্থা, সমাজ-সংস্কাৰ

১. বিষয়ৰ বিবৃতি ঃ

সমাজত পুৰুষ আৰু স্ত্ৰীৰ অস্তিত্ব সমান বোলা বাক্যশাৰীৰ বছৰ বছৰ ধৰি প্ৰচলন হৈ আহিছে। কিন্তু ব্যৱহাৰিক ক্ষেত্ৰত নাৰী প্ৰায় প্ৰতিটো ক্ষেত্ৰতে উপেক্ষিত হৈ ৰৈছে

ঘৰৰ নং -৪১
কাহিলীপাৰা পাৱাৰ হাউচ
পূৱ শান্তি নগৰ, চিলাৰায় পথ
গুৱাহাটী-১৯
৭০০২১৯৯১৮৯
dekapapori20@gmail.com

আৰু সমাজে পুৰুষক অধিক গুৰুত্ব প্ৰদান কৰি অহা দেখা গৈছে। হয়তো সেইবাবে সমকালীন গৱেষণা কৰ্মত নাৰী চিত্ৰন নাইবা নাৰীৰ লগত সম্বন্ধিত বিষয় আৰু সমস্যাবোৰক অধিক গুৰুত্ব প্ৰদান কৰা হৈছে।

নাৰীৰ স্থিতি আৰু অস্তিত্বক লৈ সাহিত্যত যুগে যুগে প্ৰশ্নৰ অৱতাৰণা হৈ আহিছে আৰু সাহিত্যিকসকলে তাৰ যথাযথ উত্তৰ দিয়াৰো প্ৰয়াস কৰি আহিছে। প্ৰেমচন্দো ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম নহয়। প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত তদানীন্তন সমাজৰ বাস্তৱ চিত্ৰ এখন দেখিবলৈ পোৱা যায়। তেওঁ সেই সময়ছোৱাৰ সমাজব্যৱস্থাত প্ৰচলিত বিভিন্ন কু-প্ৰথা যেনে- জাতি-ভেদ প্ৰথা, অস্পৃশ্যতা, জমিদাৰি প্ৰথা, লিঙ্গ বৈষম্য আদিৰ উপস্থাপন কৰাৰ উপৰিও নাৰীকেন্দ্ৰিক সমস্যাসমূহৰ ওপৰতো দৃষ্টি নিক্ষেপ কৰিছে। এজন পুৰুষ হৈও নাৰীৰ মনৰ ক্ষুদ্ৰতকৈও ক্ষুদ্ৰ চিন্তাবোৰকো যিদৰে প্ৰেমচন্দে উপস্থাপন কৰিছে, সেয়া সঁচাকৈ প্ৰশংসনীয়। তদানীন্তন ভাৰতীয় সমাজত নাৰীৰ দয়নীয় স্থিতি দেখি প্ৰেমচন্দ হতাশ হয়। তেওঁৰ মতে, নাৰীৰ এনে দয়নীয় স্থিতিয়ে সমাজৰ উন্নতি আৰু বিকাশত বাধা প্ৰদান কৰিব। সেইবাবে প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত তদানীন্তন সময়ৰ নাৰীয়ে সন্মুখীন হোৱা সমস্যাবোৰ নাইবা যিবোৰ সমস্যা কেৱল নাৰীয়েহে ভোগ কৰিবলগীয়া হৈছিল, সেই সমস্যাবোৰৰ উপস্থাপন কৰা পৰিলক্ষিত হয়। ইয়াৰ লগতে সমস্যাবোৰ সৃষ্টি হোৱাৰ প্ৰধান কাৰণ জানিবলৈ প্ৰয়াস কৰা আৰু সমস্যাসমূহৰ সময়োপযোগী সমাধানৰ পথ প্ৰদৰ্শন কৰাও দৃষ্টিগোচৰ হয়।

উপৰিউক্ত তাৎপৰ্যপূৰ্ণ দিশসমূহলৈ লক্ষ্য ৰাখি আমাৰ এই গৱেষণা কৰ্মৰ জৰিয়তে প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত প্ৰতিফলিত হোৱা নাৰীবাদী চিন্তা আৰু ইয়াৰ প্ৰাসংগিকতাৰ ওপৰত বিভিন্ন গৱেষক আৰু সমালোচক-পণ্ডিতে আগবঢ়োৱা মতামত সম্বন্ধে আলোচনা কৰাৰ প্ৰয়োজন অনুভৱ কৰিছো।

আমাৰ গৱেষণা কৰ্মত সাহিত্য পৰ্যালোচনাৰ মাধ্যমেৰে প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত প্ৰতিফলিত হোৱা নাৰীকেন্দ্ৰিক সমস্যাসমূহৰ আলোচনাৰলগতে ইয়াৰ মাজেদি প্ৰকাশ পোৱা সমাজ-সংস্কাৰৰ বিভিন্ন দিশসমূহৰো আলোচনা কৰা হৈছে। প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত নিহিত হৈ থকা নাৰীবাদী চিন্তাসমূহ আৰু ইয়াৰ মাজেদি প্ৰকাশ পোৱা সমাজ-সংস্কাৰৰ বিভিন্ন দিশসমূহ আমাৰ এই সাহিত্য পৰ্যালোচনাৰ জৰিয়তে উলিয়াই আনি বৰ্তমান সময় সাপেক্ষে তেনে চিন্তাধাৰাৰ মূল্যায়ণ কৰিব পাৰিলে, সমকালীন আৰু ভাবীকালৰ পাঠক গৱেষকসকলৰ কাৰণে গৱেষণাৰ ইতিবাচক দিশ মুকলি হ'ব বুলি আমাৰ বিশ্বাস।

২. গৱেষণা কৰ্মৰ উদ্দেশ্য ঃ

আমাৰ গৱেষণা কৰ্মই তলত দিয়া উদ্দেশ্যকেইটাৰ ওপৰত ৰেখাপাত কৰিব—

১) প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত প্ৰকাশিত নাৰীবাদী চিন্তা আৰু ইয়াৰ প্ৰাসংগিকতাৰ ওপৰত বিভিন্ন গৱেষক আৰু সমালোচক-পণ্ডিতে আগবঢ়োৱা মতামত সম্বন্ধে অৱগত হোৱা।

২) সাহিত্য পৰ্যালোচনাৰ পৰা উদঘাটিত চিন্তাধাৰাৰ মূল্যায়ন কৰা।

৩. গৱেষণা কৰ্মৰ পদ্ধতি

আমাৰ অধ্যয়ন গৌণ সমলৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি প্ৰস্তুত কৰা হৈছে। গৌণ সমলসমূহ বিষয় সম্পৰ্কে প্ৰকাশিত পুথিসমূহৰ অধ্যয়ন আৰু বিষয় সম্পৰ্কে বিভিন্নজনে লিখা আলোচনা, সমালোচনা, গৱেষণা পত্ৰ, গৱেষণা গ্ৰন্থৰ অধ্যয়নৰ জৰিয়তে আহৰণ কৰা হৈছে।

আমাৰ গৱেষণা কৰ্মত বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হৈছে। প্ৰধানতঃ মূলগ্ৰন্থ সম্বন্ধীয় বিশ্লেষণ (Textual Anaalysis) পদ্ধতিৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি প্ৰস্তুত কৰা হৈছে।

৪. প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত নাৰীবাদী চিন্তাৰ ওপৰত সাহিত্য পৰ্যালোচনা ঃ

প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত প্ৰকাশিত নাৰীবাদী চিন্তা বিষয়ত ইতিমধ্যে বিভিন্নজন গৱেষক আৰু সমালোচক-পণ্ডিতে বিভিন্ন সময়ত ভিন ভিন প্ৰসংগ উত্থাপন কৰিছে আৰু তেওঁলোকৰ মতামত আগবঢ়াইছে। আমাৰ সীমিত জ্ঞানেৰে ঢুকি পোৱা আৰু আমাৰ গৱেষণা কৰ্মৰ লগত সংগতি থকা তেনে বিভিন্ন বিষয়ৰ ওপৰত ইয়াত আলোকপাত কৰা হ'ল।

मुंशी प्रेमचंद के उपन्यास साहित्य में चित्रित सामाजिक और पारिवारिक समस्याओं का अध्ययन শীৰ্ষক গৱেষণা গ্ৰন্থত ৰাকেশ কুমাৰে প্ৰেমচন্দে সামাজিক আৰু পাৰিবাৰিক জীৱন শৈলীৰ লগত জড়িত বিভিন্ন ঘাত-প্ৰতিঘাত আৰু সমস্যাৰ উপস্থাপনৰ জৰিয়তে তেনেবোৰ সমস্যাৰ সমাধানৰ পথ কেনেকৈ মুকলি কৰি দিছিল তাৰ ওপৰত আলোকপাত কৰিছে।

प्रेमचंद के उपन्यासो में यथार्थवाद का पुन: मूल्यांकन শীৰ্ষক গৱেষণা গ্ৰন্থৰ মাজেদি ৰীতা কুৰিআকোজে প্ৰেমচন্দৰ

উপন্যাসত প্ৰতিফলিত হোৱা বাস্তৱবাদী চিন্তাধাৰাৰ শৃংখলাবদ্ধ আৰু পৰিকল্পিত পুনঃ মূল্যায়নৰ প্ৰক্ৰিয়া এটা প্ৰস্তুত কৰিছে।

प्रेमचंद के उपन्यासों में नारी संवेदना : एक अध्ययन শীৰ্ষক গৱেষণা গ্ৰন্থত যোগেশভাই প্ৰতাপসিং ঝালাই প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত প্ৰতিফলিত হোৱা নাৰী চেতনাক প্ৰকাশ কৰাৰ বাবে বিশেষভাৱে প্ৰয়াস কৰা হৈছে, যাৰ ভিতৰত বিশেষভাৱে ঝালাই নাৰীৰ দুখ-বেদনা, নাৰীৰ কষ্ট, নাৰীৰ হতাশগ্ৰস্ত অৱস্থাৰ চিত্ৰন কৰিছে।

मुंशी प्रेमचंद के उपन्यासों में नारी की संघर्ष यात्रा শীৰ্ষক গৱেষণা গ্ৰন্থত সুনীতাই প্ৰেমচন্দৰ সময়ৰ স্ত্ৰীৰ সামাজিক স্থিতিৰ ওপৰত আলোকপাত কৰিছে। নাৰীশক্তিয়ে বিভিন্ন সামাজিক ক্ষেত্ৰত নিজৰ দায়বদ্ধতা প্ৰমাণ কৰাৰ উপৰিও পুৰুষসকলক বিভিন্ন ক্ষেত্ৰত সহায় সহযোগিতা আগবঢ়াই আহিছে। সমাজত উদ্ভৱ হোৱা বিভিন্ন বিপদ-আপদৰ পৰা সমাজখনক উদ্ধাৰ কৰিবলৈ নাৰীশক্তিয়ে সদায় একান্তভাৱে প্ৰচেষ্টা আগবঢ়াই আহিছে। এই সকলোবোৰ যে প্ৰেমচন্দে তেওঁৰ উপন্যাসৰ মাধ্যমেৰে প্ৰকাশ কৰিছিল তাক সঠিক ৰূপত সুনীতাই নিজৰ লেখনিৰ মাজেৰে উপস্থাপন কৰিছে।

সুজাতা পলে তেওঁৰ গৱেষণা গ্ৰন্থ *प्रेमचंद के उपन्यासों मे चित्रित प्रेम की समस्याएँ (वरदान, प्रतिज्ञा, सेवासदन, रंगभूमि और निर्मला के विशेष सन्दर्भ में)* ত বৰদান, প্ৰতিজ্ঞা, সেৱাসদন, ৰংগভূমি আৰু নিৰ্মলা উপন্যাসত থকা নাৰী চৰিত্ৰ যেনে- নিৰ্মলা, সুমন, প্ৰেমা, সুবামা, মাধৱী, হিন্দু, সোফিয়া, নেনা আদি চৰিত্ৰসমূহ চিত্ৰিত কৰাৰ লগতে সেই চৰিত্ৰসমূহৰ মৰ্ম-বেদনা, জীৱন শৈলী, বৈৱাহিক জীৱন, সামাজিক মৰ্যাদা আদিৰ বিশ্লেষণ আগবঢ়াইছে। তেওঁ প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত প্ৰতিফলিত প্ৰেমৰ বিবিধ ৰূপৰ চিত্ৰন কৰিছে।

মায়া ৰাণীয়ে তেওঁৰ *प्रेमचंद के उपन्यासों में नारी* শীৰ্ষক গৱেষণা গ্ৰন্থত নাৰী সৱলীকৰণৰ লগত সমাজৰ মনস্তত্ব আৰু সমাজত প্ৰচলিত নীতি-নিৰ্দেশনাৰ কি ওতপ্ৰোত সম্পৰ্ক আছে তাক বিশদভাৱে বৰ্ণনা কৰাৰ উপৰিও এখন সুস্থ সমাজ গঢ়িবলৈ নাৰী সৱলীকৰণ কিয় প্ৰয়োজনীয় আৰু গুৰুত্বপূৰ্ণ তাক প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসৰ আধাৰত সবলভাৱে উপস্থাপন কৰিছে।

গৱেষক সন্ধ্যা সিংৰ *प्रेमचंद साहित्य में नारी विमर्श* শীৰ্ষক গৱেষণা গ্ৰন্থখনৰ জৰিয়তে প্ৰেমচন্দৰ ব্যক্তিত্ব আৰু কৃতিত্ব, প্ৰেমচন্দৰ সামাজিক আৰু সাংস্কৃতিক বিচাৰ, নাৰী চেতনাৰ স্বৰূপ আৰু বিকাশ, প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত নাৰী বিমৰ্শ, প্ৰেমচন্দৰ নাটক আৰু নিবন্ধত নাৰী বিমৰ্শ আদিৰ বিষয়ে আভাস ল'ব পৰা গৈছে।

এম আই মুল্লাই তেওঁৰ *हिन्दी के ऐतिहासिक कथा साहित्य में नारी समस्यायें प्रेमचंद युग से सन 1960 तक* শীৰ্ষক গৱেষণা গ্ৰন্থত তদানীন্তন সময়ৰ বিভিন্ন নাৰীকেন্দ্ৰিক সমস্যা যেনে যৌতুকৰ সমস্যা, বিধৱা-জীৱনৰ সমস্যা, পতিতা সমস্যা, অ-সম বিবাহ আদিৰ বাস্তৱ চিত্ৰ অংকণ কৰিছে। কেনেকৈ মানুহৰ মানসিক চেতনা আৰু মূল্যবোধৰ পৰিৱৰ্তন ঘটাই উক্ত সামাজিক ব্যাধিবোৰক দূৰ কৰি এখন সুস্থ সমাজ গঢ় দিব পাৰি তাৰ যথাযথ বৰ্ণনা প্ৰেমচন্দে তেওঁৰ সাহিত্যৰ মাধ্যমেৰে আগবঢ়াইছে তাৰো আলোচনা কৰা হৈছে।

গৱেষক শ্ৰীমতী কীৰ্তি মিশ্ৰাৰ *1960 से 1980 तक के उपन्यास लेखन में स्त्री विमर्श का मूल्यांकन* শীৰ্ষক গৱেষণা গ্ৰন্থখনত স্ত্ৰী বিমৰ্ষৰ অৱধাৰণা, সামাজিক, পাৰিবাৰিক, আৰ্থিক, ধাৰ্মিক, ৰাজনৈতিক ক্ষেত্ৰখনত স্ত্ৰীৰ স্থিতি, পুৰুষৰ লেখনিত মহিলাৰ স্থান আৰু মহিলাৰ লেখনিত স্ত্ৰীৰ স্থান আদিৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা হৈছে।

মৌচুমী সিং তিৱাৰীয়ে তেওঁৰ *प्रेमचंद के उपन्यासों में स्त्री विमर्श : एक अध्ययन* শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰত তদানীন্তন সমাজত স্ত্ৰী-বিমৰ্ষতাই কিদৰে গা কৰি উঠিঠিল আৰু তাৰ পৰা সমাজৰ কি হানি হৈছিল আৰু তাৰ পৰিত্ৰাণৰ উপায় সম্বন্ধে তিৱাৰীয়ে বৰ্ণনা আগবঢ়াইছে।

গৱেষক নিধি সক্সেনাৰ *यशपाल के उपन्यासों में नारी पात्रों का आधुनिकता के स्वरूप का अनुशीलन* শীৰ্ষক গৱেষণা গ্ৰন্থখনত গৱেষকে মাৰ্ক্সবাদী নাৰীচেতনা, নাৰী চৰিত্ৰত লুকাই থকা আধুনিকতা আৰু স্ত্ৰী-পুৰুষৰ পাৰস্পৰিক সম্পৰ্কক মূল বিষয়বস্তু হিচাপে লৈ সমাজত নাৰীৰ সংঘৰ্ষ যাত্ৰাৰ আৰু উত্থান পতনৰ বিৱৰণি আগবঢ়াইছে। গৱেষকে নাৰীৰ ব্যক্তিগত আৰু সামাজিক জীৱনৰ পশ্চাদমুখী যাত্ৰাক দাঙি ধৰিছে। নাৰী ভোগ বিলাসৰ বস্তু নহৈ সামাজিক বিকাশত কেনেকৈ অংশীদাৰ হ'ব পাৰে আৰু সমাজত উচিত স্বীকৃতি লাভ কৰিব পাৰে সেই বিষয়েও গৱেষকে চিন্তা চৰ্চা কৰা পৰিলক্ষিত হয়। শিক্ষাক তেওঁ নাৰী সৱলীকলণৰ মেৰুদণ্ড হিচাপে চিহ্নিত কৰি নাৰী সৱলীকৰণৰ লগত জড়িত আন আন উপাদান যেনে-নাৰীৰ সামাজিক স্থিতি আৰু স্বীকৃতি, আৰ্থিক স্বতন্ত্ৰতা, পাৰিবাৰিক আৰু সামাজিক সিদ্ধান্তত নাৰীৰ অংশ গ্ৰহণ আদিৰ ওপৰত দৃষ্টিপাত কৰিছে।

हिंदी उपन्यासों में राष्ट्रवादी स्वर শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰত

ড০ আৰ.পি বৰ্মাই উল্লেখ কৰিছে যে প্ৰগতিশীল জন চেতনাই হৈছে হিন্দী উপন্যাস সাহিত্যৰ মূল চালিত শক্তি। লগতে গৱেষকে উল্লেখ কৰিছে যে নাৰী সৱলীকৰণ আৰু নাৰী জাগৰণৰ লগত জড়িত বিভিন্ন সংগ্ৰামময় কাহিনী প্ৰেমচন্দে তেওঁৰ উপন্যাসত বৰ্ণনা কৰি গৈছে যিবোৰ হিন্দী সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰত দলিল স্বৰূপ।

লেড্ৰি৷ দীপ্তি পৰমাৰৰ नारी विमर्श और नारी लेखन के सरोकार শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰখনত আদিকালৰ পৰা বৰ্তমানলৈকে চলি থকা নাৰীৰ দুখৰ আলোচনা কৰা পৰিলক্ষিত হৈছে। পত্ৰখনত বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰে নাৰী বিমৰ্ষৰ ওপৰত আলোচনা কৰা হৈছে।

উমা শুক্লৰ *भारतीय नारी : अस्मिता की पहचान*শীৰ্ষক গ্ৰন্থখনত সময় আৰু স্থান সাপেক্ষে সমাজত নাৰীৰ স্থান সম্বন্ধে বৰ্ণনা আগবঢ়োৱা হৈছে। সময় আৰু স্থান পৰিৱৰ্তনৰ ফলত নাৰীৰ সামাজিক স্থিতি যদিও সলনি হৈ থাকে, কিন্তু প্ৰত্যেক যুগৰ সমাজ নিৰ্মাণত নাৰীয়ে বলিষ্ঠ ভূমিকা পালন কৰি আহিছে। নাৰীৰ স্থিতি আৰু অস্তিত্বক লৈ সাহিত্যত যুগে যুগে প্ৰশ্নৰ অৱতাৰণা হৈ আহিছে আৰু সাহিত্যিকসকলে তাৰ যথাযথ উত্তৰ দিয়াৰো প্ৰয়াস কৰি অহা বুলি গ্ৰন্থখনত উল্লেখ আছে। বহুক্ষেত্ৰত পৰিয়াল, বহুক্ষেত্ৰত ৰক্ষণশীল সমাজ ব্যৱস্থা আৰু বহুক্ষেত্ৰত নাৰী নিজে নিজৰ সবলীকৰণৰ পথত অন্তৰায় ৰূপে থিয় হোৱা বুলি গ্ৰন্থকাৰে উল্লেখ কৰিছে। সেইকাৰণে নাৰী উন্নয়নৰ প্ৰথম খোজ নাৰীয়ে নিজৰ মাজৰ পৰাই আৰম্ভ কৰিব লাগিব বুলি গ্ৰন্থকাৰে মন্তব্য কৰিছে।

লেড্ৰ বিন্দু অগ্ৰৱালৰ *हिन्दी उपन्यास में नारी चित्रण* শীৰ্ষক গ্ৰন্থখনত হিন্দী উপন্যাসৰ ক্ৰম বিকাশ, নাৰীৰ প্ৰতি ঔপন্যাসিকসকলৰ দৃষ্টিকোণৰ ক্ৰমিক বিকাশ, প্ৰাক্ প্ৰেমচন্দ যুগৰ উপন্যাসত প্ৰতিফলিত হোৱা নাৰী জীৱনৰ সমস্যা আৰু সমাধান, প্ৰেমচন্দ যুগৰ উন্যাসত প্ৰতিফলিত হোৱা নাৰী জীৱনৰ সমস্যা আৰু সমাধান, প্ৰেমচন্দোত্তৰ যুগৰ উন্যাসত প্ৰতিফিলিত নাৰী জীৱনৰ সমস্যা আৰু সমাধানৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা হৈছে। এই গ্ৰন্থখনত প্ৰাক্ প্ৰেমচন্দ যুগৰ পৰা আৰম্ভ কৰি প্ৰেমচন্দোত্তৰ যুগৰ উপন্যাসত প্ৰতিফলিত হোৱা নাৰীৰ বিবিধ ৰূপৰ বিষয়ে বিতংভাৱে আলোচনা আৰু বিশ্লেষণ কৰা পৰিলক্ষিত হয়।

শিৱৰাণী দেৱীৰ দ্বাৰা লিখিত *प्रेमचंद घर में*শীৰ্ষক গ্ৰন্থখন ১৯৪৪ চনত প্ৰকাশিত হৈছিল আৰু ২০০৫ চনত শিৱৰাণী দেৱীৰ নাতিয়েক প্ৰবোধ কুমাৰে উক্ত গ্ৰন্থখন সংশোধন কৰি পুনৰ প্ৰকাশ কৰে। প্ৰেমচন্দে সাহিত্যৰ পথাৰখনত ৰোপন কৰিবৰ বাবে প্ৰয়োজনীয় উৎপাদনশীল বীজ যে তেওঁৰ ঘৰখনতে পাইছিল সেই সত্যতো শিৱৰাণী দেৱীৰ গ্ৰন্থখনত নিখুঁতভাৱে প্ৰতিফলিত হৈছে। তেওঁৰ ঘৰখনৰ চাৰিবেৰৰ মাজতে যে কিমান নাৰীকেন্দ্ৰিক সমস্যা কেন্দ্ৰীভূত হৈ আছিল প্ৰেমচন্দে সেই সত্যটো বাৰুকৈয়ে উপলব্ধি কৰিছিল আৰু তেওঁৰ দৈনন্দিন কৰ্মৰ মাজেৰে তেওঁ ঘৰখনক তেনে সমস্যাৰ পৰা পৰিত্ৰাণ দিয়াৰ চেষ্টা সদায় কৰিছে গ্ৰন্থখনত এই বিষয়ে আলোচনা কৰা পৰিলক্ষিত হয়।

নৱলকিশোৰে *प्रेमचन्द की प्रगतिशीलता*শীৰ্ষক গ্ৰন্থখনৰ জৰিয়তে পুনৰ এবাৰ প্ৰেমচন্দৰ মহত্বক বুজিবৰ বাবে আৰু তেওঁৰ মহত্বক পুনঃ স্থাপন কৰাৰ বাবে প্ৰায়স কৰিছে। গ্ৰন্থখনত উল্লেখ থকা মতে প্ৰেমচন্দে তেওঁৰ লেখনিত মানৱতাবাদক প্ৰতিষ্ঠা কৰি জনসাধাৰণৰ লগত নিজকে জড়িত কৰি সমাজলৈ এক বাৰ্তা প্ৰেৰণৰ চেষ্টা কৰিছে।

प्रेमचंद : कलम का सिपाही শীৰ্ষক গ্ৰন্থখন হ'ল হিন্দী সাহিত্যৰ বিখ্যাত সাহিত্যকাৰ অমৃত ৰায়ৰ দ্বাৰা লিখিত এখন জীৱনী। এই গ্ৰন্থখনত উল্লেখ থকা মতে প্ৰেমচন্দে আমাৰ সমাজত প্ৰচলিত নাৰী শোষণ আৰু নাৰী সমস্যা সম্পৰ্কে নিজে কিমান সজাগ হৈ সমাজক সজাগ কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰিছে তাৰ এক স্পষ্ট প্ৰতিচ্ছবি এই গ্ৰন্থখনৰ মাজেৰে প্ৰতিফলিত হৈছে। তেওঁ নিজে এইবিলাক সমস্যাৰ প্ৰতি অৱগত হোৱাই নহয় নিজৰ দৈনন্দিন কৰ্মৰ মাজেৰে কেনেকৈ এই সমস্যাসমূহক প্ৰতিহত কৰাৰ চেষ্টা কৰিছে তাৰ বিৱৰণ এই গ্ৰন্থখনত পোৱা যায়।

গোপাল ৰায়ে তেওঁৰ *हिन्दी उफन्यास का इतिहास* শীৰ্ষক গ্ৰন্থখনত প্ৰায় ১৩০০ খন উপন্যাসৰ প্ৰামাণিক প্ৰকাশন কালৰ সৈতে উল্লেখ কৰিছে। তেওঁ প্ৰেমচন্দৰ বিভিন্ন উপন্যাসসমূহৰ সমীক্ষাত্মক বৰ্ণনা আগবঢ়োৱাৰ উপৰিও কেনেকৈ প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসসমূহে তদানীন্তন সময়ৰ সমাজ ব্যৱস্থাৰ প্ৰকৃত ছবিখন উদঙাই দি সমাজত এক নতুন দিগন্তৰ সূচনা কৰিছিল তাক সঠিক ৰূপত প্ৰকাশ কৰিবলৈ যত্ন কৰিছে।

সৰিতা ৰায়ৰ *उपन्यासकार प्रेमचंद की सामाजिक चिन्ता* শীৰ্ষক গ্ৰন্থখনত প্ৰেমচন্দৰ বিভিন্ন উপন্যাসত প্ৰকাশিত সামাজিক চিন্তাৰ আভাস দাঙি ধৰিছে। জমিদাৰি প্ৰথা, জাতি-ভেদ, অস্পৃশ্যতা, লিংগ-বৈষম্য, পতিতা সমস্যা, অ-সম বিবাহ, বাল্য বিবাহ আদি সামাজিক সমস্যাসমূহৰ ওপৰত কিদৰে প্ৰেমচন্দে গভীৰভাৱে দৃষ্টিপাত কৰাৰ উপৰিও এই

সমস্যাসমূহ উৎপত্তি হোৱাৰ কাৰণবোৰো বিচাৰি উলিয়াই তাৰ সমাধানৰ পথ প্ৰশস্ত কৰি সমাজক এক নতুন গতি দিয়ে, এই বিষয়ে বিশদ বৰ্ণনা আগবঢ়োৱা হৈছে।

ড° ৰামবিলাস শৰ্মাই *প্ৰেমচংদ ঔৰ উনকা যুগ* শীৰ্ষক গ্ৰন্থখনত প্ৰেমচন্দক বাস্তৱবাদী আৰু আস্থাৱান সাহিত্যকাৰ ৰূপে প্ৰকাশ কৰাৰ উপৰিও তেওঁৰ লেখনিসমূহক ভাৰতীয় সমাজৰ বাবে যথেষ্ট প্ৰাসংগিক বুলি উল্লেখ কৰিছে। যিবোৰ সমস্যাৰ বিৰুদ্ধে প্ৰেমচন্দে তেওঁৰ লেখনিসমূহৰ জৰিয়তে যুঁজ দিছিল, সেই সমস্যাসমূহ ভাৰতীয় সমাজত আজিও উমি-উমি জ্বলি আছে বুলি ড° শৰ্মাই উল্লেখ কৰিছে। ড° শৰ্মাই, প্ৰেমচন্দৰ সাহিত্যকৰ্মই বিশেষকৈ তেওঁৰ উপন্যাসমূহে আজিও তেনে সমস্যাৰ সমাধানৰ বাট মুকলি কৰি দিয়ে বুলি উল্লেখ কৰিছে।

৫. সাহিত্য পৰ্যালোচনাৰ পৰা পোৱা ফলাফল সম্পৰ্কে আলোচনা আৰু মূল্যায়ন ঃ

প্ৰেমচন্দে তেওঁৰ উপন্যাসৰ জৰিয়তে নাৰী জীৱনৰ লগত জড়িত বহুকেইটা সমস্যাৰ উপস্থাপন কৰি নাৰীক সজাগ কৰাৰ চেষ্টা কৰিছে। তেওঁৰ উপন্যাসত নাৰীৰ বাল্য, গাভৰু, বয়স্ক আৰু বৃদ্ধ আদি সকলো অৱস্থাৰ লগতে নাৰীৰ ভনী, জীয়ৰী, পত্নী, মা, শাহু, ননন্দ আদি বিভিন্ন ৰূপৰ সুন্দৰ চিত্ৰন পৰিলক্ষিত হয়। ইয়াৰ উপৰিও অতীজৰেপৰা চলি অহা সামাজিক, আৰ্থিক, ধাৰ্মিক, সাংস্কৃতিক ক্ষেত্ৰত শোষণৰ চিকাৰ হৈ অহা নাৰীয়ে কিদৰে বিপৰীত পৰিস্থিতিৰ সন্মুখীন হৈও নিজৰ দায়িত্ব আৰু কৰ্তব্য পালন কৰি নিজৰ ব্যক্তিত্বৰ পৰিচয় দিয়ে তাৰ মৰ্মস্পৰ্শী চিত্ৰনো প্ৰেমচন্দে তেওঁৰ উপন্যাসৰ জৰিয়তে কৰিছে। তেওঁৰ দৃষ্টিত নাৰী হ'ল ত্যাগৰ মূৰ্তি। প্ৰেমচন্দে তেওঁৰ উপন্যাসৰ নাৰীক মাত্ৰ বাসনাপূৰ্ত্তিৰ সাধন বুলি জ্ঞান নকৰি নাৰী চৰিত্ৰৰ মহানতাৰ পৰিচয়ো দাঙি ধৰিছে। প্ৰেমচন্দৰ নাৰী বিষয়ক যি ধাৰণা, সেই ধাৰণা প্ৰাক্ প্ৰেমচন্দৰ ঔপন্যাসিকসকলতকৈ পৃথক। তেওঁৰ দৃষ্টিত নাৰী হৈছে সন্মানৰ অধিকাৰী, ক্ষমা আৰু সহনশীলতাৰ প্ৰতিমূৰ্ত্তি।

তদানীন্তন সময়ত প্ৰচলিত যৌতুক প্ৰথা, অ-সম বিবাহৰ সমস্যা, পতিতা সমস্যা, বিধৱা সমস্যা, নাৰীৰ আৰ্থিক আৰু ব্যক্তি স্বতন্ত্ৰতাৰ সমস্যা, নাৰীৰ দ্বাৰা নাৰীৰ শোষণৰ সমস্যা আদিক কেন্দ্ৰ কৰি নাৰী জীৱনৰ ওপৰত পৰা প্ৰভাৱৰ বিষয়ে প্ৰেমচন্দে তেওঁৰ উপন্যাসত বিশদভাৱে চিত্ৰন কৰা দৃষ্টিগোচৰ হয়। অনুসন্ধানত পোৱা গৈছে যে প্ৰেমচন্দ যুগত যিবোৰ নাৰীকেন্দ্ৰিক সমস্যা সমাজত ব্যাপ্ত আছিল সেই সমস্যাবোৰৰ সাঠিক প্ৰতিফলন প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত ঘটিছে। এই সময়ছোৱাত শিক্ষাৰ প্ৰসাৰৰ আৰম্ভণি ঘটাৰ বাবে প্ৰাক্ প্ৰেমচন্দ যুগৰ তুলনাত সমস্যাসমূহৰ সামান্য সাল-সলনি ঘটা দেখা গৈছে যদিও সেয়া কেৱল নাম মাত্ৰহে। প্ৰাক্ প্ৰেমচন্দ যুগত যিবোৰ সমস্যা সমাজত বিয়পি আছিল সেই সমস্যাবোৰ প্ৰেমচন্দ যুগতো আছিল। এই যুগৰ নাৰীকেন্দ্ৰিক সমস্যাসমূহক প্ৰেমচন্দে উপলব্ধি কৰিছে, লক্ষ্য কৰিছে আৰু তাৰ আঁৰৰ কাৰণ আৰু সমাধানৰ বাবে চিন্তা কৰা দেখা গৈছে। প্ৰেমচন্দৰ সময়ত যিবোৰ নাৰীকেন্দ্ৰিক সমস্যা সমাজত আছিল তাৰ কিছু সমস্যা বৰ্তমান সময়তো সমাজত ব্যাপ্ত থকা দেখা পাওঁ। প্ৰেমচন্দ এজন যুগদ্ৰষ্টা গতিকে নিজৰ প্ৰজন্মৰ উপৰিও ভৱিষ্যৎ প্ৰজন্মৰ কথা চিন্তা কৰি যিবোৰ সমাধানৰ পথ আগবঢ়াইছে সেয়া এতিয়াও প্ৰসংগিক য়েন অনুভৱ হৈছে।

অনুসন্ধানত পোৱা গৈছে যে, প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসে নাৰীকেন্দ্ৰিক সমস্যাৰ সফল ৰূপায়ণ আৰু সেই সমস্যাবোৰৰ সঠিক সমাধানৰ পথ প্ৰশস্ত কৰিছে। লগতে তেওঁ আগবঢ়োৱা নাৰী সবলীকৰণৰ উপাদানসমূহ প্ৰেমচন্দৰ পিছৰ সময়তো নাইবা বৰ্তমান সময়তো গুৰুত্বপূৰ্ণ যেন অনুভৱ হৈছে। প্ৰেমচন্দে নাৰীক স্বতন্ত্ৰ হোৱাটো বিচাৰে কিন্তু নাৰীয়ে স্বতন্ত্ৰতাৰ সীমা চেৰাই উচ্ছৃংখলতাক গ্ৰহণ কৰাটো কেতিয়াও স্বীকাৰ কৰা নাই। তেওঁ মনেৰে সদায় আদৰ্শ ভাৰতীয় নাৰীৰ ৰূপটোক স্বীকাৰ কৰা দেখা গৈছে, যিয়ে কেতিয়াও নিজৰ সন্মানত আঘাত সানিব নিদিয়ে। হয়তো ইয়াৰ আঁৰত তেওঁৰ নাৰীৰ ভৱিষ্যৎ সুৰক্ষাৰ প্ৰতি চিন্তা লুকাই আছিল। তেওঁ নাৰীৰ অস্তিত্বক বজাই ৰাখিব বিচাৰিছিল। তেওঁৰ মতে নাৰীয়ে যদি উচ্ছৃংখলতাক স্বতন্ত্ৰতা বুলি ভাৱে তেতিয়া নাৰীৰ অস্তিত্বই নোহোৱা হৈ পৰিব। তেওঁৰ মতে নাৰীৰ স্বতন্ত্ৰতাৰ অৰ্থ আছিল নাৰীয়ে শিক্ষা গ্ৰহণ কৰি নিজৰ ভাল বেয়া বিচাৰ কৰিব পৰা গুণ অৰ্জন কৰা, অন্যায়ৰ বিৰুদ্ধে মাত মতাৰ সাহস প্ৰদৰ্শন কৰা, প্ৰয়োজনত ধন উপাৰ্জন কৰা ক্ষমতা প্ৰাপ্ত হোৱা আদি। কিন্তু প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত নাৰীয়ে বাহিৰলৈ গৈ ধন উপাৰ্জন কৰা দৃষ্টিগোচৰ হোৱা নাই। ঘৰতে বহিবোৱা-কটা, চিলাই আদি কৰি আৰ্থিকভাৱে স্বাৱলম্বী হোৱাৰ ওপৰত গুৰুত্ব দিয়া দেখা যায়। ইয়াৰ অৰ্থ এইটো বুজোৱা নাই যে প্ৰেমচন্দে নাৰীৰ আৰ্থিক স্বতন্ত্ৰতাক সমৰ্থন কৰা নাই। যিহেতু প্ৰাক্ প্ৰেমচন্দ যুগত কোনেও নাৰীৰ আৰ্থিক স্বতন্ত্ৰতাৰ বিষয়ে চিন্তা কৰাও পৰিলক্ষিত হোৱা নাই, তেনে স্থলত প্ৰেমচন্দ যুগত প্ৰেমচন্দে নাৰীক ঘৰত বহিয়েই আৰ্থিকভাৱে স্বাৱলম্বী হোৱা

পথ প্ৰদৰ্শন কৰিছে সেয়াই তদানীন্তন সময়ৰ বাবে এক বৃহৎ পদক্ষেপ। অতীজৰেপৰা চলি অহা নাৰীৰ প্ৰতি সমাজৰ বান্ধোনবোৰ একেবাৰেই শেষ কৰি পেলোৱাটো সম্ভৱ নাছিল, গতিকে ক'ব লাগিব যে নাৰীৰ আৰ্থিক স্বতন্ত্ৰতাৰ প্ৰতি প্ৰেমচন্দৰ যি চিন্তা সেয়া তদানীন্তন সময়োপযোগী চিন্তা।

প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত নাৰীৰ প্ৰতি নতুন দৃষ্টিকোণৰ পৰিচয় পোৱা যায়। সমাজৰ দৃষ্টিত নীচ কৰ্ম কৰা পতিতাবোৰৰ প্ৰতিও তেওঁ সহানুভূতিপূৰ্ণ ব্যৱহাৰ কৰা পৰিলক্ষিত হয়। এগৰাকী নাৰীয়ে পতিতা বৃত্তি গ্ৰহণ কৰাৰ বাবেও তেওঁ সমাজকে দায়ী বুলি ক'ব খোজে। তেওঁ নাৰীক তেওঁলোকে হেৰুওৱা অস্তিত্বক পুণঃ ঘূৰাই দিবলৈ আৰু প্ৰাপ্য সন্মান, অধিকাৰ প্ৰদান কৰাৰ বাবে নিৰন্তৰে প্ৰয়াস কৰে। প্ৰেমচন্দে নাৰীক পৰাধীন নহয় বৰং নিজৰ বলত আগবাঢ়ি যোৱা আৰু অদৰকাৰী বান্ধোনবোৰ ছিঙি পেলাবলৈ প্ৰেৰণা দিয়া দৃষ্টিগোচৰ হৈছে। প্ৰেমচন্দোত্তৰ যুগত দেখা গৈছে যে, কিছুমান সমস্যা হ্ৰাস পাবলৈ ধৰিছে কিন্তু নাৰীক লৈ মানুহৰ মানসিকতাৰ পৰিৱৰ্তন তেতিয়াও ভালকৈ হোৱা নাছিল। প্ৰেমচন্দোত্তৰ যুগৰ ঔপন্যাসিকসকলেও প্ৰেমচন্দৰ আদৰ্শ আৰু উপন্যাস নীতিক অনুসৰণ কৰা পৰিলক্ষিত হয়।

অনুসন্ধান কাৰ্য চলাই থকা সময়লৈকে প্ৰেমচন্দ আমাৰ মাজৰ পৰা গুচি যোৱা প্ৰায় ৮৭ বছৰেই হ'ল, কিন্তু তেওঁৰ দ্বাৰা সাহিত্যত বৰ্ণিত সমস্যা,অভিযোগ নাইবা দাবীবোৰে একবিংশ শতিকাতো যেন নিজৰ ৰূপ সলাই আৰু অধিক পৰিৱৰ্তিত ৰূপত গা কৰি উঠিছে।

বহুক্ষেত্ৰত পৰিয়াল, বহুক্ষেত্ৰত সমাজব্যৱস্থা আৰু বহুক্ষেত্ৰত নাৰী নিজে নিজৰ সবলীকৰণৰ পথত অন্তৰায় ৰূপে থিয় দি আহিছে। সেয়েহে নাৰী উন্নয়নৰ প্ৰথম খোজ নাৰীয়ে নিজৰ মাজৰ পৰাই আৰম্ভ কৰিব লাগিব বুলি প্ৰেমচন্দে উপন্যাস সাহিত্যৰ মাধ্যমেৰে মতামত আগবঢ়াইছে।

প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসত নাৰী সবলীকৰণৰ লগত জড়িত বিভিন্ন উপাদান যেনে নাৰীৰ সামাজিক স্থিতি, নাৰীৰ সামাজিক স্বীকৃতি, নাৰী স্বতন্ত্ৰতা, সমানতা, নাৰীশিক্ষা, আত্মনিৰ্ভৰতা, পাৰিবাৰিক আৰু সামাজিক সিদ্ধান্তত নাৰীৰ অংশগ্ৰহণ আদি সম্বন্ধে যথাযথ বৰ্ণনা থকাৰ উপৰিও সামাজিক বিকাশৰ ক্ষেত্ৰত এই উপাদানসমূহৰ প্ৰয়োজনীয়তাৰ ওপৰতো বিশ্লেষণ আগবঢ়োৱা হৈছে। নাৰী সবলীকৰণৰ লগত সমাজৰ মনস্তত্ব আৰু সমাজত প্ৰচলিত নীতি-নিৰ্দেশনাৰ কি ওতপ্ৰোত সম্বন্ধ আছে তাকো সবলভাৱে উপস্থাপন কৰিছে। প্ৰেমচন্দে তেওঁৰ উপন্যাসৰ মাধ্যমেৰে নাৰী মনস্তত্বৰ লগত জড়িত কেতবোৰ বিষয় যেনে মৰ্যদাপূৰ্ণ জীৱনৰ হাবিয়াস, মুক্ত অথচ দায়িত্বশীল জীৱন চৰ্যাৰ সন্ধান, নতুনক বিচাৰি চোৱাৰ মানসিকতা, নাৰীৰ মনৰ দ্বন্দ আৰু সংঘাত, নাৰী শোষণ, নাৰী লাঞ্চনা, নাৰীৰ ইচ্ছা-আকাংক্ষা আদিৰ সাৱলীলভাৱে বিশ্লেষণ কৰিছে।

লিংগ-বৈষম্য, জাতিভেদ প্ৰথা, পতিতা সমস্যা, অ-সম বিবাহ, বাল্য বিবাহ, অস্পৃশ্যতা আদিকে ধৰি তদানীন্তন ভাৰতীয় সমাজত প্ৰচলিত আন আন অপ্ৰয়োজনীয় নীতি নিয়ম যিবিলাক নাৰী উন্নয়ন আৰু সমাজ উন্নয়নৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰতিকূল হোৱাৰ বাবে সংস্কাৰৰ প্ৰয়োজন আছে তাৰ সঠিক প্ৰতিফলন প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসৰ মাজেৰে ঘটিছে। ইয়াত উল্লেখ কৰিব পাৰি যে প্ৰেমচন্দে কেৱল সংস্কাৰৰ বীজ সিচাঁয়েই নহয়, তেওঁৰ ৰচনাৱাজিৰ জৰিয়তে তাক ৰক্ষণাবেক্ষণো দিয়া পৰিলক্ষিত হয়।

প্ৰেমচন্দে উল্লেখ কৰা মতে তদানীন্তন সময়ৰ নিম্নবিত্ত, মধ্যবিত্ত আৰু উচ্চবিত্ত শ্ৰেণীৰ নাৰীৰ সামাজিক জীৱন, সংঘৰ্ষ, বেদনা আৰু সমস্যাবোৰ একে নাছিল। তথাপিও এটা কথা ঠিক যে সামগ্ৰিকভাৱে তদানীন্তন সময়ৰ নাৰীৰ সামাজিক স্থিতি, প্ৰভাৱ আৰু প্ৰাসংগিকতা একেবাৰে দুৰ্বল আছিল।

৬. মন্তব্য ঃ

প্ৰেমচন্দে এটা বৰ প্ৰতিকূল পৰিৱেশৰ মাজত সাহিত্যচৰ্চা আৰম্ভ কৰিছিল। কিয়নো তদানীন্তন সময়ৰ প্ৰশাসন ব্যৱস্থা আছিল সমাজ বিৰোধী। কিন্তু এনে প্ৰতি কূল পৰিস্থিতিকো নেওচি নিজৰ উপন্যাস সাহিত্যৰ মাজত সেই সময়ৰ সামাজিক বিভ্ৰান্তিৰ বাস্তৱবাদী বিৱৰণ যথাৰ্থভাৱে উপস্থাপন কৰি প্ৰেমচন্দে প্ৰগতিশীল দৃষ্টিভংগীৰ পৰিচয় দাঙি ধৰিছে যাৰ ভেটি আছিল মানৱ কল্যাণমূখী চিন্তাধাৰা। প্ৰেমচন্দৰ উপন্যাসসমূহে তদানীন্তন সময়ৰ সমাজব্যৱস্থাৰ প্ৰকৃত ছবিখন উদঙাই দি সমাজত এক নতুন দিগন্তৰ সূচনা কৰিছে।

প্ৰেমচন্দে অপ্ৰয়োজনীয় ৰীতি-নীতি আৰু অন্ধবিশ্বাসৰ সকলোবোৰ পৰিণাম পাঠক সমাজৰ আগত উপস্থাপন কৰিছে। প্ৰেমচন্দৰ মতে সমাজৰ এই অপ্ৰয়োজনীয় ৰীতি-নীতি, কঠোৰ বান্ধোন আৰু অন্ধবিশ্বাসৰ বেছিকৈ বলি হ'বলগীয়া হয় নাৰী জাতিয়ে। নাৰী সমস্যাক অনুধাৱন কৰি প্ৰেমচন্দে তেওঁৰ উপন্যাসত নাৰীৰ প্ৰতি অকল সহানুভূতিয়েই প্ৰদৰ্শন কৰি ক্ষান্ত নাথাকি তেওঁলোকে যাতে সমাজত সম-অধিকাৰ আৰু স্বতন্ত্ৰতা পায় তাৰ বাবেও সাহিত্যৰ মাধ্যমেৰে সমাজৰ কু-প্ৰথাবোৰৰ মুক্তভাৱে বিৰোধ কৰি আহিছে। চলিত সময়তো

কাগজে-পত্ৰই, সামাজিক মাধ্যমেৰে নাইবা স্ব-চক্ষুৰেও নাৰীৰ ওপৰত বহুতো অমানৱীয় ঘটনা, অত্যাচাৰ, শোষণ আদি দেখিবলৈ পাওঁ, যিটো প্ৰেমচন্দৰ সময়তকৈও ভয়ংকৰ আৰু এনেবোৰ সমস্যাৰ অনুমান প্ৰেমচন্দে আগতেই কৰিছিল।

প্ৰেমচন্দে আমাৰ সমাজত প্ৰচলিত নাৰীশোষণ আৰু নাৰী সমস্যা সম্পৰ্কে প্ৰথমে নিজে সজাগ হৈহে সমাজক সজাগ কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰিছে তাৰ এক স্পষ্ট প্ৰতিচ্ছবি আমাৰ অনুসন্ধানত প্ৰতিফলিত হৈছে। প্ৰেমচন্দে মানুহৰ মানসিক চেতনা আৰু মূল্যবোধৰ পৰিৱৰ্তন ঘটাই সমাজত প্ৰচলিত নাৰীকেন্দ্ৰিক সমস্যা আৰু ব্যাধিবোৰক দূৰ কৰি কেনেকৈ উপযুক্ত সমাজ গঢ় দিব পাৰি তাৰ যথাযথ বৰ্ণনা তেওঁৰ উপন্যাস সাহিত্যৰ মাধ্যমেৰে আগবঢ়াইছে।

প্ৰেমচন্দক তদানীন্তন সমাজখনৰ কাঠামোগত অনমনীয়তা আৰু ব্যাধিসমূহে উদ্বিগ্ন কৰি তুলিছিল। যাৰ ফলশ্ৰুতিত তেওঁ নিজৰ অনুভৱ আৰু অভিজ্ঞতাৰ সহায়ত সাহিত্যক মাধ্যম হিচাবে লৈ এই অনমনীয়তা আৰু ব্যাধিসমূহৰ বিৰুদ্ধে মাৰ বান্ধি থিয় হ'বলৈ বন্ধ পৰিপক্ক হৈছিল। তেওঁৰ অন্তৰ্নিহিত উদ্দেশ্য আছিল তেওঁৰ লিখনিৰ মাধ্যমেৰে এনে সামাজিক কাঠামোগত অনমনীয়তা আৰু ব্যাধিসমূহৰ উপস্থিতিৰ বিষয়ে সমাজক অৱগত কৰা আৰু তাৰ পৰা উদ্ভৱ হোৱা সাম্ভাব্য সমস্যা সম্পৰ্কে সমাজৰ সকলো শ্ৰেণীৰ লোকক সজাগ কৰা।

প্ৰেমচন্দে তেওঁৰ লিখনিৰ মাধ্যমেৰে কেতিয়াও সমাজত বিদ্ৰোহৰ ধ্বনি সুদৃঢ় কৰাত গুৰুত্ব দিয়া নাছিল। ইয়াৰ পৰিৱৰ্তে তেওঁ সমাজত এনে এটা উপযুক্ত বাতাবৰণ সৃষ্টিত গুৰুত্ব দিছিল য'ত সমাজৰ প্ৰতিজন ব্যক্তিয়ে (পুৰুষ-নাৰী নিৰ্বিশেষে) উচিত সামাজিক স্বীকৃতি লাভ কৰে। উচিত সামাজিক স্বীকৃতিয়ে তেওঁলোকক তেতিয়াহে সমাজৰ প্ৰতি দায়বদ্ধ কৰি তুলিব আৰু বৃহত্তৰ সমাজ গঠন আৰু উন্নয়নৰ প্ৰক্ৰিয়াত সমাজৰ প্ৰতিজন ব্যক্তিৰ অংশীদাৰিত্ব সুনিশ্চিত হ'ব আৰু আমাৰ উন্নয়ন আংশিক আৰু পক্ষপাতিত্বমূলক নহৈ অন্তৰ্ভুক্তি মূলক, অংশগ্ৰহণমূলক আৰু বহনক্ষম হ'ব। ❑

প্ৰসংগ পুথি আৰু গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

গৱেষণা গ্ৰন্থ আৰু গৱেষণা পত্ৰ ঃ

কুমাৰ, ৰাকেশ; (২০১৮); *मुंशी प्रेमचंद के उपन्यास साहित्य में चित्रित सामाजिक और पारिवारिक समस्याओं का अध्ययन,* (গৱেষণা-গ্ৰন্থ); http://hdl:handle.net/10603/214293 ৰ পৰা ২৫-১০-২০২১ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

কুৰিআকোজ, ৰীতা; (১৯৯৫); *प्रेमचंद के उपन्यासों में यथार्थवाद का पुन: मुल्यांकन,* (গৱেষণা-গ্ৰন্থ); http://hdl.handle.net/10603/7375 ৰ পৰা ৫.০৯.২০২১ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

ঝালা, যোগেশ ভাই, প্ৰতাপসিং; (২০১১); *प्रेमचंद के उपन्यास में नारी संवेदना : एक अध्ययन,* (গৱেষণা-গ্ৰন্থ); http://hdl.handle.net/10603/7368 ৰ পৰা ২০.০৫.২০২২ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

তিৱাৰী, সিং মৌচুমী; (২০১৮); *प्रेमचंद के उपन्यासों मे स्त्री विमर्श : एक अध्ययन,* Tribhuvan University Journal; 32(2),295-308; https://doi.org/10.3126/tuj. v32i2.24725 ৰ পৰা ১৮-০৯-২০২১ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

পল, সুজাতা; (২০১১); *प्रेमचंद के उपन्यासों में चित्रित प्रेम की समस्याएँ (वरदान, प्रतिज्ञा, सेवासदन, रंगभूमि और निर्मला के विशेष सन्दर्भ में),* (গৱেষণা-গ্ৰন্থ); http://hdl:handle.net/10603/93219 ৰ পৰা ১১-১২-২০২১ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

বৰ্মা, আৰ.পী; (২০১৪); *International Journal of Scientific & Innovatine Reserch Studies*; Vol(2); Issue-2.

মিশ্ৰা, কীৰ্তি; (২০০২); *1960 से 1980 तक के उपन्यास लेखन में स्त्री विमर्श का मूल्यांकन* (গৱেষণা-গ্ৰন্থ) ইলাহাবাদ বিশ্ববিদ্যালয়ঃ ইলাহবাদ, https://archive.org/details/in.ernet.dli.2015.480329 ৰ পৰা ০৩-০২-২০২৩ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

মুল্লা, এম আই; (১৯৯৪); *हिन्दी के ऐतिहासिक कथा–साहित्य में नारी समस्याएँ (प्रेमचंद युग से सन 1960 ई.तक),* (গৱেষণা-গ্ৰন্থ); http://hdl.handle.net/10603/144788 ৰ পৰা ২.০২.২২ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

ৰাণী, মায়া; (১৯৯৬); *प्रेमचंद के उपन्यासों में नारी,* (গৱেষণা-গ্ৰন্থ); http://hdl:handle.net/10603/144788 ৰ পৰা ০২-০৩-২০২২ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

সিং, সন্ধ্যা; (২০০৬); *प्रेमचंद साहित्य में नारी विमर्श,* (গৱেষণা-গ্ৰন্থ); http://hdl:handle.net/10603/178040 ৰ পৰা ০৫-১০-২০২২ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

সুনীতা; (২০১২); *मुंशी प्रेमचंद के उपन्यासों में नारी की संघर्ष यात्रा,* (গৱেষণা-গ্ৰন্থ); http://hdl:handle.net/10603/8849 ৰ পৰা ২০-০৮-২০২১ তাৰিখে লোৱা হৈছে।

গ্ৰন্থ ঃ

অগ্ৰৱাল, বিন্দু ; (১৯৬৮); *हिन्दी उपन्यास में नारी चरित्र चित्रण,* দিল্লী ঃ ৰাধাকৃষ্ণ প্ৰকাশন; https/.//archive.org/details/in.ernet.dli.2015.478348 ৰ পৰা ১২-০৫-২০২২ তাৰিখে লোৱা হৈছে।
কোহলী, নৰেন্দ্ৰ; (২০০২); *हिन्दी उपन्यास-सृजन और सिद्धान्त,* নতুন দিল্লী ঃ বাণী প্ৰকাশন।
দেৱী, শিৱৰাণী; (১৯৪৪); *प्रेमचंद : घर में,* বনাৰস ঃ সৰস্বতী প্ৰকাশন; http://archive.org/details/in.ernet.dli.2015.378653ৰ পৰা ০৯-০৬-২০২৪ তাৰিখে লোৱা হৈছে।
নৱলকিশোৰ; (২০১৯); *प्रेमचंद की प्रगतिशीलता,* নতুন দিল্লী ঃ প্ৰকাশন সংস্থান।
পৰমাৰ, দীপ্তি; (২০১১); *नारी विसर्श और नारी लेखन के सरोकार,* https://www.rachanakar.org/2011/07/blog-post-7915.html?m=1ৰ পৰা ১৬-১১-২০২৪ তাৰিখে লোৱা হৈছে।
ৰায়, অমৃত; (২০০৫); *प्रेमचंद: कलम का सिपाही,* এলাহবাদ ঃ হংস প্ৰকাশন।
ৰায়, গোপাল; (২০০৯); *हिन्दी उपन्यास का इतिहास,* নতুন দিল্লী ঃ ৰাজ কমল প্ৰকাশন।
ৰায়, সৰিতা ; (১৯৯৬); *उपन्यासकार प्रेमचंद की सामाजिक चिन्ता,* নতুন দিল্লী ঃ বাণী প্ৰকাশন।
শৰ্মা, ৰামবিলাস; (২০০৮); *प्रेमचंद और उनका युग,* নতুন দিল্লী ঃ ৰাজকমল প্ৰকাশন।
শুক্ল, উমা; (১৯৯৪); *भारतीय नारी-अस्मिता की पहचान,* এলাহবাদ ঃ লোকভাৰতী প্ৰকাশন।
সিং, নামবৰ; (২০১৭); *प्रेमचंद और भारतीय समाज,* নতুন দিল্লী ঃ ৰাজকমল প্ৰকাশন।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

অসমীয়া ভাষাত দৈনিক ব্যৱহৃত বিশেষ্যপদসমূহৰ সমষ্টিগত বৈশিষ্ট্যসমূহ আৰু ইয়াৰ তাত্বিক পৰ্যবেক্ষণ

ড° কৃষ্ণা হাজৰিকা

অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
বিৰাংগণা সতী সাধিনী ৰাজ্যিক বিশ্ববিদ্যালয়
গোলাঘাট, অসম-৭৮৫৬২১
৯৫৬০৮৩১৪২৭
krishnaahazarika47@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

এই গৱেষণা পত্ৰখনে জেনেৰেটিভ বাক্যবিন্যাসৰ কাঠামো ব্যৱহাৰ কৰি অসমীয়া ভাষাৰ প্ৰেক্ষাপটত বাণ্ডল বা অসমীয়া প্ৰতিশব্দ সমষ্টিগত বৈশিষ্ট্যৰ ধাৰণাটোৰ ওপৰত গভীৰভাৱে গৱেষণা কৰিছে। বাক্য গঠনৰ অধ্যয়নত বৈশিষ্ট্য হৈছে মৌলিক উপাদান যিয়ে শব্দৰ গঠন আৰু অৰ্থ দিয়াত গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰে। মূলতঃ বৈশিষ্ট্যসমূহে শব্দ এটাৰ নিৰ্দিষ্ট ধৰ্মসমূহক প্ৰতিনিধিত্ব কৰে, যাৰ ফলত বাক্যৰ ভিতৰত ইয়াৰ ৰূপতাত্বিক, বাক্য গঠন আৰু অৰ্থগত আচৰণৰ ব্যাখ্যা সম্ভৱ হয়।

তাত্বিক বাক্য গঠনৰ মিনিমেলিযিম দৃষ্টিভংগীৰ ভিতৰত শব্দক ভাষিক বৈশিষ্ট্যক "বাণ্ডল" হিচাপে ধাৰণা কৰি, জটিলভাৱে সংযুক্ত হৈ ৰূপ আৰু অৰ্থ দুয়োটাৰে ৰঞ্জিত গঠন কৰা হয়। লক্ষণীয় যে অসমীয়াত বিশেষ্য "বচন", " লিঙ্গ", "পুৰুষ" "কাৰক" আদি বিভিন্ন বৈশিষ্ট্যৰে গঠিত, কিন্তু এইটো লক্ষ্য কৰাটো আমোদজনক যে কেৱল "পুৰুষ"ক ব্যাকৰণগত বুলি গণ্য কৰা হয়, আৰু ইয়াৰ চিহ্নিতকৰণ মূলতঃ ক্ৰিয়াৰ ওপৰত নিৰ্ভৰশীল। কিন্তু বিশেষ্যৰ " লিঙ্গ " আৰু "বচন" বৈশিষ্ট্য সূচাবলৈ বিকল্প আভিধানিক উপায় আছে।

এই গৱেষণা পত্ৰখনত আমি বাণ্ডল বৈশিষ্ট্যৰ প্ৰকাশৰ ওপৰত বিশেষ গুৰুত্ব দি অসমীয়াৰ ভাষিক বৈশিষ্টসমূহ অন্বেষণ কৰিছো। আমি বিশেষ্যৰ বাক্য গঠন বিশ্লেষণ আৰু ভাষাত " লিঙ্গ" আৰু "বচন" বৈশিষ্ট্যসমূহৰ প্ৰকাশৰ অনন্য পদ্ধতিৰ অনুসন্ধান, ইয়াৰ সুকীয়া আভিধানিক প্ৰকাশক জেনেৰেটিভ বাক্যবিন্যাসৰ কাঠামো প্ৰয়োগ, লগতে আমি বাক্য গঠনৰ জটিলতা আৰু অসমীয়াৰ ভাষিক পৰিৱেশ গঢ় দিয়াত বাণ্ডল বৈশিষ্ট্যই লোৱা ভূমিকা সম্পৰ্কে গভীৰ বুজাবুজি লাভ কৰাৰ লক্ষ্য ৰাখিছো।

মূল শব্দ ঃ

অসমীয়া, বাণ্ডল বৈশিষ্ট্য, উৎপাদনশীল বাক্য গঠন, মিনিমেলিযিম পদ্ধতি, ভাষিক ধৰ্ম, বাক্য গঠন।

১. অৱতৰণিকা ঃ

শিক্ষাবিদসকলে ব্যৱহৃত শব্দৰ মাজত অপ্ৰয়োজনীয় পাৰ্থক্য কৰে নেকি বুলি প্ৰশ্ন কৰাটো এটা সাধাৰণ কৌতূহল। আমাৰ জীৱনৰ বেছিভাগেই আমাৰ মগজুত থকা শব্দৰ বিশাল শৃংখলৰ সৈতে প্ৰয়োজনীয় সকলো ভাৱ বিনিময় কৰিব পাৰো, যদিও এই প্ৰতিটো শব্দ ব্যৱহাৰ ইমানেই গুৰুত্বপূৰ্ণ যে ইয়াক প্ৰয়োজনীয়তাৰে বাছি ল'বলৈ

দৃঢ়প্ৰতিজ্ঞ যেন জীৱন ইয়াৰ ওপৰত নিৰ্ভৰশীল। সঁচা আমাৰ জীৱন ইয়াৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ নকৰে। যদিও আমি অজানিতে প্ৰতিটো শব্দৰ গঠন আৰু ব্যৱহাৰৰ প্ৰতি নিশ্চিত হোৱাটোও সঁচা। গতিকে, এই লেখাটোত আমি অসমীয়া শব্দ শ্ৰেণী বিশেষ্য শব্দসমূহৰ গঠন আৰু ব্যৱহাৰ তাত্বিক দৃষ্টিৰ সৈতে অধ্যয়ন কৰিম। যাতে, এনেদৰেই আমি অসমীয়া ভাষাৰ প্ৰতিটো শব্দৰ গঠন আৰু ব্যৱহাৰৰ প্ৰতি জানি-বুজি নিশ্চিত হৈ, ভাষাটো অধ্যয়নৰ প্ৰতি আকষণ বৃদ্ধি কৰিব পাৰো।

এই গৱেষণা পত্ৰখনত অসমীয়া বিশেষ্যপদৰ সমষ্টিগত বৈশিষ্ট্যসমূহৰ অনুসন্ধান কৰা হব। ব্যৱহৃত পৰিভাষা সমষ্টিগত বৈশিষ্ট্যসমূহ (bundle features) ন'ম চমস্কিৰ (Noam Chomsky)জেনেৰেটিভ বাক্য গঠন প্ৰক্ৰিয়াৰ পৰা আহিছে। বাক্য গঠনত শব্দ এটাৰ বৈশিষ্ট্যই গঠন প্ৰক্ৰিয়াত গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰে। সহজ ভাষাত ক'বলৈ গ'লে এটা বৈশিষ্ট্য হৈছে শব্দৰ এটা বৈশিষ্ট্য, যিয়ে আমাক বাক্যত শব্দৰ ৰূপতাত্বিক, বাক্য গঠন আৰু অৰ্থগত আচৰণৰ বিষয়ে বুজিবলৈ সহায় কৰে। তাত্বিক বাক্য গঠনৰ (In the theory of sentence structure) "মিনিমেলিযিম" (Minimalism) পদ্ধতিত শব্দক "বৈশিষ্ট্যৰ সমষ্টি" হিচাপে গঢ় দিয়া হয়। এই পদ্ধতিমতে এটা বিশেষ্যপদে ৰূপ আৰু অৰ্থৰ সৈতে এক গঠনত একত্ৰিত হৈ অন্তভূক্ত কৰা ভাষিক বৈশিষ্ট্যসমূহৰ হৈছে ইয়াৰ বিভিন্ন সমষ্টিগত বৈশিষ্ট্য; যেনে "বচন", "লিঙ্গ" "কাৰক" ইত্যাদি। ইয়াৰে "বচন" আৰু "লিঙ্গ" ব্যাকৰণগত নহয়; কেৱল "পুৰুষ" ব্যাকৰণগত। কাৰণ ইয়াক ক্ৰিয়া বিভক্তি দ্বাৰা চিহ্নিত কৰা। আনহাতে "লিঙ্গ" আৰু "বচন" আভিধানিকভাৱে, বিশেষ্যপদৰ চিহ্নিত কৰা হয়।

যিকি নহক শব্দ এটাৰ বৈশিষ্ট্যই বাক্য গঠনত গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰে। মূলতঃ, এটা বৈশিষ্ট হৈছে শব্দৰ এটা বৈশিষ্ট্য, যিয়ে আমাক ৰূপতাত্বিক, বাক্য গঠনৰ আৰু বাক্যত শব্দৰ অৰ্থগত আচৰণ ব্যাখ্যা কৰিবলৈ অনুমতি দিয়ে। এই গৱেষণা পত্ৰখনত মূলতঃ শব্দৰ আচৰণৰ ওপৰত বিশেষ অনুসন্ধান কৰা হৈছে, আৰু ইয়াক বিভিন্ন ৰূপত ৰাখিবলৈ চেষ্টা কৰা শিতানসমূহক। আমি বিশেষভাৱে ইয়াত বিশেষ্যপদসমূহ লৈ কেনেকৈ আৰু কোনবোৰ বৈশিষ্ট্যৰ লগত ইহঁতৰ সম্পৰ্ক আছে তাক দেখুৱাবলৈ অসমীয়াত বিশেষ্যটো নিৰ্মাণ কৰা হব। বিশেষ্যপদসমূহ হৈছে বাক্যত ব্যৱহিত একো একোটা বিষয় বা বস্তু যি বাক্যৰ মূল গঠন প্ৰক্ৰিয়াত এক গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰে। সেয়েহে বিশেষ্যপদৰ বিজ্ঞানিক বিশ্লেষণ অতি প্ৰয়োজন। আৰু আমি বৰ্তমান এই গৱেষণা পত্ৰখনত বিশেষ্যপদক বিজ্ঞানিকভাৱে তত্বৰ সহায়ত বিশ্লেষণ কৰিম।

২. বিশেষ্যপদৰ ভাষিক পটভূমি ঃ

বিশেষ্যৰ প্ৰামাণিক কাৰ্য্য হ'ল বাস্তৱত কিছু অংশক নাম দিয়া, আৰু সত্তাক পৰিচয় কৰা। বিশেষ্যই সাধাৰণতে নামকৰণ সমীপৰ অন্তৰ্গত বস্তুটোবোৰক বুজায়। সেয়েহে ই এক প্ৰকাৰৰ নামবাচক পদ অথবা শব্দ। বিশেষ্যপদৰ যিকোনো এটা ভাষাত ব্যৱহাৰ অৱশ্যে বিচ্ছিন্নভাৱে (in isolation) খুব কমেইহে হয়। বিভিন্ন বিশেষ্য বাক্যাংশত (Noun Phrase) ই থাকে; অথবা প্ৰসংগভিত্তিক কাযত (contextual activities)। বিশেষ্য বাক্যাংশৰ কাযই গণনাযোগ্যতাক সংকেত দিয়া (number) একবচন, বহুবচন, নতুন বনাম প্ৰদত্ত মৰ্যাদা (new vs given status), সত্তাৰ সাধাৰণ বা ব্যক্তিগত চৰিত্ৰ (general or individual), আৰু ইয়াৰ প্ৰসংগত ব্যৱহাৰক (referential use) বুজাই। অৱশ্যে, বহু ভাষাত বিশেষ্য বাক্যাংশত উপস্থিত নিৰ্ণায়ক (determiner) আৰু বচনকহে (number) বিশেষ্যৰ ভাষিক সূত্ৰ বুলি ধৰা হয়, কাৰণ ইহঁতক সাধাৰণতে কায্য এটাৰ বিষয় বা বস্তুনিষ্ঠ উপাদান (subject or object) ৰ সংকেত প্ৰদানৰ বাবে দায়ী অনুমান কৰা হয়।

ইয়াৰ উপৰিও, আনুষ্ঠানিকভাৱে অসমীয়া বিশেষ্যক এক শ্ৰেণী হিচাপে প্ৰতিষ্ঠা কৰাবলৈ দুবিধ ৰূপতাত্বিক মাপকাঠী আৰু বাক্য গঠনৰ মাপকাঠী ৰ দৰে ব্যৱহাৰ কৰা হয়। অসমীয়াত ৰূপতাত্বিক মাপকাঠীক আকৌ দুটা ভাগত বিভক্ত কৰিব পাৰি যাতে শ্ৰেণী বিশেষ্যটো বুজিবলৈ সহজ হৈ পৰে। এইকেইটা ব্যুৎপত্তিগত ৰূপতাত্বিক মাপকাঠী (derivational morphological criteria) আৰু বিভক্তিগত ৰূপতাত্বিক মাপকাঠী (inflectional morphological criteria)।

২.১ ব্যুৎপত্তিগত ৰূপতাত্বিক মাপকাঠী ঃ

অসমীয়া ভাষাটোত আমি তিনিটা উৎপাদনশীল প্ৰক্ৰিয়াক বিশেষ্যপদৰ নিৰ্মাণৰ ব্যুৎপত্তিগত ৰূপবিজ্ঞান মাপকাঠী বুলি তাত্বিকভাৱে অভিহিত কৰিব পাৰো।

সেইকেইটা সংলগ্ন (affixation), ৰূপান্তৰ (conversion) আৰু যৌগিকতা (compounding)। গতিকে, এই প্ৰক্ৰিয়াসমূহৰ বিষয়ে তলত দিয়া ধৰণে চমুকৈ আলোচনা কৰিব পাৰো।

(ক) সংলগ্নকৰণ ব্যুৎপত্তিগত ৰূপবিজ্ঞান ঃ

এই উৎপাদনশীল প্ৰক্ৰিয়াৰ জৰিয়তে, উপসৰ্গ আৰু প্ৰত্যয় যোগ কৰি নতুন বিশেষ্য গঠন কৰা প্ৰক্ৰিয়াক বুজায়। এই উপসৰ্গ আৰু প্ৰত্যয়বোৰে ভিত্তি শব্দটোৰ অৰ্থ, ব্যাকৰণগত কাৰ্য্য বা দুয়োটা সলনি কৰিব পাৰে। আন বহু ভাষাৰ দৰে অসমীয়াতো বিশেষ্য সংযোজনৰ বাবে উপসৰ্গ আৰু প্ৰত্যয় দুয়োটা থাকে। শব্দ এটাৰ আৰম্ভণিতে উপসৰ্গ যোগ কৰা হয়, আনহাতে শেষত প্ৰত্যয় যোগ কৰা হয়। অসমীয়াত বিশেষ্য উপসৰ্গ আৰু প্ৰত্যয়ৰ কেইটামান উদাহৰণ দিয়া হ'ল ঃ

বিশেষ্য	উপসৰ্গ	ব্যুৎপত্তিগত বিশেষ্য
কথা (word)	অ-	অকথা (bad word)
নিয়ম (rule)	অ-	অনিয়ম (misconduct)
নীতি (regulation)	দু-	দুনীতি (irregulation)
সুখ (happiness)	অ-	অসুখ (disease)

সূচী - ১

বিশেষ্য	প্ৰত্যয়	ব্যুৎপত্তিগত বিশেষ্য
ধন (money)	-নি	ধনী (rich)
ৰোগ (disease)	-ই	ৰোগী (patient)
ধান (rice, paddy)	-নি	ধাননি (paddy field)
মৰম (love)	-আল	মৰমিয়াল (lovable)

সূচী- ২

(খ) ৰূপান্তৰ ঃ

কিছুমান বিশেষণ আৰু ক্ৰিয়া পদে কেতিয়াবা কোনো ৰূপতাত্ত্বিক সলনি নোহোৱাকৈ বিশেষ্য হিচাপে ব্যৱহিত হয়। কিন্তু এনে ধৰণৰ বিশেষ্য পৰিৱৰ্তন অথবা নিৰ্মাণ, ব্যৱহাৰৰ প্ৰসংগ আৰু বিশেষ্য নিৰ্মাণৰ ওপৰত ভিত্তি কৰিহে ধৰ্মান্তৰকৰণ বিশেষ্যপদৰ গঠন হয়। উদাহৰণস্বৰূপে ঃ

১. ঘৰটোৰ উচ্চতা কিমান?

'What is the height of the house?

ইয়াত এই বাক্যটোত 'উচ্চতা' শব্দটো এটা বিশেষণ, যদিও ই ইয়াত বিশেষ্য হিচাপে কাম কৰিছে।

(গ) যৌগিকতা (Compounding)

অসমীয়াত বিশেষ্য গঠনৰ এক অতি উৎপাদনশীল উপায়। বিশেষ্য যৌগিকৰ উপাদানসমূহ N+V (noun+verb) বিশেষ্য + ক্ৰিয়া, A+N, (adjective+noun) বিশেষণ + বিশেষ্য N+N (noun+noun) বিশেষ্য + বিশেষ্য আদি হ'ব পাৰে। যেনে-

যৌগিকৰ উপাদান			যৌগিক শব্দ	Meaning
N+V	পানী (water)	লগা (want)	পানীলগা	Influenza
A+N	বৰ (big)	গীত (song)	বৰগীত	A kind of song
N+N	সাহিত্য (literature)	সভা (meeting)	সাহিত্যসভা	Literary society

সূচী- ৩

২.২ বিভক্তিগত ৰূপতাত্ত্বিক মাপকাঠী ঃ

অসমীয়া ভাষাত বিশেষ্যসমূহৰ মূলতঃ কাৰক আৰু পুৰুষৰ ব্যাকৰণগত ব্যৱহাৰৰ নিৰূপ বিভক্তিগত ৰূপবিজ্ঞানত প্ৰকাশ হয়। এই দুটা বিশেষ্যপদৰ উপাদানৰ বাহিৰে, অসমীয়া বিশেষ্যপদসমূহ বচন, লিঙ্গ, আৰু নিৰ্দিষ্টবাচক উল্লেখৰ বাবেও সংযোজন কৰা হয়। এইদৰেই এই সমষ্টিগত বিভাজনবোৰৰ সংযোজনেই অসমীয়া ৰূপতাত্ত্বিক ব্যৱস্থাটোক অত্যন্ত বিভক্তিমূলক বুলি প্ৰমাণ কৰে।

অসমীয়া বাক্য গঠনৰ মাপকাঠীত এই ৰূপতাত্ত্বিক মাপকাঠীয়ে আকৰ্ষণীয়ভাৱে অসমীয়াত বিশেষ্য বা বিশেষ্য বাক্যাংশ গঠনত ভূমিকা গ্ৰহণ কৰে। অসমীয়াত বিশেষ্য বা বিশেষ্য বাক্যাংশৰ নিৰ্মাণ বাক্য গঠনৰ বৈশিষ্ট্যই সিদ্ধান্ত লয় কাৰ্য গঠনকাৰীৰ (function) আৰু নিৰ্ভৰশীলতাৰ (dependency) ৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি। যদি অসমীয়াত বাক্যাংশ স্তৰত (at phrasal level) বিশেষ্যই মুখ্য বিশেষ্য (head noun) আৰু বিশেষ্য বিশেষণ (Adjective) হিচাপে বাক্য (2) ত আৰু (3)ত নিৰ্ণায়ক (Determiner) হিচাপে কাম কৰে, তেতিয়া বিশেষ্যৰ নিজৰ নিৰ্ভৰশীল পৰিসৰ, বাক্যৰ অন্যান্য অংশৰ পৰা পৃথক কৰি এনে বিশেষ্যক নিৰ্ণায়ক, (Determiner), বিশেষণ শব্দ বা বাক্যাংশ বা গুণবাচকৰ (Adjective modifier) দৰে ব্যৱহাৰ কৰা হয়।

২. ৰাতিআকাশ ধুনীয়া।

৩. ৰাতিৰ আকাশ ধুনীয়া লাগে।

সেয়েহে বাক্য স্তৰত বিশেষ্য বা বিশেষ্য বাক্যাংশই মুখ্য বা অন্য নিৰ্ণায়ক (সমূহ) আৰু বিশেষণ (সমূহ)ৰ সৈতে, উপলব্ধি কৰিব পৰা উপাদানসমূহ হৈছে- কৰ্তা উদ্দেশ্য (subject) আৰু কৰ্ম উদ্দেশ্য (object)।

৩. মিনিমেলিযিম দৃষ্টিভংগীত বৈশিষ্ট্য ঃ

ভাষাবিজ্ঞানত মিনিমালিজমৰ ধাৰণাটো প্ৰথমবাৰৰ বাবে ১৯৯০ চনৰ আৰম্ভণিতে আমেৰিকাৰ এজন প্ৰভাৱশালী ভাষাবিদ নোয়াম চমস্কিয়ে (Noam Chomsky) প্ৰৱৰ্তন কৰিছিল। চমস্কিৰ মিনিমেলিযিম অথবা অসমীয়া পৰিভাষাত নূন্যতম দৃষ্টিভংগীৰ লক্ষ্য আছিল তেওঁ পূৰ্বে বিকশিত কৰা জেনেৰেটিভ ব্যাকৰণৰ তত্ত্বক সৰল আৰু পৰিশোধন কৰা। নূন্যতমতাবাদে বাক্যৰ বাক্য গঠনৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰি প্ৰস্তাৱ কৰে যে মানৱ ভাষাক নূন্যতম নিয়ম আৰু নীতিৰ দ্বাৰা ব্যাখ্যা কৰিব পাৰি। ই সকলো ভাষাৰ অন্তৰ্নিহিত মৌলিক নীতিসমূহ উন্মোচন কৰিব বিচাৰে আৰু ভাষা উৎপাদন আৰু বুজাৰ লগত জড়িত জ্ঞানমূলক প্ৰক্ৰিয়াসমূহ বুজিব বিচাৰে। সেয়েহে, এই ধাৰণা অনুসৰি শব্দ এটা সমষ্টিগত বৈশিষ্ট্য হৈছে শব্দটো গঠনৰ নূন্যতম নিয়ম আৰু নীতি, যাৰ অধ্যয়নৰ দ্বাৰা শব্দটোৰ শ্ৰেণীগত সকলো বৈশিষ্ট্য নিৰ্ধাৰণ কৰিব পাৰি।

গতিকে, আমি ইয়াত ব্যৱহাৰ কৰা শব্দৰ সমষ্টিগত বৈশিষ্ট্য শব্দটোক শব্দৰ বৈশিষ্ট্য অধ্যয়নৰ বাবে ব্যৱহিত কৰা এটা আড়ম্বৰপূৰ্ণ শব্দ। এই গৱেষণা পত্ৰখনত ব্যৱহিত বৈশিষ্ট্য নিৰ্ধাৰণৰ আটাইতকৈ সহজ কথাটো হ'ল, ইয়াত এটা বৈশিষ্ট্য কেৱল এটা বিশেষ্য শব্দৰ বৈশিষ্ট্য। সেয়েহে, সাধাৰণ অৰ্থত যদি আমি ইংৰাজীৰ ভাষাত চাও; ইংৰাজী ভাষাটোত একবচন আৰু বহুবচন বিশেষ্যৰ মাজত পাৰ্থক্য আছে। কিন্তু একবচন বিশেষ্যৰ কোনো বিশেষভাৱে নিৰ্মাণ নহয়। তেতিয়া আমি এই বিশেষ্যৰ বৈশিষ্ট্যসমূহ মিনিমালিজমৰ ধাৰণাটোৰ মতে তলত দিয়াৰ ধৰণে দেখুৱাব পাৰো।

৪. (i) man [ ]
(ii) men [plural]
(iii) cat [ ]
(iv) cats [plural]
(v) sheep [ ]
(vi) sheep [plural]

আমি মাত্ৰ পৰীক্ষা কৰি থকা মতামতটোৰ এটা ঘনিষ্ঠ বিকল্প হ'ল এই ধাৰণাটো গ্ৰহণ কৰা যে, বৈশিষ্ট্যসমূহৰ সদায় মান থাকে, আৰু এই মানসমূহ দুইধৰণৰ ! বাইনাৰী (Binary) হব পাৰে। অৰ্থাৎ এটা বৈশিষ্ট্য যেনে একবচনৰ মান হ'ব একবচন বিশেষ্যৰ বাবে [+], আৰু বহুবচন বিশেষ্যৰ বাবে (—). উদাহৰণৰূপে

৫. man [+singular,–plural]
৬. men [-singular,+plural]

এইদৰেই, দ্বৈত ৰূপ থকা এটা ভাষাই (একবচন, ৰহুবচন) ক এটা সম্ভাব্য সমষ্টিগত বৈশিষ্ট্য হিচাপে অনুমতি দিয়ে, আৰু (—একবচন, —বহুবচন) সমষ্টিগত বৈশিষ্ট্যক সামূহিকভাৱে বাতিল কৰা এটা সাধাৰণ বাধা থাকে।

যিকি নহক, আমি জনা মতে তাত্ত্বিক বাক্য গঠনৰ মিনিমালিষ্ট পদ্ধতিত শব্দবোৰ এনেদৰে নিৰ্মাণ কৰা হয়; যাৰ পৰিণতিত ভাষিক বৈশিষ্ট্যৰ সমষ্টিগত বৈশিষ্ট্য সমূহৰ ৰূপ আৰু অৰ্থৰ সৈতে এটা গঠনত একত্ৰিত হয়। এইটো আমি আকৌ (৭) ত 'ল'ৰা' আৰু 'আন্তৰিকতা' ইংৰাজী পৰিভাষাৰ বিশেষ্য 'boy' আৰু 'sincerity' ক্ষেত্ৰত দেখা পাও ঃ

৭. (a) sincerity [-Count, +Abstract]
(b) boy [-Count, +Common, +Animate, +Human]

চমস্কিৰ মিনিমালিষ্ট পদ্ধতিত বৈশিষ্ট্য ব্যৱস্থাপ্ৰণালীয়ে দুবিধ বৈশিষ্টক পৃথক কৰে: ব্যাখ্যাযোগ্য বৈশিষ্ট্য আৰু ব্যাখ্যা কৰিব নোৱাৰা বৈশিষ্ট্যসমূহ। "ব্যাখ্যাযোগ্য বৈশিষ্ট্য" ৰ প্ৰভাৱ অৰ্থগত ব্যাখ্যাৰ ওপৰত পৰে। উদাহৰণস্বৰূপে, Phi-বৈশিষ্ট্য ব্যাখ্যাযোগ্য। ফাই-বৈশিষ্ট্যসমূহ হ'ল: পুৰুষ, বচন, আৰু লিঙ্গ। ব্যাখ্যাযোগ্য বৈশিষ্ট্যসমূহ অৰ্থগত আৰু ৰূপতাত্ত্বিক তথ্যৰ দ্বাৰা প্ৰেৰিত হয়।

"অব্যাখ্যাযোগ্য বৈশিষ্ট্য" হৈছে ব্যাখ্যাযোগ্য বৈশিষ্ট্যৰ বিপৰীত বৈশিষ্ট্য যিবোৰ অৰ্থগত বৈশিষ্ট্যৰ দ্বাৰা প্ৰভাৱিত নহয়। কিন্তু অব্যাকৰণগততা বুজাবলৈ হ'লে ইয়াৰ প্ৰয়োজন কিছুমান বিশেষ বাক্যত হয়। উদাহৰণস্বৰূপে: কাৰক। কিয়নো কাৰক হৈছে এটা ব্যাকৰণগত বৈশিষ্ট্য যাৰ প্ৰত্যক্ষ অৰ্থগত ব্যাখ্যা নাই। অথবা ইয়াৰ লগত জড়িত বিশেষ্যৰ অৰ্থৰ সৈতে ইয়াৰ প্ৰত্যক্ষ সম্পৰ্ক নাই। উদাহৰণস্বৰূপে, "জনে মেৰীক দেখিলে" বাক্যটো বিবেচনা কৰক। এই বাক্যটোত "জন" বিশেষ্য বাক্যাংশটো কৰ্তা কাৰকৰ কাৰণ ইয়াত প্ৰথমা বিভক্তি যোগ হৈছে। ইয়াৰ পৰা এইটোও বুজা যায় যে ই "দেখিলে" ক্ৰিয়াৰ বিষয়বস্তু। আনহাতে "মেৰী" বিশেষ্য বাক্যাংশটো কৰ্ম কাৰক। কাৰণ কৰ্তাই ইয়াৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰি কাৰ্যটো সম্পাদন কৰিছে। সেয়েহে, ইয়াক "দেখিলে" ক্ৰিয়াৰ প্ৰত্যক্ষ বস্তুনিষ্ঠ উপাদান বুলি বুজা যায়। এইক্ষেত্ৰত ক্ৰিয়াই কৰ্তা কাৰক আৰু কৰ্ম কাৰক মাজত বিভক্তিৰ সহায়ত ভিন্নতা নিৰ্ধাৰণ কৰি বাক্যটোৰ বাক্য গঠনৰ বাবে গুৰুত্বপূৰ্ণ তথ্য প্ৰদান কৰে। কিন্তু কাৰক বৈশিষ্ট্যটোৱে নিজেই কোনো অৰ্থগত ব্যাখ্যা দিয়া নাই। বৰঞ্চ এই বৈশিষ্ট্যসমূহ বাক্যটোৰ অন্যান্য

ব্যাখ্যাযোগ্য বৈশিষ্ট্যসমূহৰ দ্বাৰা অনুজ্ঞাপত্ৰ বা সন্তুষ্ট হোৱাৰ প্ৰয়োজন। উদাহৰণস্বৰূপে, ওপৰৰ বাক্যটোত "দেখিলে" ক্ৰিয়াই ইয়াৰ বিষয়বস্তু আৰু বস্তুনিষ্ঠ বৈশিষ্ট্যৰ সৈতে মিল থকা এটা ব্যাখ্যাযোগ্য বৈশিষ্ট্য বহন কৰিছে কাৰকে নহয়। কাৰক বৈশিষ্ট্যসমূহ ব্যাখ্যা কৰিব নোৱাৰা আৰু বাক্যটোৰ অন্যান্য ব্যাখ্যাযোগ্য বৈশিষ্ট্যসমূহ যেনে ক্ৰিয়াৰ পুৰুষ, কালৰ ৰ দ্বাৰা অনুজ্ঞাপত্ৰ বা সন্তুষ্ট হোৱাৰ প্ৰয়োজন। যদি কোনো এটা ব্যাখ্যা কৰিব নোৱাৰা বৈশিষ্ট্য সন্তুষ্ট নহয়, তেন্তে ইয়াৰ ফলত ব্যাকৰণহীনতা হ'ব পাৰে। যদি আমি এইটো বাক্য গঠনৰ ব্যকৰণিক চিত্ৰত চাও, দেখিবলৈ পাওঁ ঃ

চিত্ৰ ১: জনে মেৰীক দেখিলে

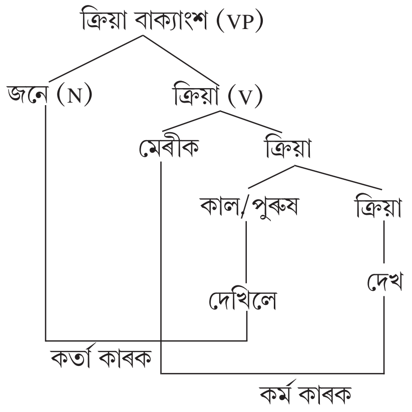

চিত্ৰ ২ : জনে মেৰীক দেখিলে

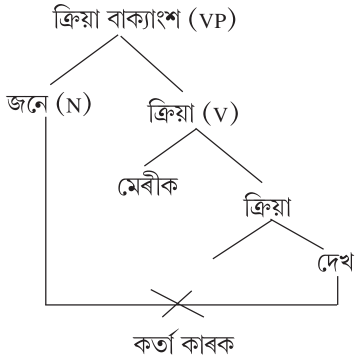

আমি ওপৰৰ চিত্ৰ দুটা যদি লক্ষ্য কৰো, তেন্তে ইয়াৰ পৰা স্পষ্টকৈ দেখা যায় যে ওপৰত আমাৰ আলোচনা কৰা কথাবোৰ নিশ্চিতভাৱে প্ৰমাণিত।

ইয়াৰ উপৰিও, মিনিমেলিযিম দৃষ্টিভংগীত বৈশিষ্ট্যই কেৱল কিছুমান বিশেষ্যৰ কিছুমান গঠনত অৱস্থান নিয়ন্ত্ৰণ কৰে। যেনে অসমীয়া ভাষাত কৰ্ম কাৰকে ক্ৰিয়া আগত ইয়াৰ স্থান নিৰ্ধাৰিত কৰে কিয়নো, ইয়াৰ অৱস্থান বৈশিষ্ট্যসমূহ ক্ৰিয়াৰ বৈশিষ্ট্য পুৰুষ, আৰু কালৰ ৰ দ্বাৰা সন্তুষ্ট হোৱাৰ প্ৰয়োজন।

৪. অসমীয়াত বিশেষ্যপদৰ সমষ্টিগত বৈশিষ্ট্যসমূহ ঃ

ভাষাবিজ্ঞানৰ মিনিমেলিযিম পদ্ধতিত "সমষ্টিগত বৈশিষ্ট"ৰ ধাৰণাটোৱে বাক্যৰ এটা বিশেষ উপাদানৰ সৈতে জড়িত বাক্য গঠনমূলক বৈশিষ্ট্যসমূহৰ এটা গোটক বুজায়। সমষ্টিগত বৈশিষ্ট্যসমূহৰ ধাৰণাটোৱে বাক্য গঠনৰ কাঠামোৰ ভিতৰত একাধিক বৈশিষ্ট্যৰ মাজৰ আন্তঃনিৰ্ভৰশীলতা আৰু পাৰস্পৰিক ক্ৰিয়াসমূহ ধৰি ৰখাত সহায় কৰে। এই দৃষ্টিভংগীত, প্ৰতিটো ব্যক্তিগত বৈশিষ্ট্যক পৃথকে পৃথকে ব্যৱহাৰ কৰাৰ পৰিৱৰ্তে, মিনিমেলিযিম পদ্ধতিয়ে প্ৰস্তাৱ কৰে যে বৈশিষ্ট্যসমূহ এটা বাক্য গঠন উপাদানৰ ভিতৰত একেলগে সমষ্টিগত হয়। এই বৈশিষ্ট্যসমূহৰ সমষ্টিসমূহে সামূহিকভাৱে সংশ্লিষ্ট উপাদানটোৰ আচৰণ, বৈশিষ্ট্য আৰু বিতৰণ নিৰ্ধাৰণ কৰে। সমষ্টিগত বৈশিষ্ট্যৰ আঁৰৰ কথা হৈছে ভাষাত পৰ্যবেক্ষণ কৰা পদ্ধতিগত আৰ্হি আৰু বাধাসমূহৰ হিচাপ দিয়া। বৈশিষ্ট্যসমূহক একেলগে গোট কৰি, মিনিমেলিযিম পদ্ধতিয়ে বাক্য গঠন আৰু বিভিন্ন উপাদানৰ মাজৰ সম্পৰ্কৰ অধিক সংহত আৰু ঐক্যবদ্ধ কৰে। সহজঅৰ্থত ইহঁতে বাক্য গঠনৰ গঠন কেনেকৈ গঢ লৈ উঠে আৰু বাক্য এটাৰ বিভিন্ন উপাদান কেনেকৈ সংযুক্ত হয় সেই বিষয়ে আমাৰ বুজাত ইহঁতে অৰিহণা যোগায়।

অসমীয়া বিশেষ্যৰ সমষ্টিগত বৈশিষ্ট্য সমূহ দুটা ভাগত ভাগ কৰি আলোচনা কৰিব পাৰি। ইহঁত হৈছে Phi-বৈশিষ্ট্য/ Φ বৈশিষ্ট্য (Phi features) আৰু কাৰক বৈশিষ্ট্য (case features)। তলৰ উপধাৰাসমূহত ইহঁতৰ ব্যাখ্যা কৰা হৈছে।

৪.১. Phi - বৈশিষ্ট্য/ Φ - বৈশিষ্ট্য ঃ

ভাষাবিজ্ঞানত phi বৈশিষ্ট্য, যাক Φ - বৈশিষ্ট্য পুৰুষ আৰু বচন বৈশিষ্ট্য বুলিও কোৱা হয়, ব্যাকৰণগত বৈশিষ্ট্যৰ এটা গোটক বুজায় যিয়ে পুৰুষ, বচন আৰু কেতিয়াবা লিঙ্গ ৰ সৈতে জড়িত তথ্য সংকেত কৰে। বাক্য এটাৰ ভিতৰত বিভিন্ন উপাদানৰ মাজত চুক্তিৰ সম্পৰ্ক নিৰ্ণয় কৰাত এই বৈশিষ্ট্যসমূহে উল্লেখযোগ্য ভূমিকা পালন কৰে। ফাই বৈশিষ্ট্যসমূহক গ্ৰীক আখৰ Φ (phi) ওপৰত ভিত্তি কৰি "phi" বুলি কোৱা হয়, যিটো ইয়াক প্ৰতিনিধিত্ব কৰিবলৈ ব্যৱহাৰ কৰা হয়। সাধাৰণতে বিবেচিত নিৰ্দিষ্ট phi বৈশিষ্ট্যসমূহৰ ভিতৰত আছে।

পুৰুষ ঃ এই বৈশিষ্ট্যই বক্তা প্ৰথম পুৰুষ, সম্বোধনকাৰী দ্বিতীয় পুৰুষ, আৰু অন্য ব্যক্তি বা সত্তা তৃতীয় পুৰুষ ৰ মাজৰ পাৰ্থক্যক নিৰ্ণয় কৰে।

বচন ঃ এই বৈশিষ্ট্যই একবচন আৰু বহুবচনৰ মাজত পাৰ্থক্য কৰে। ইয়াৰ দ্বাৰা কোনো বিশেষ্য বাক্যাংশ বা ক্ৰিয়া বাক্য এটাৰ আন উপাদানৰ সৈতে সংখ্যাত মিল আছে নে নাই সেইটো সূচায়।

পুৰুষ আৰু বচনৰ উপৰিও phi বৈশিষ্ট্যসমূহে লিঙ্গকো অন্তৰ্ভুক্ত কৰে। লিঙ্গ হৈছে এনে এটা শ্ৰেণী যিয়ে বিশেষ্যক বিভিন্ন শ্ৰেণী বা লিঙ্গ ত শ্ৰেণীভুক্ত কৰে। সাধাৰণতে জৈৱিক পুংলিঙ্গ আৰু পুংলিঙ্গৰ লিঙ্গ মাজত সজীৱতা বা ইচ্ছাকৃত নিযুক্তিৰ দৰে বৈশিষ্ট্যৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি।

৪.১.১ অসমীয়াত Phi-বৈশিষ্ট্য/ φ - বৈশিষ্ট্য ঃ

বাক্য গঠনৰ বাবে ফাই বৈশিষ্ট্যসমূহ অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ, য'ত বাক্যৰ ভিতৰৰ শব্দবোৰ পুৰুষ, বচনৰ আৰু কিছুমান ক্ষেত্ৰত লিঙ্গ ৰ ক্ষেত্ৰত ইটোৰে সিটোৰ লগত একমত হ'ব লাগিব। উদাহৰণস্বৰূপে, "তাই গান গায়" বাক্যটোত "গায" ক্ৰিয়াটোৱে পুৰুষ (তৃতীয় পুৰুষ) আৰু বচন (একবচন) দুয়োটা দিশতে "তাই" বিষয়ৰ সৈতে একমত। চুক্তিৰ ব্যৱস্থা আৰু প্ৰাকৃতিক ভাষাৰ বাক্য গঠন বুজিবলৈ phi বৈশিষ্ট্যৰ অধ্যয়ন কেন্দ্ৰীয়। এই বৈশিষ্ট্যসমূহে বাক্য এটাৰ বিভিন্ন উপাদানসমূহ ইটোৰে সিটোৰ লগত কেনেদৰে সম্পৰ্কিত আৰু ব্যাকৰণগত আৰ্হিসমূহ কেনেকৈ উত্থাপন হয়, সেই বিষয়ে অন্তৰ্দৃষ্টি প্ৰদান কৰে।

অসমীয়া ভাষাত বিশেষ্য গঠনৰ ক্ষেত্ৰত বিশেষ্যপদ অবিকল্পিতভাৱে বিশেষ্য বাক্যাংশ (Noun Phrase)। অৰ্থাৎ বিশেষ্য এটাৰ বিশেষ্য বাক্যাংশ হোৱাৰ ধৰ্ম আছে কোনো বৈশিষ্ট্যৰ সংলগ্ন নোহোৱাকৈ। উদাহৰণস্বৰূপে, মানুহ শব্দটো বিশেষ্য হিচাপে সাধাৰণ বা নিৰ্দিষ্টবাচক দুইটাই হ'ব পাৰে। কিছুমান উপযুক্ত উদাহৰণৰ সহায়ত এইবোৰৰ উদাহৰণ দিব পাৰি। যেনে :

৮. মানুহ আহিছে।

৯. মানুহ মৰণশীল।

গতিকে, এই উদাহৰণবোৰ পৰ্যবেক্ষণ কৰি আমি এইটো জানো যে বচনটো বিশেষ্যৰ বাবে বাধ্যতামূলক বৈশিষ্ট্য নহয়। অসমীয়াত বিশেষ্য বচন পৰিচয় থকা বা নথকাকৈ বাক্যত বিশেষ্য ব্যৱহাৰ হ'ব পাৰে। বিশেষকৈ সাধাৰণ বিশেষ্য বা নিৰ্দিষ্ট উল্লেখত ব্যৱহাৰ কৰিলে বচনৰ অভাৱ (8) আৰু (9) ৰ বাক্যৰ দৰে দেখা যায়।

কিন্তু বচনটো বিশেষ্যৰ একচেটিয়া বৈশিষ্ট্য, সেয়েহে ইহঁত আন ক্ৰিয়া, (verb) বিশেষণ (Adjective) আৰু ক্ৰিয়াবিশেষণ (adverb) ৰ দৰে শ্ৰেণীৰ লগত একমত নহয়। অসমীয়া ভাষাত ইয়াৰ একমাত্ৰ ব্যতিক্ৰম হ'ল বিশেষণে যেতিয়া বহুবচন বিশেষ্যৰ দুখ গুণ বৰ্ণনা কৰে, তেতিয়া মুখ্য বিশেষ্যৰ সৈতে বচনৰ মিল বজাই ৰাখিবলৈ দ্বিৰুক্তি (reduplication) কৰিব পাৰে (10) ত দেখুওৱাৰ দৰে

১০. ডাঙৰ ডাঙৰ ঘৰবোৰ চহৰত আছে।

এই কাৰণ সমূহৰ বাবেই বচনে অসমীয়া সমূহ বিশেষ্য বাক্যাংশ গঠনত অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰে। আকৌ, কাৰণ হিচাপে যদি আমি (11) আৰু (12), নং বাক্যকেইটা চাও

১১. মানুহজন আহিলে।

১২. লৰাবোৰে খেলি আছে।

অসমীয়াত বিশেষ্য গঠনত "বচন" ব্যৱস্থাটো অতি আকৰ্ষণীয়। ওপৰৰ শচৰৰগ্ন নং বাক্যটো ব্যাখ্যা কৰিলে আমি দেখা পাওঁ যে বিশেষ্যলগত 'জন' নিৰ্দিষ্টতাবাচক বৰ্ণকৰ্তা একবচন বিশেষ্যক বুজাইছে। অন্যহাতে আমি যদি নিৰ্দিষ্টতাবাচক বৰ্ণকৰ্তা (Classifier) "-বোৰ" (12) নং বাক্যটোত বিবেচনা কৰো। (12) ত যদিও "-বোৰ" বৰ্ণকৰ্তাই বহুত্বক বুজায়, তথাপিও বিশেষ্যপদৰ লগতহে ইয়াৰ ব্যৱহাৰ নিশ্চিত কৰা হয়। এনেদৰে ব্যাকৰণগত ভিত্তিত একবচন আৰু বহুবচনৰ মাজত পাৰ্থক্য বিভক্তিগত ৰূপতাত্ত্বিকভাৱে অসমীয়াত পোৱা নাযায়।

অসমীয়াত "লিঙ্গ" কিছুমান বান্ধি ৰখা ৰূপৰ সৈতে আভিধানিকভাৱে উপলব্ধি কৰা হয়। ৰূপক ৰূপটো সদায় এটা নিৰ্দিষ্টতাবাচক বৰ্ণকৰ্তা আগত থাকে। উদাহৰণ স্বৰূপে:

১৪. মানুহজনী আহিলে।

ইয়াৰ বাহিৰেও স্ত্ৰীলিঙ্গ চিহ্নিত কৰাৰ আন কিছুমান উপায়ো আছে। সূচী ৪ ত এইবোৰ দেখুওৱা হৈছে।

পুংলিঙ্গ	**স্ত্ৰীলিঙ্গ**
শিক্ষক	শিক্ষয়ত্ৰী
নাতি	নাতিনী

সূচী - ৪

প্ৰথম উদাহৰণত স্ত্ৰীলিঙ্গৰ চিহ্নিতকাৰী সুকীয়া নহয়, কিন্তু দ্বিতীয়টোত "-নি" ৰূপক। স্ত্ৰীলিঙ্গৰ চিহ্নিতক যিটো অসমীয়াত আন বহুতো বিশেষ্যৰ লগতো ব্যৱহাৰ কৰা হয়।

"বচন" আৰু "লিঙ্গ" ফাই-বৈশিষ্ট্য অসমীয়াত ব্যাকৰণগত নহয়, কিন্তু "পুৰুষ" ব্যাকৰণগত। উদাহৰণ স্বৰূপে

১৫. মই খালো।

১৬. সি খালে।

১৮. তুমি খালা।

কাৰণ ইয়াত পুৰুষৰ ধাৰণাটো সৰ্বনাম ৰূপ আৰু ক্ৰিয়া সংযোজনৰ দ্বাৰা প্ৰকাশ কৰা হৈছে।

৪.২ কাৰক সংলগ্ন বৈশিষ্ট্যসমূহ

অসমীয়া কাৰক হৈছে এটা ব্যাকৰণগত শ্ৰেণী, যাক বাক্যত বা অৰ্থগত ফলনৰ দ্বাৰা বিশেষ্য বা সৰ্বনামপদে নিৰ্ধাৰিত কৰে। সহজভাৱে ই হৈছে বাক্যত ব্যৱহাৰ হোৱা বিশেষ্য, বিশেষ্য বাক্যাংশ সমূহ আৰু ক্ৰিয়া মাজৰ সম্পৰ্ক। কাৰকে এটা বিশেষ্য বাক্যাংশক বিষয়ভিত্তিক ভূমিকা প্ৰদান কৰে। বাক্য গঠনৰ ফালৰ পৰা অসমীয়া এটা কৰ্তা-কৰ্ম কাৰক (Nominiative- Accusative) ভাষা। মূলতঃ অসমীয়াত কাৰক ছয় প্ৰকাৰৰ, যথা—

(১) কৰ্তা কাৰক (Nominative Case)

(২) কৰ্ম কাৰক (Accusative Case)

(৩) কৰণ কাৰক (Instrumental Case)

(৪) সম্প্ৰদান কৰাক (Dative Case)

(৫) অপাদান কাৰক (Ablative Case) আৰু

(৬) অধিকৰণ কাৰক (Locative Case)

(ক) কৰ্তা কাৰক (Nominative Case)

কোনো বাক্যত ক্ৰিয়া সম্পন্ন কৰোঁতাক কৰ্তা কাৰক বোলে। কৰ্তা কাৰকত সাধাৰণত প্ৰথমা বিভক্তি -এ হয়। অকৰ্মক ক্ৰিয়াৰ কৰ্তাত বিভক্তি উহ্য থাকিব পাৰে। উদাহৰণ—

১৯. বিনুয়ে কামটো কৰিছে।

উক্ত বাক্যটোত 'কামটো কৰিছে' ক্ৰিয়াটোৰ কৰ্তা 'বিনু'। গতিকে 'বিনু' কৰ্তা কাৰক। আৰু ইয়াত প্ৰথমা বিভক্তি যোগ হৈছে।

কৰ্তাক দুটা ভাগত ভাগ কৰা হৈছে, যথা—

(ক) মুখ্য বা স্বতন্ত্ৰ কৰ্তা আৰু শচখগ্ন প্ৰযোজক কৰ্তা।

যি কৰ্তাই নিজে ক্ৰিয়া সম্পন্ন কৰে তাকে মুখ্য কৰ্তা বা স্বতন্ত্ৰ কৰ্তা বোলে। উদাহৰণ—

২০. কবিতাই কিতাপ পঢ়িছে।

২১. বিমলে বল খেলিছে।

(খ) কৰ্ম কাৰক (Accusative Case)

কৰ্তাই যি কৰে বা যাৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰি কোনো কাৰ্য সম্পাদন কৰে তাকে কৰ্ম কাৰক বোলে। কৰ্ম কাৰকত দ্বিতীয়া বিভক্তি যোগ হয়। কিন্তু কেতিয়াবা ই লোপ পাব পাৰে। উদাহৰণ—

২২. জুলিয়ে মিনুক মাৰিলে।

ইয়াত মৰা কামটো 'মিনু'ৰ ওপৰত হৈছে। গতিকে 'মিনু' কৰ্ম কাৰক। ইয়াত দ্বিতীয়া বিভক্তি -ক যোগ হৈছে।

(গ) কৰণ কাৰক (Instrumental Case)

যাৰ দ্বাৰা কৰ্তাই ক্ৰিয়া সম্পাদন কৰে তাকে কৰণ কাৰক বোলে। কৰণ কাৰকত তৃতীয়া বিভক্তি -ৰে হয়। উদাহৰণ—

২৪. মামুয়ে হাতেৰে ভাত খালে।

ইয়াত 'খালে' ক্ৰিয়া হাতৰ দ্বাৰা সম্পন্ন হৈছে। গতিকে হাতেৰে কৰণ কাৰক। তেনেকৈ- গাড়ীৰে গ'লে। লোৰে সজালোঁ। ইত্যাদি।

(ঘ) সম্প্ৰদান কৰাক (Dative Case)

যাক কোনো বস্তু নিজ স্বত্ব ত্যাগ কৰি দান কৰা হয় তেতিয়া দানৰ পাত্ৰক সম্প্ৰদান কাৰক বোলে। সম্প্ৰদান কাৰকত চতুৰ্থী বিভক্তি (অক, লৈ) যোগ হয়। উদাহৰণ—

২৫. সি ৰামক টকা দিলে।

২৬. মমিয়ে মামনলৈ মৰটন কিনি দিলে।

ইয়াত 'ৰামক', 'মামনলৈ' — সম্প্ৰদান কাৰক। কিয়নো এই দুজনক কিবা দিয়া বুজাইছে।

(ঙ) অপাদান কাৰক (Ablative Case)

য'ৰ পৰা ভয় পোৱা, উৎপন্ন হোৱা, আৰম্ভ হোৱা বা পৃথক হোৱা বোধ জন্মে তাকে অপাদান কাৰক বোলে। অপাদান কাৰকত পঞ্চমী বিভক্তি 'পৰা' যোগ হয়। উদাহৰণ—

২৭. মেঘৰ পৰা বৰষুণ হয়।

২৮. পেট্ৰলিয়ামৰ পৰা কেৰাচিন তেল হয়।

২৯. মানুহজন ঘৰৰ পৰা গ'ল।

(চ) অধিকৰণ কাৰক (Locative Case)

য'ত বা যিহত ক্ৰিয়া সম্পাদিত হয় তাক অধিকৰণ

কাৰক বোলে। অধিকৰণ কাৰকত সপ্তমী বিভক্তি 'ত' যোগ হয়। উদাহৰণ:

৩০. কিতপখন টেবুলত আছে।

৩১. গণেশ বজাৰত গল।

ইয়াত 'কিত পখন টেবুলত আছে' বস্তুটো কিতপখন টেবুলত আছে সম্পাদিত হৈ ছে। গতিকে 'টেবুলত' অধিকৰণ কাৰক।

ওপৰত উল্লেখ কৰা মতে অসমীয়া এটা কৰ্তা-কৰ্ম কাৰক (Nominiative- Accusative) ভাষা, য'ত অক্ৰান্তীয় (Intransitive) বা সংক্ৰামক (Transitive) ক্ৰিয়াৰ বিষয় বিশেষ্য বাক্যাংশ (subject NP) কৰ্তা কাৰক আৰু এটা সংক্ৰামকৰ ক্ৰিয়াৰ বস্তুনিষ্ঠ বিশেষ্য বাক্যাংশ (object NP) কৰ্ম কাৰকৰ দ্বাৰা চিহ্নিত কৰা হয়। এইটো তলত উদাহৰণৰ সহায়ত দেখুওৱা হৈছে :

৩২. মোহনে যদুক মাৰিলে।

৩৩. যদুৱে হাঁহিছে।

কিন্তু যেতিয়া সজীৱতা নিম্নগামী হোৱা দেখা পাও, তেতিয়া আমি অভিযোগমূলক এই গোচৰ দেখা নাপাওঁ। উদাহৰণ

৩৪. বাঘে হৰিণটো মাৰি পেলালে।

৩৫. হৰিণটো মৰিল।

৩৪ আৰু ৩৫ উদাহৰণৰ পৰা আমি দেখিবলৈ পাওঁ যে বস্তুনিষ্ঠ উপাদানটো যেতিয়া অমানৱীয় হয় তেতিয়া ই ওপৰৰ অভিযোগমূলক গোচৰ উপস্থাপন নকৰে। আকৌ, যদি বস্তুনিষ্ঠ উপাদানটো অমানৱ হয় কিন্তু ই এটা বিশেষ প্ৰাণীৰ বিষয়ে, যিটো বক্তা আৰু শ্ৰোতা উভয়ৰে বাবে নিশ্চিত, তেতিয়া ই অভিযোগমূলক গোচৰটো উপস্থাপন কৰে। উদাহৰণৰ বাবে আমি বাক্য ৩৬ চাব পাৰো।

৩৬. মধুৱে কুকুৰটোক খেদিলে।

অক্ৰান্তীয় ক্ৰিয়াৰ (Intransitive verb) ক্ষেত্ৰত আমি তলত দিয়া ধৰণে দুইধৰণৰ বাক্যৰ নিৰ্মাণ পৰ্যবেক্ষণ কৰোঁ

৩৭. ক) ৰামে দৌৰিলে।

খ) ৰাম শুই গ'ল।

এইদৰে আমি ভাষাটোত কাৰক সংযোগৰ বিভিন্ন নিৰ্মাণ পৰ্যবেক্ষণ কৰোঁ। আৰু কিছু উদাহৰণ হৈছে:

৩৮. ক) ৰতনে মোহনক আঘাত কৰিছে।

খ) তাই ঘৰলৈ গ'ল।

যিকি নহওক, কাৰক বৈশিষ্ট্য আৰু Phi-বৈশিষ্ট্য / Φ -**বৈশিষ্ট্য** ওপৰত ভিত্তি কৰি বিশেষ্যপদৰ সমষ্টিগত বৈশিষ্ট্যসমূহক উদাহৰণ ৩৮. ক) সৈতে সাৰাংশ কৰিব পাৰি তলত দিয়া ধৰণে

বিশেষ্য	কাৰক	বচন	পুৰুষ	লিঙ্গ
ৰতনে	কৰ্তা	একবচন	তৃতীয়	পুং
মোহনক	কৰ্ম	একবচন	তৃতীয়	পুং

সূচী - ৫

৫. উপসংহাৰ

এই গৱেষণা পত্ৰখনৰ লক্ষ্য আছিল, বিশেষ্য শব্দসমূহৰ গঠন আৰু ব্যৱহাৰ জেনেৰেটিভ বাক্যবিন্যাসৰ ভিতৰত মিনিমেলিযিম পদ্ধতি ব্যৱহাৰ কৰি অসমীয়াত বিশেষ্যৰ বৈশিষ্ট্যসমূহ বিশ্লেষণ কৰা। গতিকে, পুংখানুপুংখ অনুসন্ধানৰ অন্তত কেইবাটাও উল্লেখযোগ্য পৰ্যবেক্ষণ কৰিব পৰা গৈছে। এটা শ্ৰেণী বৈশিষ্ট্য হিচাপে অসমীয়াত বিশেষ্যসমূহে কাৰক, বচন, পুৰুষ, লিঙ্গকে ধৰি বিভিন্ন বৈশিষ্ট্য সন্নিৱিষ্ট কৰে। অসমীয়াত স্ত্ৰীলিঙ্গৰ চিহ্নিতকৰণত পুং লিঙ্গ বিশেষ্যৰ লগত নিৰ্দিষ্ট প্ৰত্যয়ৰ ৰূপৰ সংযোজন জড়িত হৈ থাকে। ইয়াৰ পৰা অনুমান কৰিব পাৰি যে লিঙ্গৰ চিহ্নিতকৰণৰ ক্ষেত্ৰত কিছু পৰিমাণে সামস্য দেখা গৈছে যদিও এতিয়াও বহুতো উত্তৰহীন প্ৰশ্ন আৰু অন্বেষণ নোহোৱা দিশ আছে যিবোৰৰ ওপৰত অধিক অনুসন্ধান আৰু অভিজ্ঞতাভিত্তিক প্ৰমাণৰ প্ৰয়োজন। গতিকে অসমীয়া বিশেষ্যৰ বাগুল বৈশিষ্ট্যসমূহৰ অধিক বিস্তৃত আৰু সঠিক বিৱৰণ দিয়াৰ বাবে এই ক্ষেত্ৰত অতিৰিক্ত অধ্যয়নসমূহ অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ।

অসমীয়াত ব্যৱহিত, ভাষিক বৈশিষ্ট্য আৰু বিশেষ্যৰ বাক্য গঠনৰ জটিল আন্তঃক্ৰিয়াৰ ওপৰত পোহৰ পেলাই এই গৱেষণাই ভাষাৰ ব্যাকৰণ আৰু বাক্য গঠনৰ বহল বুজাবুজিত অৰিহণা যোগাইছে। তদুপৰি এই অধ্যয়নৰ তথ্যই অসমীয়াৰ বাবে অনন্য ভাষিক পৰিঘটনাসমূহৰ অবিৰত অন্বেষণ আৰু বিশ্লেষণৰ প্ৰয়োজনীয়তাৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰিছে। ভৱিষ্যতৰ গৱেষণাৰ প্ৰচেষ্টাসমূহ লিঙ্গ আৰু বচনৰ আভিধানিক চিহ্নিতকৰণৰ অন্তৰ্নিহিত জটিল ব্যৱস্থাসমূহৰ গভীৰতালৈ সোমাই যাব পাৰিব, শেষত অসমীয়াত বিশেষ্যৰ প্ৰকাশ আৰু ব্যাখ্যাক গঢ় দিয়া ভাষিক

ধৰ্মৰ জটিল জালখন উন্মোচন কৰিব পাৰে।

সামৰণিত এই গৱেষণা পত্ৰখনে অসমীয়া বিশেষ্যৰ বাণ্ডল বৈশিষ্ট্যসমূহৰ অধিক অনুসন্ধানৰ ভিত্তি স্থাপন কৰি মূল্যৱান অন্তৰ্দৃষ্টি প্ৰদান কৰি ভৱিষ্যতৰ গৱেষণাৰ বাবে বাধ্যতামূলক অধ্যয়নৰ প্ৰয়োজন বুলি উত্থাপন কৰিছে। আৰু যে নিৰন্তৰ বিদ্বান প্ৰচেষ্টা আৰু অভিজ্ঞতাভিত্তিক অধ্যয়নৰ জৰিয়তেহে অসমীয়া ব্যাকৰণ আৰু বাক্য গঠনৰ অধিক ব্যাপক আৰু নিখুঁত বুজাবুজি লাভ কৰিব পৰা যাব। ❑

প্ৰসংগ সূচী ঃ

Adgar, David.*Core Syntax: A minimalist Approach.* Oxford University Press.2013

Bhattacharya, Manmee. Case Marking in Assamese: Morpho-Syntactic and SemanticAnalysis.https://www.academia.edu/1409176/Case_Marking_in_Assamese_Morpho Syntactic_and_SemanticAnalysis.2009.

Chomsky, N. *The minimalist program*. Cambridge Massachusetts: MIT Press. 1995.

Chomsky, N. Minimalist inquiries: The framework. [MIT occasional papers in linguistics]. *MIT Working Papers in Linguistics*. 1998.

Deb, Debajit. On Case Marking in Assamese, Bengali and Oriya. Downloaded from:http://www.journals.aiac.org.au/index.php/IJALEL/article/view/708

Goswami, U. N. *Gender System in Assamese: An introduction to Assamese*. Mani- Manik Prakashon, Guwahati, Assam.1978.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

গায়ত্ৰী চক্ৰৱৰ্তী স্পিভাকৰ নিম্নবৰ্গীয় তত্ত্বৰ আধাৰত চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ 'সূৰুজমুখীৰ স্বপ্ন' : এটি বিশ্লেষণ

মাইনী চমুৱা
গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ,
স্কুল অফ লেংগুৱেজ আৰু কালচাৰ
ইউ.এছ.টি.এম, মেঘালয়-৭৯৩১০১
৬০০২০৮৩৬৯৪
mainichamuah1988@gmail.com

ড° পৰাগ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য
অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
স্কুল অফ লেংগুৱেজ আৰু কালচাৰ,
ইউ.এছ.টি.এম, মেঘালয়-৭৯৩১০১
৯১০১৬৪৮০৫৯

সাৰাংশ ঃ

এই গৱেষণা পত্ৰখনত চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ *সূৰুজমুখী স্বপ্ন* উপন্যাসখনত কেনেদৰে নিম্নবৰ্গীয় কণ্ঠক প্ৰতিনিধিত্ব কৰা হৈছে সেই বিষয়ে বিশ্লেষণ কৰিব বিচৰা হৈছে। বিশ্লেষণৰ মূল আধাৰ হিচাপে লোৱা হৈছে গায়ত্ৰী চক্ৰৱৰ্তী স্পিভাকৰ গুৰুত্বপূৰ্ণ ৰচনা "Can the Subaltern Speak?" এই অধ্যয়নৰ লক্ষ্য হৈছে— উপন্যাসখনত চিত্ৰিত গ্ৰাম্য অসমীয়া জীৱনৰ প্ৰেক্ষাপটত প্ৰান্তীয় চৰিত্ৰসমূহ বিশ্লেষণ কৰি মালিকে সামাজিক সংহতিৰ জটিলতা আৰু প্ৰান্তীয়কৰণৰ স্থায়ী প্ৰত্যাহ্বানসমূহ কেনেদৰে চিত্ৰিত কৰিছে সেয়া ফঁহিয়াই উলিওৱা। উপন্যাসখনৰ পটভূমি হৈছে ধনশিৰি নদীৰ কাষত অৱস্থিত এখন গাওঁ আৰু তাতে হিন্দু-মুছলমান দুয়োটা সম্প্ৰদায়ে পাৰস্পৰিক সাংস্কৃতিক সমন্বয়েৰে বাস কৰে। উপন্যাসখনৰ নেৰেটিভে সামাজিক স্তৰবৃত্ত আৰু লিংগৰ ভূমিকা অন্বেষণৰ বাবে এক সমৃদ্ধ কাঠামো প্ৰদান কৰে। উপন্যসখনৰ নেৰেটিভ আৰু চৰিত্ৰ বিশ্লেষণেৰে এই গৱেষণা পত্ৰখনত উপন্যাসখনে কেনেকৈ বহল সামাজিক-সাংস্কৃতিক গতিশীলতাক প্ৰতিফলিত কৰে আৰু নিম্নবৰ্গীয় অধ্যয়নৰ অৰিহণা যোগায় সেয়া বিচাৰ কৰিব খোজা হৈছে। সামগ্ৰিকভাৱে উপন্যাসখনৰ বিষয়বস্তু তথা কথকতাই অসমীয়া সাহিত্যত কেনেদৰে নিৰ্মবৰ্গীয় কণ্ঠক উপস্থাপন কৰিছে সেয়া বুজি উঠাত সহায় কৰিব।

বীজ শব্দ ঃ

নিম্নবৰ্গীয় অধ্যয়ন, অসমীয়া সাহিত্য, চৈয়দ আব্দুল মালিক, গায়ত্ৰী চক্ৰৱৰ্তী স্পিভাক, প্ৰান্তীয়কৰণ, সাংস্কৃতিক সমন্বয়।

আৰম্ভণি ঃ

নিম্নবৰ্গীয় ধাৰণাটোৱে প্ৰান্তীয় গোটবোৰৰ কণ্ঠস্বৰ আৰু অভিজ্ঞতা বুজাৰ বাবে এক শক্তিশালী পৰিকাঠামো প্ৰদান কৰে। গায়ত্ৰী চক্ৰৱৰ্তী স্পিভাকৰ প্ৰবন্ধ "Can the Subaltern Speak?" —এ ঔপনিৱেশিক আৰু উত্তৰ-ঔপনিৱেশিক ক্ষমতাৰ গাঁথনিয়ে এই কণ্ঠক কেনেকৈ নিস্তব্ধ আৰু প্ৰান্তীয়কৰণ কৰে সেই বিষয়ে অন্বেষণ কৰে। স্পিভাকৰ কামে প্ৰতিনিধিত্ব, সংস্থা আৰু প্ৰান্তীয় লোকসকলৰ নিজৰ বাবে কথা কোৱাৰ সামৰ্থ্যৰ বিষয়ে গুৰুত্বপূৰ্ণ প্ৰশ্ন উত্থাপন কৰিছে।

সমৃদ্ধ সাংস্কৃতিক আৰু বিবিধ জনগোষ্ঠীৰ ভৰপুৰ অসমৰ সাহিত্যিকসকলেও তেওঁলোকৰ লেখনিৰে অসমীয়া সমাজখনক তুলি ধৰিবলৈ যত্নপৰ। অসমীয়া সাহিত্যিকসকলেও সমাজৰ প্ৰান্তীয় ক্ষেত্ৰখনত অৱস্থান কৰা মানুহখিনিৰ কথা প্ৰকাশ কৰিবলৈ যত্ন কৰা দেখা যায়। অসমৰ এগৰাকী উল্লেখযোগ্য সাহিত্যিক চৈয়দ আব্দুল মালিকেও তেওঁৰ উপন্যাস বা গল্পসমূহৰ মাজত সমাজৰ প্ৰান্তীয় ছবিসমূহ তুলি ধৰিছে। অৰ্থনৈতিকভাৱে নিঃস্ব, নিঃকিন সমাজ এখনৰ ছবি, সেই সময়ৰ সমাজত নিম্নস্তৰত স্থান দিয়া পুৰুষ-মহিলাৰ স্থান, নাৰী মনস্তত্ত্ব, সামাজিক অন্যায়, অৰ্থনৈতিক শোষণ, সাংস্কৃতিক প্ৰান্তীয়কৰণ, প্ৰতিৰোধৰ দৰে বিষয়বস্তু বৰ্ণিত হৈছে। তেওঁৰ এখন উল্লেখযোগ্য উপন্যাস হ'ল *সুৰুজমুখীৰ স্বপ্ন* (১৯৯৫)। এই উপন্যাসখনত অসমৰ গ্ৰাম্য জীৱনটি অতি সাৰ্থকভাৱে ফুটাই তোলা হৈছে। উপন্যাসখনৰ কাহিনীভাগ গঢ় লৈ উঠিছে ধনশিৰি নদীৰ কাষতে অৱস্থিত ডালিম গাওঁক কেন্দ্ৰ কৰি। নদীখনকে কেন্দ্ৰ কৰি দুয়োপাৰে গঢ় লৈ উঠিছে ন-ডালিম আৰু পুৰণা-ডালিম। নৈখনক কেন্দ্ৰ কৰিয়েই গাঁৱৰ চৰিত্ৰসমূহৰ জীৱনৰ ঘূৰি আছে। সেইবাবেই উপন্যাসখন আৰম্ভ হৈছে এনেদৰে— "নৈখনে কথা কয়। বহুত পুৰণি কথা। কথাবোৰ দুয়োপাৰৰ গৰাত লাগি লাগি ৰয়" (মালিক, ১৯৯৫, পৃ. ১)। এই গাওঁখনতে মিলাপ্ৰতিৰে বাস কৰে— হিন্দু আৰু মুছলমান সম্প্ৰদায়ৰ লোকসকলে। কিন্তু গোটেই অঞ্চলটোৱেই প্ৰান্তীয়— ডালিম গাওঁত বাছ-মটৰ নচলে— বাট-পথো একো নাই। এনে এটি পটভূমিতে ঔপন্যাসিক মালিকে সামাজিক সমন্বয় আৰু তাৰ মাজতে লুকাই থকা প্ৰান্তিকৰণৰ জটিল ধাৰণাটি আলোকপাত কৰিছে।

এই গৱেষণা পত্ৰখনৰ লক্ষ্য হৈছে ঔপন্যাসিক মালিকে তেওঁৰ *সুৰুজমুখীৰ স্বপ্ন* উপন্যাসখনত কেনেদৰে নিম্নবৰ্গীয় কণ্ঠক চিত্ৰিত কৰিছে সেই বিষয়ে অন্বেষণ কৰা। বিষয় বিশ্লেষণৰ বাবে নিৰ্ধাৰণ কৰি লোৱা হৈছে গায়ত্ৰী চক্ৰৱৰ্তী স্পিভাকৰ তাত্ত্বিক ধাৰণাটি। প্ৰাথমিক গৱেষণামূলক প্ৰশ্নটো হ'ল— চৈয়দ আব্দুল মালিকে *সুৰুজমুখীৰ স্বপ্নই* নিম্নবৰ্গীয় কণ্ঠক কেনেকৈ প্ৰতিনিধিত্ব কৰিছে আৰু স্পিভাকৰ তত্ত্বই এই উপস্থাপনসমূহ বুজিবলৈ কেনেকৈ সহায় কৰিব পাৰে? নিম্নবৰ্গীয় সম্পৰ্কে গায়ত্ৰী চক্ৰৱৰ্তী স্পিভাকৰ তাত্ত্বিক ধাৰণাটিৰ দ্বাৰা মালিকৰ উপন্যাসৰ চৰিত্ৰসমূহে গ্ৰাম্য অসমৰ সামাজিক গাঁথনিৰ ভিতৰত নিজৰ পৰিচয় আৰু সম্পৰ্ক কেনেকৈ চিহ্নিত কৰে সেই বিষয়ে বিতংভাৱে বুজিব পৰা যাব (Spivak, 1988)।

এই গৱেষণা পত্ৰখন লিখাৰ সময়ত অসমত চৈয়দ আব্দুল মালিক সম্পৰ্কে কোনে কোনে গৱেষণামূলক কাম কৰিছে সেই বিষয়ে বিচাৰ কৰা হৈছিল। সেই বিচাৰ-বিশ্লেষণত দেখা গ'ল যে, প্ৰাপ্তি ঠাকুৰে "চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ চুটিগল্পত নিম্নবৰ্গীয় চেতনা" (পৃ.৭২-৮৫) শীৰ্ষক আলোচনা এটিহে অমল চন্দ্ৰ দাসৰ সম্পাদনাত প্ৰকাশ পোৱা *চৈয়দ আব্দুল মালিক সমগ্ৰ সাহিত্য-পৰিক্ৰমা* (২০১৮)ত অন্তৰ্ভুক্ত হৈছে। *সুৰুজমুখীৰ স্বপ্ন* সম্পৰ্কে দুই-এগৰাকী গৱেষকে আলোচনা কৰিছে। তাৰে ভিতৰত প্ৰফুল্ল কটকীয়ে উল্লেখ কৰি গৈছে যে— "ধনশিৰি পাৰৰ ডালিম গাৱঁৰ পৰা আঁতৰাই নিলে 'সুৰুজমুখীৰ স্বপ্ন'ৰ নায়ক গুলচ চৰিত্ৰটোৰ ,স্বকীয় সত্তাই ক্ষুণ্ণ হৈ পৰিব" (কটকী, ১৯৯৫, পৃ. ১৬)। এই মন্তব্যটোৱেই ধাৰণা প্ৰদান কৰে যে অসমীয়া নেৰেটিভ গঢ় দিয়াত পৰিৱেশ আৰু সাংস্কৃতিক পৰিৱেশৰ ভূমিকাক যে মালিকে গুৰুত্ব প্ৰদান কৰিছিল।

এই গৱেষণা পত্ৰখনত উপন্যাসখনে নিম্নবৰ্গীয় কণ্ঠক কেনেদৰে চিত্ৰিত কৰিছে তাক পৰীক্ষা কৰিবলৈ বিষয়ভিত্তিক আৰু চৰিত্ৰ বিশ্লেষণৰ পদ্ধতি ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। গুলচ, চেনিমাই আৰু কপাহী চৰিত্ৰৰ মাজৰ পাৰস্পৰিক ক্ৰিয়া-কলাপ বিশ্লেষণ কৰিলে সামাজিক স্তৰ, জাতি, আৰু সম্প্ৰদায়ৰ সম্পৰ্কৰ কথাও অনুধাৱন কৰিব পৰা যাব।

সুৰুজমুখীৰ স্বপ্ন কেৱল ব্যক্তিগত জীৱনৰ কাহিনীয়েই নহয়; ইয়াত সামাজিক-সাংস্কৃতিক সম্প্ৰীতি আৰু সামাজিক প্ৰান্তীয়কৰণৰ দৰে বিষয়বস্তুও প্ৰতিফলিত হৈছে। মালিকে কেনেদৰে নিম্নবৰ্গীয় কণ্ঠৰ চিত্ৰণ আৰু সামাজিক-সাংস্কৃতিক ক্ষেত্ৰত ইয়াৰ গুৰুত্বৰ ওপৰত আলোকপাত কৰিছে সেয়াই এই গৱেষণা পত্ৰখনে উন্মোচিত কৰিব।

তাত্ত্বিক কাঠামো ঃ

ইটালীৰ মাৰ্ক্সবাদী দাৰ্শনিক এণ্টনিঅ' গ্ৰামচিয়ে তেওঁৰ First Notebook (1929-30) আক্ষৰিক অৰ্থত "চাবঅল্টাৰ্ণ" শব্দটো পোনপ্ৰথমবাৰৰ বাবে ব্যৱহাৰ কৰিছিল যদিও আশীৰ দশকৰ আৰম্ভণিতে ৰণজিৎ গুহকে ধৰি দক্ষিণ এছিয়াৰ কেইগৰাকীমান পণ্ডিতে নিম্নবৰ্গীয় অধ্যয়ন গ্ৰুপ (Subaltern Studies Group) এটা গঠন কৰে। এই গোটটোৱে নিপীড়িতসকলৰ কণ্ঠক প্ৰতিনিধিত্ব কৰাবলৈ যত্নপৰ হৈছিল। গায়ত্ৰী চক্ৰৱৰ্তী স্পীভাক এই গোটৰ এজন মূল ব্যক্তি। স্পিভাকে "Can the Subaltern Speak?" — এই ৰচনাখনত কৈছে যে, কেনেকৈ ঔপনিৱেশিক আৰু উত্তৰ-

ঔপনিৱেশিক ক্ষমতাৰ গাঁথনিয়ে এই নিম্নবৰ্গীয় গোটসমূহক নিস্তব্ধ কৰি প্ৰান্তীয় কৰি ৰাখিছে, যাৰ ফলত তেওঁলোকৰ কণ্ঠস্বৰ শুনা বা প্ৰতিনিধিত্ব কৰাটো কঠিন হৈ পৰিছে।

সাহিত্যত প্ৰান্তীয় বা নিম্নবৰ্গীয়ৰ কণ্ঠ কেনেকৈ অধ্যয়ন আৰু ব্যাখ্যা কৰিব পাৰি, সেই কথা বুজিবলৈ স্পিভাকৰ তত্ত্ব গুৰুত্বপূৰ্ণ। তেওঁ যুক্তি আগবঢ়াইছে যে নিম্নবৰ্গীয়সকল সেইসকল; যিসকল অতি নিপীড়িত আৰু কণ্ঠত শক্তি কম। তেওঁলোকে প্ৰায়ে নিজৰ কথা ক'ব নোৱাৰে কাৰণ সমাজ ব্যৱস্থাসমূহে তেওঁলোকৰ নিজস্ব ভাৱনা-ধাৰণা প্ৰকাশ কৰিবলৈ সুবিধা নিদিয়ে (Spivak, 1988)। স্পিভাকে তেওঁৰ ৰচনাখনত দৃঢ়তাৰে কৈছে, "The subaltern cannot speak. There is no virtue in global laundry lists with 'woman' as a pious item. Representation has not withered away" [Spivak, 1988, p. 308].

চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ উপন্যাস *সূৰুজমুখীৰ স্বপ্নত* সমাজৰ দ্বাৰা সততে প্ৰান্তীয়কৃত চৰিত্ৰবোৰক কেনেদৰে চিত্ৰিত কৰা হৈছে সেই বিষয়ে বিশ্লেষণ কৰাত স্পিভাকৰ এই ধাৰণাই সহায় কৰিব। উপন্যাসখনে এই চৰিত্ৰবোৰৰ, অসমীয়া সমাজ জীৱনৰ এক দৃষ্টিভংগী প্ৰদান কৰিছে; গ্ৰাম্য অসমৰ সামাজিক গাঁথনিৰ ভিতৰত তেওঁলোকৰ সংগ্ৰাম আৰু পাৰস্পৰিক কাৰ্য-কলাপ উদঙাই দেখুৱাইছে।

স্পিভাকৰ তত্ত্ব প্ৰয়োগ কৰিলে ভালদৰে বুজিব পৰা যাব যে মালিকে এই নিম্নবৰ্গীয় চৰিত্ৰবোৰক কেনেকৈ কণ্ঠদান কৰিছে। এই পদ্ধতিৰ দ্বাৰা বিশ্লেষণ কৰিব পৰা হ'ব কেনেদৰে এই চৰিত্ৰবোৰে নিজৰ পৰিচয় আৰু সম্পৰ্কক উপস্থাপন কৰে, যিখন পৃথিৱীয়ে তেওঁলোকক প্ৰায়ে প্ৰান্তীয়কৰণ কৰে।

পদ্ধতি ঃ

এই অধ্যয়নত বিষয়ভিত্তিক আৰু চৰিত্ৰ বিশ্লেষণ পদ্ধতি ব্যৱহাৰ কৰি চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ উপন্যাস *সূৰুজমুখীৰ স্বপ্নত* নিম্নবৰ্গীয় কণ্ঠক কেনেদৰে প্ৰতিনিধিত্ব কৰা হৈছে সেই বিষয়ে অন্বেষণ কৰা যাব। বিষয়ভিত্তিক বিশ্লেষণে উপন্যাসখনৰ প্ৰান্তীয়কৰণ, সামাজিক স্তৰবৃত্ত আৰু সাংস্কৃতিক সমন্বয়ৰ সৈতে জড়িত মূল বিষয়বস্তু চিনাক্ত আৰু বিশ্লেষণ কৰাত সহায় কৰে। চৰিত্ৰ বিশ্লেষণে মূল চৰিত্ৰসমূহৰ ভূমিকা, সম্পৰ্ক আৰু অভিজ্ঞতাক বুজি পোৱাত গুৰুত্ব আৰোপ কৰে, বিশেষকৈ প্ৰান্তীয় চৰিত্ৰসমূহৰ।

- **তথ্য সংগ্ৰহ ঃ**

সূৰুজমুখীৰ স্বপ্ন উপন্যাসখন ১৯৬০ চনত প্ৰথম প্ৰকাশ হৈছিল। সেই সংস্কৰণটি সহজলভ্য নহয়। সেয়ে ১৯৯৫ চনত নতুন সংস্কৰণ হিচাপে ষ্টুডেণ্টচ্ ষ্ট'ৰচে প্ৰকাশ কৰা সংস্কৰণটি মুখ্য উৎস হিচাপে গ্ৰহণ কৰা হৈছে। বিষয়-বিশ্লেষণত নিম্নবৰ্গীয় অধ্যয়ন সম্পৰ্কে লিখা গ্ৰন্থ আৰু মালিক এইখন উপন্যাস সম্পৰ্কে বিভিন্ন গৱেষকে লিখা প্ৰবন্ধসমূহ গ্ৰহণ কৰা হৈছে। এয়া হ'ব গৌণ উৎস।

- **বিশ্লেষণাত্মক সঁজুলি ঃ**

(ক) বিষয়ভিত্তিক বিশ্লেষণ : বিষয়ভিত্তিক বিশ্লেষণৰ বাবে প্ৰথমে বিষয়বস্তু চিনাক্তকৰণ কৰা হ'ব। উপন্যাসখনত প্ৰান্তীয়কৰণ, সামাজিক স্তৰবৃত্ত, জাতি, আৰু সাংস্কৃতিক সমন্বয়ৰ সৈতে জড়িত বিষয়বস্তু চিনাক্ত কৰা হ'ব। সমগ্ৰ উপন্যাসখনতে বিষয়বস্তু কেনেকৈ বিকশিত আৰু আন্তঃসংযোগ কৰা হৈছে সেয়া বুজিবলৈ যত্ন কৰা হ'ব।

(খ) চৰিত্ৰ বিশ্লেষণ ঃ উপন্যাসখনৰ প্ৰধান চৰিত্ৰ গুলচ, চেনিমাই আৰু কপাহী চৰিত্ৰৰ প্ৰতিনিধিত্বমূলক বিশ্লেষণ কৰা হ'ব। উপন্যাসখনৰ নেৰেটিভৰ ভিতৰত তেওঁলোকৰ অভিজ্ঞতা আৰু ভূমিকাৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰা যাব। এই চৰিত্ৰবোৰে গ্ৰাম্য অসমৰ সমাজ-গাথঁনিৰ ভিতৰত নিম্নবৰ্গীয় কণ্ঠ, তেওঁলোকৰ সংগ্ৰাম আৰু তেওঁলোকৰ ধাৰণাৰ কেনেদৰে প্ৰতিনিধিত্ব কৰে, সেই বিষয়ে বিশেষ গুৰুত্ব দিয়া হ'ব।

(গ) স্পিভাকৰ তত্ত্বৰ প্ৰয়োগ ঃ উপন্যাসখনে প্ৰান্তীয় চৰিত্ৰবোৰ আৰু তেওঁলোকৰ কথা কোৱা আৰু শুনা ক্ষমতাক কেনেদৰে চিত্ৰিত কৰিছে সেই বিষয়ে বিশ্লেষণ কৰিবলৈ স্পিভাকৰ নিম্নবৰ্গীয় তত্ত্বটি প্ৰয়োগ কৰা যাব। নিম্নবৰ্গীয় অধ্যয়ন আৰু অসমীয়া সাহিত্যৰ বাবে ইয়াৰ প্ৰভাৱ বুজিবলৈ স্পিভাকৰ কামৰ প্ৰেক্ষাপটত তথ্যসমূহৰ ব্যাখ্যা কৰা হ'ব।

ঐতিহাসিক আৰু সাংস্কৃতিক প্ৰসংগ ঃ

- **ঐতিহাসিক পটভূমি ঃ**

চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ *সূৰুজমুখীৰ স্বপ্ন* অসমৰ গ্ৰাম্য অঞ্চল, বিশেষভাৱে ধনশিৰি নদীৰ আশে-পাশে, ন-ডালিম আৰু পুৰণা-ডালিম গাঁৱৰ আশ-পাশ অঞ্চলৰ পটভূমিত ৰচিত। এই উপন্যাসখন এনে এটা সময়ত প্ৰকাশ পাইছে যেতিয়া আধুনিক নগৰীয়া প্ৰভাৱ এই দুৰ্গম অঞ্চলবোৰত তেতিয়াও বিয়পি পৰা নাছিল। এই পৰিৱেশটো অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ কাৰণ ই প্ৰকৃতি আৰু স্থানীয় ৰীতি-নীতিৰ সৈতে গভীৰভাৱে জড়িত পৰম্পৰাগত জীৱনশৈলী উপস্থাপন কৰা হৈছে। ই নগৰীয়া আধুনিকীকৰণৰ সৈতে এক তীব্ৰ বিপৰীতমুখী ধাৰণা প্ৰদান কৰে।

উপন্যাসখনত চিত্ৰিত হোৱা সময়ছোৱাত গ্ৰাম্য অসম মূলতঃ কৃষিভিত্তিক আছিল, জনগোষ্ঠীসমূহে জীৱিকাৰ বাবে কৃষিৰ ওপৰত বহু পৰিমাণে নিৰ্ভৰশীল আছিল। আৰ্থ-সামাজিক পৰিস্থিতি আছিল প্ৰত্যাহ্বানমূলক, দৰিদ্ৰতা, শিক্ষাৰ সুবিধা সীমিত, জাতি আৰু ধৰ্মৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি গঠন হোৱা কঠিন সামাজিক স্তৰ। এই ঐতিহাসিক উপাদানসমূহ তাৎপৰ্যপূৰ্ণ কাৰণ ইয়াৰ দ্বাৰা উপন্যাসখনৰ চৰিত্ৰ আৰু পৰিঘটনাসমূহ গঢ় লৈ উঠাৰ পটভূমি তৈয়াৰ কৰা হৈছে। মালিকে এই বাস্তৱতাসমূহ উপস্থাপন কৰি গ্ৰাম্য অসমীয়াৰ দৈনন্দিন সংগ্ৰাম আৰু স্থিতিস্থাপকতাৰ এক ধাৰণা আগবঢ়াইছে (মালিক, ১৯৯৫)।

সাম্প্ৰদায়িক সম্প্ৰীতিৰ লগতে মাজে মাজে উত্তেজনাৰে চিহ্নিত অসমৰ আৰ্থ-ৰাজনৈতিক পৰিৱেশো ঐতিহাসিক প্ৰেক্ষাপটত অন্তৰ্ভুক্ত কৰা হৈছে। উপন্যাসখনে এই দ্বৈততাক প্ৰতিফলিত কৰি এনে এটা সম্প্ৰদায়(নিম্নবৰ্গীয়)ক উপস্থাপন কৰিছে যিয়ে সংগ্ৰামৰ মাজতো ঐক্য আৰু সমন্বয়ৰ ভাব বৰ্তাই ৰাখিছে। সাম্প্ৰদায়িক আদান-প্ৰদানৰ চিত্ৰণ আৰু সাংস্কৃতিক প্ৰথাৰ মিশ্ৰণে এই সময়ছোৱাত অসমীয়া গ্ৰাম্য জীৱনৰ জটিলতা আৰু সমৃদ্ধিৰ কথাখিনি ব্যক্ত কৰে। উদাহৰণস্বৰূপে উপন্যাসখনৰ পৰা উল্লেখ কৰিব পাৰি—"পুবে ধনশিৰি, পছিমে ডালিম। ধনশিৰিৰ পশ্চিম পাৰে ডালিম গাঁও। তিনিকুৰি দহ ঘৰ মানুহৰ সৰু পুৰণি গাঁওখন। হিন্দু-মুছলমান, নেপালী-মিকিৰৰ মিহলি গাঁও।" (মালিক, ১৯৯৫, পৃ.২)।

- **সাংস্কৃতিক সংমিশ্ৰণ ঃ**

সাংস্কৃতিক সমন্বয় বা বিভিন্ন সাংস্কৃতিক আৰু ধৰ্মীয় পৰম্পৰাৰ মিশ্ৰণ *সূৰুজমুখীৰ স্বপ্নৰ* এক বিশিষ্ট বিষয়বস্তু। উপন্যাসখনত হিন্দু আৰু মুছলমান সম্প্ৰদায়ৰ সমন্বয়ৰ সহাৱস্থানক প্ৰাঞ্জলভাৱে চিত্ৰিত কৰা হৈছে। তেওঁলোকৰ ভাগ-বতৰা কৰা ৰীতি-নীতি, উৎসৱ আৰু দৈনন্দিন আদান-প্ৰদানৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰা হৈছে। এই চিত্ৰণ কেৱল গ্ৰাম্য অসমৰ প্ৰকৃত সমাজ-গাথঁনিৰ প্ৰতিফলনেই নহয়, সমাজ-সাংস্কৃতিক বৈচিত্ৰ্যত ঐক্যৰ সম্ভাৱনাকো আলোকপাত কৰা মূলমন্ত্ৰ। উদাহৰণস্বৰূপে— "ধনশিৰিত বান আহিলে, বনৰীয়া হাতী ওলালে, কাৰোবাৰ ঘৰত জুই লাগিলে, হাইজা-বসন্ত আহিলে, আল্লা-ঈশ্বৰ একেলগে গাঁৱলৈ আহে। তুলসী তলত চাকি জ্বলে, মছজিদত মম জ্বলে, বৰগছৰ তলত সেন্দূৰৰ শিতান লৈ বনৰীয়া ফুল টোপনি যায়" (মালিক, ১৯৯৫, পৃ.২)

মালিকে এই সমন্বয়ক চৰিত্ৰ আৰু তেওঁলোকৰ সম্পৰ্কৰ জৰিয়তে চিত্ৰিত কৰিছে। উদাহৰণস্বৰূপে, নায়ক গুলচৰ হিন্দু আৰু মুছলমান উভয় পটভূমিৰ বন্ধু-বান্ধৱী আৰু আপোনজন আছে। এই সম্পৰ্কবোৰক গভীৰতা আৰু সংবেদনশীলতাৰে চিত্ৰিত কৰা হৈছে, পাৰস্পৰিক সন্মান আৰু বুজাবুজিৰ পৰিচিতি উপস্থাপন কৰা হৈছে। উপন্যাসখনত এনে দৃশ্য সন্নিৱিষ্ট কৰা হৈছে য'ত চৰিত্ৰসমূহে ইজনে সিজনৰ সাংস্কৃতিক আৰু ধৰ্মীয় উৎসৱত অংশগ্ৰহণ কৰে, যিয়ে তেওঁলোকৰ জীৱনৰ আন্তঃসংলগ্ন স্বৰূপৰ প্ৰতীক। এই চিত্ৰণ তাৎপৰ্যপূৰ্ণ কাৰণ ই কঠিন সাম্প্ৰদায়িক সীমাৰ ধাৰণাক প্ৰত্যাহ্বান জনায় আৰু ইয়াৰ পৰিৱৰ্তে এক তৰল, অন্তৰ্ভুক্ত সামাজিক গাঁথনি উপস্থাপন কৰে (মালিক, ১৯৯৫)।

সূৰুজমুখীৰ স্বপ্নত সাংস্কৃতিক সমন্বয়ৰ তাৎপৰ্য ইয়াৰ সহনশীলতা আৰু সমন্বয়ৰ বাৰ্তাতে নিহিত হৈ আছে। মালিকে উপন্যাসখন ব্যৱহাৰ কৰি এনে এখন সমাজৰ পোষকতা কৰিছে য'ত সাংস্কৃতিক আৰু ধৰ্মীয় পাৰ্থক্যক কেৱল সহ্য কৰাই নহয়, উদযাপন কৰা হয়। অসমীয়া সমাজৰ প্ৰেক্ষাপটত এই কথা বিশেষভাৱে প্ৰাসংগিক, য'ত এনে সমন্বয় ঐতিহাসিকভাৱে শক্তি আৰু সংহতিৰ উৎস।

মালিকৰ সাংস্কৃতিক সমন্বয়ৰ চিত্ৰণেৰে যিকোনো সমাজত উদ্ভৱ হ'ব পৰা বিভাজনমূলক প্ৰৱণতাৰ সমালোচনা হিচাপেও বিবেচনা কৰিব পাৰি। সহাৱস্থানৰ আৰ্হি উপস্থাপন কৰি উপন্যাসখনে এনে সমন্বয়ক ভেঙুচালি কৰিব বিচৰা শক্তিসমূহৰ সমালোচনা কৰিছে। ইয়াৰ ফলত *সূৰুজমুখীৰ স্বপ্ন* কেৱল ব্যক্তিগত চৰিত্ৰৰ কাহিনী হৈ নাথাকি অসমৰ বহল সামাজিক-সাংস্কৃতিক গতিশীলতাৰ প্ৰতিনিধি হিচাপেও চিহ্নিত হৈছে।

চৰিত্ৰ বিশ্লেষণ ঃ

- **গুলচ :** গুলচ *সূৰুজমুখীৰ স্বপ্নৰ* নায়ক। তেওঁ এজন কঠোৰ পৰিশ্ৰমী যুৱক, নিজকে প্ৰতিষ্ঠা কৰিবলৈ যত্নপৰ আৰু তাৰ বাবে হাবি ভাঙি নিজৰ পৰিয়ালৰ বাবে খেটিৰ মাটি উলিয়াই লৈছে। তেওঁৰ কৰ্মনীতি শক্তিশালী হোৱাৰ পিছতো গুলচক বিশেষকৈ তেওঁৰ ৰোমাণ্টিক জীৱনত ত্ৰুটি থকা জটিল চৰিত্ৰ হিচাপে চিত্ৰিত কৰা হৈছে। প্ৰথম অৱস্থাত তেওঁ চেনিমাইক ভাল পায়, কিন্তু পৰিস্থিতিয়ে তেওঁক বিয়া কৰাবলৈ বাধ্য কৰে কপাহীক। ইয়াৰ পৰিৱৰ্তে গোটেই উপন্যাসখনত গুলচৰ এই যাত্ৰাই আনুগত্য, প্ৰেম আৰু সমাজত তেওঁৰ

স্থানৰ প্ৰতিফলন ঘটায়। তেওঁৰ চৰিত্ৰই গ্ৰাম্য অসমৰ যুৱক-যুৱতীসকলে সন্মুখীন হোৱা প্ৰত্যাহ্বানসমূহক প্ৰতিনিধিত্ব কৰে, ব্যক্তিগত ইচ্ছাক সমাজৰ আশা-আকাংক্ষাৰ সৈতে ভাৰসাম্য ৰক্ষা কৰিবলৈ চেষ্টা কৰিছে গুলচে। "গুলচৰ নিজৰ মাটিতো বেছি নাই। মুঠেই দু'ডৰামানত ধান ৰুইছে। সি লোকৰ মাটিত খেতি কৰে। কপাল ভাল হ'লে অহা বছৰৰ পৰা আৰু লোকৰ মাটিত খেতি নকৰিলেও চলিব। এটা মানুহ-তিনিপুৰা মাটি-সেয়া বহুত" (মালিক, ১৯৯৫, পৃ. ৫৪)।

- **চেনিমাই** ঃ উপন্যাসখনৰ অন্যতম কেন্দ্ৰীয় নাৰী চৰিত্ৰ চেনিমাই। তাইক গুলচৰ প্ৰতি গভীৰ প্ৰেমত পৰা বুলি চিত্ৰিত কৰা হৈছে আৰু তেওঁলোকৰ সম্পৰ্কৰ কাহিনীভাগ উপন্যাসখনৰ এটা উল্লেখযোগ্য অংশ, কিন্তু সমাজৰ বাবেই শেষত তাই আন কাৰোবাক বিয়া কৰিবলগীয়া হয়। যাৰ ফলত তাইৰ আৱেগিক অস্থিৰতাৰো সৃষ্টি হয়। চেনিমাইৰ চৰিত্ৰই গ্ৰাম্য সমাজত নাৰীৰ সীমিত ধাৰণাক চিত্ৰিত কৰে, য'ত তেওঁলোকৰ পছন্দ প্ৰায়ে বাহ্যিক পৰিস্থিতিৰ দ্বাৰা নিৰ্ধাৰিত হয়। এই প্ৰত্যাহ্বানসমূহৰ মাজতো তাই প্ৰতিকূলতাৰ সন্মুখীন হৈও প্ৰকৃত প্ৰেম আৰু স্থিতিস্থাপকতাৰ প্ৰতীক হৈয়েই আছে। এয়া যেন স্পিভাকে কোৱা— নিম্নবৰ্গীয়ৰ কথা কোনে শুনে আৰু নাৰী সমাজত অধিকভাৱে প্ৰান্তীয় ধাৰণাৰে উজ্জ্বল উদাহৰণ (Spivak, 1988)।

- **কপাহী** ঃ কপাহী এই উপন্যাসখনৰ আন এক মূল নাৰী চৰিত্ৰ। যিয়ে গুলচক পৰিস্থিতিত পেলাই বিয়া কৰায়। চন্দ্ৰই গুলচৰ জীৱনলৈ কপাহীৰ ভাগিনীয়েক তৰাক আনিবলৈ যত্ন কৰিছিল। কিন্তু কাহিনীভাগ আগবাঢ়ি যোৱাৰ লগে লগে গম পোৱা যায় যে কপাহীয়ে নিজেই গুলচলৈ পলাই আহে। চৰিত্ৰ হিচাপে তাইৰ জটিলতাও উন্মোচিত হয়। তাই প্ৰতিনিধিত্ব কৰে যে ব্যক্তিসকলে বাধ্যতামূলক সামাজিক পৰিৱেশত নিজৰ ইচ্ছা পূৰণৰ বাবে কিমান দূৰলৈকে যাব পাৰে। কপাহীৰ অৱশেষত গুলচৰ জীৱনৰ পৰা আঁতৰি যোৱা আৰু তৰাৰ সৈতে গুলচৰ পুনৰ মিলনেৰে উপন্যাসখনৰ ভাগ্য আৰু নৈতিক ন্যায়ৰ বিষয়বস্তুক উজ্জ্বল কৰি তুলিছে (মালিক, ২০২০)

নিম্নবৰ্গীয় কণ্ঠৰ উপস্থাপন ঃ

সুৰুজমুখীৰ স্বপ্নত গুলচ, চেনিমাই আৰু কপাহী আদি মূল চৰিত্ৰসমূহে তেওঁলোকৰ সম্প্ৰদায়ৰ ভিতৰত নিম্নবৰ্গীয় কণ্ঠৰ প্ৰতিনিধি হিচাপে উপস্থাপিত হৈছে। নিম্নবৰ্গীয় শব্দটোৱে তেওঁলোকক বুজায় যিসকলক প্ৰান্তীয়কৃত আৰু সামাজিক স্তৰৰ ভিতৰত সীমিত ক্ষমতাত অৱস্থান কৰে। প্ৰতিটো চৰিত্ৰৰ অভিজ্ঞতা আৰু সংগ্ৰামেই বিভিন্ন ধৰণৰ উজ্জ্বল কৰি তোলে সমাজ ব্যৱস্থাৰ প্ৰান্তীয় দিশত অৱস্থান কৰা মানুহৰ জীৱন গাথা।

গুলচৰ চৰিত্ৰই অসমৰ গ্ৰাম্য যুৱক-যুৱতীসকলৰ নিম্নবৰ্গীয় কণ্ঠক প্ৰতিনিধিত্ব কৰে। কৃষিক্ষেত্ৰত কঠোৰ পৰিশ্ৰমৰ জৰিয়তে নিজকে প্ৰতিষ্ঠা কৰাৰ প্ৰচেষ্টাই গ্ৰাম্য পৰিৱেশত যুৱক-যুৱতীসকলৰ আৰ্থ-সামাজিক সংগ্ৰামৰ প্ৰতিফলন ঘটায়। তেওঁৰ প্ৰচেষ্টা সত্ত্বেও তেওঁ সমাজৰ আশা আৰু ব্যক্তিগত বিশ্বাসঘাতকতাকে ধৰি উল্লেখযোগ্য বাধাৰ সন্মুখীন হয়, যিয়ে তেওঁৰ সপোন সম্পূৰ্ণৰূপে পূৰণ কৰাৰ ক্ষমতাত বাধাৰ সৃষ্টি কৰে (মালিক, ১৯৯৫)।

চেনিমাইৰ জীৱনত গ্ৰাম্য মহিলাৰ নিম্নবৰ্গীয় অৱস্থিতি প্ৰদৰ্শন কৰা হৈছে। জীৱন সংগী বাছনি কৰাত তেওঁৰ নিজস্ব ধাৰণাক পৰিয়ালে মানি লোৱা নাই। তেওঁ সহ্য কৰা আৱেগিক যন্ত্ৰণাই মহিলাৰ পছন্দক সীমিত কৰা পিতৃতান্ত্ৰিক গাঁথনিসমূহক উজ্জ্বল কৰি তুলিছে। চেনিমাইৰ চৰিত্ৰই এই প্ৰত্যাহ্বানসমূহ ধাৰণ কৰিবলৈ প্ৰয়োজনীয় স্থিতিস্থাপকতা আৰু আৱেগিক শক্তিৰ ওপৰত আলোকপাত কৰে। গ্ৰাম্য সমাজত মহিলাৰ অৱস্থানৰ সম্পৰ্কে ধাৰণা আগবঢ়ায় (মালিক, ১৯৯৫)।

কপাহীৰ চৰিত্ৰই নিম্নবৰ্গীয় ধাৰণাত আন এটা দিশ সংযোজন কৰে। প্ৰথম অৱস্থাত তাই পৰিস্থিতিক নিজৰ সুবিধাৰ বাবে হেঁচা মাৰি ধৰা যেন লাগিলেও তাইৰ কাৰ্যই তাইৰ সামাজিক প্ৰেক্ষাপটত মহিলাসকলৰ বাবে উপলব্ধ হতাশা আৰু সীমিত বিকল্পক প্ৰতিফলিত কৰে। কপাহীয়ে গুলচৰ জীৱনৰ পৰা অৱশেষত বিদায় লোৱা আৰু তেওঁ অনুভৱ কৰা আৱেগিক অস্থিৰতাই নিজৰ নিম্নবৰ্গীয় মৰ্যাদা সলনি কৰিবলৈ চেষ্টা কৰা ব্যক্তিসকলে সন্মুখীন হোৱা নৈতিক আৰু সামাজিক বাধাৰ দিশটো উপস্থাপন কৰে (মালিক, ১৯৯৫)।

এই চৰিত্ৰবোৰৰ জীৱনৰ মাজেৰে সুৰুজমুখীৰ স্বপ্নত অসমৰ গ্ৰাম্য অঞ্চলৰ নিম্নবৰ্গীয় কণ্ঠৰ সংগ্ৰাম আৰু স্থিতিস্থাপকতাক প্ৰাঞ্জলভাৱে চিত্ৰিত কৰা হৈছে। উপন্যাসখনে এক শক্তিশালী নেৰেটিভ হিচাপে কাম কৰে যিয়ে প্ৰান্তীয়কৰণৰ জটিলতা আৰু মানৱ মনোভাৱৰ সহ্য আৰু খাপ খুৱাব পৰা ক্ষমতাক পোহৰাই তোলে।

থিম আৰু মটিফ ঃ

- **সামাজিক গতিশীলতা** ঃ *সুৰুজমুখীৰ স্বপ্ন* উপন্যাসখনে সামাজিক গতিশীলতাৰ সৈতে জড়িত বিভিন্ন

বিষয়বস্তুৰ সন্ধান কৰিছে; যেনে সামাজিক স্তৰ, জাতি আৰু সম্প্ৰদায়ৰ পাৰস্পৰিক ক্ৰিয়া-কলাপ। উপন্যাসখনত এনে এখন গ্ৰাম্য সমাজৰ চিত্ৰণ কৰা হৈছে য'ত সামাজিক স্তৰবৃত্তই মানুহৰ জীৱনত উল্লেখযোগ্য ভূমিকা পালন কৰে। চৰিত্ৰসমূহৰ সামাজিক মৰ্যাদাৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি প্ৰায়ে বিচাৰ আৰু ব্যৱহাৰ কৰা হয়। উদাহৰণস্বৰূপে, গুলচে তেওঁৰ কঠোৰ পৰিশ্ৰম আৰু নিষ্ঠাৰ সত্ত্বেও তেওঁৰ নিম্ন সামাজিক স্থানৰ বাবে অসংখ্য প্ৰত্যাহ্বানৰ সন্মুখিন হয়। গাঁৱৰ জাতি ব্যৱস্থাই চৰিত্ৰবোৰে ইজনে সিজনৰ লগত কেনেদৰে যোগাযোগ কৰে তাৰ ওপৰত প্ৰভাৱ পেলায়, প্ৰায়ে বাধা আৰু সংঘাতৰ সৃষ্টি কৰে। এই সামাজিক স্তৰসমূহ আৰু তাৰ ফলত হোৱা পাৰস্পৰিক ক্ৰিয়া-কলাপসমূহে গ্ৰাম্য অসমৰ পৰম্পৰাগত সামাজিক গাঁথনিৰ কঠিনতাক উজ্জ্বল কৰি তুলিছে (মালিক, ১৯৯৫)।

উপন্যাসখনত থকা সম্প্ৰদায়ৰ পাৰস্পৰিক ক্ৰিয়া-কলাপসমূহো গাঁৱৰ সমাজ-তন্ত্ৰ বা সামাজিক গাঁথনি বুজিবলৈ অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ। ন-ডালিম আৰু পুৰণা-ডালিমৰ বাসিন্দাসকলৰ মাজত সম্প্ৰদায় আৰু পাৰস্পৰিক নিৰ্ভৰশীলতাৰ অনুভূতি আছে যদিও তেওঁলোকৰ পাৰস্পৰিক ক্ৰিয়া-কলাপ প্ৰায়ে অন্তৰ্নিহিত সামাজিক আৰু জাতিগত পাৰ্থক্যৰ দ্বাৰা গঢ় লৈ উঠিছে। এই চিত্ৰণে ঘনিষ্ঠ কিন্তু স্তৰভিত্তিকভাৱে গঠন কৰা সমাজ এখনত জীয়াই থকাৰ জটিলতাসমূহৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰিছে।

- **ধৰ্মীয় সমন্বয় :** *সূৰুজমুখীৰ স্বপ্নৰ* অন্যতম উল্লেখযোগ্য বিষয়বস্তু হৈছে ধৰ্মীয় সমন্বয়, যিয়ে বিভিন্ন ধৰ্মীয় পৰম্পৰাৰ মিশ্ৰণ আৰু সহাৱস্থানক বুজায়। উপন্যাসখনত গাঁৱৰ হিন্দু আৰু মুছলমান সম্প্ৰদায়ৰ শান্তিপূৰ্ণ সহাৱস্থানৰ চিত্ৰণ কৰা হৈছে। এই সুসম সম্পৰ্কক দৈনন্দিন জীৱনৰ বিভিন্ন দিশৰ দ্বাৰা চিত্ৰিত কৰা হৈছে, য'ত ভাগ-বতৰা কৰা উৎসৱ, পাৰস্পৰিক সন্মান, আৰু আন্তঃধৰ্মীয় বন্ধুত্ব অন্তৰ্ভুক্ত হৈ আছে। উদাহৰণস্বৰূপে, চৰিত্ৰসমূহে ইজনে সিজনৰ ধৰ্মীয় উৎসৱ উদযাপন কৰে আৰু প্ৰয়োজনৰ সময়ত ইজনে সিজনক সমৰ্থন কৰে, ঐক্য আৰু পাৰস্পৰিক সন্মানৰ গভীৰ অনুভূতি প্ৰদৰ্শন কৰে। ধৰ্মীয় সমন্বয়ৰ এই চিত্ৰণ তাৎপৰ্যপূৰ্ণ কাৰণ ই বিভিন্ন ধৰ্মীয় সম্প্ৰদায়ৰ পাৰ্থক্যৰ মাজতো সমন্বয়ৰে একেলগে জীয়াই থকাৰ সম্ভাৱনাক উজ্জ্বল কৰি তুলিছে (মালিক, ১৯৯৫)। উপন্যাসখনত হিন্দু-মুছলমান সম্পৰ্কৰ চিত্ৰণে বৈচিত্ৰ্যময় সমাজত সহনশীলতা আৰু সমন্বয়ৰ গুৰুত্বপূৰ্ণ দলিল হিচাপে কাম কৰে। ইয়াত এই বাৰ্তাক আলোকপাত কৰা হৈছে যে শান্তিপূৰ্ণ সহাৱস্থান সম্ভৱ যেতিয়া সম্প্ৰদায়সমূহে ধৰ্মীয় বা সাংস্কৃতিক পাৰ্থক্যতকৈ মানৱতাক অগ্ৰাধিকাৰ দিয়ে।

- **লিংগৰ ভূমিকা ঃ** লিংগৰ ভূমিকা আৰু নাৰী চৰিত্ৰৰ প্ৰান্তীয়কৰণ *সূৰুজমুখীৰ স্বপ্নৰ* কেন্দ্ৰীয় বিষয়। উপন্যাসখনত গ্ৰাম্য অসমীয়া সমাজত নাৰীক জাপি দিয়া পৰম্পৰাগত ভূমিকাসমূহৰ চিত্ৰণ কৰা হৈছে। লগতে তাৰ পৰা ওলাই আহিবলৈ তেওঁলোকে কেনেদৰে সংগ্ৰাম কৰিছে সেয়াও উপস্থাপন কৰা হৈছে। চেনীমাই আৰু কপাহীৰ দৰে নাৰী চৰিত্ৰ সমাজৰ প্ৰত্যাশা আৰু সীমিত সুযোগৰ বাবে প্ৰায়ে বাধাগ্ৰস্ত হৈ পৰে। চেনিমাইক আনৰ কৰ্মৰ বাবে কষ্ট পোৱা নাৰী হিচাপে চিত্ৰিত কৰা হৈছে, যাৰ ফলত তেওঁ ভাল নোপোৱা কাৰোবাৰ লগত বিবাহপাশত আবদ্ধ হয়। সংগী বাছনি কৰাত তেওঁৰ মতামত লোৱাৰ অভাৱে সিদ্ধান্ত গ্ৰহণ প্ৰক্ৰিয়াত মহিলাক প্ৰান্তীয়কৰণৰ বহল বিষয়টোক প্ৰতিফলিত কৰে। এই প্ৰত্যাহ্বানসমূহৰ মাজতো চেনিমাইৰ চৰিত্ৰত স্থিতিস্থাপকতা আৰু আৱেগিক শক্তি সন্নিবিষ্ট কৰা হৈছে আৰু তাৰ জৰিয়তে প্ৰান্তীয় মহিলাসকলৰ আভ্যন্তৰীণ শক্তি প্ৰদৰ্শন কৰা হৈছে (মালিক, ১৯৯৫; Vijaya, 2014)

কপাহীৰ চৰিত্ৰটোৱে গাঁৱৰ মহিলাসকলৰ বাবে উপলব্ধ সীমিত বিকল্পসমূহকো উজ্জ্বল কৰি তুলিছে। সমাজত স্থান নিশ্চিত কৰাৰ হতাশাৰ দ্বাৰা পৰিচালিত তাইৰ এই কাৰ্যই সমাজৰ আশাৰ লগত খাপ খুৱাবলৈ মহিলাসকলে সন্মুখীন হোৱা চাপবোৰ উন্মোচন কৰে। গুলচৰ জীৱনৰ পৰা কপাহীৰ অৱশেষত বিদায় লোৱাটোৱে নাৰীক প্ৰান্তীয়কৰণ কৰা এক কঠিন সামাজিক গাঁথনিত প্ৰতিফলিত কৰাৰ পৰিণতিৰ প্ৰতীক (মালিক, ১৯৯৫)। সামগ্ৰিকভাৱে উপন্যাসখনে নাৰীৰ ভূমিকা আৰু সুযোগক বাধা দিয়া পিতৃতান্ত্ৰিক নীতি-নিয়মৰ সমালোচনা কৰা গৈছে। লিংগ সমতাৰ প্ৰয়োজনীয়তা আৰু মহিলাসকলক সিদ্ধান্ত গ্ৰহণ কৰাৰ ক্ষেত্ৰত সবলীকৰণ কৰা কথাটোৰ গুৰুত্ব পোহৰলৈ আনে।

সামগ্ৰিক আলোচনা ঃ

সূৰুজমুখীৰ স্বপ্ন উপন্যাসখন গায়ত্ৰীৰ চক্ৰৱৰ্তী স্পিভাকৰ তত্ত্বৰে চালে দেখা যায় যে, উপন্যাসখনে নিম্নবৰ্গীয় কণ্ঠৰ প্ৰতিনিধিত্বৰ গুৰুত্বপূৰ্ণ দিশসমূহ উন্মোচন কৰে। স্পিভাকৰ নিম্নবৰ্গীয় ধাৰণাটোৱে সামাজিক, অৰ্থনৈতিক আৰু ৰাজনৈতিক গাঁথনিৰ দ্বাৰা প্ৰান্তীয়কৃতসকলক বুজায়, যিসকলৰ

প্ৰায়ে প্ৰভাৱশালী নেৰেটিভত তেওঁলোকৰ কণ্ঠস্বৰৰ প্ৰকাশ কৰিব নোৱাৰে (Spivak, 1988)। মালিকৰ উপন্যাসখনত গুলচ, চেনিমাই, কপাহী আদি চৰিত্ৰই এই প্ৰান্তীয় কণ্ঠক প্ৰতিনিধিত্ব কৰিছে।

গুলচৰ কঠোৰ পৰিশ্ৰম সত্বেও নিজকে প্ৰতিষ্ঠা কৰিবলৈ কৰা সংগ্ৰামসমূহে নিম্নবৰ্গীয় ব্যক্তিসকলে সন্মুখীন হোৱা অৰ্থনৈতিক আৰু সামাজিক বাধাসমূহ প্ৰতিফলিত কৰে। জীৱনসংগীৰ পছন্দত চেনিমাইৰ মতামতৰ অভাৱে নাৰীৰ ওপৰত পিতৃতান্ত্ৰিক অত্যাচাৰক উজ্জ্বল কৰি তুলিছে, যিটো স্পিভাকৰ যুক্তিৰ সৈতে মিল খাইছে যে নিম্নবৰ্গীয় নাৰীক দুগুণে প্ৰান্তীয়কৰণ কৰা হৈছে (Spivak, 1988)। হতাশাৰ দ্বাৰা পৰিচালিত কপাহীৰ হেতালি খেলা কাৰ্যই নিম্নবৰ্গীয় চৰিত্ৰসমূহৰ বাবে উপলব্ধ সীমিত বিকল্পসমূহৰ কথা ব্যক্ত কৰে। পিতৃতান্ত্ৰিক কঠিন সামাজিক কাঠামোৰ ভিতৰত তেওঁলোকৰ বাধাপ্ৰাপ্ত ধাৰণাবোৰে উপস্থাপিত হৈছে (মালিক, ১৯৯৫)

এই চৰিত্ৰবোৰৰ জৰিয়তে উপন্যাসখনে স্পিভাকৰ এই ধাৰণাটোক চিত্ৰিত কৰিছে যে প্ৰধান সমাজৰ গাঁথনিৰ ভিতৰত নিম্নবৰ্গীয়ই সহজে কথা ক'ব নোৱাৰে বা তেওঁলোকৰ কণ্ঠস্বৰ শুনা নাযায়। তেওঁলোকৰ কণ্ঠ আৰু অভিজ্ঞতাক প্ৰায়ে উচ্চ সামাজিক পদবীত থকাসকলৰ অধিক শক্তিশালী নৰেটিভে ঢাকি ৰাখে।

● অন্যান্য ৰচনাৰ সৈতে তুলনা

অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যলৈ চকু দিলে দেখা যায় যে মালিকৰ দৰে অন্যান্য অসমীয়া ঔপন্যাসিক সকলেও প্ৰান্তীয়কৰণ আৰু নিম্নবৰ্গীয় লোকসকলৰ জীৱন গাথা চিত্ৰিত কৰিছে। উদাহৰণস্বৰূপে মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ *দঁতাল হাতীৰ উঁয়ে খোৱা হাওদা* (১৯৮৮) উপন্যাসখনৰ কথা ক'ব পাৰি। এই উপন্যাসখনত বিধবা মহিলাৰ জীৱন সংগ্ৰামৰ কথা তেওঁলোকৰ প্ৰান্তীয় মৰ্যাদাৰ প্ৰতি একেধৰণৰ সংবেদনশীলতাৰে চিত্ৰিত কৰা হৈছে (গোস্বামী, ১৯৮৮)। চেনিমাই, কপাহী, গোসাঁনী— এই মহিলাসকলে সমাজৰ বাধাৰ সন্মুখীন হয়। যাৰ বাবে তেওঁলোকৰ কণ্ঠক সীমিত কৰা হয় আৰু তেওঁলোকক অৰ্থনৈতিক আৰু সামাজিকভাৱে শোষণ কৰা হয়।

আন এটা উদাহৰণ হ'ল হোমেন বৰগোহাঞিৰ *পিতা-পুত্ৰ* উপন্যাসখন। পিতা-পুত্ৰ বৰগোহাঞিৰ এখন আত্মজীৱনীমূলক উপন্যাস। লেখকে তেওঁৰ বয়সৰ স্তৰে স্তৰে দেখা তেওঁৰ গাঁওখনৰ মানুহৰ জীৱন আৰু গাঁৱৰ সমাজখনৰ পৰিৱৰ্তনৰ ছবিখন উপন্যাসখনৰ জৰিয়তে দাঙি ধৰিছে। তাৰ মাজেদিয়েই অসমৰ প্ৰান্তীয় জনগোষ্ঠীৰ জীৱন সংগ্ৰামৰ কথাও ঔপন্যাসিকে উপস্থাপন কৰি গৈছে। উপন্যাসখনে সমাজৰ নিম্নস্তৰৰ অৱস্থান কৰা সকলৰ জীৱনদৰ্শা উপস্থাপন কৰাৰ লগতে প্ৰভাৱশালী গোটৰ সৈতে তেওঁলোকৰ পাৰস্পৰিক ক্ৰিয়া-কলাপসমূহ দাঙি ধৰিছে। মালিকৰ *সুৰুজমুখীৰ স্বপ্ন* আৰু বৰগোহাঞিৰ *পিতা-পুত্ৰত* নিম্নবৰ্গীয় কণ্ঠৰ চিত্ৰণ প্ৰায় সমান্তৰাল। দুয়োখন উপন্যাসেই প্ৰান্তীয় চৰিত্ৰসমূহৰ স্থিতিস্থাপকতা আৰু শক্তিক উজ্জ্বল কৰি তোলাৰ লগতে তেওঁলোকৰ প্ৰান্তীয়কৰণক স্থায়ী কৰি ৰখা সমাজৰ গাঁথনিৰ সমালোচনা কৰিছে (বৰগোহাঞি, ১৯৮৭; মালিক, ১৯৯৫)

এই উপন্যাসকেইখনে নিম্নবৰ্গীয় বিষয়বস্তুক সম্বোধন কৰিছে আৰু উপন্যাস কেইখনে অঞ্চলটোৰ সামাজিক-সাংস্কৃতিক গতিশীলতাক প্ৰতিফলিত কৰিছে। এই উপন্যাসসমূহত নিম্নবৰ্গীয় কণ্ঠৰ চিত্ৰণ স্পিভাকৰ তত্ত্বৰ সৈতে মিল আছে।ঔপন্যাসিকসকলে প্ৰান্তীয় গোটসমূহৰ অভিজ্ঞতাক চিনি পোৱা আৰু বুজাৰ প্ৰয়োজনীয়তাৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰিছে।

● প্ৰভাৱ

সুৰুজমুখীৰ স্বপ্নত নিম্নবৰ্গীয় কণ্ঠৰ স্বৰ সম্পৰ্কে বিশ্লেষণ কৰোতে দেখা গৈছে যে, অসমীয়া সাহিত্য আৰু নিম্নবৰ্গীয় অধ্যয়নৰ বহল ক্ষেত্ৰখনত এই উপন্যাসখনৰ প্ৰভাৱ গভীৰ। প্ৰথমতে ক'ব পাৰি— এই উপন্যাসখনে সাহিত্যত প্ৰান্তীয় চৰিত্ৰক কণ্ঠদানৰ গুৰুত্ব দিছে। নিম্নবৰ্গীয় চৰিত্ৰৰ সংগ্ৰাম আৰু স্থিতিস্থাপকতাক চিত্ৰিত কৰি চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ দৰে লেখকে সৰ্বাংগীণ সাহিত্য পৰম্পৰাত অৰিহণা যোগাইছে। লগতে নিম্নবৰ্গীয় বৈচিত্ৰ্যময় অভিজ্ঞতা আৰু দৃষ্টিভংগীক স্বীকাৰ কৰিছে।

প্ৰান্তীয় কণ্ঠৰ প্ৰতিনিধিত্ব বুজিবলৈ স্পিভাকৰ তত্ত্বৰে বিচাৰ কৰাত দেখা গৈছে যে— এই তত্ত্ব অসমীয়া সাহিত্যত প্ৰয়োগ কৰিলে সামাজিক, অৰ্থনৈতিক, ৰাজনৈতিক গাঁথনিয়ে প্ৰান্তীয় ব্যক্তিৰ জীৱনত কেনে প্ৰভাৱ পেলায়, সেই বিষয়ে আমাৰ ধাৰণাক অধিক গভীৰ কৰিছে। ইয়াৰ উপৰি এই কণ্ঠক মূলসুঁতিলৈ অনাৰ বাবে সাহিত্যই যে গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা গ্ৰহণ কৰিব পাৰে সেই কথা অনুধাৱন কৰা হৈছে।

নিম্নবৰ্গীয় অধ্যয়নৰ বাবে উপন্যাসখনে এই ধাৰণাটোক

আৰু অধিক শক্তিশালী কৰি তুলিছে যে প্ৰান্তীয়সকলে সমাজত প্ৰচলিত মূল নেৰেটিভৰ ভিতৰত সহজে কথা ক'ব নোৱাৰে। ইয়াত প্ৰান্তীয় কণ্ঠস্বৰ শুনা আৰু তেওঁলোকৰ অভিজ্ঞতাক চিনাক্ত কৰিব পৰা স্থান সৃষ্টিৰ বাবে অবিৰত প্ৰচেষ্টাৰ প্ৰতি আহ্বান জনোৱা হৈছে। সাহিত্য আৰু বহল সামাজিক প্ৰেক্ষাপট— দুয়োটাতে অধিক সমতাপূৰ্ণ আৰু সৰ্বাংগীণ সমাজ গঢ়ি তোলাৰ বাবে ই অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ।

উপসংহাৰ ঃ

এই গৱেষণা পত্ৰখনত চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ উপন্যাস *সূৰুজমুখীৰ স্বপ্ন*ত নিম্নবৰ্গীয় কণ্ঠৰ প্ৰতিনিধিত্ব বিশ্লেষণ কৰা হৈছে। গায়ত্ৰী চক্ৰৱৰ্তী স্পিভাকৰ তত্ত্ব প্ৰয়োগ কৰি উপন্যাসখনৰ বিশ্লেষণ কৰা গৈছে। বিশ্লেষণৰ অন্তত দেখা গৈছে যে,— গুলচ, চেনিমাই আৰু কপাহীৰ দৰে চৰিত্ৰসমূহে নিজৰ সম্প্ৰদায়ৰ ভিতৰত প্ৰান্তীয় কণ্ঠক প্ৰতিনিধিত্ব কৰে। গুলচৰ সংগ্ৰামসমূহে অসমৰ গ্ৰাম্য অঞ্চলৰ যুৱক-যুৱতীসকলে সন্মুখীন হোৱা অৰ্থনৈতিক আৰু সামাজিক বাধাসমূহৰ প্ৰতিফলন ঘটায়। চেনিমাইৰ মতামত লোৱাৰ কথাটোৱে নাৰীৰ ওপৰত পিতৃতান্ত্ৰিক সমাজ-ব্যৱস্থাৰ অত্যাচাৰক উজ্জ্বল কৰি তুলিছে আৰু কপাহীৰ কাৰ্যই প্ৰান্তীয় ব্যক্তিসকলৰ বাবে উপলব্ধ হতাশা আৰু সীমিত পছন্দৰ কথা উন্মোচন কৰে। এই চৰিত্ৰসমূহে নিম্নবৰ্গীয় হোৱাৰ প্ৰত্যাহ্বানসমূহক মূৰ্ত কৰি তুলিছে, কিয়নো তেওঁলোকৰ কণ্ঠ আৰু অভিজ্ঞতাসমূহ প্ৰায়ে সমাজৰ প্ৰভাৱশালী নেৰেটিভে ঢাকি ৰাখে (মালিক, ১৯৯৫; Spivak, 1988) ❑

তথ্যসূত্ৰ আৰু প্ৰসংগপুথি ঃ

কটকী, প্ৰফুল্ল (১৯৯৫); *স্বাজোত্তৰ অসমীয়া উপন্যাস সমীক্ষা;* বীণা লাইব্ৰেৰী।

বৰগোহাঞি, হোমেন (১৯৮৭); *পিতা পুত্ৰ;* ভূমি পাবলিচিং কোম্পানী।

গোস্বামী, মামণি ৰয়ছম (১৯৮৮); *দঁতাল হাতীৰ উঁয়ে খোৱা হাওদা;* বাণী প্ৰকাশ।

প্ৰাপ্তি ঠাকুৰ (২০১৮); চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ চুটিগল্পত নিম্নবৰ্গীয় চেতনা; দাস, অমল চন্দ্ৰৰ (সম্পা.) *চৈয়দ আব্দুল মালিক সমগ্ৰ সাহিত্য-পৰিক্ৰমা* (পৃ.৭২-৮৫); বনলতা।

মালিক, চৈয়দ আব্দুল (১৯৯৫); *সূৰুজমুখীৰ স্বপ্ন;* ষ্টুডেণ্টচ্ ষ্ট'ৰচ।

Bhabha, H. K. (1994). *The Location of Culture.* Routledge.

B. Vijaya (2014). *Fiction of Mahasweta Devi: A Study of Class, Caste and Gender.* Prestige Books International.

Devi, M. (1997). *Mahasweta Devi: Breast Stories.* (G. C. Spivak, Trans.). Seagull Books.

Gramsci, A. (1971). *Selections from the Prison Notebooks.* International Publishers.

Guha, R. (Ed.). (1982). *Subaltern Studies: Writings on South Asian History and Society.* Oxford University Press.

Guha, R. (1983). *elementary Aspects of Peasant Insurgency in Colonial India.* Duke University Press.

Spivak, G.C. (1988). Can the Subaltern Speak? In C. Nelson L. Grossberg (Eds.), *Marxism and the Interpretation of Culture* (pp. 271-313). University of Illinois Press.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

দেশী মুছলমানসকলৰ সমাজ-জীৱনত নাম ঃ এক সমাজ-ভাষাবৈজ্ঞানিক অধ্যয়ন

গুল ৰৌচন আৰা বেগম

গৱেষিকা, অসমীয়া বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
সহকাৰী অধ্যাপিকা, ৰত্নপীঠ মহাবিদ্যালয়
চাপৰ, পিন-৭৮৩৩৭১
৯৯৫৪৭৯০৩৯২
gulroushanarabegum@gmail.com

ড° উপেন ৰাভা হাকাচাম

অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
জালুকবাৰী-৭৮১০১৪
৮৬৩৮৬৫৯৫৫৬
urhakacham@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

নামবাচক শব্দ গঠন অৰ্থাৎ নামকৰণৰ দিশত বিভিন্ন কাৰক জড়িত হৈ থাকে। তাৰ ভিতৰত লোক সমাজৰ বিশ্বাস-অন্ধবিশ্বাস, সামাজিক লোকাচাৰ আৰু ধৰ্মীয় ৰীতি-নীতিৰ বিশেষ ভূমিকা আছে। নামনি অসমৰ অবিভক্ত গোৱালপাৰা জিলাৰ দেশী অৰ্থাৎ গোৱালপৰীয়া উপভাষা-ভাষী মুছলমান লোকসমাজত নামকৰণৰ সম্বন্ধে বহু নতুন নতুন ঘটনা-পৰিঘটনা জড়িত হৈ আছে, যিবোৰ এতিয়াও পোহৰলৈ অহা নাই। তেনে কিছুমান দেশী মুছলমান সমাজত প্ৰচলিত নাম সম্বন্ধে এই নিবন্ধটোত আলোচনা কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

বীজশব্দ ঃ

সমাজ ভাষাবিজ্ঞান, নামবিজ্ঞান, দেশী মুছলমান, লোকবিশ্বাস, লোকনাম, উপনাম।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ দেশী মুছলমান সমাজৰ প্ৰচলিত নামবাচক শব্দৰ ভাষাবৈজ্ঞানিক বিশ্লেষন কৰাই এই নিবন্ধৰ মূল উদ্দেশ্য।

অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ সমাজ ভাষাবিজ্ঞান (Socio-linguistics) আৰু নাম বিজ্ঞানৰ (Onomastics) ৰ তত্ত্বৰ আধাৰত বিশ্লেষণ কৰা হৈছে।

মূল বিষয়ৰ আলোচনা ঃ

সমাজ-ভাষাবিজ্ঞানৰ অন্তৰ্গত নামবিজ্ঞানৰ [১] আধাৰত একোখন সমাজত চলি অহা পৰম্পৰাগত নামকৰণ সম্বন্ধে আলোচনা কৰিলে বহু লোকবিশ্বাস, লোকাচাৰ, লোক-ব্যুৎপত্তিৰ কথা পোহৰলৈ আহে। একো একোখন সমাজে অতীজৰে পৰা একোটা ধৰ্মীয় বিশ্বাসৰ দোহাই দি দৈনন্দিন জীৱনত সুকীয়া সুকীয়া আদব-কায়দা, চাল-চলন আৰু বেশ-ভূষাৰে কাল অতিবাহিত কৰাৰ লগে লগে জন্ম-বিবাহ-মৃত্যুৰ লগত জড়িত বহুত পাৰলৌকিক ক্ৰিয়া আৰু সামাজিক ৰীতি-নীতি অৱলম্বন কৰিবলগীয়া হয়। এইবোৰৰ প্ৰতিটো ক্ষেত্ৰতে লোকভাষাই [২] এক বিশেষ ভূমিকা লৈ আহিছে। কথাতে কয়— "এক দেশৰ বুলি এক দেশৰ গালি" আৰু "কথাতে বঁটা পায় কথাতে কটা যায়"। সেয়ে এখন সমাজত অথবা ব্যক্তি বা পৰিয়াল বিশেষৰ মাজত প্ৰচলিত Folk speech/sociolect বা idiolect/style ৰ মাজেদি সেই সেই ব্যক্তিৰ ব্যক্তিত্ব আৰু সামগ্ৰিকভাৱে সমাজৰ উমৈহতীয়া চৰিত্ৰ প্ৰতিফলিত হয়; যেনেকৈ সাহিত্যৰ মাজেদি সমাজ এখন দাপোণত জিলিকাৰ দৰে জিলিকি উঠে।

অবিভক্ত গোৱালপাৰা জিলাৰ দেশী মুছলমানসকলৰ[৩] মানুহৰ নাম বুজোৱা শব্দবিলাকৰ এক বিশেষ বৈশিষ্ট্য আছে। সাধাৰণতে দেখা যায় যে দেশী মুছলমানসকলৰ ল'ৰা-ছোৱালীৰ নাম পিতৃ-মাতৃৰ নামৰ প্ৰথম আখৰেৰে আৰম্ভ হয়। বিশেষকৈ ল'ৰা হ'লে মাকৰ নামৰ প্ৰথম আখৰ আৰু ছোৱালী হ'লে দেউতাকৰ নামৰ প্ৰথম আখৰেৰে ৰখা হয়। সকলোকেইটা সন্তানৰ নহ'লেও অন্ততঃ প্ৰথম পুত্ৰসন্তান বা কন্যাসন্তানৰ নাম এইদৰে পিতৃ বা মাতৃৰ নামৰ প্ৰথম আখৰেৰে ৰখাটো বাধ্যতামূলক। তেওঁলোকৰ মাজত বিশ্বাস আছে যে এনে কৰিলে ল'ৰা-ছোৱালীৰ ভাগ্য সুপ্ৰসন্ন হয় আৰু সিহঁতৰ ভৱিষ্যত মঙ্গল হয়। মন কৰিবলগীয়া কথা হ'ল ইয়াত কোনো ইছলামধৰ্মীয় নীতি-নিৰ্দেশনা নাই। অবিভক্ত গোৱালপাৰাৰ দেশী মুছলমানৰ বাহিৰে অসমৰ আন জিলাৰ থলুৱা মুছলমান (গৰীয়া, মৰিয়া, জলহা) বা ভাৰতবৰ্ষকে ধৰি অন্য প্ৰান্তৰ মুছলমানসকলে এই নিয়ম মানি চলা দেখা নাযায়।[৪] অবিভক্ত গোৱালপাৰা জিলাৰ দেশী নামেৰে পৰিচিত খিলঞ্জীয়া মুছলমানসকলে কিয় এই নিয়মেৰে সন্তানৰ নামকৰণ কৰে সেয়া গৱেষণাৰ বিষয়।

এই প্ৰথাৰে নামকৰণ প্ৰক্ৰিয়াৰ সম্বন্ধে অধিক জানিবলৈ তলত কেইটামান পৰিয়ালৰ পৰা নমুনা স্বৰূপে কেছ ষ্টাডি দাঙি ধৰা হ'ল—

কেছ নং ১ ঃ

ধুবুৰী জিলাৰ চাপৰ অঞ্চলৰ এগৰাকী কৃতী শিক্ষক, বিশিষ্ট সমাজকৰ্মী আৰু সাহিত্যিক পেঞ্চনাৰ আছিল ঁআলহাজ মোঃ আব্দুল গফুৰ তেওঁৰ পিতৃৰ নাম আছিল ঁহাফেজুদ্দিন আহমেদ আৰু মাতৃৰ নাম আছিলঁ গুৱাবাসী বিবি। তেওঁৰ নামটো মাতৃৰ নামৰ প্ৰথম আখৰ অৰ্থাৎ 'গ'-ৰে আৰম্ভ হোৱা— গফুৰ। তেওঁৰ দুগৰাকী ভগ্নীৰ ভিতৰত পিতৃৰ নামৰ প্ৰথম আখৰেৰে প্ৰথমা ভগ্নীৰ নাম হামিদা খাতুন আৰু দ্বিতীয়া ভগ্নীৰ নাম মাহমুদা খাতুন ৰখা হৈছিল। আনহাতে তেওঁৰ পত্নীৰ নাম হাচনাৰা বেগম (অৱসৰপ্ৰাপ্ত শিক্ষয়িত্ৰী) বৰ্তমানো জীৱিত। তেওঁলোকৰ তিনিগৰাকী পুত্ৰ সন্তান আৰু চাৰিগৰাকী কন্যা সন্তান। পিতৃ (আব্দুল) গফুৰৰ নামৰ প্ৰথম আখৰেৰে চাৰিগৰাকী কন্যাৰ নাম ক্ৰমে— গুলসন আৰা বেগম (সহযোগী অধ্যাপিকা, লক্ষীপুৰ কলেজ), গুল আখতাৰা বেগম (প্ৰাক্তন বিধায়িকা, বিলাসীপাৰা সমষ্টি), গুল ৰৌশন আৰা বেগম (সহকাৰী অধ্যাপিকা, ৰত্নপীঠ কলেজ) আৰু গুল মেহৰা বেগম (এম. এ)। সেইদৰে মাতৃ হাচনাৰা বেগমৰ নামৰ প্ৰথম আখৰেৰে পুত্ৰ কেইগৰাকীৰ নাম ক্ৰমে— আবু হাচান, আব্দুল হান্নান আৰু আবুল হাচিম (অভিযন্তা)।[৬]

কেছ নং ২ ঃ

ৰত্নপীঠ মহাবিদ্যালয়ৰ সহযোগী অধ্যাপক শ্বেইখ হেদায়েতউল্লাৰ পিতৃৰ নাম— সাহাবুদ্দিন আহমেদ আৰু মাতৃৰ নাম হিজ্জাতুন নেছা। পিতৃ সাহাবুদ্দিন আহমেদৰ প্ৰথম আখৰেৰে চাৰি কন্যাৰ নাম ক্ৰমে— সাজেদা, সহিদা, সাহমুদা আৰু ছামছুন নেহাৰ। মাতৃ হিজ্জাতুন নেছাৰ নামৰ প্ৰথম আখৰেৰে পাঁচ পুত্ৰৰ নাম ক্ৰমে— হাফিজুৰ, হেদায়েতউল্লা, হাচানুৰ, হামিদুৰ আৰু হাবিবুৰ। সেইদৰে হেদায়েতউল্লাৰো তিনি কন্যাৰ নাম তেওঁৰ নামৰ প্ৰথম আখৰ 'হ' ৰে আৰম্ভ হোৱা — হেনিফা, হেচেনিন, হেনিমুন। তেওঁৰ পুত্ৰ সন্তান থকাহেঁতেন তেওঁৰ পত্নীৰ নামেৰে হ'লহেতেন।[৭]

কেচ নং ৩ ঃ

চাপৰ অঞ্চলৰ বিশিষ্ট চিকিৎসক ড° আবুল কালাম আজাদৰ মাতৃৰ নাম আমেনা খাতুন। মাতৃ আমেনা খাতুনৰ নামৰ প্ৰথম আখৰেৰে তেওঁৰ দৰে আন তিনিগৰাকী ককাই-ভাইৰ নাম 'আ'-ৰে আৰম্ভ হোৱা— আমিৰ হুচেইন, আলতাফ হুচেইন, আক্ৰামুল হুছেইন।[৮]

কেচ নং ৪ ঃ

দক্ষিণ শালমাৰা-মানকাচৰ জিলাৰ দক্ষিণ শালমাৰা থানাৰ অন্তৰ্গত বালাডোবা গাঁৱৰ বিশিষ্ট সমাজকৰ্মী কায়ছাৰ আলীয়ে নিজে দিয়া তথ্য অনুযায়ী তেওঁলোকৰ তিনিটা প্ৰজন্মৰ নামবোৰ তলত দিয়াৰ দৰে দেশী মুছলমানী প্ৰথাৰে সাধিত হোৱা কায়ছাৰ—

তেওঁৰ (কায়ছাৰ) আইতাৰ (দাদী)ৰ নাম সদৰজান⟶ সেই বাবে তেওঁৰ (কায়ছাৰ) ৰ পিতৃৰ নাম সাদেৰ (হোছেন)⟶ তেওঁৰ (কায়ছাৰৰ) ডাঙৰ বায়েকৰ নাম ছাবিয়া আৰু ছাবিয়াৰ পুত্ৰৰ নাম (কায়ছাৰৰ ভাগিন ল'ৰা) হ'ল ছানোৱাৰুল।

সেইদৰে তেওঁৰ (কায়ছাৰৰ) ককাক (দাদা)ৰ নাম কাশেম (আলী)⟶ সেইবাবে তেওঁৰ (কায়ছাৰৰ) মাতৃৰ নাম কাচিৰণ⟶ কাচিৰণৰ পুত্ৰ বাবে তেওঁৰ নিজৰ নাম কায়ছাৰ (আলী)।

তেওঁৰ আন এগৰাকী ককাক জমশেৰ আলী⟶ তেওঁৰ কন্যাৰ নাম জৰভান⟶ তেওঁৰ পুত্ৰৰ নাম জোব্বাৰ।[৯]

গোৱালপৰীয়া দেশী মুছলমানৰ প্ৰায় প্ৰতিটো পৰিয়ালে

এই নিয়মেৰে সন্তানৰ নামকৰণ কৰে। গতিকে দেখা যায় দেশী মুছলমান মানুহৰ সন্তানৰ নামকৰণ পদ্ধতি সম্পূৰ্ণ সুকীয়া। ইয়াত আৰৱীয় নামকৰণৰ প্ৰভাৱ দেখা নাযায়। আৰৱীয়সকলে সন্তানৰ নামকৰণৰ সময়ত পিতৃৰ তথা পিতৃৰ উপৰি পুৰুষৰ নাম সাঙুৰি দিয়ে। ইছলাম ধৰ্মাৱলম্বীসকলৰ ধৰ্মমত অনুসৰি— মৃত্যুৰ পিছত কয়ামত (মহাবিচাৰ)ৰ দিনাখন প্ৰতিগৰাকী ব্যক্তিক আল্লাহৰ ওচৰত উপস্থিত হোৱাৰ বাবে আহ্বান কৰা হয়— প্ৰত্যেকৰে নামৰ সৈতে পিতৃৰ নাম সম্বোধন কৰি। ইছলাম ধৰ্মীয় প্ৰথাত আৰৱীয়সকলৰ নামকৰণত দুটামান নমুনা দাঙি ধৰা হ'ল। ইংৰাজী ৭১২ খ্ৰীষ্টাব্দত পশ্চিম ভাৰতৰ সিন্ধু প্ৰদেশৰ ৰজা জাহিৰক পৰাস্ত কৰি শাসন ক্ষমতা হাতত লোৱা প্ৰথমজন অৰৱীয় বীৰ মহম্মদ-বিন-কাচিম অৰ্থাৎ কাচিমৰ পুত্ৰ মহম্মদ। সেইদৰে অসমৰ ইতিহাসত প্ৰভাৱ পেলোৱা প্ৰথম মুছলমান শাসক আছিল ইখতিয়াৰ উদ্দিন মহম্মদ-বিন-বখতিয়াৰ খিলিজি অৰ্থাৎ বখতিয়াৰ খিলিজিৰ পুত্ৰ ইখতিয়াৰ উদ্দিন। তেওঁ ১২০৫-০৬ চনত অসমৰ মাজেদি গৈ তিব্বত জয় কৰাৰ বাবে অভিযান চলাইছিল। যি অভিযানত তেওঁক সহযোগিতা আগবঢ়াইছিল ঐতিহাসিক পুৰুষ, ইছলাম ধৰ্মত দীক্ষিত হোৱা স্থানীয় খিলঞ্জীয়া মেছ সম্প্ৰদায়ৰ চৰ্দাৰ বা ৰজা আলী মেছ। এই দুয়োটা নামতে দেখা পোৱা গ'ল যে আৰৱী শব্দ বিন/ইবনে (পুত্ৰ) প্ৰয়োগ কৰি তেওঁলোকৰ পিতৃৰ নাম সংযোজিত কৰি দিয়া হৈছে।[১০]

তেনেদৰে আমি আবু-বিন-এধেম, মহম্মদ-বিন-টগলগ, ওচামা-বিন-লাডেন আদি কিম্বদন্তীমূলক/ঐতিহাসিক বীৰপুৰুষসকলৰ নাম স্মৰণ কৰিব পাৰোঁ।[১১]

দেশী মুছলমানসকলে নিজৰ সন্তান-সন্ততিৰ নাম ইছলামীয় নামেৰে ৰাখে যদিও কেতিয়াবা ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম দেখা যায়। বহুৰ ধৰ্মভীৰু লোকসকলে বজাৰত উপলব্ধ ইছলামিক নামাকৰণৰ কিতাপ চায়ো সন্তানৰ অৰ্থপূৰ্ণ নাম একোটা ৰখা দেখিবলৈ পোৱা যায়। কিন্তু কৃষিজীৱি লোক সমাজত আজিও সন্তানৰ নামকৰণৰ ক্ষেত্ৰত পূৰ্বৰে পৰা চলি অহা কিছুমান ধৰ্মীয় দিশৰ পৰা অৰ্থহীন, যধেমধে তাৎক্ষণিক ভাৱে দিয়া পৰিবেশ-পৰিস্থিতিৰ সৈতে জড়িত একাটা নাম ৰখা দেখা যায়। পৰম্পৰাগত ভাবে এনে ধৰণৰ অৰ্থহীন আচহুৱা লোকনাম ৰখাৰ মোহ কৃষিজীৱি লোকসমাজে এতিয়াও এৰিব পৰা নাই। কেতিয়াবা আকৌ উপৰুৱাকৈ ডাক নাম হিচাপে পোৱা এনেকুৱা নামেৰেহে ব্যক্তিগৰাকী অধিক পৰিচিত হৈ পৰে— আন মুখ্য বা প্ৰকৃত নাম থাকিলেও সেয়া গৌণ হৈ পৰে।

অন্ধবিশ্বাস, কু-সংস্কাৰ বা সামাজিক লোকাচাৰ জনিত কাৰণত কিছুমান বস্তু বা প্ৰাণীক যেতিয়াই তেতিয়াই যেনেকৈ তেনেকৈ নাম লোৱা নহয়। কেঞ্চাৰ আদি বেমাৰৰ নাম লওঁতে ডাঙৰ বেমাৰ (বৰ বেমাৰ) বুলিহে কয়। ভয়-ভীত, অপায়-অমঙ্গলৰ দোহাই দি কেতিয়াবা হিংস্ৰ প্ৰাণী, অপদেৱতা, ভূত-প্ৰেত, অপকাৰী বস্তু বাহানিৰ নাম লওঁতে বিকল্প নাম একোটা দি লোৱা হয়। গোৱালপৰীয়া দেশী মুছলমান সমাজত ৰাতি বেজী বিচাৰি গলে কোনেও নিদিয়ে। চুণক বগা বা দৈ বুলি ক'লেহে পোৱা যায়। বসন্ত বা আই ওলালে 'আলাই-বালাই' উঠিছে বুলি কয়। সেইদৰে হালধীক ৰং/ৰং গুৰা, সাপক পকা/লেৰা বুলি কোৱা হয়। নিশা কোনো চিনাকী মানুহো ঘৰলৈ আহিলে 'আয়' (আহা) বুলিব নাপায়। তেনে কৰিলে ভূত-প্ৰেত বা অপদেৱতা লগত আহি ঘৰত সোমায় বুলি বিশ্বাস।

এনে লোকবিশ্বাসে ব্যক্তি নাম সৃষ্টিৰ ক্ষেত্ৰত একালত প্ৰভূত বৰঙনি আগবঢ়াইছিল। স্বৰ্গদেউ ৰাজেশ্বৰ সিংহৰ ৰাজত্বকালত ৰংঘৰ-কাৰেংঘৰ আৰু তলাতল ঘৰ নিৰ্মাণৰ বাবে কোচ ৰজাই প্ৰেৰণ কৰা 'ঘঞ্চা উদ্দিন'ৰ নাম বুৰঞ্জীত উল্লেখ আছে। এই ঐতিহাসিক পুৰুষজন দেশী মুছলমান হোৱাৰ যথেষ্ট সম্ভাৱনীয়তা আছে।[১২]

দৈনন্দিন জীৱনত ব্যৱহৃত বস্তু-বাহানি, গছ-গছনি, জীৱ-জন্তু আৰু কেতিয়াবা আকাশ, সূৰ্য, চন্দ্ৰ, নক্ষত্ৰ আদিৰ নামেৰেও দেশী মুছলমানসকলে সন্তানৰ নাম ৰাখে। অকল সেয়াই নহয়, শিশু এটিৰ আচাৰ-ব্যৱহাৰ, শাৰীৰিক গঠন, কথনভঙ্গীলৈ চায়ো কেতিয়াবা নাম ৰখা হয়। উদাহৰণস্বৰূপে— শৈশৱৰ কালত যি শিশুৱে বোকা গচকি, বোকাৰে খেলি, ঘৰ মচি ভাল পায় তেনে শিশুক ঘৰমুচি ৰখা হয়।[১৩]

যিসকল দম্পত্তিৰ সন্তান নিটিকে বা উপজিয়ে মৰে তেওঁলোকে নিজৰ সন্তানৰ নাম কিছুমানে অৱজ্ঞাসূচক শব্দৰে ৰাখে। যেনে— ফেলানি (পেলাই দিয়া অৰ্থত), বেৰাকাটা/বেৰাকাটি/বেৰাভাঙা ইত্যাদি।[১৪]

বেমাৰ-আজাৰে লগ নেৰা শিশুক ল'ৰা হ'লে পচা/পচানু, ছোৱালী হ'লে ঘাউৰা/পচানি[১৫] বুলি মতা হয়। কিছুমানে ডাঙৰ হৈ নাম সলনি কৰে যদিও অৰ্থহীন বেয়া নামটোৰে তেওঁ বেছি পৰিচিত হৈ পৰে।

গোপনীয়তা ৰক্ষাৰ খাতিৰত বা সুভাষণত কিছু

অতিৰঞ্জিত কৰি বিশেষ বিশেষ বস্তু, অংগ-প্ৰত্যংগ বা ব্যক্তিক আন নামেৰে পৰিচিত কৰি দিয়া বা উল্লেখ কৰা হয়। উদাহৰণস্বৰূপে— শৌচ-প্ৰসাৱ কৰাক 'বাইৰে যাওৱা', সন্তান প্ৰসৱ হোৱাক 'খালাস' হোৱা', মৃত্যু হোৱাক 'ইন্তেকাল কৰা', নাৰীসকলৰ ৰজস্বলা হোৱাক 'গাও বেয়া হোৱা/শৰীৰ খাৰাপ হোৱা/মাসিক হোৱা/ছুৰা হোৱা', গৰ্ভৱতী হোৱাক 'গাওভাৰী হোৱা/গাত থাকা/পেট হোৱা', গৰ্ভপাত হোৱাক 'গাও খসি যোৱা/বাচ্চা নষ্ট হোৱা' ইত্যাদিৰে কিছু আঁৰ-বেৰ দি কথাবোৰ কয়।

এই ক্ষেত্ৰত দৈনন্দিন জীৱনত ব্যৱহৃত বস্তু-বাহানি, গছ-গছনি, ফল-ফুল, জীৱ-জন্তুৰ নামেৰে আৰু কেতিয়াবা আকাশৰ চন্দ্ৰ-সূৰ্য আদিৰ গতি বিধিলৈ লক্ষ্য কৰিও নাম ৰখা হয়। অকল সেয়াই নহয় শিশু এটিৰ আচাৰ-ব্যৱহাৰ, শাৰীৰিক গঠন, কথনভংগী আদিলৈ চাইও কেতিয়াবা নাম ৰখা হয়। তলত সেইবোৰৰ উদাহৰণ দিয়া হ'ল।

ব্যক্তি নাম ঃ

অ) বিভিন্ন বাৰ, মাহ বা সময় অনুযায়ী ৰখা লোকনাম ঃ

সম্বাৰু/সমেজুদ্দি/সামাদ (সোমবাৰে জন্ম হোৱা বাবে), মঙলু/মংলু/মংলা (মঙ্গলবাৰে জন্ম হোৱা বাবে), বুদ/বুদেৰু/বুদাৰু (বুধবাৰে জন্ম হোৱা), বিসু/বিষ্টি (বৃহস্পতিবাৰে জন্ম হোৱা বাবে), শুকু/শুকুৰ/শুকুদ্দি/শুকুমুদ্দি (শুক্ৰবাৰে জন্ম হোৱা), শালু, শনীয়া (শনিবাৰে জন্ম হোৱা বাবে) ইত্যাদি। সেইদৰে মাহৰ নামত হোৱা লোকনাম— ভাদু (ভাদ মাহত জন্ম হ'লে), পুযু (পুহ মাহত জন্ম হ'লে) ইত্যাদি।

আ) আৰবী ভাষাৰ সাতবাৰ আৰু বাৰ মাহৰ নামেৰে হোৱা নাম ঃ

ৰবিউল, আউৱাল, আহাদ, আহাদুল, আৰবান, ৰমজান, শাবান (আলি), ৰজব (আলি), জুলহক, জুলহাজ, জুলু, চবুৰ ইত্যাদি।

ই) ইছলামীয় নামৰ সৰলীকৰণ / জতুৱাকৰণ ঃ

দেশী মুছলমানসকলে নিজৰ সন্তান-সন্ততিৰ নামসমূহ ইছলামীয় নামেৰে ৰাখে যদিও অনা-ইছলামীয় নাম সমূহেও তেওঁলোকৰ মাজত সমানে জনপ্ৰিয়। আনকি এনে কিছুমান নামত ইছলামীয় অৰ্থ একোটা নিহিত হৈ থকাৰ পিছতো বিকৃতি ঘটি বা সংক্ষিপ্ত ৰূপ হৈ এটা সম্পূৰ্ণ লোক-নামত পৰিণত হৈছে।

এনেকুৱা কিছুমান নাম হ'ল—

হাফিজ	—	হাফি,
কলিমুদ্দিন	—	কুলমুদ্দি,
নৌসাদ	—	নাওসা,
অয়হুদ্দিন	—	অহুদ্দি,
নুৰ/নুৰুদ্দিন	—	নুৰু,
ইয়াছমিন	—	ইছিমা,
জয়নাল	—	জয়না ইত্যাদি।

সেইদৰে বিলেত আলি, সুকি মামুদ আদি তেনে কিছুমান সৰলীকৃত নাম। ঠিক একেদৰে আৰবী-ফাৰ্চী মূলীয় বিভিন্ন অৰ্থপূৰ্ণ শব্দাংশৰ অবিকল ৰূপত বা বিকৃত ৰূপত প্ৰয়োগ কৰি কিছুমান ব্যক্তিনাম সাধন কৰা হয়। উদাহৰণ—

বানু >ভান/ভানু শব্দাংশযুক্ত নাম ঃ

ময়ুৰভান, সুকভান, ঝৰিভান, তাৰা ভান/ভানু, সুৰজভান, অমৰভান, সমৰভান, সহৰভান, সুন্দৰভান, কদভানু, জসৰভান, দয়াভান, সেতীভান (চৌখীন বা লাহতীজনীক দিয়া উপনাম) ইত্যাদি।

উল্লা/উদ্দিন যুক্ত নাম ঃ

ফৰমতুল্লা, হেদায়তুল্লা, খয়ৰুদ্দিন ইত্যাদি।

বাহাৰ (মূল ফাৰ্চী ঃ বাহাৰ মানে বসন্তকাল) যুক্ত নাম ঃ

কদিম বাহাৰ, নুৰ বাহাৰ ইত্যাদি।

তোন/তুন শব্দাংশযুক্ত নাম ঃ

আবেতোন, কাবেতোন, ছাবেতোন, বাছাতোন, বাহাতোন, আলোৱাতোন ইত্যাদি।

জান (মূল ফাৰ্চী ঃ প্ৰাণ, দিল) যুক্ত নাম ঃ

বাশিজান, বইজান, সইজান, আতপজান, আলোকজান, হবিজান, নবীজান, উলজান, গুলজান, তুলজান, আহাজজান, মাহাজ জান, শাহাজ জান, ডুগিজান, দয়াজান, ফুলজান ইত্যাদি।

ঈ) অনা-ইছলামীয় নাম ঃ

ইয়াৰ বিপৰীতে দেশী মুছলমান সমাজত প্ৰতিবেশী হিন্দুসকলৰ মাজত অতিশয় সমাদৃত কিছুমান নামশব্দৰো প্ৰয়োগ আছে। যেনে—

মণি শব্দাংশযুক্ত নাম ঃ

উৰমণি, বিৰমণি, শিৰমণি, নিৰমণি, কদুমণি ইত্যাদি।

মতী/মাই শব্দাংশযুক্ত নাম ঃ

মইনামতী, মৰুচমতী (পকা জলকীয়াৰ দৰে ৰঙা গালৰ ছোৱালী) ইত্যাদি।

ফুল শব্দাংশযুক্ত নাম ঃ

ফুলতি, ফুলঝৰি, ফুলমুদ্দি, ফুলদ্দি, ফুলজান, ফুলিয়া ইত্যাদি।

খাই/ খোৱা শব্দাংশযুক্ত নাম ঃ

গৰ্ভৱতী অৱস্থাত বা ঠিক প্ৰসৱৰ আগে আগে এনে বস্তু খোৱা হৈছিল বাবে। উদা.— কলাখাই, মলাখাই, আমখাই, জামখাই, নয়াখাই, পন্তাখাই, পুযনা খাই, বালাখাই, দৈ খোৱা, খেতা খোৱা, ভেৰখোৱা ইত্যাদি।

উ) বিভিন্ন লোকনাম ঃ

এইবোৰৰ উপৰিও দেশী মুছলমানসকলৰ মাজত এনে কিছুমান নাম আছে যিবিলাকত ইছলামীয় অৰ্থতো নায়েই, পোনপটীয়াকৈ কোনো ভাষাৰ পৰাই ব্যুৎপত্তি সাধন কৰিব নোৱাৰি। এয়া লোক-নামৰ জনপ্ৰিয়তাৰ বাহিৰে আন একো নহয়। নিৰক্ষৰ আৰু চহা লোকসমাজে এনেধৰণৰ নামেৰেই নিজৰ সমাজ-জীৱন পৰিচালিত কৰি আহিছে। তলত এনে কিছুমান লোকনামৰ উল্লেখ কৰা হ'ল—

গোৱালপৰীয়া দেশী মুছলমান সমাজত কিছুমান অৰ্থহীন অথচ ছন্দগন্ধী বা ধ্বন্যাত্মক বা প্ৰতিধ্বন্যাত্মক শব্দ বা সাদৃশ্যজনিত শব্দ (যুৰীয়া শব্দ) যোগেও নামবাচক শব্দ সাধিত কৰি ব্যৱহাৰ কৰা হয়।

সাদৃশ্যজনিত নাম ঃ

ফুলজান, গুলজান, গোলাপজান; সুমৰ, উমৰ, ঝুমৰ, কুমুৰ; কালু, মালু, নালু, ভেদলু, ফেদলু; ফুলন, উলন; কাণ্টু, মণ্টু; কাচ্চু, বাচ্চু; ভোলা, ভুলুৱা, ভুলু; আয়না, ময়না, জয়না; নেল্লা, নেলটু, নালটু; বুদ্দি, সুদ্দি; হানুৱা, বানুৱা; হইওৰ, মইওৰ; নেজি, খেজি; শাহলা, আহলা; ঢেপ্পা, টেপ্পা ইত্যাদি।

দৈনন্দিন ব্যৱহাৰ্য কেতবোৰ সা-সঁজুলি, বাদ্যযন্ত্ৰ, আ-অলংকাৰ, সাজ-পাৰ, খাদ্যবস্তু আদি বুজোৱা নামবাচক শব্দৰ উপৰিও চৰাই-চিৰিকতি, মাছ-কাছ, জীৱ-জন্তু, ফল-মূল, গছ-গছনিৰ নামেৰে ৰখা ব্যক্তিনামৰ সুন্দৰ সুন্দৰ উদাহৰণ পোৱা যায়। সেইবোৰ এনেধৰণৰ—

বিভিন্ন উদ্ভিদ আৰু জীৱ-জন্তুৰ নামেৰে দিয়া লোকনাম ঃ

দৈয়ল (দহিকতৰা), ঘুগু, মৈয়ৰ (ম'ৰা), ময়না (মইনা), নয়নতৰা, চাম্পা, আঙ্গুৰ, গোলাপী/ গোলাপজান, জবা, ফুলিয়া, তাৰাফুলি, লিচু, নাৰ্গিছ, গেন্দী (নাৰ্জি), ফুলতি, হাচনাৰা, জোনাই/জোনাকী, কমলা, সন্তৰা, সোনালু (সোণাৰু), ফৰিং, বুলবুলি, চেং, ভাংনা, টেংনা, গৰাই, ঢেৰাই, টেপা, গতা, চান্দা, হাপা, চুটকি, শিয়েলু, কেটাৰু, পাখী, খইলসানা /খলসেনী, চিকেৰু, বেদলেং, হাপা, বিচ্চু, ধুনীয়া / ধনীয়ে, পিয়াজু, লিচু, ডালিম, আগালি ইত্যাদি।

অন্যান্য অনাদৃত সা-সামগ্ৰী, পদাৰ্থ বা বস্তুৰ নামেৰে হোৱা লোকনাম ঃ

খেতা (কঁঠা), তেনা (ফটাকানি), ঢুসে (এবিধ পাতল কম্বল), খলা (খোলাকাটি), কাদো (বোকা), বালু (বালি), পেলেকানি (এবিধ আঞ্জা), শুটকেনি (শুকাটি) ইত্যাদি।

বিশেষণ বা ধ্বনাত্মক শব্দৰে সাধিত লোকনাম ঃ

ঘাউৰা, পতে, চেংটু, হাবলু, ঢেপু, ফাসকু, ঘতা, ইছি, শেমলাই, সুখলাই, সুখবাসী, বিৰমুদ্দি, ফাইলটেনী, নিশি, ফাৰাচ, নুননি, গেল্লা, পিৰুৱা, মজিয়ে, গোৰেয়া, টৰেয়া, ভটেয়া, টুনটুনি, ফুৰফুৰি, ঝলমলি, চলচলি, আন্দু, আলেন্দু, টুয়েৰু, পুতাৰু, সুবুল্লে, পেনাতি, চাচৰিয়ে, হাবি, ভদং, নেল্লা, নেলটু, নেলপু, নালটু/লালুট (ৰঙা-ৰচঙা), নাদদু, নালুক, নেল্লু, শেলপু, মাদাৰী, চিক্কু, কতাৰু, বালিয়ে, নছি, ইসু, কাইদে, আহলী, আহলু, ফালু, টইটকে, খুজেলু/খুজলু, বনচল, পাহাৰী, নেদানি, আইল্লে, চিকানী, পেদৰা, বেদৰা, টেপু, নবীয়ে, সেল্লা, ঘটাৰু/ঘতাৰু, টগৰু, দীগলে, ফচু, নয়ানু, গাদু, নাৰিয়ে, খৰিয়ে, বদু, হন্দোলা, মেদলা, জণ্টু, ফণ্টু, কাইনছে, টুসকু, ভুসক, মাদাই, নচটে, পচাৰু, ভেলকু, ফেকো, গেন্দা, গেন্দী, ঝলমলী, ঘেৰঘেৰু, নিয়েতু, সুটকু, উপেযু, ঘুটু, টগৰু, খাত্তু, নেলপেসু, (লেৰেলা-চেপেতা, নিশকটীয়া, দুৰ্বল লোক) ঢোলা, ফেকা, নগৰু, আন্দু, বিসু, টৰা ইত্যাদি।

অৰ্থপূৰ্ণ (অনাদৃত নাম) ঃ

কোনো প্ৰাকৃতিক দুৰ্যোগ, বিশেষ স্মৰণীয় ঘটনা, শাৰীৰিক অবয়ব, চাৰিত্ৰিক বৈশিষ্ট্য, জন্ম গ্ৰহণ কৰা সময়, বাৰ, মাহ আদিৰ নামেৰে ভালেমান নাম ৰখা হয়। উদাহৰণ—

চান্দ/ চান/ চানু (পূৰ্ণিমা বা জোনাক ৰাতি জন্ম হোৱা বাবে)

সেইদৰে চান মহম্মদ, চান মিয়া, চান আলি, লালচান্দ, কালাচান্দ, নীলচান্দ, ফুলচান্দ, নয়াছান্দ, চন্দ্ৰভানু, জ্যোৎস্নাভানু, তাৰাভানু, তাৰাবানু, আদি নাম চন্দ্ৰ/ জোন আদিৰ লগত জড়িত।

সেইদৰে অমাৱশ্যা তিথিত জন্মিলে আমাসী ৰাখে।

ইদেৰু (ঈদৰ দিনা জন্ম হোৱা বাবে)।

আনহাতে লালভান, সূৰ্যবান, সুৰজভান (সূৰ্য, চোকা ৰ'দ বা দিনৰ লগত জৰিত) আদি নামো যথেষ্ট অৰ্থপূৰ্ণ।

সোণ/ ৰূপ আদি মূল্যবান বস্তুৰ নামেৰে ৰখা নাম— সোনাবুল্লা, সোণাউল্লা, ৰূপাতুল্লা, সোনাভান, ৰূপাভান ইত্যাদি।

সেইদৰে হুৰকা/তুফানী (ধুমুহা), বাতাসু (বতাহী), দাবাৰু (ধুমুহা) আদি নাম দেশী মুছলমান সমাজত যথেষ্ট জনপ্ৰিয় আৰু অৰ্থবহ। ধুমুহা বৰষুণক দেশী মুছলামসকলে 'দাবাৰী' বুলি কয়। সেই সময়ত জন্ম পোৱা সন্তানৰ নাম সেয়ে দাবাৰু ৰাখে। ঝুৰি (বৰষুণ)ৰ বতৰত জন্ম হ'লে ঝুৰিভান। বানপানী সময়ত হোৱা সন্তানত নাম বানভাসা/বানভাসী ৰখা হয়। কাতিমাহৰ আকালত জন্ম হ'লে— কাতিয়া, আকালু/আহালু। অভাৱ-অনাটন চলি থকা সময়ত জন্ম হ'লে— মংগা ৰাখে।

শিয়ালু (কেঁচুৱা অৱস্থাত শিয়ালে লৈ গৈছিল, পিছে পিছে দৌৰি গৈছিল ঘৰৰ মানুহে)

হুজুক (১৯৫০ চনত হোৱা সংঘৰ্ষ, কটা-কটি, মৰা-মাৰি হোৱা সময়ছোৱাক দেশী মুছলমানসকলে 'হুজুক' বুলি কৈছিল। সেই সময়ত জন্ম পোৱা সন্তানৰ নাম হুজুক ৰাখিছিল)।

চায়না, ইতি (বেছি সন্তান থকা মাক-বাপেকে 'আৰু সন্তান নালাগে' অৰ্থত শেষৰগৰাকী সন্তানৰ নাম এইদৰে ৰাখে)।

পেটমছা/পেটমুছি (আৰু যাতে সন্তান নহয়, মাতৃৰ গৰ্ভ মছি ছাফা কৰি জন্ম হোৱা অৰ্থত)

ফেলানী (সন্তান জন্ম হৈয়ে মৰিলে এনে নাম ৰখা হয়)।

বিভিন্ন চাৰিত্ৰিক বৈশিষ্ট্য আৰু শাৰীৰিক অৱয়বৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি ৰখা নাম ঃ

দেখাত সাহাব (বাবু, ভদ্ৰ, বগা)ৰ দৰে হ'লে— সাহেবুৰ/চাহেবুৰ (ৰহমান), সাহেবানী/ছাহেবানী, সাইবানী/ছাইনানী, বিলাত (আলি)।

গাৰ বৰণ গোড়া হ'লে ল'ৰাৰ ক্ষেত্ৰত 'নাল্টু' আৰু ছোৱালীৰ ক্ষেত্ৰত 'নালমণি /নালবানু' তু. নাল (ৰঙা)।

দেখাত ধুনীয়া হ'লে ল'ৰাৰ ক্ষেত্ৰত 'ফুলাম' আৰু ছোৱালীৰ ক্ষেত্ৰত ঝলমলী/ফুলমতী/ফুলমণি; আনহাতে ক'লা বৰণৰ হ'লে— কাল্টু /কালু (ক'লা)

কালটি, নালটি, দুলদুলি, ভোকৰা, চোকা, গুদি, ঢন, সেন্দুৰি, সুন্দৰী আদি নামবোৰ দেহৰ বৰণ, স্বাস্থ্য আৰু চাল-চলনৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি ৰখা হয়। সেইদৰে সাতাৰু, ডুবেৰু, নেচকাটা, খেৰকাটা, হাপানী, ঢেমনী, ফাজিল, দাড়িয়ে, দৰবাৰু, ভুছেল্লু, পেতানী, বাচ্চানী ইত্যাদি তেনে কেতবোৰ নাম।

তলত এনে অৰ্থপূৰ্ণ অথচ অৱজ্ঞাসূচক নাম কিছুমানৰ তালিকা দিয়া হ'ল—

টেপৰা/ টেপৰী (বাওণা/ বাওণী)
ঢেপৰা/ ঢেপৰী (ডফলা/ ডাফলী)
চান্দিয়া/নাৰিয়ামাথা (টকলা বা তপামূৰা)
নেংৰা/ নেংৰী (খোৰা/খুৰী)
টসা/ টসী, বেঙা/ বেঙী (কাণেৰে নুশুনা)
বাটু/ বাটকা/ বাটকু/ বাটকী/ বাংটু/ বাংটি (কটীয়া লোক)
খাটটু/ খাটকু বাঙাল, খাট খুমচী (চুটি চাপৰ লোক)
কুঁজা/ কুঁজী (কুঁজ থকা লোক)
ঘেগা/ ঘেগী (গড়ল বেমাৰী)
বছা/ বুছি (নাক চেপেটা/ চেপেটী)
চউক ডাংৰা/ ডাংৰী (ডাঙৰ চকুৰ নাৰী/ পুৰুষ)
খৰম ঠেঙী/ কাৰাইল ঠেঙী (খৰম যুৰীয়া)
বাতাসু/ বাতাসী (অতি ক্ষীণকায়)
কাপাসী (কপাহৰ দৰে বগী)
তুফেনু (তুফান অৰ্থাৎ ধুমুহাৰ দৰে গতি যাৰ বা তুফান হওঁতে জন্ম হৈছিল যাৰ)
কান্দুৰা/ কান্দুৰী/ কান্দৰে/কান্দিৰী/ ভেট কান্দুৰী (অলপতে কান্দি দিয়া স্বভাৱৰ লোক)
চেপটা/ চেপটী, চেপৰা/ চেপৰী (অতি কৃপণ)
ভেবলা/ ভেবলী, আলভেলি (হোজা, বুৰ্বুক)
কেতাৰু (চকুৰ কেতাৰ অৰ্থাৎ ফেচকুৰি ওলাই থকা বাবে)
মুতুৰা/মুতুৰী (তেনে স্বভাৱৰ লোক)
হাগুৰা/হাগুৰী (তেনে স্বভাৱৰ লোক)
পাদুৰা/পাদুৰী (তেনে স্বভাৱৰ লোক)
নেলচ/ নেলচানী (নিলাজ/ নিলাজী)
লেলটা/ নেলটা/ নেলটু/ নেল্লা (লালটি ওলাই থকা স্বভাৱৰ বাবে)
ফকৰ/ফকৰেনী (মিছলীয়া)
খজেলু/খাজেলী (খৰে খোৱা/খাইতী)
ঘাউয়া/ঘাউয়ানী (ঘূণীয়া, ঘা যুক্ত)
খৰিয়ে (খৰিৰ দৰে ক্ষীণ-মীন চেহেৰাৰ)
শুকটেনী ঃ (শুকটিৰ দৰে)
শুটকু/ শুটকা/ শুটকী/ (ক্ষীণ) ইত্যাদি।

ঊ) অন্যান্য অব্যক্তিবাচক লোকনাম ঃ

অকল ব্যক্তি নামে নহয় খাল-বিল, পথাৰ-পথ, ঘৰ-দুৱাৰ-বাহন, খেল-ধেমালি, নৃত্য-গীত,গৰু আদি পোহনীয়া জন্তু, ভূত-প্ৰেত, বেমাৰ-আজাৰ আদিৰ নামকৰণতো এনে কাৰকে বিশেষ ভূমিকা লৈ আহিছে। তলত তেনে কিছুমান নামবাচক শব্দৰ উদাহৰণ দিয়া হৈছে—

(i) খাল-বিলৰ নাম, পথাৰ-সমাৰ, বাট-পথৰ নাম ঃ

ধীৰ বিল, দিপলাই বিল, হাসডোবা বিল, তামৰাঙা বিল, দলানি বিল, ডাকৰা বিল, বলবলা, কান্দাৰভূই, নামাভূই, সোৰসোৰা, বৰসোৰা, ডাবৰি, ডাংৰি ইত্যাদি।

খামাৰ/খামাৰি (খেতি পথাৰৰ অস্থায়ী খোলা) ঃ

এই নামেৰে দক্ষিণ গোৱালপাৰা আৰু গাৰোপাহাৰৰ সংলগ্ন অঞ্চলত বহু কেইখন গাঁও পোৱা যায়।

গঞ্জ (আৰবী-ফাৰ্চী) ঃ গোলোকগঞ্জ, ফকিৰগঞ্জ, ৰাণীগঞ্জ, মানিকগঞ্জ।

কিল্লা (দুৰ্গ ঃ আৰবী-ফাৰ্চী) ঃ টিকিৰকিল্লা, ৰাখালকিল্লা, কিল্লাঝাৰ।

টাৰি (ওখ মাটি) ঃ ৰাভাটাৰি, ৰাঙাটাৰি, পৈটাৰি, ছেৰালটাৰি আদি।

বাৰী ঃ ফুলবাৰী, বাশবাৰী, হলদীবাৰী, শিমলাবাৰী, কঠালবাৰী আদি।

মাৰা/মাৰী ঃ কৈমাৰী, টাকিমাৰী, শিঙিমাৰী, চাটাইমাৰী।

পাৰা ঃ খেৰোপাৰা, সূতাৰপাৰা, লেংটিপাৰা।

ভিটা ঃ বাপুৰভিটা, বৰভিটা, খলিছাভিটা, ডাবকাৰ ভিটা।

ঝাৰ ঃ গুমাইঝাৰ, বালিঝাৰ, যোগীঝাৰ ইত্যাদি।

(ii) ঘৰ-দুৱাৰ, বাহন (নাও, গাড়ী আদি)ৰ নাম ঃ

আন্দোল ঘৰ (ৰান্ধনী ঘৰ)

নাহৰী/ডাৰি ঘৰ (চ'ৰা ঘৰ)

বৰো ঘৰ (বৰ ঘৰ)

গৌল/গুলি ঘৰ (গোহালি)

গোলা/ভাণ্ডাৰ ঘৰ (ভৰাঁল)

খৰি ঘৰ (খৰিৰ ঘৰ)

খোৱাৰ (গৰু-ছাগলীৰ ফাটেকঘৰ)

ডিঙেনাও, বাদাম এলানাও, মাছ মাৰা নাও, ছৈএলা নাও (চৈ দিয়া নাৱ)।

(iii) খেল-ধেমালি, নৃত্য-গীতৰ নাম ঃ

হাডু-গুডু, কানা মাছি (চকু বান্ধা খেল),

লুকা-চুৰি/পলা-পট্টি 'লুকা-ভাকু',

বাট্টা খেল, ছি দেৱা,

গল্লা-পাক্কা, ফুতি খেল, শোলা/পিন্নে খেলা,

দাৰিয়ে খেলা, কুত কুত, হাট হাট, কচু খেলা,

আট চাইল (পাশা খেলৰ লেখিয়া), ১৬ গুটি খেল,

লাদম-গাদম, বন্নি (সিদা বন্নি, ছুৱা বন্নি),

ইক্‌ৰি-মিকৰি, চিনা-বুটি চিনা-বুটি,

খুটি-চাটি/ঠুলি মুচি, শুন্দিবালি-শুন্দিবালি,

উডুম-ডুডুম, মাৰ্বল-চামুচ, সুই-সূতা,

পানীত-পাৰত; খাৰাতাল, এউৰি মাগা, শিংৰাণি গান, নিন্দালি ইত্যাদি।

(iv) গৰু আদি পোহনীয়া জন্তুৰ নাম ঃ

হালন/হাইলন (পোৱালী জন্ম দিয়াৰ আগত ঃ মাইকী ছাগলী, গাই)

মাহাৰী/বহৰী (পোৱালী জন্ম দিয়াৰ পিছত ঃ মাইকী ছাগলী, গাই)

বাছুৰ (গৰু পোৱালী)

বকন/বহন (চেঁউৰী)

দামৰা বাচ্চা (দমৰা)

নাৰিয়া (লাওমূৰা গৰু) ইত্যাদি।

গাৰ বৰণ আৰু চাল-চলনৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি কিছুমান গৰুৰ নাম গৃহস্থই ৰাখে। যেনে— কালটি, পালটি, সেন্দুৰী, দুলদুলি, ভোকৰা, চোকা, গুদি, ঢনা ইত্যাদি।

(v) বেমাৰ-আজাৰৰ নাম ঃ

নদীফিৰে/ঝাৰাফিৰে (পাতলা পায়খানা, পনীয়া শৌচ)

ফিতেৰ বিষ (এক প্ৰকাৰৰ পিত্ত বা পেটৰ বিষ)

বিগেৰ বাশলী তু. বাশলী (পক্ষাঘাত)

জহৰ বাত/বাত বিশ/আমবাত/ ৰসবাত/ঝিঞ্জীবাত (এবিধ বাতবিষ)

নালী ঘাও (নালী অৰ্থাৎ জিভামূলত হোৱা প্ৰচণ্ড বিষ)

কুহুৰি কাণা (কুকুৰী কণা)

একশিৰে (একশিৰা, এককোষী)

বিখাউজ, চুলকানি (এবিধ খৰ)

ফেস্‌ৰা/ খেস্‌ৰা/মাশি-কুশি/মাশি-পিশি (ঘামচিৰ নিচিনা সৰু আই)

গুটি/ডিলে বেৰাম (অৰ্শ)

আদ কপালি বিষ (কপালৰ এটা ফালে হোৱা বিষ)

দুবলা বেমাৰ/ধাতু দুৰ্বল বেমাৰ (বীৰ্য পতন)
সুতিকা/পসুতা বেমাৰ/পোৱাতি বেৰাম (প্ৰসূতি ৰোগ)
হাপানী/হেস্‌পেসী/হাইফাই (হাফানী)
ঘুসঘুসানি জ্বৰ (এবিধ জ্বৰ)
ফোট/বিষ ফোটা/ফুটকণে/আগ্নিগেৰাস (ফোহোৰা)
জ্বৰছিটে/জ্বৰশুং (জ্বৰশূং)
টেফৰাই উঠা
পাছ্‌ৰা ঘাও
গৰহজম/পেটফাপা (বদ হজম)
বাতাস লাগা (ভাইৰেল ফেভাৰ) ইত্যাদি।

(vi) **ভূত-প্ৰেতৰ নাম ঃ**

মূৰীয়ে মাশান, ভেৰা মাশান
পেতানী (প্ৰেতানী, খেতৰী)
বৰ্মা দুষ্ট (ব্ৰহ্মদুষ্ট)
কালী ধৰা, জিন ধৰা, পৰীধৰা।

(vii) **বিভিন্ন খাদ্যবস্তু, সাজ-পাৰ, আ-অলংকাৰ/নিত্য ব্যৱহাৰ্য সামগ্ৰীৰ নাম ঃ**

ঝুনঝুনি (ঝুনঝুনকৈ বাজে কাৰণে), মদন কট্‌কটি (শিশু-কিশোৰসকলে খাই ভাল পোৱা নিমকিৰ নিচিনা সৰু বৰ্গাকৃতিৰ এবিধ খোৱা বস্তু, অতি টান, কটকটা সহজে ভাঙিব পৰা নাযায় বাবে), ভুট্‌ভুক (এবিধ খেলনা), ঢেড়্‌ঢেৰী (মটৰ চাইকেল), ভট্‌ভটী (ভট্‌ভট্‌কৈ শব্দ কৰা যন্ত্ৰচালিত নাও), চট্‌চটি (সৰু মাছৰ এবিধ ব্যঞ্জন বিশেষ) কস্‌মসা (অধিক মছলা, জলকীয়া দি শুকানকৈ ৰন্ধা মাছ বা মাংস), মেন্দেৰা-মেন্দেৰা (থপথপীয়াকৈ ৰন্ধা মাছ বা মাংসৰ ব্যঞ্জন), ঝৰঝৰ (এটাত গাত আনটো লাগি নধৰাকৈ ৰন্ধা ভাত), নালিপাতা (শোকতো, পেলকানি (পিঠাগুৰি দিয়া খাৰৰ আঞ্জা), বৰো ধাৰাই (বৰঢাৰি), বিচনেৰ ধাৰাই (বিচনাত পৰা ঢাৰি), নামাজী ধাৰাই (নামাজ পঢ়োঁতে ব্যৱহৃত), ভাত খাৱা ধাৰাই (ভাত খাওঁতে ব্যৱহৃত), বইসনে ধাৰাই (বহোঁতে ব্যৱহৃত); বিছনেৰ পাটী (পাটীদৈ/শীতল পাটী), নামাজী পাটী (নামাজ পঢ়োতে ব্যৱহৃত), ভাত খাৱা পাটী (ভাত খাওঁতে ব্যৱহৃত); বিছনেৰ খেতা (বিচনা চাদৰৰ কাম কৰে), নামাজী খেতা (নামাজৰ কামত ব্যৱহৃত), ছাওৱাৰ খেতা (কেঁচুৱাৰ বাবে ব্যৱহৃত), দস্তৰখানা (ভাত খাওঁতে ব্যৱহৃত), তোলাখেতা (আলহীৰ বহিবলৈ দিয়া ফুলাম কঁঠা), কমৰেৰ গামচা (কঁকাল বন্ধা), মাথা বান্ধা গামচা (পাগুৰী মৰা), পানডাৰনী (তিৰোতাৰ কঁকালত গুজি লোৱা হাঁচতি জাতীয় বস্ত্ৰ); ছিকল হাৰ, জোপেচী হাৰ, কামাৰাঙা হাৰ, সীতা হাৰ, কবচ হাৰ, ডুগডুগী হাৰ, পাইচাৰ হাৰ; চাপকাঠি (গলপতা), সাতনাৰা (সাতসৰী সদৃশ চন্দ্ৰ হাৰ), মান্দলী জোৰা (মাদলী), একগলা চেইন, মানতাসা, গোটা খাৰু, ঝৰকা লগোৱা বাজু, সাবুদানা চুৰি (ডালিমগুটীয়া খাৰু), মুঠা খাৰু, ঝুৰাচুৰি, নাকফুল, তাৰাফুল, পাথৰ বসা ফুল, দানাবসা ফুল, নাকছবি, কানপাশা, কাণেৰ দুল, ঝড়া লাগা দুল, তেতুলপাতা দুল, মাছিপাত, কাণেৰ বালি, কমৰেৰ গোট, চেপ্টা পায়জেৰ, ঝড়কা দেওয়া পায়েল, বাঘ খাৰু, ফেলা খাৰু ইত্যাদি।

(viii) **ফল-মূল, জীৱ-জন্তু, মাছ-কাছ আদিৰ নাম ঃ**

টিপটিপালি (টিপচি চৰাই), ফেচকুল্লা (এবিধ চৰাই), ঢেন্‌ঢেনি/ভেন্‌ভেনি মাছি (ভেন্ ভেন্ শব্দ কৰা বাবে), পুনপুমি মাছি (এবিধ মাখি), ড্ৰে শিয়াল (খেৰ খেৰ কৈ কৰে বাবে), গোমালাদ (এবিধ সাপ), মাছ আলাদ (এবিধ সাপ), কালডাৰাইশা (ফেঁটীগোম), চামৰি উকুন (চাহী), ঢেলা উকুন (বীৰা ওকণি), নিকি উকুন (পিজলা), ফুজেনল উকুন (মজলীয়া আকাৰৰ ওকণি), খুদনী বোল্লা (খুদীয়া বৰল), ভেংৰুল (কোদোবৰল)।

ঋ) সম্বন্ধবাচক/সম্বোধনবাচক শব্দৰ সাধনত লোকভাষা প্ৰয়োগ ঃ

সাধাৰণতে দেশী মুছলমান সমাজতো মৌলিক সম্বন্ধবাচক শব্দৰ লগত বৰো (ডাঙৰ), ছোটো (সৰু), মাইজলা (মাজু) আৰু অন্যান্য তেনে গুণবাচক বিশেষণৰ সংযোগত কেতবোৰ সন্ধন্ধবাচক শব্দ আৰু তেওঁলোকক কৰা সম্বোধন শব্দৰ সাধন কৰা হয়। তলত তেনে কিছুমান ৰূপৰ উদাহৰণ দিয়া হ'ল—

ক) মৰম বাচক -উ/-য়ু/-ও/-য়ে প্ৰত্যয় যোগে—

আব্বা/আব্বা (দেউতা)
চাচু (খুৰা)
মাইয়ু/মাইয়ে (ভণ্টি)
মাইয়ে (ঘৈণীয়েক) ইত্যাদি।

খ) জান প্ৰত্যয় যোগে—

বুজান (বাইদেউ) তু. বু/বুবু
আব্বাজান (দেউতা)।

গ) গো প্ৰত্যয় যোগে—

বাগো/বাগ' (দেউতা) তু. বাবা

মাগো/মাগ’ (মা) তু. মা।

ঘ) সাব/সেব প্ৰত্যয় যোগে—

ভাইসেব/ভাইসাব (ভাই চাহাব/ভিনদেউ)

ঙ) বৰো ‘ডাঙৰ’ বিশেষণ যোগে—

বৰো জাও (ডাঙৰ জা)

বৰো আব্বা (বৰদেউতা/জেঠা)

বৰো আম্মা (জেঠী)

চ) ছোট/ছুটু (সৰু) বিশেষণ যোগে—

ছোট জাও (সৰু জা)

ছুটু ভাই (ভাইটি)

ছ) ঈ/নী আদি স্ত্ৰীলিংগ বাচক ৰূপ যোগে—

দোস্তানী ‘সখাৰ পত্নী’

বেয়ানী ‘সখী’

কাকী (খুৰী) তু. কাকা (খুৰা)

চাচী (খুৰী) তু. চাচা (খুৰা)

দাদী (আইতা) তু. দাদা (ককা)

নানী (আইতা) তু. (ককা)

সেইদৰে বৰোভাই (ককাইদেউ) ‘মাইজালে ভাই’ (মাজুভাই), সতাল ভাই (সতীয়া ভাই)।

পোশানি/পোশ্‌নাই, পোশা বেটা/ বেটী (তোলনীয়া/পো/জী)

সম্বোধনবাচক শব্দ ঃ

বাহে/বাৰে/বাফুৰে (অচিনাকী মানুহক কৰা সম্বোধন)

ড্ৰা (অতি মৰমৰ ভাতৃ বা পুত্ৰক এইবুলি মাতে) তু. বাংলা ঃ খোকা বাবু/খোকুন

নাতিয়া (যিকোনো ককা সম্পৰ্কীয় মানুহে নাতি সম্পৰ্কীয় লোকক কৰা সম্বোধন)

বুড়া/বুড়ী (বয়সতকৈ বেছি জনা-বুজা ধৰণৰে সৰুতে অলপ বেছি কথা কোৱা ল’ৰা/ছোৱালীৰ উপনাম)

শাংনা/পানীয়ে মৰা (পত্নীয়ে গিৰিয়েকক বুজোৱা কিছুমান নাম তু. অসমীয়া ঃ বঙহৰ দেউ)

ধৰ্ম বাপ/ধৰ্ম মাও (নিজৰ পিতৃ-মাতৃ থকাৰ উপৰিও বেলেগ মানুহক পিতৃ-মাতৃ বুলি মানি ললে ‘বাপ দায়’ দিয়া বা ‘মাও দায়’ দিয়া বোলে। এনেকুৱা ধৰ্ম ‘বাপ-মাও’ নিজৰ পিতৃ-মাতৃ তুল্য হৈ পৰে। সকলো সকাম নিকামত ধৰ্ম বাপ-মাওক পিতৃমাতৃৰ মৰ্যাদা দিয়া হয়।)

বুড়া/বুড় মাও (আইতা)

বুড়ে/ভুড়া বাপ (ককাদেউতা) ইত্যাতি।[১৪]

এ) পৰোক্ষ নাম ঃ

দেশী মুছলমান সমাজত ঘৈণীয়েকে গিৰীয়েকক মৰমতে সন্মানজনক সোণাৰ চান আৰু কাজিয়া লাগিলে হীনতাসুচক শাংনা বা চান পানীয়ে মৰা আদি বিভূষণেৰে সম্বোধন লয়। কিন্তু ঘৈণীয়েক মাতিবৰ বাবে তেনে কোনো সম্বোধনবাচক শব্দ পোৱা নাযায়। সাধাৰণতে গিৰিয়েকে ঘৈণীয়েকক ‘এই/অই/গ/কিগো’ বুলি মাতে আৰু কেতিয়াবা প্ৰথম সন্তানৰ নামেৰে সম্বোধন কৰা দেখা যায়। যেনে— মাইয়ুৰ মাও, বাবুৰ মাও, মহিদাৰ মাও/আম্মা, নাছিমেৰ মাও/আম্মা ইত্যাদি। ভাই বোৱাৰীয়ে ভাইশহুৰ বা বৰজনাকক সম্বোধন কৰোঁতেও নিজৰ প্ৰথম সন্তানৰ নামেৰে যেনে— নাছিৰেৰ বৰো আব্বা/নাছিৰেৰ জেঠ, ৰসিদুলেৰ জেঠ বুলি কয়। ইয়াতকৈ বেছি জনপ্ৰিয় হ’ল তেওঁলোকৰ অৰ্থাৎ বৰজনাক আৰু জাকৰ) প্ৰথম সন্তানৰ নামেৰে বৰজনাক (ভাইশহুৰ)ক সম্বোধন কৰাটো। যেনে— শিৰিণেৰ আব্বা, বাবুৰ আব্বা, মণিৰাৰ আব্বা আদি।

উপসংহাৰ ঃ

সময়ৰ লগে লগে সংস্কৃতিৰ অন্যান্য পাৰ্থিৱ (tangible) আৰু অপাৰ্থিৱ (intangible) সমলৰ দৰে লোকনাম, লোকোক্তি, প্ৰবাদ-পটন্তৰ আদি লোকসাহিত্যৰ সমলৰাজিৰো পৰিৱৰ্তন হয়। দেশী মুছলমান সমাজত প্ৰচলিত হৈ অহা নামকৰণৰ ক্ষেত্ৰতো ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম নহয়। যোৱা শতিকাৰ শেষাৰ্ধলৈকে দেশী মুছলমান সমাজত ইচলামীয় নাম ৰখাৰ সমান্তৰালভাৱে একোটাকৈ ডাকনাম (প্ৰায়ে প্ৰতিবেশী কোচ ৰাজবংশীৰ লগত মিল থকা)[১৫] বা উপৰুৱা নাম (teknonyms) থোৱা দেখা গৈছিল। লাহে লাহে অধিক ইচলামীকৰণ হ’বলৈ ধৰিছিল আৰু ইয়াতে এই শতিকাৰ আৰম্ভণিৰ পৰা দেশী জনগোষ্ঠীয় মঞ্চ বা তেনে সমাজ-সাংস্কৃতিক অনুষ্ঠান-প্ৰতিষ্ঠানৰ ছত্ৰছায়াত জাতীয়বাদী ধাৰাই গা কৰি উঠাত এই প্ৰৱণতাই কিছু স্থবিৰতা লাভ কৰিছে। এতিয়াৰ ল’ৰা-ছোৱালীৰ নামবোৰত ধৰ্মনিৰপেক্ষতা আৰু গোলকীকৰণৰ সাৰ্বিক প্ৰভাৱ অনুভূত হৈছে।[১৬] ইয়াৰ বিপৰীতে এতিয়াও গাঁৱে-ভূঞে দেশী মুছলমানী নামকৰণ প্ৰথাৰ (আইশ বা ৰাইশ মিলোৱা) ধাৰা ব্যাহত হৈ যোৱাগৈ নাই। ❑

অন্ত্যটীকা আৰু প্ৰসংগসূচী ঃ

১। নামবিজ্ঞান (Onomastics) এটা ভাষাবিজ্ঞানত ব্যৱহৃত নতুন পৰিভাষা। “নামসমূহক অৰ্থাৎ আমাৰ চাৰিওফালে থকা ঠাইৰ নাম, মানুহৰ নাম, বস্তুৰ নাম আদিৰ বিজ্ঞানসন্মত আৰু পদ্ধতিগতভাৱে অধ্যয়ন কৰা বিজ্ঞানক নামবিজ্ঞান (Onomastics) বোলা হয়।” (অৰ্পণা কোঁৱৰ প্ৰভৃতি সম্পাদিত ভাষাবিজ্ঞান পাৰিভাষিক কোষ, ২০০৮, পৃঃ ১৩৭)

যদিও এই পৰিভাষাটি নতুন, ভাষাবিজ্ঞানত নামবিজ্ঞান ধাৰাটি অতি প্ৰাচীন। গ্ৰীক দেশত খ্ৰীঃপূঃ দ্বিতীয় শতিকামানৰ পৰাই এনে পৰম্পৰাৰ প্ৰচলন আছিল আৰু গ্ৰীক ভাষাৰ Onoma (নাম) আৰু Stics (বিজ্ঞান /তত্ব) শব্দগুচ্ছৰ পৰাই Onomastics ধাৰণাটি ৰোপিত হৈছে। এই সম্পৰ্কে অতি পুংখানুপুংখভাৱে জানিবলৈ হ'লে বৰ্তমান ইণ্টাৰনেটত উপলব্ধ তথ্যসমূহৰ ওচৰ চাপিব লাগিব। এই সম্পৰ্কীয় তেনে তথ্যসূত্ৰ হ'ল—

“Onomastic (or Onomatology) is the study of names. The word is derived from Greek ono a (onoma) which means name.” (Source : jewish Language Research website)

অকল ভাষাবিজ্ঞানৰে নহয় লোকসংস্কৃতিতত্ত্বৰো নামবিজ্ঞান (Onomastics), অৰ্থাৎ নামকৰণ প্ৰণালী বা নামকৰণতত্ত্ব এটা বিশেষ আলোচ্য বিষয়। এই নামবিজ্ঞানৰ অন্যতম শাখা নৃগোষ্ঠীয় নামবিজ্ঞান (Ethnonymy)ৰ বিভিন্ন সূত্ৰৰ দ্বাৰা শ্ৰেণীবদ্ধ কৰা প্ৰধান দুটা উপায় হ'ল— আন্তঃনাম (Endonyms) আৰু বহিঃনাম (Exonyms)।পৃথিৱীৰ সৰু-বৰ প্ৰতিটো জনগোষ্ঠী বা সম্প্ৰদায়ৰ যিবিলাক জনগোষ্ঠীয় নাম বা বিভিন্ন নাম (স্থান নাম, প্ৰাণী নাম, লোকসংস্কৃতি আৰু নৃতত্ত্ব উভয়তে বিশেষ গুৰুত্ব পোৱা এই দুটা পদ্ধতিৰে বিভিন্ন জনগোষ্ঠী, জাতি-উপজাতিৰ লগতে ফৈদ-খেল বা বংশৰ ব্যুৎপত্তি সম্পৰ্কে একো একোটা বহুল ব্যাখ্যা নিৰূপিত হৈ আহিছে। এই সম্পৰ্কে ইণ্টাৰনেটলব্ধ সূত্ৰ কিছুমান এনেধৰণৰ—

An ethnonym (from the Greek *ethnos* ‘nation’ and *onoma* ‘name’) is the name applied to a given ethnic group. Ethnonyms can be divided into two catagories : exonyms (where the name of the ethnic group has been created by another group of people) and autonyms or endonyms self designation, where the name is created and used by the ethnic group itself) e. g. ethnonym for the ethnicaly dominant group in Germany is the Germans. This ethnonym is an exonym used by the English speaking world, although the term itself is derived from Latin, conversely, Germans themselves use the autonym of die deutschen. ("Source: wikipadia")

২। “সাধাৰণতে লোকভাষাৰ পৰিসৰ বা সমল অতি বিস্তৃত।লোক নাট্যানুষ্ঠানৰ অলংকৃত গদ্যশৈলী আৰু কাব্যধৰ্মী সংলাপৰ মাজেদি বিশেষ এক শ্ৰেণী লোকৰ মনোৰঞ্জনৰ বাবে ৰচিত হোৱা লোক আখ্যান বা মালিতা (পাতি ৰাভাসকলৰ মাজত প্ৰচলিত ভাৰীগানৰ পৰ্ণা শুনুবা আৰু মাৰেগানৰ ঝুনা বা কৰি গীত) আৰু সৰ্বসাধাৰণ ৰাইজৰ মাজত প্ৰচলিত ফকৰা-যোজনা-সাঁথৰ (দিষ্টান/শাস্ত্ৰ), প্ৰবাদ-পটন্তৰ (শুলুক) আৰু ঘৰত আই-বাইহঁতে গালি-শপনি পাৰোঁতে বা কুৎসা ৰটনা কৰোঁতে ব্যৱহাৰ কৰা মুখনিসৃত লোকভাষা, বুঢ়া-মেথাই সমাজ পাতি দায়-দণ্ড নিস্পত্তি কৰোঁতে বাকপটুতা প্ৰদৰ্শন কৰিবলৈ নিক্ষেপ কৰা লোক-উক্তি (maxims), বিয়া-সবাহ বা মদৰ মেলৰ মুখৰোচক চুপতা-চুপতি (জমনি/টেটকুটি/খিচা গীত = jokes); কণ কণ অকণিৰ ছুৱা খেল, নাচৰগুটি খেল (হেতালি) আদিত উচ্চাৰিত থুনুক-থানাক মাত (babbling) ইত্যাদিও প্ৰকাৰন্তৰে লোক-ভাষাৰে উপাদান।” (উপেন ৰাভা হাকাচাম ঃ ৰাভামিজ ভাষা আৰু নিদৰ্শন, ২০০৫, পৃ. ৫৯)

৩) ক) উত্তৰ বঙ্গৰ সৈতে গোৱালপাৰাৰ ৰাজনৈতিক আৰু সামাজিক সম্পৰ্ক অঙ্গাঙ্গী। খেন বংশৰ ৰজাসকলৰ দিনৰ পৰাই পশ্চিম অসমৰ লগত কোঁচ ৰাজবংশৰ সম্পৰ্ক। হাড়িয়া মণ্ডলে প্ৰতিষ্ঠা কৰা কোঁচ ৰাজ্যৰ নৰনাৰায়ণৰ দিনত স্বৰ্ণ যুগ আৰম্ভ হয়। কোঁচ ৰাজ্য বিভক্ত হোৱাত অবিভক্ত গোৱালপাৰা, কামৰূপ আৰু দৰং কোঁচ-হাজোৰ অন্তৰ্ভুক্ত হয়। পিছলৈ এই ভূখণ্ড মুছলমানৰ সংস্পৰ্শলৈ আহে। আগৰ দিনত এই ভূখণ্ডৰ লোকে গোৱালপাৰাক মান্যাৰ্থত ‘দেশ’ বুলিছিল। সেই অৰ্থতে ‘দেশ’-ত বাস কৰা কি হিন্দু, কি মুছলমান সকলো সম্প্ৰদায়ৰ লোকেই ‘দেশীলোক’ বা ‘দেশী মান্‌শি’। নামনি অসমৰ অবিভক্ত গোৱালপাৰা জিলাত বসবাস কৰা মানুহখিনিয়ে নিজকে ‘দেশী’ মানুহ হিচাপে পৰিচয় দিবলৈ ভাল পায়; যাৰ অৰ্থ থলুৱা বা স্থানীয়। এই ভূখণ্ডৰ অধিবাসী বিশেষকৈ অবিভক্ত গোৱালপাৰা জিলাৰ হিন্দু-মুছলমান সকলো থলুৱা মানুহে নিজকে ‘দেশী মানশি’ বুলি পৰিচয় দিয়ে। পোন প্ৰথমবাৰৰ বাবে এই অভিধাটি বুৰঞ্জীত বীৰ চিলাৰায়ে লিপিৱদ্ধ কৰে। (উপেন ৰাভা হাকাচাম ঃ ‘দেশী মুছলমান আৰু ৰাজবংশীৰ ব'হাগ বিহু ঃ সাতবিষমা বা বিযুৱা’, বাৰ্তাপখিলী, চতুবিংশতিতম বৰ্ষ, অষ্টম সংখ্যা, মে’, ২০১৯)।

খ) “উত্তৰ বংগৰ গৌড়ৰ চুলতান আলাউদ্দিন হুছেন শ্বাহে কমতাপুৰত ১৪৯৮ খ্ৰীঃৰ পৰা ১৫০৫ খ্ৰীঃলৈ ৮ বছৰ ৰাজত্ব কৰি ৰঙামাটিত ৰাজধানী পাতে। পৰৱৰ্তী সময়ত ৰঙামাটি মোগল ৰাজত্বৰ ঘাটিত পৰিণত হয় আৰু মোগলে নিৰবিচ্ছিন্নভাৱে ১৬৬২ খ্ৰীঃৰ পৰা ১৭৬৫ খ্ৰীঃলৈ ১০৪ বছৰ কাল ৰাজত্ব কৰে। ফলত সুদীৰ্ঘ কাল মুছলমান শাসিত এই অঞ্চলৰ অসংখ্য লোক ইছলাম ধৰ্মত দীক্ষিত হয়। ১৪৯৮ খ্ৰীঃৰ ভিতৰত অবিভক্ত জিলাখনলৈ অহা পাঠান সৈন্য আৰু আন কিছুলোক ঠায়ে ঠায়ে থাকি যায়। এই মুছলমানসকলে স্থানীয় পতিতা, অৱহেলিতা বিধৱা তিৰোতাক বিয়া কৰাই ইয়াতেই বাস কৰিবলৈ লয়। পিছলৈ এওঁলোকৰ সতি-সন্ততিসকল স্থানীয় মুছলমান ৰূপে পৰিগণিত হ'ল।” (গফুৰ, আলহাজ আব্দুল ঃ *‘গোৱালপাৰাৰ দেশী মুছলমানৰ ইতিবৃত্ত’*; চক্ৰশিলা-চম্পাৱতী, পৃ. ৬৩)।

গ) ‘‘So far as the local Muslims are concerned it is quite likely that some of them are descendants of the early Muslim hordes who chose to stay on, But in all probability these outsiders married local women before setting done hare, On the other hand the ancestors of the bulk of the others would appear to have been early local converts. This is apparent both from their physical features and manners and customs. It is significant that the local Muslims call themselves Desi (local) and they use the term Bhatiya to designate the ‘down river’ Muhammadans from East Bengal.” [Datta, Birendranath : *A Study of the Folk Culture of the Goalpara Region of Assam,* p.14]

৪। “মাক-বাপেকৰ নামৰ আদ্যাক্ষৰক দেশী মানুহে আইশ/ৰাইশ বুলি কয়। এই ৰাইশ কোনো ৰাশি চক্ৰ নহয় অথবা কোনো প্ৰকাৰ গ্ৰহ-নক্ষত্ৰৰ অৱস্থিতি গণনা কৰিও নহয়। কন্যা সন্তান জন্মিলে পিতৃৰ নামৰ আদ্যাক্ষৰেৰে আৰম্ভ কৰা হয় আৰু পুত্ৰ সন্তান জন্মিলে মাকৰ নামৰ আদ্যাক্ষৰেদি সন্তানৰ নামৰ আৰম্ভনি কৰা হয়। উদাহৰণ স্বৰূপে ক'ব পাৰোঁ যদি মাকজনীৰ নাম কাপাসী বিবি, কাপাসীৰ আদ্যাক্ষৰ ‘ক’ তেতিয়া এই ‘ক’ বৰ্ণেৰে প্ৰথমজন পুতেকৰ নাম ৰাখিব হয়তো— কৰ্পূল, কবেজ আৰু লগত এটি যিকোনো উপাধি লগাই দিব পাৰে। যেনে— কৰ্পূল আলী, কবেজ উদ্দিন ইত্যাদি। সচৰাচৰ দেখা যায় প্ৰথম পুত্ৰ আৰু কন্যা সন্তানৰ বেলিকাহে পিতৃ-মাতৃৰ এই ৰাইশ/বাইশ অনুসৰণ কৰা হয়। পৰৱৰ্তী সন্তান কেইটাৰ বেলিকা অনুসৰণ কৰিবও পাৰে নকৰিবও পাৰে। বহু সময়ত দেখা যায় যে অগ্ৰজ জনৰ নামৰ সৈতে ছন্দৰ মিল ৰাখি অনুজ ভাতৃ অথবা ভগ্নী সকলৰ নাম ৰাখে। যেনে— কৰ্পূল ভাই জৰিফুল, শ্বৰীফুল, তেনেদৰে ছলু, নলু, কলু ইত্যাদি। পিতৃৰ নাম যদি ৰহমত আলী তেতিয়া ৰহমতৰ আদ্যাক্ষৰ ‘ৰ’ ব্যৱহাৰ কৰি কন্যা সন্তানৰ নাম ৰাখিব হয়তো ৰহিমা খাতুন অথবা ৰমিছা বেগম ইত্যাদি।” (জামান, ছফিক্ উজ ঃ ‘সন্তানৰ নামাকৰণ আৰু দেশী মানুহ’, দেশীকিল্লা, ২০২২, পৃ. ২৩)

৫. (ক) দেশী মুছলমান সমাজৰ নামকৰণৰ দৰে মিচিং সমাজতো একালত সন্তানৰ নামকৰণৰ বিশেষ ৰীতি আছিল। বাপেকৰ নামৰ শেষৰ আখৰটোৰে আৰম্ভ কৰি নাম ৰাখিছিল। উদাহৰণস্বৰূপে, বাপেকৰ নাম ‘টুংয়ে’ হ'ল পুতেকৰ নাম ‘য়েংপে’ হ'ব। (উৎস ঃ পাদুন, নাহেন্দ্ৰ ঃ ‘মিচিং অপৃনত উৎপত্তি আৰু বিচাৰ’, মিছিং সংস্কৃতিৰ আলেখ্য, সম্পা. ভৃগুমণি কাগ্‌য়ুং, ১৯৮৯, পৃ. ৩৯৫)

(খ) “প্ৰত্যেকটো নামেই দুটা অক্ষৰৰ। ‘সাধাৰণতে আদী আৰু মিচিংসকলে (আগৰ কালত) পিতৃৰ নামৰ অৰ্দ্ধাংশ - পুতেকৰ নামৰ আগত ব্যৱহাৰ কৰে। তাৰ পুত্ৰৰ নামত পিতৃৰ নামো সন্নিবিষ্ট হৈ থাকে। কা/যুগ⟶ য়ুম/কাং⟶ কা ঃ/চি⟶ চি/য়াং ইত্যাদি। এইদৰে পিতাকৰ নামৰ শেষ অক্ষৰটো পুতেকৰ নামৰ আদি অক্ষৰ হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰে। (পায়েং, সদানন্দ ঃ ‘মিচিং লোক পৰম্পাৰাত জন্ম’, মিচিং জনজাতি সমাজ আৰু সংস্কৃতি, ২০১১, পৃ. ৮৪)।

৬। তথ্যদাত্ৰী ঃ গুলসন আৰা বেগম (৪৯)
সহযোগী অধ্যাপিকা, অৰ্থনীতি বিভাগ
লক্ষীপুৰ মহাবিদ্যালয়। (২২। ৫। ২২)।

৭। তথ্যদাতা ঃ হামিদুৰ ৰহমান (৪৮)
বিষয় শিক্ষক, ৰায়ঝৰা হায়াৰ চেকেণ্ডাৰী স্কুল, বহলপুৰ
গাওঁ গোসাইডুবি
জিলা ঃ গোৱালপাৰা। (১২। ৬। ২২)।

৮। তথ্য দাতা ঃ আমিৰ হুচেইন (৬১)
গাওঁ ঃ জালিকুৰা, বহলপুৰ
জিলা ঃ ধুবুৰী (৮। ৬। ২২)।

৯। কায়ছাৰ আলি (৪৩)
গাঁও ঃ বালা ডোবা
ডাক ঃ দ ঃ শালমাৰা
জিলা ঃ দঃ শালমাৰা
Whatsapp যোগে তথ্য আহৰণ (১৯। ৬। ২২)

১০। জামান, চফিক-উজ ঃ প্ৰাগুক্ত, পৃ.২৫

১১। "A teknonym is a name derived from a child's name that is used to address or refer to a parent. For example, "Johnshad" (as opposed to Johnson", the more common patronym). The word comes from the Greek "tekon" (Child) and "-onym" (name). ("Pedonym" or "paedonym" are also used occasionally for the same concept.). One people have children, for instance, they are to be addressed by the teknonym "father of" or "mother of "their oldest child." …… in Arabic", if occurs in very known names: Abu is 'father of' and Umm is 'mother of ', as in Abu Bakar, Abu Nidal, Umm Kulthum. It's still in active are use …… So, its Arab-wide. "Most cultures that do this

formally use the oldest child or oldest son's name informing the teknonym; no mother how many children the person has".
(Source: http://www.everything2.com/title/teknonym on 27th sept. 2011.

১২। "দেশী মানুহে জন্মক্ষণত মাকৰ গৰ্ভত পৰাই লগুণৰ দৰে নাড়ী ডিঙি আৰু কাষলতিৰ তলেদি মেৰিয়াই শিশু জন্মিলে জন্মৰ পিছৰ বৃহস্পতিবাৰৰ দিনা আবেলি বুঢ়ী মাকে অথবা শিশুটোৰ মাকে পশ্চিম দিশে কাবা শ্বৰীফৰ দিশৰ মুখ কৰি বহি পবিত্ৰ মনে তিনিডাল ৰঙীন সূতা লৈ পকাই পিছদিনা আগবেলা অৰ্থাৎ শুক্ৰবাৰে শিশুটিক লগুণৰ দৰে 'ঘুঞ্চা' পিন্ধাই দিয়ে। এতিয়াও বহুত দেশী মানুহে কঁকালত ঘুঞ্চাৰ দৰে 'তাগি' ব্যৱহাৰ কৰে। শৈশৱৰ ঘুঞ্চা পিন্ধিব লগা হোৱা বাবে হয়তো এগৰাকী ঐতিহাসিক পুৰুষৰ নামাকৰণ এনেদৰেই 'ঘাঞ্চা উদ্দিন' কৰা হৈছিল। এনেও হ'ব পাৰে হয়তো দেশী ভাষাৰ শব্দ ঘুঞ্চা/ঘৈঞ্চা/ঘৈনছে যাক অসমীয়াত ঘুনচা বুলি কোৱা হয়।" (জামান, ছাফিক উজ ঃ প্ৰাগুক্ত, পৃ.২৪-২৫)।

১৩। গাঁও অঞ্চলৰ বহু পুৰুষৰ নাম বেৰাকাটা / বেৰভাঙা আৰু নাৰীৰ নাম বেৰাকাটী / বেৰাভাঙী পোৱা যায়। বেৰাকাটা নামৰ সৈতে দেশী ধাইয়ানী (ধাই) সকলৰ দক্ষতাৰ পৰিচয় পোৱা যায়। যি সময়ত চিকিৎসালয় আৰু চিকিৎসাৰ অভাৱ আছিল সেই সময়তো দেশী গাঁৱে গাঁৱে প্ৰসৱৰ সময়ত জীৱন-মৃতৰ সৈতে যুঁজি থকা গৰ্ভৱতী নাৰীক বিশ্বাস-আস্থা বা সাহস যোগাই ৰাখিব পাৰিছিল দেশী দক্ষ ধাইসকলে। প্ৰসৱৰ সময়ত যেতিয়া জটিল পৰিস্থিতিত পৰি গৰ্ভৱতী এজনী নাৰীয়ে সকলো আশা হেৰুৱাই পেলাব লগা হৈছিল সেই সময়ত আজিৰ দৰে চিজাৰিন নহ'লেও জননদ্বাৰৰ বেৰ কাটি সন্তান প্ৰসৱ কৰাৰ কৌশল জানিছিল দেশী মহিলা ধাইয়ে। আৰু এনেকৈ জন্ম লাভ কৰা সন্তানৰ নাম এনেদৰে ৰাখিছিল। সংবাদ ঃ সাহিজুল ইছলাম (৩১), গৱেষক, তেজপুৰ বিশ্ববিদ্যালয় বিলাশীপাৰা ওৱাৰ্ড নং.৯ ডাকঘৰ ঃ হাকামা, জিলা ধুবুৰী (Whatsapp যোগে তথ্য আহৰণ, (২।৬।২২)

১৪। দ্বিতীয় গৰাকী লেড্ৰিৰ এগৰাকী নানীৰ নাম এনে আছিল। শিশু কালত পেছাব কৰি হাতেৰে ঘৰ মচাৰ নিচিনা কৰিছিল কাৰণে তেওঁৰ নাম ঘৰমুচি ৰাখিছিল। ভাল অৰ্থপূৰ্ণ নাম এটা থকাৰ পিছতো তেওঁ ঘৰমুচি নামেৰেই পৰিচিত হৈ থাকিল। (সংবাদ ঃ গুলসন আৰা বেগম, প্ৰাগুক্ত (২২।৫।২২)।

১৫। বিশিষ্ট সাহিত্যিক গোৱালপৰীয়া সংস্কৃতিৰ ৰচক আব্দুৰ গফুৰৰ চাৰিগৰাকী শিক্ষিতা কন্যা আৰু তিনিগৰাকী শিক্ষিত পুত্ৰৰ নামৰ ক্ষেত্ৰতে ইয়াৰ পূৰ্ণ প্ৰতিফলন দেখিবলৈ পোৱা যায়।
গুলসন আৰা বেগম (অধ্যাপিকা) ঃ মিনি
গুল আখতাৰ বেগম (প্ৰাক্তন বিধায়িকা) ঃ ৰেণী
গুল ৰৌশন আৰা বেগম (অধ্যাপিকা) ঃ জেনি
গুল মেহৰা বেগম (এম.এ) ঃ মৌচুমী।
আবু হাচান (বি. এছ চি) ঃ বাবলু
আব্দুল হান্নান (এম এছচি) ঃ বাপন
আবুল হাচিম (অভিযন্তা) ঃ ৰূপন
সংবাদ ঃ গুলসন আৰা বেগম, প্ৰাগুক্ত (৫/৭/২২)।

১৬। মানকাচাৰ কলেজৰ অসমীয়াৰ অধ্যাপক ড° মোৰশেদুজ জামান (ৰবীন)ৰ ভতিজা-ভাতিজী, ভাগিন-ভাগিনীৰ নাম কেতবোৰ এই ধাৰাৰ অন্তৰ্গত। যেনে— মৌ, বেবী, হিমা, ৰিমা, ৰিমি, ৰিমা, ৰোজ, লিলি, আৰিয়ান, আলফ্ৰেড, মুন, ৰঞ্জু, মঞ্জু ইত্যাদি। আনকি তেওঁৰ ৩০ বছৰৰ তলৰ ভাতৃ-ভগ্নী স্থানীয় লোকৰ তেনে কেতবোৰ নামৰ ভিতৰত— লটাচ, ৰাতুল, পাখি, আশি, নয়ন, ৰানা মিণ্টু, লিছুস সৌৰভ, ৰাজু, আশ্বিক, মৌসুমী, ঝৰ্ণা, পূৰ্ণিমা, মহিমা, ৰাখী, ৰীণা, মেৰী, কৰ্মিচ ইত্যাদি বিশেষভাৱে উল্লেখযোগ্য। সংবাদ ঃ ড° মোৰশেদুজ জামান (৪৮), অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ, মানকাচৰ কলেজ (৫-৭-২২, ৰাটছ এপ যোগে।)

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ চুটি গল্পত অলংকাৰৰ প্ৰয়োগ ঃ এক চমু আলোকপাত

প্ৰণীতা দাস

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
মহাপুৰুষ শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱ বিশ্ববিদ্যালয়
নগাঁও- ৭৮৫০০৬, জিলা-নগাঁও
৯৭০৭৭৫৯৮২১
k.lahkar37@gmail.com

চুমী ঠাকুৰীয়া

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
মহাপুৰুষ শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱ বিশ্ববিদ্যালয়
নগাঁও-৭৮৫০০৬, জিলা-নগাঁও
৮৬৩৮১৭৮৩২৮
sumithakuria935@gmail.com

১.০১ প্ৰস্তাৱনা ঃ

অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী বিভিন্ন সাহিত্যসম্ভাৰেৰে সমৃদ্ধ। সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনত বিভিন্ন নাটক, উপন্যাস, কবিতা আদিৰ দৰে চুটিগল্পৰেও অসমীয়া সাহিত্যৰ ভঁৰাল চহকী হৈ পৰিছে। লিপি সাহিত্যৰ যুগৰ পৰা শংকৰদেৱ-মাধৱদেৱৰ সময় অতিক্ৰম কৰি ঊনবিংশ শতিকাত আধুনিক অসমীয়া সাহিত্যই প্ৰতিষ্ঠা লাভ কৰে ‘অৰুণোদই’ৰ পাতত। পৰৱৰ্তী কালত ক্ৰমান্বয়ে অসমীয়া সাহিত্য জোনাকী, বাঁহী, আৱাহন, জয়ন্তী আদি আলোচনীৰ মাজেদি অতিক্ৰমি ১৯৪০ চনত ‘ৰামধেনু’ আলোচনীখনে আধুনিকতাৰ বীজ সিঁচি দিয়ে।

উল্লেখ্য যে অসমীয়া সাহিত্যৰ এটি বিশেষ বৈশিষ্ট্য হ’ল ই আলোচনীকেন্দ্ৰিক। প্ৰতিখন আলোচনীয়ে একো একোটা যুগক প্ৰতিনিধিত্ব কৰিছে আৰু প্ৰত্যেক যুগৰে এক সুকীয়া বৈশিষ্ট্য দেখিবলৈ পোৱা যায়। আনহাতে ১৯৪০ চনৰ পৰা ১৯৭০ চনলৈ অসমীয়া সাহিত্যৰ এই সময়খিনিক যুদ্ধোত্তৰ যুগৰ সাহিত্য বুলিও চিহ্নিত কৰা হয়। তদুপৰি এই সময়ছোৱাৰ সাহিত্যক সূচাবলৈ ‘ৰামধেনু’ যুগৰ সাহিত্য বুলিও বহুতে অভিহিত কৰে। কিয়নো ১৯৫১ চনত প্ৰকাশ পোৱা ‘ৰামধেনু’ আলোচনীয়ে অসমীয়া সাহিত্যৰ নতুন ধাৰা এটিক অধিক শক্তিশালী কৰাত এই আলোচনীখনৰ জৰিয়তে অসমীয়া সাহিত্যই এটি নতুন ৰূপ গ্ৰহণ কৰিবলৈ সক্ষম হয়। ৰোমাণ্টিক সাহিত্য সৃষ্টিৰ ক্ষেত্ৰত ‘জোনাকী’য়ে যি ভূমিকা গ্ৰহণ কৰিছিল, পৰৱৰ্তী কালৰ আধুনিক সাহিত্য সৃষ্টিৰ ক্ষেত্ৰতো ‘ৰামধেনু’ আলোচনীখনেও সমপৰ্যায়ৰ ভূমিকা পালন কৰে। এক কথাত ক’বলৈ হ’লে যুদ্ধোত্তৰ যুগ মানেই ‘ৰামধেনু যুগ’।

প্ৰণিধানযোগ্য যে ১৯০৪ চনত ‘জোনাকী’ৰ প্ৰকাশ বন্ধ হোৱাৰ পৰৱৰ্তী সময়ত ১৯৫১ চনত ‘ৰামধেনু’ আলোচনীখনৰ জন্ম হয়। বিষয়বস্তু আৰু কলা-কৌশলৰ ফালৰ পৰা অসমীয়া সাহিত্যক অভিনৱত্ব প্ৰদান কৰা উচ্চমানৰ আলোচনীখনেই হ’ল ‘ৰামধেনু’। সাতোৰঙী ৰামধেনুৰ দৰে অসমীয়া সাহিত্যলৈও এই আলোচনীখনে বৈচিত্ৰ্যতা কঢ়িয়াই আনিছিল। সেয়ে ‘ৰামধেনু’ আলোচনীখনৰ নামেৰেই অসমীয়া সাহিত্যৰ এটা যুগক ‘ৰামধেনু যুগ’ বুলি অভিহিত কৰিছে। উল্লেখ্য যে ‘ৰামধেনু’ আলোচনীখনৰ জন্মৰ পূৰ্বে ১৯৪৮ চনত বিৰিঞ্চি কুমাৰ বৰুৱাৰ সম্পাদনাত ‘ৰংঘৰ’ নামেৰে এখন শিশু আলোচনী প্ৰকাশ পাইছিল। তাৰ দুবছৰ পিছত উচ্চমানৰ মাহেকীয়া আলোচনী এখনৰ

প্ৰয়োজন অনুভৱ কৰি শিশু আলোচনী ‘ৰংঘৰ ’ৰ প্ৰকাশ বন্ধ কৰি তাৰ ঠাইত আকাৰত ডাঙৰকৈ ‘ৰামধেনু’ প্ৰকাশ কৰা হয়।

১৯৫০ চনৰ এপ্ৰিল মাহত প্ৰথম ছমাহ ইন্দ্ৰকমল বেজবৰুৱাৰ সম্পাদনাত ‘ৰামধেনু’ আলোচনীখন গুৱাহাটীৰ ৰামধেনু ভৱনৰ পৰা প্ৰকাশ পায়। ১৯৫০ চনৰ পৰা ১৯৫১ চনৰ অক্টোবৰলৈকে ‘ৰামধেনু’ৰ সম্পাদক আছিল মহেশ্বৰ নেওগ আৰু পৰৱৰ্তী ছমাহৰ বাবে সম্পাদক হিচাপে নিযুক্ত হয় কীৰ্তিনাথ হাজৰিকা। আনহাতে, ১৯৫২ চনৰ পৰা ১৯৮৩ চনৰ মে মাহলৈকে ‘ৰামধেনু’ৰ সম্পাদনাৰ দায়িত্ব লয় বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্যই। ১৯৬৭ চনত ইন্দ্ৰকমল বেজবৰুৱাৰ মৃত্যুৰ পিছত ‘ৰামধেনু’ৰ প্ৰকাশ বন্ধ হয় যদিও ১৯৭১ চনত ৰাধিকামোহন ভাগৱতীৰ সম্পাদনাত আলোচনীখন পুনৰ প্ৰকাশ হৈ তাৰ দুবছৰ পিছত ১৯৭৩ চনত ‘ৰামধেনু’ৰ প্ৰকাশ সম্পূৰ্ণৰূপে বন্ধ হয়।

চাৰিগৰাকী বিশিষ্ট ব্যক্তিৰ দ্বাৰা সম্পাদিত আৰু কুৰিবছৰ নিয়মীয়াভাৱে প্ৰচলিত ‘ৰামধেনু’ আলোচনীখনে অসমীয়া ভাষা-সাহিত্য তথা সংস্কৃতিৰ বিকাশত এক গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰি গৈছে। অসমীয়া সাহিত্যৰ বিকাশ আৰু সমৃদ্ধিৰ ক্ষেত্ৰত ‘ৰামধেনু’ আছিল এক সাৰুৱা ক্ষেত্ৰ। সাহিত্য জগতৰ নতুন চিন্তা-চৰ্চা কোনো এখন দেশৰ ভৌগোলিক সীমাৰ মাজত আবদ্ধ নাথাকে। বিশেষকৈ গল্প-সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰত ৰামধেনুৰ ভূমিকা অনন্য। ‘ৰামধেনু’ত প্ৰকাশিত গল্প-সাহিত্যৰ মাজেৰে অসমীয়া সাহিত্যলৈ আধুনিক চিন্তা-চৰ্চা, ৰীতি, আংগিক আদিৰ পয়োভৰ ঘটিছিল। ‘ৰামধেনু’ৰ সাহিত্য সম্ভাৰক বাদ দি আজি অসমীয়া সাহিত্যৰ কথা কল্পনা কৰিব নোৱাৰি। ‘ৰামধেনু’ৰ সাহিত্য সম্ভাৰৰ আধুনিকতা আৰু আধুনিকতাবাদৰ সমালোচনা — এই দুয়োটাই এতিয়া অসমীয়া সাহিত্য পৰম্পৰাৰ ভিতৰুৱা (আনন্দ বৰমুদৈ ঃ ‘ৰামধেনুৰ অৱদান’ প্ৰবন্ধ)

১.০২ বিষয় বিশ্লেষণ ঃ

‘ৰামধেনু’ৰ সৃজনীমূলক সাহিত্যই ধৰ্মীয় বিশ্বাসবোধ সমাজত সক্ৰিয় হৈ থকাৰ সময়তে ধৰ্ম বিলোপ হোৱা বুলি ঘোষণা কৰি পশ্চিমীয়া দেশৰ সকলো আধুনিকতাবাদী চিন্তা-চৰ্চাক আদৰি পশ্চিমীয়া আৰ্হিৰে আধুনিক অসমীয়া সাহিত্য সৃষ্টিৰ কামত উঠিপৰি লাগে। সেই যুগৰ সাহিত্যিকসকলে ‘ৰামধেনু’ৰ জৰিয়তে আধুনিক অসমীয়া সাহিত্যক এটি আন্তৰ্জাতিক পটভূমিত বহল আৰু গতিশীল মানৱতাৰ পতাকা লৈ আগবাঢ়ি যোৱাৰ প্ৰয়াস কৰিছিল। সেয়ে ৰামধেনু যুগৰ সাহিত্যৰ মাজেৰে, বিশেষকৈ সেই যুগৰ গল্পৰ মাজেৰে জাতীয় ভাবধাৰা প্ৰকটিত হৈছিল। উল্লেখ্য যে যাঠিৰ দশকৰ পৰা অসমীয়া চুটিগল্পই এটা নতুন ধাৰাৰ মাজেৰে অসমীয়া সাহিত্যত নৱতম সংযোজন ঘটাই। আনহাতে, দ্বিতীয় বিশ্বযুদ্ধৰ পিছত সমগ্ৰ বিশ্বকে বিভীষিকাই ছানি ধৰা বাবে এই যুগৰ সাহিত্যৰাজিত প্ৰকাশি উঠিছিল বাস্তৱবাদ, আধুনিকতাবাদী মনোভাব। দ্বিতীয় বিশ্বযুদ্ধৰ প্ৰভাৱে অসমকো চুই গৈছিল বাবে যুদ্ধোত্তৰ যুগৰ সাহিত্যত কল্পনা, ৰোমাণ্টিকতাৰ বিপৰীতে ঠাই লৈছিল বাস্তৱবাদী দৃষ্টিভংগীয়ে। এনে প্ৰভাৱেৰে প্ৰভাৱান্বিত ‘ৰামধেনু’ যুগৰ বিশিষ্ট গল্পকাৰ ড° ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়া।

অসমীয়া সাহিত্য জগতত ভবেন্দ্ৰনাথ শইকীয়াই প্ৰথমে গল্পকাৰ হিচাপে প্ৰতিষ্ঠা লাভ কৰে ১৯৪৭ চনত ‘উদয়’ নামৰ আলোচনীখনৰ জৰিয়তে। তাত তেওঁৰ প্ৰথম গল্প ‘পথ নিৰূপণ’ প্ৰকাশ হয় যদিও প্ৰধানতঃ ৰামধেনু যুগত তেওঁ এগৰাকী গল্পকাৰ হিচাপে সুপ্ৰিতিষ্ঠিত হৈ পৰে। ভবেন্দ্ৰনাথ শইকীয়াই ‘ৰামধেনু’ আলোচনীখনৰ লগত সম্পৰ্ক স্থাপন কৰে ‘ৰণভংগ’ নামৰ গল্পটোৰ জৰিয়তে। ‘ৰামধেনু’ আলোচনীখনৰ লগত ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ একাত্মতাবোধ আৰু আলোচনীখনৰ গুৰুত্ব সন্দৰ্ভত তেওঁ নিজেই সদৰী কৰিছে এনেদৰে — ‘সেই সময়ত ৰামধেনু নথকা হ’লে গোটেই অসমৰ পাঠক-পাঠিকাই পঢ়িবলৈ পোৱাকৈ মোৰ গল্পৰ প্ৰচাৰ কৰাত অসুবিধা হ’লহেঁতেন। এক কথাত ক’বলৈ গ’লে ৰামধেনুৱে মোৰ গল্প লিখা কামৰ প্ৰথম পৰ্যায়টোত এই ক্ষেত্ৰত বৰ সহায় কৰিলে।’[১] (ডঃ ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়া ঃ ‘ৰামধেনুৰ প্ৰসংগত দুটামান ব্যক্তিগত কথা’ প্ৰবন্ধ)

পৰৱৰ্তী সময়ত তেওঁৰ নিয়মীয়াকৈ ‘ৰামধেনু’ৰ পাতত কক্ষভ্ৰান্তি, যাত্ৰাবধ আদি গল্প প্ৰকাশ পায়। আনহাতে, তেওঁৰ সেন্দুৰ, উপগ্ৰহ, ঢোৰাসাপ, প্ৰয়োজন, সনাতন, সন্ধ্যাতৰা, দেওবাৰ, নীলাম, ৰত্নদাহ, এন্দুৰ, বান্ধৱ, এই বন্দৰৰ আবেলি, প্ৰহৰী, গ্ৰহণ, গহ্বৰ আদি গল্পৰে অসমীয়া সাহিত্যৰ ভঁৰাল চহকী কৰে।

ড° ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ গল্পসমূহৰ প্ৰধান বৈশিষ্ট্য হ’ল মানৱীয় হৃদয়বৃত্তিৰ অন্তৰংগ আৰু সূক্ষ্ম পৰ্যবেক্ষণ। আকস্মিক ঘটনাপুঞ্জৰ মাজেৰে চিনাকি চিত্ৰকল্পৰ সুদক্ষ প্ৰয়োগেৰে বঞ্জিত কৰি গল্পসমূহৰ স্বচ্ছন্দ আৰু মনোমোহাকৈ

উপস্থাপন কৰাত তেওঁৰ গল্পৰ সৌন্দৰ্য নিৰ্ভৰ কৰে। ভাষাক এক পৰিবেষ্টিত সংযমৰ দ্বাৰা সৃষ্টিশীল সাহিত্যত মনোনিবেশ কৰি বৰেণ্য সাহিত্যিক ড° ভবেন্দ্ৰনাথ শইকীয়াই অসমীয়া চুটিগল্পৰ পথাৰখনত অনন্য মাত্ৰাৰ স্বাক্ষৰ বহন কৰিছে। অসমীয়া সমাজখনৰ পৰম্পৰাগত ৰীতি-নীতি, প্ৰত্যাহিক জীৱনত ঘটি থকা সৰু ডাঙৰসমস্যা, খুঁটি-নাটি, সমাজব্যৱস্থা আদিক মূল বিষয়বস্তু হিচাপে লৈ শইকীয়াই তেওঁৰ প্ৰায়ভাগ গল্পত উপস্থাপন কৰিছে। তেওঁৰ গল্পসমূহক বাস্তৱ জীৱনৰ এক ধাৰাবাহিক চিত্ৰ বুলিও ক'লেও অতুক্তি কৰা নহ'ব। ড° শইকীয়াৰ গল্পৰ কাহিনীৰ মাজত প্ৰবেশ কৰিলে দেখা যায় যে গল্পসমূহত জীৱনৰ জটিল মনস্তাত্বিক কৰ্মৰাজিৰ সুক্ষ্মাতিসূক্ষ্ম বিশ্লেষণ পৰিলক্ষিত নহ'লেও, বাস্তৱ জীৱনৰ এক আপুৰুগীয়া অন্বেষণ আছে। গল্পসমূহৰ চৰিত্ৰবোৰৰ মনৰ মাজত গোপনে সাঁচি ৰখা এক মনোবেদনা আৰু হৃদয়ৰ আকুল আহ্বানে চৰিত্ৰবোৰক অনন্য মাত্ৰা প্ৰদান কৰিছে। আনহাতে, সংবেদনশীল অনুভূতি, নাৰীহৃদয়ৰ আশা-আকাংক্ষা, বৃদ্ধাৱস্থাৰ নিসংগতা, প্ৰবাসী ভাৰতীয়ৰ মনোবেদনা, মধ্যবিত্ত সমাজৰ দৈনন্দিন ঘটনা প্ৰবাহ আৰু বৰ্ণ বৈষম্যৰ এক মানসিক সংঘাতেৰে জীপাল শইকীয়াৰ গল্পৰাজি। এই সকলোবোৰ সংবেদনশীল অনুভূতিক সক্ৰিয় আৰু সজীৱ কৰি তুলিছে তেওঁৰ গদ্য প্ৰয়োগৰ নিপুন দক্ষতাই। 'শইকীয়াৰ গল্পত কথনভংগীৰ জটিলতা নাই, আংগিকৰ বৈচিত্ৰ্যও নাই; আধুনিক মানুহৰ মানসিক ক্ৰিয়া প্ৰতিক্ৰিয়াৰ বিশ্লেষণ নাই, পৰম্পৰাৰ বিপৰীতে স্থিতি লাভৰ বাসনাও নাই, অথচ কিবা এক মোহনীয়া প্ৰাপ্তিৰ লিপ্সাই তেওঁৰ গল্পৰ পাঠকক যোগান ধৰে এক আনন্দদায়ক পঠনৰ আহিলা । গল্প পঠনৰ প্ৰতি পাঠকৰ মস্তিস্কত উদ্ভুত আগ্ৰহৰ জঁকাটোক এই ক্ষেত্ৰত তেজ-মঙহৰ যোগান ধৰে শইকীয়াৰ গল্পত স্থিত ব্যঞ্জনাধৰ্মী বাক্য আৰু আলংকাৰিক গদ্যই।'[২] (ড° চুমী কলিতা ঃ ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ গদ্যৰীতি, প্ৰবন্ধ)

১.০৩ সাহিত্যত অলংকাৰ ঃ

সাহিত্যত অলংকাৰৰ প্ৰয়োগে সাহিত্যৰ জেউতি চৰায়। অলংকাৰ পিন্ধা মানুহৰ ৰূপ-সৌন্দৰ্যৰ জেউতি চৰাৰ দৰে অলংকাৰ প্ৰয়োগৰ ফলত সাহিত্যৰো জেউতি শ্ৰীবৃদ্ধি হৈ পৰিবলৈ মধুৰ হয়। এক কথাত ক'ব গ'লে যিটো বস্তু থকাৰ ফলত শব্দ আৰু অৰ্থত বৈচিত্ৰ্য বা সৌন্দৰ্য সৃষ্টি হয় সেয়াই অলংকাৰ। উল্লেখ্য যে অলংকাৰ প্ৰয়োগৰ বাবে যিদৰে এটি কবিতা আটকধুনীয়া হৈ পৰে, তেনেদৰে অলংকাৰ পিন্ধাব জানিলে এটি গল্পৰো অৰ্থৰ চাৰুত্ব প্ৰদান কৰে। সেয়ে হয়তো ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াই তেওঁৰ গল্পসমূহত অলংকাৰ প্ৰয়োগৰ ক্ষেত্ৰত অধিক মনোনিৱেশ কৰিছে। তদুপৰি ড° শইকীয়াই তেওঁৰ মনৰ চকুৰে দেখা পোৱা কিছুমান ছবি 'চিত্ৰকল্প'ৰ সহায়ত তেওঁৰ গল্পত অংকন কৰিছে। শব্দ আৰু ব্যঞ্জনাই ৰেখা আৰু ৰঙৰ আভাস দিব পাৰিছে। উদাহৰণ স্বৰূপে 'ঢোৰা সাপ' গল্পটোৰ জানেকীৰ চৰিত্ৰটো ব্যঞ্জনাময় আৰু ধ্বনিময় ৰূপকে বঞ্চিত জানেকীৰ মনোবাঞ্ছা উন্মোচন কৰিছে। সমালোচক হৰেকৃষ্ণ ডেকাৰ ভাষাত — 'বঞ্চিত জানেকীৰ মনোবাঞ্ছাক উন্মোচিত কৰিছে দুটা ব্যঞ্জনাময় বাক্যৰ ধ্বনিময় ৰূপকে, মনোমোহন, ৰুদ্ৰ, তপোধৰহঁতে তাইক ভোগৰ জুইত সেকি মাৰিব খুজিছিল, লীলাকান্তই লঘোনে থকাৰ নিৰ্মম শাস্তিৰ কথা সোঁৱৰাই দিলে....।' [৩] (হৰেকৃষ্ণ ডেকা ঃ ড° ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ গল্পভংগীৰ বৈশিষ্ট্য, প্ৰবন্ধ, পৃষ্ঠা ঃ ১১২)

ড° ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ গল্পত প্ৰতীক আৰু অলংকাৰৰ প্ৰয়োগ সুপ্ৰসিদ্ধ। অলংকাৰ প্ৰয়োগৰ ক্ষেত্ৰত ড° শইকীয়াৰ গল্পৰ পৰিধি সীমিত পৰিসৰৰ ভিতৰত ৰিজাব নোৱাৰি। উল্লেখ্য যে সাহিত্যৰ আন এটি বিভাগ 'কবিতা'ত অলংকাৰৰ প্ৰয়োগ বা ধাৰণা যিদৰে অতি উজু, তাৰ বিপৰীতে গদ্য সাহিত্যত অলংকাৰৰ প্ৰয়োগৰ ধাৰণাটো অতি কঠিন। ভাৰতীয় সাহিত্যৰ চিৰচৰিত ৰীতি অনুযায়ী অতীতৰে পৰাই কাব্য সাহিত্যত যিধৰণে অলংকাৰৰ ব্যৱহাৰ হৈ আহিছে, তেনেদৰে গদ্য সাহিত্যত অলংকাৰৰ ব্যৱহাৰ সহজসাধ্য নহয়। তথাপি গদ্য সাহিত্যত ড° ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াই সৃষ্টিৰাজিত অলংকাৰৰ সমাহাৰ ঘটাই তেওঁৰ গল্পসমূহক অভিনৱত্ব প্ৰদান কৰিছে। ভবেন্দ্ৰনাথ শইকীয়াৰ দৰে এগৰাকী তীক্ষ্ণধী গল্পকাৰৰ গল্পসমগ্ৰৰ মাজেদি প্ৰস্ফুটিত সৃষ্টিশীল গদ্যভংগীত উপমা অলংকাৰৰ যি চিৰন্তন সৌন্দৰ্য, সেয়া দুগুণ উজ্জ্বল ৰূপত উদ্ভাসিত হৈ উঠিছে। উপমাৰ ক্ৰমবিৱৰ্তনত সৃষ্ট উৎপ্ৰেক্ষা, ৰূপক আদি অলংকাৰ সমূহো এইগৰাকী গল্পকাৰৰ কলমত সুকোমল অনুভূতি আৰু কৰ্ষিত অনুৰাগেৰে ব্যঞ্জিত হৈছে।[৪] (ড° চুমী কলিতা ঃ ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ গদ্যৰীতি, প্ৰবন্ধ পৃষ্ঠা ঃ ১৩৪)

প্ৰধানতঃ উপমা অলংকাৰে শইকীয়াৰ প্ৰতিটো গল্পৰ প্ৰায় প্ৰতিটো শাৰীকে স্পৰ্শ কৰা বুলি ক'লেও ভুল কোৱা নহ'ব। উপমা অলংকাৰৰ সৰ্বাধিক প্ৰয়োগে ড° শইকীয়াৰ গল্পত শব্দৰে প্ৰকাশ কৰিব নোৱাৰা সংলাপ বা ভাবনা এটিক

মাত্ৰ এটা বা দুটা শাৰীতে অত্যাধিক অৰ্থবহ ৰূপত প্ৰকাশ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। সাহিত্যত প্ৰচলিত পৰম্পৰাগত উপমাসমূহক ভেদ কৰি ড° শইকীয়াই বহুসময়ত ভাবৰ উপযোগীকৈ সংগতি ৰাখি অজস্ৰ উপমা স্বকীয়ৰূপত সৃষ্টি কৰিছে। সমালোচকৰ ভাষাত সাহিত্যত প্ৰচলিত চিৰাচৰিত উপমা অথবা সনাতন প্ৰসিদ্ধিসমূহক বাদ দিও বহুসময়ত ভাবৰ উপযোগীকৈ প্ৰসঙ্গৰ সৈতে সঙ্গতি ৰাখি এইগৰাকী গল্পকাৰে অজস্ৰ উপমা নিজে নিজে সৃষ্টি কৰিছে। অহংকাৰী বোৱাৰীৰ নিচিনা গোটা ফুল, দাৰি, কমা, প্ৰশ্নবোধক চিনৰ নিচিনাকৈ শুই থকা মানুহ, দেহাৰ উজ্জ্বল আখৰ, বয়সত পোত খোৱা লাজ, বিবস্ত্ৰা নাৰীৰ নিচিনাকৈ কাগজৰ জাপত সুমুৱাই থোৱা গল্প, বান্দৰ কেকোঁৰা জাতীয় অশান্তিকৰ পদাৰ্থৰ অপশাসন, বাগৰ সলোৱা ৰং, ৰাতিপুৱাৰ নিয়ৰৰ নিচিনা মৰম, কাটিবলৈ থোৱা ছাগলীৰ নিচিনাকৈ ওলমি থকা ৰঙা ভেনিটি বেগ... আদি স্বসৃষ্ট আৰু ব্যতিক্ৰমী উপমাই শইকীয়াৰ সৃষ্টিশীল প্ৰতিভাক অধিক শক্তিশালী আৰু আকৰ্ষণীয় ৰূপত পাঠকৰ সন্মুখত উন্মোচন কৰিছে। সাহিত্য জগতত সদাপ্ৰচলিত, প্ৰকৃতিজগতৰ পৰা উদ্ভুত উপমাসমূহৰ ব্যৱহাৰতে কেবল গুৰুত্ব নিদি শইকীয়াই একক সন্ধানেৰে ব্যৱহাৰিক আৰু মানসিক জগতৰ পৰাও উপমাৰ সমল সংগ্ৰহ কৰিছিল।" (ড° চুমী কলিতা ঃ ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ গদ্যৰীতি, প্ৰবন্ধ পৃষ্ঠা ঃ ১৩৩)

প্ৰসিদ্ধ সমালোচকসকলৰ মতেও উপমা সকলো অলংকাৰৰ ৰাজ অলংকাৰ এৰিষ্ট'টল, কুইন্তিলিয়ন আৰু আলংকাৰিক বামণৰ - প্ৰত্যেকেই সেই কথাষাৰকে গ্ৰহণ কৰিছে। মনকৰিবলগীয়া যে কাব্য সাহিত্যত উপমাৰ প্ৰয়োগ যথেষ্ট ব্যাপক পৰিসৰৰ যদিও গল্পত উপমাৰ প্ৰয়োগ সীমিত। তথাপি অসমীয়া চুটিগল্পৰ প্ৰবক্তা শইকীয়াই তেওঁৰ প্ৰায়বোৰ গল্পত উপমা অলংকাৰৰ প্ৰয়োগেৰে গল্পসমূহক সোণত সুৱগা চৰাইছে। আমাৰ আলোচনাত শইকীয়াৰ সেন্দুৰ, সনাতন, ঢোৰাসাপ, সন্ধ্যাতৰা আৰু নীলাম গল্পকেইটি অলংকাৰ প্ৰয়োগ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হ'ল —

উপমাৰ প্ৰয়োগ ঃ

- বিভিন্ন চহৰত মহাজনৰ বহুত মাটি, সমুদ্ৰগামী জাহাজৰ দুষ্ট নাবিকে ডেকা কালত বিভিন্ন বন্দৰত অৰ্জন কৰা অবৈধ বান্ধৱীৰ নিচিনাকৈ পৰি আছে। (সেন্দুৰ, পৃষ্ঠা নং ঃ ৩)
- হঠাতে চাকৰীৰ পৰা বৰখাস্ত কৰাৰ ন'টিছ পোৱাৰ নিচিনাকৈ ৰায়চৌধুৰী হতভম্ব হৈ গ'ল। (সেন্দুৰ, পৃষ্ঠা নং ঃ ১৫)
- আৰু নতুন পৰ্দাৰে উজ্জ্বল হৈ উঠা ঘৰটোত এইখন পৰ্দা এজাক কলেজীয়া গাভৰু ছোৱালীৰ মাজত বুঢ়ী চকীদাৰণী যেন লাগিল। (সনাতন, পৃষ্ঠা নং ঃ ৯০)
- ভৰিৰ পৰা আৰম্ভ কৰি, কঁকাল আৰু বুকুৰ ওপৰেদি এডাল ফুট্‌কা-ফুটকী গাৰ প্ৰকাণ্ড সাপে যেন তাইক মেৰিয়াই ধৰিছে। (ঢোৰা সাপ, পৃষ্ঠা ঃ ৭২)
- সিহঁতে কৈ যোৱা দুআষাৰ-তিনিআষাৰ কথাকে দৰিদ্ৰ ল'ৰাই হাতত লগা মিঠাইৰ ৰস চেলেকাদি চেলেকি থাকে। (সন্ধ্যাতৰা, পৃষ্ঠা ঃ ১১৫)

আনহাতে, উপমা অলংকাৰৰ আন আন ভাগ- পূৰ্ণোপমা, লুপ্তোপমা, মালোপমা আদিৰ প্ৰয়োগো শইকীয়াৰ গল্পত দৃশ্যমান। উদাহৰণস্বৰূপে—

- গছপাতৰ সুৰুঙাইদি অহা ৰ'দত জিলিকি উঠা এপাহ পলাশ ফুলৰ নিচিনাকৈ ললিতাৰ কপালৰ উজ্জ্বল সেন্দুৰখিনি মাছ বজাৰত জিলিকি থাকিল। (পূৰ্ণোপমা), (সেন্দুৰ, পৃষ্ঠা ঃ ১৭)
- চল্লিশ বছৰীয়া ৰায়চৌধুৰীয়ে ষাঠি বছৰীয়া মানুহৰ নিস্তেজ খোজেৰে ললিতাৰ ওচৰ চাপিল। (লুপ্তোপমা), (সেন্দুৰ, পৃষ্ঠা ঃ ৩)

উৎপ্ৰেক্ষা ঃ

- এটাই-কেইটা মাছ দীঘলে-পুতলে, গায়ে-গাৰিয়ে সমান; যেন উচ্চতা, বুকুৰ বেৰ, স্বাস্থ্যৰ মান আদি নিৰ্দিষ্ট কৰি দিয়া এয়াৰ ফৰ্চৰ নিচিনা চাকৰিৰ ইণ্টাৰভিউৰ কাৰণে ৰৈ থাকোঁতে এদল মাছ জালত পৰিল আৰু ললিতাৰ চালনীত উঠিলহি। (সেন্দুৰ, পৃষ্ঠা : ১৭, ১৮)
- শান্তিয়ে বাওঁহাতেৰে বুকুৰ ওপৰত লৈ থকা কিতাপৰ চুক এটা চিকুটি ওচৰৰ মাটিলৈ চালে, যেন মাটি ফুটি কোনোবা এজন ওলাই তাইক পৰামৰ্শ দিব, এই আশাত। (নীলাম, পৃষ্ঠা : ১৪৩)
- তাইক বেৰি থকা শ শ মানুহৰ চকুয়েই তাইৰ কাৰণে আয়না। (ঢোৰা সাপ, পৃষ্ঠা : ৬০)

অতিশয়োক্তি ঃ

- আনকি মুকুলৰ ইচ্ছা অনুসৰি পাকঘৰৰ পৰা সোমাই অহা দুৱাৰখনৰ হালধী, চৰু, ছাই, বোৱাৰীৰ চকুপানীৰে লেতেৰা হোৱা পদখনৰ ঠাইত ৰঙা ফুলকলি, সেউজীয়া পাত জিলিকিল, বগলী উৰিল। (সনাতন, পৃষ্ঠা ঃ ১০৩)

বিষম ঃ

- বৰ ডাঙৰ অপাৰেচছনৰ কাৰণে সাজু হৈ থকা মনোমোহনক ডাক্তৰে যেন কেৱল এপালি মিঠা ঔষধ খুৱাই দিলে। (ঢোৰা সাপ, পৃষ্ঠা : ৫৯)

সাৰ ঃ

- শুদা ভৰিৰে মাটিৰ ঘৰত খোজ কাঢ়োতে কাঢ়োতে গোৰোৱা ফাটি চিৰাচিৰ হৈছে; ঘহোঁতে ঘহোঁতে ঝাঁও ইটা মসৃণ হৈ গৈছে, ফাঁটবোৰ কিন্তু পিৰালিৰ শেলুৰৈৰ নিচিনা অক্ষয় হৈয়েই আছে, কমিছে, কিন্তু গুচা নাই। (নীলাম, পৃষ্ঠা • ১৪৯)

ব্যাজস্তুতি ঃ

- গাড়ীবোৰক সিহঁতে সদায় 'জাম' লগাৰ আশীৰ্বাদ দিয়ে। (এন্দুৰ, পৃষ্ঠা ঃ ১৯১)

সন্দেহ ঃ

- এই মুকলি ঠাইডোখৰৰ প্ৰায় আধাখানি ঠাই এবিধ ক'লা-সেউজীয়া ৰঙৰ অদ্ভুত পনীয়া বস্তুত ডুব গৈ থাকে। বস্তুটো মূলতে চাগৈ বৰষুণৰ পানীয়েই আছিল, তাৰ পিছত শেলুৰৈ, ম'বিল আদি বিচিত্ৰ বস্তু মিহলি হৈ তাৰ ৰং এনেকুৱা হৈছে। (এন্দুৰ, পৃষ্ঠা ঃ ১৮৯)
- এবাৰ ৰায়চৌধুৰীৰ সন্দেহ হ'ল, ললিতা ঘৰৰ এৰাল মূৰ-পোলোকা দি লোকৰ বাৰীত সোমোৱা দুষ্ট ছাগলী নেকি? (সেন্দুৰ, পৃষ্ঠা ঃ ১৫)

অপ্ৰস্তুত প্ৰশংসা ঃ

- মনোমোহন, ৰুদ্ৰ, তপোধৰহঁতে তাইক ভোগৰ জুইত সেকি মাৰিব খুজিছিল, লীলাকান্তই লঘোনে থকাৰ নিৰ্মম শাস্তিৰ কথা সোঁৰৱাই দিলে। মনোমোহনহঁতে তাইৰ ৰস শুহি খাবলৈ বিচাৰিছিল, লীলাকান্তই ৰস দিবলৈ আহি তাইৰ কামিহাড়কেইডালতো বিষ ঢালি গ'ল। (ঢোৰা সাপ, পৃষ্ঠা ঃ ৭০)

স্বভাৱোক্তি ঃ

- আকাশত কলঙ্কহীন পূৰ্ণচন্দ্ৰ। সাধাৰণতে চন্দ্ৰদোয়ৰ পিচত আকাশ নীলা হৈ নেথাকে; কিন্তু এতিয়া আছে। দূৰ দিগন্তব্যাপী নীলা নীলা আকাশ নীলময়। চোৰৰ নিচিনাকৈ কেৱল এটুকুৰা ডাৱৰ জোনৰ কাষ চাপিছিল। সি তাৰ উন্মুক্ত তৰবাৰি-সদৃশ এটি তীক্ষ্ণাগ্ৰ অংশ চন্দ্ৰমাৰ আবক্ষ ভেদ কৰি নিশ্চল হৈ আছিল; তাৰেই যন্ত্ৰণাত যেন শশধৰৰ দেহাৰ পৰা গলি গলি পৰিছিল অফুৰন্ত জোনাক, পৰিছিল দূৰৰ মন্দিৰৰ চূড়াত, স্থিৰ, সৰীসৃপ দেহী নদীৰ বুকুত জোনাকৰ অবিশ্ৰান্ত বৃষ্টিধাৰাত অবগাহন কৰি কৰুণ আৰু উজ্জ্বল হৈ উঠিছিল নদীকূল শোভিত বৃক্ষৰাজি।... (ঢোৰা সাপ, পৃষ্ঠা ঃ ৪৭)

এনেদৰে ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ গল্পত অলংকাৰ বিশ্লেষণ কৰিলে দেখা যায় যে আলংকাৰিক দৃষ্টিকোণৰপৰা শইকীয়াৰ গল্পৰ নান্দনিক আৰু আত্মিক সৌন্দৰ্য বিশেষভাৱে উজ্জ্বল। সকলো অংলকাৰৰ প্ৰয়োগ শইকীয়াৰ গল্পত কম-বেচি পৰিমাণে দেখা যায়। শইকীয়াই তেওঁৰ গল্পত আলংকাৰিত ৰীতিৰ আশ্ৰয় লৈ গল্পসমূহক সুষম আৰু নান্দনিক কৰি তুলিছে। তেওঁৰ স্বকীয়া প্ৰতিভাৰে কিছু নৈব্য অলংকাৰ তেওঁৰ গল্পত নিহিত কৰি গদ্যৰীতিক এক সুকীয়া বিশেষত্ব প্ৰদান কৰিছে। শইকীয়াই কাহিনীৰ বিকাশত চৰিত্ৰসমূহক এক নান্দনিকৰূপত বিকশিত কৰাৰ বাবেই হওক অথবা উপযুক্ত ভাষা-শব্দৰ অভাৱতেই হওক, তেওঁৰ গল্পসমূহত অসংখ্য আলংকাৰিক বাক্য বা বাক্যাংশ স্বকীয়ভাৱে ব্যৱহাৰ কৰা যেন অনুমান হয়। সামগ্ৰিকভাৱে উদাহৰণ স্বৰূপে — বৰফত ডুব যোৱা মানুহ, টকাৰ জাল, পাণখিলাৰ সমান ফটো (ঢোৰা সাপ), অনন্ত দীঘল এখন ৰেলগাড়ীৰ দুটা দবাৰ মাজৰ ফাঁকটোৰ নিচিনা দেওৱাৰ (দেওবাৰ), গিলাচটো লওঁতেই তাৰ আঙুলিয়ে এখন বিজ্ঞাপন পঢ়িলে আৰু ওভতাই দিওঁতে এখন দৰ্খাস্ত ছাবমিট কৰিলে (আকাশ), গছৰ পাতৰ কোনোবা সুৰুঙাইদি ৰাতিপুৱাৰ পোহৰ মাত্ৰ এপাহ পলাশফুলত পৰা যেন লাগিল (সেন্দুৰ), যিবোৰে বাট চিনি পায়, সিহঁত লেঙেৰা। যিবোৰ লেঙেৰা নহয়, যিবোৰৰ ভৰিত জোৰ আছে, সিহঁতৰ বাট বিচাৰি উলিয়াবৰ ক্ষমতা নাই। কণাই ৰাজপথ বেয়া পায়, লেঙেৰাই ফুটবল খেলা বেয়া পায় (দেওবাৰ) আদি বাক্যাংশৰ কথাকে ক'ব পাৰি। ইয়াত অলংকাৰৰ বিভিন্ন ভাগৰ কথা নিহিত হৈ আছে। উল্লেখ্য যে শইকীয়াৰ গল্পত অৰ্থালংকাৰ আৰু শব্দালংকাৰৰ বিস্তৃত প্ৰয়োগ দেখা যায়। সঁচা অৰ্থত অলংকাৰৰ প্ৰয়োগে শইকীয়াৰ গল্পসমূহক এক নান্দনিক ৰূপত প্ৰতিভাত কৰি তুলিছে। আনহাতে, ঠায়ে ঠায়ে উৎকৃষ্ট শব্দৰ জৰিয়তে তেওঁৰ গল্পৰ ভাষা কবিত্বময় কৰি তুলিছে- 'দূৰণিত-দূৰ-দূৰণিত এখন পলতৰা নাও, গতিহীন ক'ত তাৰ যাত্ৰাৰ পাতনি, ক'ত তাৰ যাত্ৰাৰ শেষ তাৰ ঠিকনা নাই, যেন বিশ্ব ব্ৰহ্মাণ্ডৰ ৰহস্যৰ সন্ধানত যাত্ৰা কৰি হঠাতে ক'ৰবাত বিভ্ৰান্ত আৰু স্থৱিৰ হৈ পৰা এক শুভ্ৰ জটাধাৰী সন্ন্যাসী। " (প্ৰবন্ধ ঃ ড° ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াৰ বাস্তৱধৰ্মী গল্প 'প্ৰহৰী আৰু 'ঢোৰাসাপ'ৰ এটি বিশ্লেষণ) এনেধৰণৰ ভাষাৰ লালিত্যই শইকীয়াৰ গল্পৰ আকৰ্ষণৰ কেন্দ্ৰবিন্দু।

১.০৪ উপসংহাৰ ঃ

ৰামধেনু বা যুদ্ধোত্তৰ যুগ অসমীয়া সাহিত্যৰ এটি উল্লেখনীয় যুগ। এই যুগৰ সাক্ষ্য বহন কৰিছে 'ৰামধেনু'

নামৰ আলোচনীখনে। অসমীয়া সাহিত্যক কিদৰে পশ্চিমীয়া প্ৰভাবৰ কাৰণে দুৱাৰ মুকলি কৰি দিছিল তাৰ উমান পাব পাৰি ৰামধেনু যুগৰ সাহিত্যৰ পৰীক্ষা-নিৰীক্ষা কৰি চালে। পঞ্চাশৰ দশকত আৰু ষাঠিৰ দশকৰ আগভাগত 'ৰামধেনুৰ সাহিত্য সম্ভাৰে অসমত এটা বৌদ্ধিক বাতাবৰণৰ সৃষ্টি কৰিবলৈ সক্ষম হয়। সঁচা অৰ্থত 'ৰামধেনু' আলোচনীখনে অসমীয়া পাঠকক বিশ্বৰ শ্ৰেষ্ঠ চিন্তাৰ লগত পৰিচয় কৰাই দি এক বহল মানৱীয় দৃষ্টিভংগী গঢ়ি তোলাত সহায় কৰে। এইক্ষেত্ৰত 'ৰামধেনু'ত প্ৰকাশিত চুটিগল্পসমূহে বিশেষ ভূমিকা পালন কৰে। ইয়াতে আগভাগ লয় গল্প-সাহিত্যৰ প্ৰবক্তা ড° ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়াই। সেয়ে অসমীয়া সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰত 'ৰামধেনু' আলোচনীখন আছিল এখন খোলা খিৰিকী, যিখন খিৰিকীৰে সময়ৰ ক্ষুদ্ৰ ভগ্নাংশৰে আমি বাহিৰৰ জগতখন চাব পাৰিছো। ❑

পাদটীকা ঃ

১। শইকীয়া, চন্দ্ৰপ্ৰসাদ (সম্পা.) ঃ গৰীয়সী, পঞ্চম বছৰ, দ্বিতীয় সংখ্যা, নৱেম্বৰ, ১৯৯৭

২। কলিতা, চুমী ঃ আধুনিক অসমীয়া সৃষ্টি শীল গদ্যৰীতিৰ ধাৰা ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন, প্ৰথম সংস্কৰণ, মাৰ্চ, ২০১২, প্ৰকাশক ঃ প্ৰতিশ্ৰুতি প্ৰকাশন।

৩। নাথ, হৰেন চন্দ্ৰ নাথ, প্ৰাণেশ্বৰ (সম্পা.) ঃ ড° ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়া স্ৰষ্টা আৰু দ্ৰষ্টা, কুন্তী দেৱী ট্ৰাষ্ট, গুৱাহাটী, অসম, ২০০৫

৪। কলিতা, ড° চুমী ঃ আধুনিক অসমীয়া সৃষ্টিশীল গদ্যৰীতিৰ ধাৰা ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন, প্ৰথম সংস্কৰণ, মাৰ্চ, ২০১২, প্ৰকাশক ঃ প্ৰতিশ্ৰুতি প্ৰকাশন।

৫। কলিতা, ড° চুমী ঃ ঐ

৬। নাথ, হৰেন চন্দ্ৰ নাথ, প্ৰাণেশ্বৰ (সম্পা.) ঃ ড° ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়া স্ৰষ্টা আৰু দ্ৰষ্টা, কুন্তী দেৱী ট্ৰাষ্ট, গুৱাহাটী, অসম, ২০০৫

প্ৰসংগ পুথি ঃ

১। শইকীয়া, ভবেন্দ্ৰ নাথ ঃ সেন্দুৰ, চতুৰ্থ প্ৰকাশ, জুন, ১৯৯১, ডিচেম্বৰ, ১৯৯৭, প্ৰকাশক ঃ খগেন্দ্ৰনাৰায়ণ দত্তবৰুৱা, লয়াৰ্ছ বুক ষ্টল, গুৱাহাটী- ১

২। শইকীয়া, চন্দ্ৰপ্ৰসাদ (সম্পা.) ঃ গৰীয়সী, পঞ্চম বছৰ, দ্বিতীয় সংখ্যা, নৱেম্বৰ, ১৯৯৭

৩। বৰা, মহেন্দ্ৰ ঃ সাহিত্য উপক্ৰমণিকা, প্ৰথম প্ৰকাশ, জানুৱাৰী, ১৯৮৫, দ্বিতীয় প্ৰকাশ, ফেব্ৰুৱাৰী, ১৯৮৮, তৃতীয় প্ৰকাশ, ডিচেম্বৰ ১৯৯০, প্ৰকাশক ঃ নৰেন্দ্ৰচন্দ্ৰ দত্ত, ষ্টুডেণ্টচ্ ষ্টৰচ, বৰুৱা বামুণ গাওঁ।

৪। কলিতা, ড° চুমী ঃ আধুনিক অসমীয়া সৃষ্টিশীল গদ্যৰীতিৰ ধাৰা ঃ এটি বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন, প্ৰথম সংস্কৰণ, মাৰ্চ, ২০১২, প্ৰকাশক ঃ প্ৰতিশ্ৰুতি প্ৰকাশন।

৫। নাথ, হৰেন চন্দ্ৰ নাথ, প্ৰাণেশ্বৰ (সম্পা.) ঃ ড° ভবেন্দ্ৰ নাথ শইকীয়া স্ৰষ্টা আৰু দ্ৰষ্টা, কুন্তী দেৱী ট্ৰাষ্ট, গুৱাহাটী, অসম, ২০০৫

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

মিচিং লোক-সাধু ঃ এক পৰিচয়

ত্ৰিনয়ন দলে

সাৰাংশ ঃ

লোক-সাহিত্যৰ অন্যতম এটি ভাগ হৈছে লোক-সাধু। প্ৰত্যেক জাতি-জনগোষ্ঠীৰ মাজতে কিছুমান কথা-কাহিনী মৌখ্ৰি ভাৱে প্ৰচলন হৈ থকা দেখা যায়। এনে কথা-কাহিনীবোৰক লোক-সাধু নামে জনা যায়। এই লোক-সাধুবোৰৰ মাজতেই একোটা জাতিৰ কিছুমান অলিখিত ইতিহাস পোৱা যায়। অসমৰ আন জনগোষ্ঠীৰ দৰে মিচিংসকলৰ মাজতো এনেধৰণৰ বহুতো লোক-সাধু পোৱা যায়। লোকসাহিত্যৰ ভঁৰাল চহকী কৰা এই লোকসাধুবোৰৰ মাজত মিচিংসকলৰ আৰ্থ-সামাজিক, প্ৰাচীন জীৱনধাৰা, ৰীতি-নীতি, পৰম্পৰা, লোক-সংস্কৃতিৰ কিছু আভাস পোৱা যায়। বৰ্তমান সময়ত এই সাধুবোৰ সমাজৰ পৰা লাহে লাহে হেৰাই যাবলৈ ধৰিছে। সাধুবোৰৰ বিলুপ্তি ঘটাৰ ক্ষেত্ৰত বিভিন্ন কাৰকে ভূমিকা আছে। আমাৰ গৱেষণা পত্ৰৰ জৰিয়তে মিচিং লোক-সাধুবোৰৰ পৰিচয় দিয়াৰ লগতে ইয়াত নিহিত হৈ থকা সামাজিক, সাংস্কৃতিক দিশবোৰ আলোকপাত কৰা হ'ব।

বীজ শব্দ ঃ

লোক-সাহিত্য, লোক-সাধু, মিচিং, মিচিং লোকসাধু আদি।

অৱতৰণিকা ঃ

বিভিন্ন নৃ-গোষ্ঠীয় উপাদানেৰে গঠন হোৱা অসমীয়া জাতিৰ অন্যতম অংগ হৈছে উজনি অসমৰ প্ৰায় ১১খন জিলাত বসতি কৰি থকা মিচিংসকল। ঐতিহ্যমণ্ডিত সাংস্কৃতিক সম্ভাৰেৰে চহকী মিচিংসকল লোকসাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰতো অত্যন্ত চহকী। লোক-গীত, ফকৰা যোজনা, সাঁথৰ, সাধুকথা আদি ভিন্ন সম্ভাৰেৰে মিচিং লোক-সাহিত্যৰ এখন টনকিয়াল ভঁৰাল দেখা যায়। এই লোক-সাহিত্যবোৰৰ ভিতৰত লোক-সাধুবোৰো অন্যতম। প্ৰাচীনকালৰে পৰা মিচিংসকলৰ মাজত কিছুমান লোক-সাধু প্ৰচলিত হৈ আহিছে। ভিন্নস্বাদৰ এই সাধুবোৰত মিচিংসকলৰ অলিখিত অনেক দিশ প্ৰতিভাত হয়। তেওঁলোকৰ সামাজিক, সাংস্কৃতিক আদি প্ৰতিচ্ছবি পোৱাৰ লগতে সাধুবোৰৰ মাজত নীতিকথা, সততা আদিও নিহিত হৈ আছে। সম্প্ৰতি এই সাধুবোৰৰ জনপ্ৰিয়তা কমি অহা পৰিলক্ষিত হয়। হেৰাই যাব ধৰা এই সাধুবোৰ আজিৰ প্ৰজন্মৰ মাজতো চিনাকি কৰাই দিয়াৰ প্ৰয়োজন অৱশ্যেই আহি পৰিছে।

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
অসম বিশ্ববিদ্যালয় ডিফু চৌহদ
ডিফু, কাৰ্বি আংলাং, অসম-৭৮২৪৬০
৯৯৫৭৭২৭৩৬৯
trinayandoley12@gmail.com

অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

'মিচিং লোকসাধু ঃ এক পৰিচয়'— শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰখনত আলোচনা কৰা সাধুবোৰ বিশেষতঃ তৰুণ চন্দ্ৰ পামেগামৰ দ্বাৰা সংগ্ৰহ কৰা সাধুবোৰৰ আলমত আলোচনা কৰা হৈছে। ইয়াৰ উপৰিও মৌখিক ভাৱে প্ৰচলিত কেইটামান সাধুও আলোচনাৰ আওতালৈ অনা হৈছে।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰৰ অন্তৰালত থকা উদ্দেশ্যবোৰ নিম্নোক্ত ধৰণৰ—

১) লোকসাহিত্যত চহকী মিচিংসকলৰ মাজত প্ৰচলন হৈ থকা লোক-সাধুবোৰৰ এক পৰিচয় দিয়া।

২) লোক-সাধুবোৰৰ অন্তৰালত নিহিত হৈ থকা মিচিংসকলৰ প্ৰাচীন সামাজিক, সাংস্কৃতিক দিশবোৰ উন্মোচন কৰা।

অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা প্ৰত্ৰখনি প্ৰস্তুত কৰোঁতে মূখ্যতঃ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ অৱলম্বন কৰা হৈছে। আলোচনাৰ প্ৰয়োজনীয়তালৈ লক্ষ্য ৰাখি বৰ্ণনামূলক পদ্ধতিও গ্ৰহণ কৰা হৈছে।

বিষয়বস্তুৰ আলোচনা ঃ

লোক-সাহিত্য হ'ল প্ৰাচীন কালৰে পৰা মুখে মুখে চলি অহা একপ্ৰকাৰৰ সাহিত্য। প্ৰত্যেক জাতি-জনগোষ্ঠীৰ মাজতে লোক-সাহিত্যৰ প্ৰচলন পোৱা যায়। সাধাৰণতে অনাখৰী চহা লোকৰ দ্বাৰা ৰচনা কৰা এই লোক-সাহিত্যসমূহত একোটা জাতিৰ ধ্যান-ধাৰণা, ৰীতি-নীতি, সামাজিক আদৰ্শ, পৰম্পৰা আদি বিচাৰি পোৱা যায়। সমাজৰ এই দিশবোৰ চহা কবিসকলে জীৱনৰ সঞ্চিত অভিজ্ঞতাৰে, শব্দৰ চাতুৰ্যৰে লোক-সাহিত্যত তুলি ধৰে। মুখে মুখে চলি অহা বাবে লোক-সাহিত্যক 'মৌখিক সাহিত্য' অভিধাৰেও জনা যায়। বহলভাৱে লোক-সাহিত্যক দুইধৰণে ভাগ কৰিব পাৰি— গেয় আৰু কথ্য। গেয়ৰ ভিতৰত সাধাৰণতে গীত-মাতখিনি অন্তৰ্ভুক্ত কৰা হয় আৰু কথ্যৰ মাজত সাধুকথা, ফকৰা যোজনা, সাঁথৰ আদি লোককথাবোৰ অন্তৰ্গত। প্ৰধানতঃ সাধুবোৰ কথ্যৰূপত পোৱা যায় যদিও কিছুমান গীতিব্যঞ্জক আৰু সাঁথৰধৰ্মী সাধুও পোৱা যায়।

লোক-সাহিত্যৰ অৰ্ন্তভাগত সাধুকথাৰ স্থান গুৰুত্বপূৰ্ণ। সৰল অৰ্থত— সাধুকথাবোৰ কাহিনীৰ ছলেৰে নীতি শিক্ষা দিয়া একধৰণৰ মাধ্যম। প্ৰাচীন কালৰে পৰা মানৱ সমাজৰ মাজত কিছুমান কাহিনী পুৰুষাণুক্ৰমে মৌখিক ৰূপত চলি আহিছে। কালক্ৰমত এইবোৰেই সমাজত সাধুকথাৰূপে পৰিগণিত হয়। বিশেষকৈ সাধুবোৰ শিশু সমাজত অধিক জনপ্ৰিয়। শিশু মনস্তত্বৰ লগত সংগতি ৰাখি এখন কল্পনাৰ জগত তৈয়াৰ কৰা হয়, য'ত ইতৰ প্ৰাণীয়েও মানুহৰ দৰে ক্ৰিয়াকলাপ বা আচৰণ কৰে। এনে হোৱাৰ বাবে স্বাভাৱিকতে শিশুৱে সাধুকথাৰ প্ৰতি আকৃষ্ট হয়। অৱশ্যে সাধুকথাৰ সকলো কথা কাল্পনিক বুলি কোৱাটোও সমীচিন নহয়, বহুতো সাধুকথাৰ ভেটি বাস্তৱো হোৱা দেখা যায়। কিছুমান সত্য কাহিনীক পৰৱৰ্তী সময়ত সাধুৰ ৰূপ দিয়াৰ উদাহৰণ নিশ্চয় ওলাব। মাত্ৰ কথকে ৰুচি অনুসৰি ইয়াত কল্পনাৰ ৰহন সানি নিজাধৰণে কয়।

ইংৰাজী ভাষাৰ Tales, Legends, Myths, Fables আদি শব্দৰ সমাৰ্থকৰূপে অসমীয়া ভাষাত সাধু শব্দ ব্যৱহাৰ কৰা হয়। 'সাধু' শব্দটো সাধাৰণতে তৎসম শব্দ। এই শব্দই 'বণিক' বা 'সদাগৰ' অৰ্থও প্ৰকাশ কৰে। পূৰ্বতে অসমীয়া ভাষাত সাধুকথা বুজাবলৈ 'সাউদ কথা' শব্দৰহে প্ৰচলন আছিল বুলি জনা যায়। সাউদ বা সদাগৰে ব্যৱসায়ৰ বাবে দূৰ-দূৰণিলৈ যাওঁতে সঞ্চিত হোৱা বিভিন্ন অভিজ্ঞতাবোৰ ঘূৰি আহি নিজ গাঁৱৰ মানুহৰ আগত নিজাধৰণে বৰ্ণনা কৰে। কালক্ৰমত এই কাহিনীবোৰেই সাধুকথাৰূপে পৰিগণিত হোৱা বুলি অনুমান কৰিব পাৰি। সাধুকথাবোৰক বিষয়বস্তু অনুসৰি জন্তু সম্পৰ্কীয়, অলৌকিক, টেটোন, সৃষ্টি সম্পৰ্কীয় আদি ভাগত ভাগ কৰিব পাৰি।

অসমৰ অন্যতম জনগোষ্ঠী মিচিংসকলৰ মাজতো অনেক সাধুকথাৰ প্ৰচলন পোৱা যায়। প্ৰাচীন কালৰে পৰা এই সাধুবোৰ মৌখিক ভাৱে চলি আহিছে। মৌখিক ভাৱে বাগৰি অহাৰ ফলত সাধুবোৰ যে কালক্ৰমত সাজ সলাই আহিছে ই ধ্ৰুৰূপ। সময়ৰ সোঁতত ই ভিন্ন ৰূপ ল'লেও কাহিনীৰ মূল জঁকাটো পৰিৱৰ্তন হোৱা বুলি ক'ব নোৱাৰি। সাধাৰণভাৱে মিচিংসমাজৰ সাধু কথকবোৰ ঘৰৰ বয়োজ্যেষ্ঠ ককা-আইতা বা পিতৃ-মাতৃ আদি। আগৰ দিনত মিচিংসকলে চাংঘৰৰ লগতে মুকলিকৈ এখন আহল-বহল চাং সাজিছিল। মিচিং ভাষাত এই চাংখনক 'কাৰী' বুলি কয়। এই 'কাৰী'ত ধান, কাপোৰ আদি শুকুৱাৰ লগতে জহকালত গৰমৰ পৰা পৰিত্ৰাণ পাবলৈ জিৰণি লয়। ইয়াতে বয়োজ্যেষ্ঠসকলে ল'ৰা-ছোৱালীসকলক সাধু শুনায়। এনেদৰেই সাধুকথাবোৰে পুৰুষাণুক্ৰমে বাগৰি আহি আছে।

উল্লিখিত সাধুকথাৰ শ্ৰেণীবিভাজনৰ দৰে মিচিং সাধুকথাবোৰো ভাগ কৰিব পাৰি। উক্ত ভাগ কেইটাৰ উপৰিও মিচিং সাধুৰ ক্ষেত্ৰত আৰু এটা ভাগ সংযোজন কৰিব পাৰি, সেয়া হ'ল— প্ৰব্ৰজন সম্পৰ্কীয় সাধু। অৰুণাচলৰ বিভিন্ন পাহাৰৰ পৰা অসমলৈ মিচিংসকল প্ৰব্ৰজন হৈছিল বুলি জনা যায়। এই কথাৰ প্ৰমাণ তেওঁলোকৰ মাজত প্ৰচলন হৈ থকা সাধুকথায়ো কিছু পৰিমাণে বহন কৰে। 'বৰা আৰু গুঁইৰ জন্ম', 'মিচিংসকল ভৈয়ামলৈ আহিল কেনেকৈ' (১), 'মিচিংসকল ভৈয়ামলৈ আহিল কেনেকৈ' (২) আদি সাধুবোৰে ভৈয়ামলৈ মিচিংসকলৰ প্ৰব্ৰজন সম্পৰ্কে কিছু ধাৰণা দিয়ে। প্ৰব্ৰজনৰ সময়ত হোৱা বিভিন্ন মুখৰোচক ঘটনাৰাজি আৰু অভিজ্ঞতা এই সাধুবোৰত পোৱা যায়।

অন্যান্য লোকসাহিত্যৰ ভাগসমূহৰ দৰে সাধুকথাৰো ৰচনাকাল আৰু ৰচকৰ নাম পোৱা নাযায়। কিন্তু কিছুমান সাধুৰ পটভুমিয়ে ৰচনাৰ অনুমানসিদ্ধ সময় নিৰ্ধাৰণ কৰাত সহায় কৰে। মিচিংসকলৰ মাজত প্ৰচলিত 'য়াকা মিৰৗম্' এনে এক সাধু। এই সাধুৰ পটভূমি মানৰ অসম আক্ৰমণৰ সময়। মানসকলে বন্দী কৰি লৈ যোৱা য়াকা নামৰ মহিলাগৰাকীয়ে নিজ বুদ্ধিমত্তাৰ জৰিয়তে বৰ্বৰ মানৰ কবলৰ পৰা পলাই আহিবলৈ সক্ষম হৈছিল। মানসকলে লুট-পাত কৰি নিয়া অনেক সোণ-ৰূপ বাটে বাটে পুতি যোৱা য়াকাই প্ৰত্যক্ষ কৰিছিল। মানৰ কবলৰ পৰা ঘূৰি আহি সেইবোৰ য়াকাই উলিয়াই আনিছিল। এই সোণ-ৰূপবোৰ লাভ কৰি য়াকা পৰৱৰ্তী সময়ত বহু ধনী হৈ পৰিছিল, যাৰ বাবে 'য়াকা মিৰৗম্' অৰ্থাৎ 'ধনী য়াকা' নামেৰে বিখ্যাত হৈ পৰে। পটভূমিৰ জৰিয়তে এই সাধুৰ ৰচনাকাল মানৰ অসম আক্ৰমণৰ সময় বা পৰৱৰ্তী কালৰ বুলি ধাৰণা কৰিব পাৰি। অৱশ্যে বৰ্তমানে য়াকা মিৰৗম্ সাধুৰূপে প্ৰচলন হৈ থাকিলেও বহুতেই য়াকাক জীৱন্ত চৰিত্ৰৰূপে দাবী কৰে। কিন্তু বহু পুৰুষ বাগৰি আহি বৰ্তমানে ই মিচিং সমাজত সাধুৰ দৰে প্ৰচলন হৈ আছে।

বিশেষতঃ শিশুমনক আমোদ দিবলৈ বা আমোদৰ ছলেৰে সৎ, নীতি শিক্ষা দিবলৈ সাধুবোৰ কোৱা হয় যদিও সাধুকথাবোৰত একোখন সমাজৰ সামাজিক, সাংস্কৃতিক, অৰ্থনৈতিক আদি বিভিন্ন দিশ প্ৰতিভাত হয়। মিচিং সাধুবোৰো ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম নহয়। তেওঁলোকৰ মাজত প্ৰচলিত হৈ থকা অনেক সাধুৱে সামাজিক, সাংস্কৃতিক, অৰ্থনৈতিক আদি প্ৰাচীন দিশবোৰ বহন কৰি আছে। লিখিত বুৰঞ্জীবিহীন জনগোষ্ঠী মিচিংসকলৰ বুৰঞ্জীৰ অভাৱ আংশিকভাৱে কিছুমান মিচিং সাধুকথাই পূৰণ কৰা বুলি ক'ব পাৰি। সাধুকথাবোৰৰ মাজেৰে মিচিং জনজীৱনৰ কিছু ইতিহাস পোৱা যায়। প্ৰাচীন মিচিং জনজীৱনৰ কিছুমান ৰীতি-নীতি বা সামাজিক প্ৰতিচ্ছবি সাধুবোৰৰ মাজত প্ৰতিফলিত হোৱা দেখা যায়। আৰ্থিক স্বচ্ছলতাৰ বাবে গৰু, ম'হ, গাহৰি, হাঁহ, কুকুৰা আদি পালন কৰা, কৃষি কাৰ্য আদিৰ উল্লেখ বহুকেইটা সাধুত পোৱাত যায়। এই দিশৰ পৰা বিশ্লেষণ কৰিলে মিচিংসকলৰ প্ৰাচীন আৰ্থ-সামাজিক দিশটো ওলাই পৰে। বিয়া-বাৰুৰ ৰীতি-নীতি, লোক-বিশ্বাস, মিতিৰ পতাৰ নিয়ম, বিভিন্ন মিচিং উপাধিৰ সৃষ্টি কেনেকৈ হ'ল— আদিৰ আভাসো কিছুমান সাধুত পোৱা যায়। সমাজ ব্যৱস্থাৰ কিছু ছবিও সাধুবোৰৰ মাজত দেখা যায়। কোনো লোকে অপৰাধ কৰিলে অপৰাধীৰ শাস্তি বিহাৰ নিয়ম, কোনো অপৰাধৰ পৰা পৰাচিত হোৱা আদিৰ ছবি কিছুমান সাধুত পোৱা যায়।

সাধুবোৰৰ মাজত মিচিং সমাজৰ লোক-বিশ্বাসৰ কিয়দাংশ ছবিও পোৱা যায়। কোনো মানুহে মাতিলে তিনিবাৰ মতাৰ পিছতহে সঁহাৰি দিব লাগে (কোনো ভূত-প্ৰেত বা প্ৰেতাত্মাই তিনিবাৰতকৈ অধিক মাতিব নোৱাৰে বুলি মিচিংসকলে বিশ্বাস কৰে), ছেৱা গছ কাটিব নাপায়, দলে ফৈদৰ লোকসকলে নিজৰ ঘৰৰ চ'তিৰ গুৰি পশ্চিমলৈ আৰু পেগু বংশৰ লোকসকলে পূবলৈ দিব লাগে আদি লোকবিশ্বাস কিছুমান সাধুত পোৱা যায়। ইয়াৰোপৰি মিচিংসকলৰ উপাস্য বিভিন্ন দেৱ-দেৱী যেনে— 'দঞি-পঃলঃ', 'মৃগ্‌লৃং-তাকাৰ', 'দমুগ্-দংকাং', 'পৌদং আনৗ' আদিৰ নাম পোৱা যায়। সেইদৰে মিচিংসকলে উদ্‌যাপন কৰা বিভিন্ন উৎসৱ-পাৰ্বণৰ বিষয়েও কিছু আভাস পোৱা যায়।

অন্যান্য সমাজত প্ৰচলিত সাধুৰ দৰে মিচিং সাধুবোৰৰো বেছিভাগ জীৱ-জন্তু, চৰাই-চিৰিকতি সম্পৰ্কীয়। অসমীয়া ভাষাত প্ৰচলিত জন্তু সম্পৰ্কীয় সৰহভাগ সাধুত শিয়াল নায়ক হোৱা দেখা যায়। মিচিং সাধুবোৰতো অনুৰূপধৰণে শিয়াল বুদ্ধিয়ক, ধূৰ্ত প্ৰকৃতিৰ আৰু বেছিভাগ সাধুৰ নায়ক শিয়াল। নিজৰ ধূৰ্ত প্ৰকৃতি আৰু বুদ্ধিৰ জৰিয়তে প্ৰায় সাধুতে বাঘ, মানুহক ছেৰ পেলাই শিয়ালৰ জয়লাভ হোৱা দেখা যায়। এনে সাধুৰ ভিতৰত— 'শিয়ালৰ হোৱা', 'শিয়ালৰ বুদ্ধি', 'বাঘ আৰু মানুহ' আদি উল্লেখযোগ্য। 'শিয়ালৰ হোৱা' সাধুত শিয়ালে কূটবুদ্ধি আৰু কৌশলেৰে বায়ুদেৱতাক হৰুৱাইছে। 'শিয়ালৰ বুদ্ধি' সাধুত শিয়ালে নিজৰ বুদ্ধিৰে বাঘৰ কবলৰ পৰা এজন মানুহক

ৰক্ষা কৰে। বনৰ আটাইতকৈ সবলী জন্তুৰূপে পৰিগণিত বাঘ মিচিং সাধুত অঁকৰা, নিবুৰ্দ্ধি আদি গুণহে আৰোপিত কৰা দেখা যায়। ধূৰ্ত প্ৰকৃতিৰ শিয়াল বা আন জন্তু বা মানুহৰ হাতত সদায় বাঘৰ পৰাজয় হোৱা দেখা যায়।

অলৌকিকতা সাধুকথাৰ অন্যতম এটা বৈশিষ্ট্য। বিশেষতঃ শিশুমনক আমোদ দিয়াৰ ছলেৰে সাধুবোৰ কোৱা হয় বাবে শিশুমনক আকৃষ্ট কৰিবলৈ কথকে অলৌকিক জগত এখনৰ সৃষ্টি কৰে। সেয়ে সাধুবোৰত চৰাই-চিৰিকতি, জন্তু–জানোৱাৰেও কথা ক'ব পাৰে বা মানুহৰ দৰে আচৰণ কৰে। মানুহ চৰাইৰ দৰে উৰিব পাৰে, যাদু-মন্ত্ৰৰ জৰিয়তে অসাধ্যক সাধন কৰিব পাৰে। মিচিং সাধুবোৰৰ মাজতো এনে এখন কল্পনা বা অলৌকিক জগত এখন পোৱা যায়। চৰাই-চিৰিকতি, জীৱ-জন্তুৰেও নানাধৰণৰ আচৰণ কৰা দেখা যায়। ভূত-প্ৰেত, যাদু-মন্ত্ৰৰ দ্বাৰা মানুহক বিভিন্ন ৰূপ দিয়া সাধুবোৰৰ মাজত পোৱা যায়। 'বাঘ আৰু মানুহ', 'শিহু আৰু ঘৰিয়াল', 'শিয়ালৰ হোৱা', 'শিয়ালৰ বুদ্ধি', 'গুৱালা চৰাইৰ জন্ম', 'আকাশখন ওখ কেনেকৈ হ'ল' আদি এই শ্ৰেণীৰ সাধু।

সৃষ্টি সম্পৰ্কীয় সাধু বহুপৰিমাণে মিচিং সমাজত প্ৰচলন হৈ আছে। সমাজত প্ৰচলিত হৈ থকা বিভিন্ন নীতি-নিয়ম, মানুহৰ জন্ম, বিভিন্ন জীৱ-জন্তু, চৰাই-চিৰিকতিৰ জন্ম আদি কেনেকৈ হ'ল, এই বিষয়ে সৃষ্টি সম্পৰ্কীয় সাধুবোৰত পোৱা যায়। 'গুৱালা চৰাইৰ জন্ম কেনেকৈ হ'ল', 'ভেকুলীৰ পিঠি খহুলা হ'ল কিয় ?', 'চুংক্ৰাং ফৈদৰ কথা', 'শৰণ লোৱাৰ সাধু', 'শিশু আৰু ঘৰিয়াল', 'মিগুমিমাদ' আদি সাধু এই শ্ৰেণীত অন্তৰ্ভূক্ত কৰিব পাৰি।

টেটোন জাতীয় মিচিং সাধু বৰ বেছি পোৱা নাযায়। সমাজত এনে কিছুমান মানুহ আছে যিবোৰ নাক মোহাৰিলেই বুদ্ধি ওলাই বা নিজ বুদ্ধিৰ জৰিয়তে সকলো ধৰণৰ পৰিস্থিতিৰ সৈতে মোকাবিলা কৰিব পাৰে। সাধাৰণতে সমাজৰ এই শ্ৰেণীৰ মানুহক টেটোন বা টেটন আখ্যা দিয়া হয়। মিচিং সাধু 'মিগুমিমাদ', 'ককাই-ভাইৰ সাধু' আদিত টেটোন চৰিত্ৰ কিছুমান পোৱা যায়। 'মিগুমিমাদ' সাধুত নিজ বুদ্ধিৰ বলত এহাল ল'ৰাই মায়াবী মিগুমিমাদৰ পৰা ৰক্ষা পোৱাৰ ছবি পোৱা যায় আৰু 'ককাই-ভাইৰ সাধু'ত চাতুৰ্যৰে নিজৰ ভায়েকৰ সকলো সম্পত্তি কাঢ়ি লোৱা দেখা যায়। গীতিব্যঞ্জক মিচিং সাধু নাই বুলি ক'ব পাৰি। সাধাৰণতে মিচিংসকলে সাধুক কথ্যৰূপেহে পৰিৱেশন কৰা দেখা যায়।

উপসংহাৰ ঃ

দেখা যায় যে মিচিংসকলৰ মাজত অনেক সাধুৰ প্ৰচলন হৈ আছে। আন সমাজত প্ৰচলিত সাধুৰ দৰে মিচিংসকলৰ সাধুবোৰো জন্ম সম্পৰ্কীয়, অলৌকিক, টেটোন আদি বিষয়ক। সাধাৰণতে সাধুবোৰৰ মাজত একোটা নীতিবচন সোমাই থকা দেখা যায়। শিশুক মনোৰঞ্জনৰ উদ্দেশ্যে সাধুবোৰ শুনোৱা যায় যদিও সাধুৰ অন্তৰালত নিহিত হৈ থকা নীতিবচনবোৰ শিশু মনত সোমোৱাই দিয়া হয়। ভাল-বেয়া, শুদ্ধ-অশুদ্ধ, সৎ-অসৎ আদিৰ ধাৰণা প্ৰথমে শিশুসকলে সাধুবোৰৰ পৰাই লাভ কৰে। এই দিশৰ পৰা সাধুবোৰক সমাজ নিয়ন্ত্ৰণৰ অন্যতম আহিলা হিচাপেও গণ্য কৰিব পাৰি।

লোক-সাহিত্যৰ আপুৰুগীয়া সম্পদস্বৰূপ এই লোক-সাধুবোৰ। যি সময়ত মানুহৰ মনোৰঞ্জনৰ বাবে কোনোধৰণৰ আহিলা-পাতি নাছিল, সেই সময়ত সাধুৰেই আছিল মনোৰঞ্জনৰ প্ৰধান উপায়। একবিংশ শতিকাৰ প্ৰযুক্তি বিদ্যাৰ ন ন উদ্ভাৱনে সমাজৰ অন্যান্য দিশৰ দৰে মনোৰঞ্জনৰ গতিও সলনি কৰি পেলালে। আগৰ দৰে সাধু কথক আৰু শুনাৰ আগ্ৰহ সমাজত নোহোৱা হৈ আহিল। ইয়াৰ লগতে একক পৰিয়ালৰ উত্থান, ব্যস্তময় জীৱন আদিও সাধুবোৰৰ লুপ্ত হোৱাৰ কাৰণ হিচাপে চিহ্নিত কৰিব পাৰি। পূৰ্বতে তৰুণ চন্দ্ৰ পামেগামে কিছুমান সাধু সৰংক্ষণ কৰিছিল যদিও বৰ্তমানেও বহু সাধু কথিত ৰূপত বহু অঞ্চলত প্ৰচলিত হৈ আছে। লোক-সাহিত্যৰ আপুৰুগীয়া সম্পদস্বৰূপ এই সাধুবোৰৰ সৰংক্ষণৰ আঁচনি গ্ৰহণ নকৰিলে ইবোৰ নিশ্চিতভাৱে এদিন বিলুপ্তিৰ গৰাহত পৰিব। ❑

প্ৰসংগ পুথি ঃ

কাগয়ুং , ভৃগুমুনি। তৰুণ চন্দ্ৰ পামেগাম ৰচনাৱলী (প্ৰথম খণ্ড) । যোৰহাট ঃ অসম সাহিত্য সভা, ১৯৮৯। মুদ্ৰিত।

গগৈ, লীলা। অসমীয়া লোকসাত্যিৰ ৰূপৰেখা। ডিব্ৰুগড় ঃ ষ্টুডেন্টচ এম্প'ৰিয়াম, ১৯৯২। মুদ্ৰিত।

শৰ্মা, নবীন চন্দ্ৰ। অসমীয়া লোক-সংস্কৃতিৰ চমু আভাস। গুৱাহাটী ঃ বাণী প্ৰকাশ মন্দিৰ, ২০২২। মুদ্ৰিত।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

বড়োসকলৰ লোকঔষধি প্ৰথা আৰু বাস্তব্যবিদ্যা

জোংদাৰ বসুমতাৰী
গৱেষক, বড়ো বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
গুৱাহাটী, অসম-৭৮১০১৪
৬০০০৬১৬১৩৮
pritambty06@gmail.com

ৰাজলক্ষী দত্ত
গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
গুৱাহাটী, অসম-৭৮১০১৪
৮৮২২৭৭৫৩৫২

সংশিপ্তসাৰ :

প্ৰাচীন কালৰে পৰা অৰ্থাৎ প্ৰাগজ্যোতিষপুৰ নামেৰে জনাজাত সময়ৰ পৰাই বড়োসকল বিভিন্ন জাতি-জনগোষ্ঠীৰ সৈতে অসমত বসবাস কৰি আহিছে আৰু লগতে প্ৰকৃতিৰ হৃদয়ত বাস কৰি পৰিৱেশৰ সৈতে নিজকে খাপখুৱাই চলি আহিছে। তেওঁলোকে প্ৰকৃতিৰ পৰাই তেওঁলোকৰ প্ৰয়োজনীয় সকলো বস্তু-খাদ্য, আশ্ৰয়, কাপোৰ ইত্যাদি সংগ্ৰহ কৰিছিল। প্ৰাচীন কালৰে পৰা বড়ো লোকসকলে ৰোগীক সুস্বাস্থ্যলৈ ঘূৰাই আনিবলৈ ওচৰৰ বাগিচা আৰু অৰণ্যৰ পৰা লোক ঔষধ সংগ্ৰহ কৰিছিল। সাধাৰণতে, ওজা সকলে বিভিন্ন উদ্ভিদৰ পাত, শিপা আৰু বাকলি সংগ্ৰহ কৰিছিল কাৰণ বিভিন্ন ঔষধি উদ্ভিদৰ সঠিক চিনাক্তকৰণৰ বিষয়ে তেওঁলোকৰ যথেষ্ট জ্ঞান আছে। তেওঁলোকে ৰোগীৰ প্ৰয়োজনীয়তা অনুসৰি বিভিন্ন সময়ত বিভিন্ন ঔষধ ব্যৱহাৰ কৰিছিল। অন্য অৰ্থত কবলৈ গ'লে, পৰিৱেশৰ সৈতে তেওঁলোকৰ গভীৰ সম্পৰ্ক আছে। 'বড়োসকলৰ লোক ঔষধি প্ৰথা আৰু বাস্তব্যবিদ্যা' এই অধ্যয়নটোত বড়োসকলৰ মাজত পৰম্পৰাগত ভাৱে প্ৰচলন হৈ অহা লোক ঔষধি সমূহৰ চিনাক্তকৰণ, এইসমূহৰ উপযোগীতা, উদ্ভিদ সমূহৰ গুনাগুনৰ কথা বিশ্লেষণ কৰা হৈছে আৰু লগতে পৰিবেশ তন্ত্ৰৰ সৈতে সম্পৰ্কৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা হৈছে।

সূচক শব্দ ঃ

বাস্তব্যবিদ্যা, ওজা, লোকঔষধি প্ৰথা।

১.১ আৰম্ভণি ঃ

সাধাৰণতে বাস্তব্যবিদ্যাই মানুহ, বিভিন্ন প্ৰাণী আৰু তেওঁলোকৰ চাৰিওফালৰ প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশৰ মাজৰ সম্পৰ্ক অধ্যয়ন কৰে। ই উদ্ভিদ, বিভিন্ন জীৱ-জন্তু আৰু তেওঁলোকৰ চাৰিওফালৰ পৰিৱেশ তন্ত্ৰৰ মাজৰ নিৰ্দিষ্ট সম্পৰ্ক বুজিবলৈ চেষ্টা কৰে। সেইবাবে ইয়াৰ জৰিয়তে যদি বাস্তব্যবিদ্যা আৰু সংস্কৃতিৰ বিষয়ে একেলগে আলোচনা কৰা হয়, তেন্তে তেওঁলোকৰ সম্পৰ্কক বিশদভাৱে বুজিব পাৰি। যিহেতু মানৱ জীৱন জন্মৰ পৰা মৃত্যু পৰ্যন্ত সংস্কৃতিৰ দ্বাৰা পৰিচালিত হয়। ই জ্ঞান বা জ্ঞানৰ বিষয়বোৰৰ সৈতে মোকাবিলা কৰে, কেনেকৈ তেওঁলোকে পৰিৱেশৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰি সমাজে সন্মুখীন হোৱা কিছুমান সমস্যা সমাধান কৰে। সেয়েহে পৰম্পৰাগত জ্ঞানও আলোচনাৰ এক গুৰুত্বপূৰ্ণ অংশ হৈ পৰে।

১.১.১ বাস্তব্যবিদ্যা বা Ecology ঃ

বাস্তব্যবিদ্যাক ইংৰাজীত Ecology বুলি কোৱা হয়। জৈৱিক আৰু অ-জৈৱিক

পৰিৱেশৰ সৈতে জীৱৰ সম্পৰ্ক বৰ্ণনা কৰিবলৈ Ernst Haeckel য়ে এই শব্দটো ব্যৱহাৰ কৰিছিল। Ecology শব্দটো গ্ৰীক শব্দ 'Oekologie' পৰা উদ্ভৱ হৈছে। এই Ecology শব্দটো 'Eco' শব্দটো 'Oiko' শব্দটোৰ পৰা উদ্ভৱ হৈছে, যাৰ অৰ্থ হৈছে ঘৰ বা থকা ঠাই । 'Logy' শব্দটো 'logos'ৰ পৰা আহিছে, যাৰ অৰ্থ হৈছে অধ্যয়ন। কক্সবলৈ গলে, মানুহকে ধৰি জীৱিত জীৱ আৰু ইহঁতৰ ভৌতিক পৰিৱেশৰ মাজৰ সম্পৰ্কৰ অধ্যয়নক বাস্তৱ্যবিদ্যা বোলে; ইয়াত উদ্ভিদ, প্ৰাণী আৰু ইয়াৰ চৌপাশৰ জগতখনৰ মাজৰ গুৰুত্বপূৰ্ণ সম্পৰ্কসমূহ বুজিবলৈ চেষ্টা কৰা হয়। পৰিৱেশ তন্ত্ৰৰ উপকাৰিতাৰ লগতে আৰু আমি পৃথিৱীৰ সম্পদসমূহ ব্যৱহাৰ কৰি ভৱিষ্যত প্ৰজন্মৰ বাবে কেনেকৈ এক সুস্থ পৰিৱেশ সৃষ্টি কৰি থৈ যাব পাৰোঁ সেই বিষয়েও বাস্তৱ্যবিদ্যাই তথ্য প্ৰদান কৰে।

আধুনিক বাস্তৱ্যবিদ্যাৰ পিতৃ Odum এ বাস্তৱ্যবিদ্যাৰ বিষয়ে সংজ্ঞা দিছে এনেদৰে - "Ecology is the study of structure and function of ecosystems (বাস্তৱ্যবিদ্যা হৈছে পৰিৱেশ বিজ্ঞানৰ গঠন আৰু কাৰ্য্যৰ অধ্যয়ন)।" [১]

ঠিক তেনেকৈ নৃতত্ত্ববিদ Julian Steward (1902-1972) য়ে নিজৰ Theory of Culture Changc: The Methodology of Multinear evolution ত, সাংস্কৃতিক বাস্তৱ্যবিদ্যাক এনেদৰে প্ৰতিনিধিত্ব কৰিছে "ways in which culture change is induced by adaption to the environment"(পৰিৱেশৰ লগত খাপ খুৱাই সংস্কৃতিৰ পৰিৱৰ্তন প্ৰৰোচিত হোৱাৰ উপায়)।" [২]

বৰ্তমান বাস্তৱ্যবিদ্যা কেৱল জীৱবিজ্ঞানৰ এটা অধ্যায় নহয়, বিভিন্ন বিষয়ৰ লগত ই জড়িত হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে, Social ecology, Cultural Ecology, Political Ecology, Geographical Ecology ইত্যাদি। Cultural Ecology বা সাংস্কৃতিক বাস্তৱ্যবিদ্যা ইয়াৰ ভিতৰত অন্যতম। সাংস্কৃতিক বাস্তৱ্যবিদ্যাই সাংস্কৃতিক সাফল্যৰ বাবে মানুহ আৰু প্ৰকৃতিৰ মাজৰ সম্পৰ্কৰ বিশেষ ৰূপাঙ্কণক বিবেচনা কৰে। যদি সংস্কৃতি বাস্তৱ্যবিদ্যাৰ গৱেষণাৰ বিষয় হৈ পৰে, তেন্তে জলবায়ু পৰিৱৰ্তনৰ দৰে প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশগত সমস্যাৰ পৰা আঁতৰি ব্যক্তি, গোট, প্ৰতিষ্ঠান আৰু সংগঠনসমূহৰ জ্ঞান, দৃষ্টিভংগী আৰু আচৰণক প্ৰভাৱিত কৰা কাৰকসমূহৰ প্ৰতি মনোযোগ দিয়া হয়।

১.১.২ বড়ো সকলৰ সংক্ষিপ্ত পৰিচয় ঃ

উত্তৰ-পূব ভাৰতকে ধৰি ইয়াৰ আশে-পাশে থকা ৰাজ্য সমূহলৈ সম্প্ৰসাৰিত হোৱা বড়োসকলে প্ৰাচীন কালৰে পৰা এক সামাজিক জীৱন যাপন কৰি আহিছে। বড়ো লোকসকলৰ নিজস্ব অনন্য ভাষা, সংস্কৃতি আৰু ধৰ্ম আছে, যিয়ে তেওঁলোকক অঞ্চলটোৰ অন্যান্য সম্প্ৰদায়ৰ পৰা পৃথক কৰে। বড়োসকলক কছাৰী আৰু মেচ বুলিও কোৱা হৈছিল, আৰু আজিও তেওঁলোকে এই নামবোৰ তেওঁলোকৰ উপাধি হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰে। ইয়াৰ উপৰিও, তেওঁলোকে বসুমতাৰী, মুচাহাৰী, বৈচুমুথিয়াৰী, লাহাৰী, দৈমাৰী, খাখলাৰী, স্বৰ্গিয়াৰী, ইছলাৰী, নাৰ্জাৰী, নাৰ্জিনাৰী, ব্ৰহ্মা আদি উপাধিবোৰ ব্যৱহাৰ কৰে। J.D. Anderson আৰু Rev. S. Endle য়ে তেওঁলোকৰ 'A Collection of Kachari Folk Tales and Rhymes (1884)' আৰু 'The Kacharis (1911)' গ্ৰন্থত বড়ো বা বড়োসকলক কছাৰী বুলি মুখ্য পৃষ্ঠাসমূহত উল্লেখ কৰিছিল যদিও বড়ো সকলক ব্ৰহ্মপুত্ৰ উপত্যকাৰ আদিবাসী বা মুলনিবাসী বুলি নিশ্চিত কৰিব যাওতে J.D. Anderson য়ে Rev. S. Endle1 'The Kacharis' পুস্তকৰ পাতনিত বড়ো শব্দ ব্যৱহাৰ কৰি এনেকৈ কৈছে— "The river names of the whole Brahmaputra Valley are Bodo names, and it is demonstrable that the Bodos were the aborigines of the valley. In the great mass of hills, an outlying spur of the mountains of upper Burma, which divide the Brahmaputra Valley from that of the river Surma which runs parallel to it from east to west are two more Bodo groups."[৩] কিন্তু তেখেতৰ আগতে B.H. Hodgson নে সৰ্বপ্ৰথমে তেওঁৰ প্ৰবন্ধসমূহত 'বড়ো' শব্দটো ব্যৱহাৰ কৰি বড়োসকলক বিস্তৃত দৰ্শকৰ আগত আলোকপাত কৰিছিল। অলিন ব্ৰহ্ম আৰু বিশ্বজিত ব্ৰহ্মাই তেওঁলোকৰ গ্ৰন্থত লিখিছে যে 'ইয়ে বড়ো শব্দটো B.H. Hodgson নে নিজৰে 'On the Aborigines of India' চিৰিচত প্ৰকাশিত 'Essay the First on the Kocch, Bodo and Dhimal Tribes (1847)' ত প্ৰথমবাৰ ব্যৱহাৰ কৰিছিল বুলি G.A. Grearson-এ কৈছে।[৪] থিক তেনেকৈ Sir edward Gait এও নিজৰ 'A History of Assam' নামৰ পুস্তক খনত বড়ো বা কছাৰী বা মেচৰ বিষয়ে এনেকৈ কৈ গৈছে -"They are identical with the people called Mech in Goalpara and North Bengal......In the Brahmaputra valley the Kacharis call themselves Bodo fisa (sons of the

Bodo). In the north Kachari Hills they call themselves Dimasa.'[৫]। বড়ো সকলে যে ব্ৰহ্মপুত্ৰ উপত্যকাৰ আদিবাসী এই H.K. Barpujari য়ে 'The Comprehensive History of Assam (Volume-II)' নামৰ বুৰঞ্জী পুষ্টকত এনেকুৱা উল্লেখ কৰিছে -''The Kacharis, who belong to the great Bodo race were perhaps one of the earliest aboriginal tribe of Brahmaputra Valley.''[৬] যিয়ে নহওঁক ইয়াত কোনো সন্দেহ নাই যে বড়োসকল অসমৰ অন্য জনজাতীয় সম্প্ৰদায়ৰ দৰেই মুলনিবাসি হয় আৰু তেওঁলোকক কছাৰী, মেচ বুলিও জনা যায়।

১.১.২.১ বাস্তব্যবিদ্যা সৈতে বড়ো সংস্কৃতিৰ সম্পৰ্ক ঃ

বড়ো সকলে জীৱন যাপন কৰোঁতে তেওঁলোকৰ প্ৰয়োজনীয়তা অনুসৰি ভাষা, ধৰ্মৰ লগতে বাসস্থান, কাপোৰ, খাদ্য আদিৰ যোগান ধৰিছিল। সংক্ষেপে ক'বলৈ গ'লে তেওঁলোকে তেওঁলোকৰ সংস্কৃতি প্ৰয়োজন অনুসৰি সৃষ্টি কৰি লৈছিল। এক প্ৰকৃতি-প্ৰেমী সম্প্ৰদায় আৰু প্ৰকৃতি-নিৰ্ভৰশীল হোৱাৰ বাবে বড়ো সকলে উৰ্বৰ ভূমি, উদ্ভিদ, প্ৰাণী আৰু জলাশয়ৰ বৃহৎ অংশৰ প্ৰতি আটাইতকৈ বেছি আগ্ৰহী আছিল। অৰ্থাৎ, বড়োৰ পাৰিবাৰিক জীৱন চাৰিওফালৰ পৰিৱেশৰ সৈতে ঘনিষ্ঠভাৱে জড়িত। তেওঁলোকে প্ৰকৃতিৰ পূজাৰী ইয়াৰেবাথৌ ধৰ্মটো এক উদাহৰণ হ'ব পাৰে। কাৰণ তেওঁলোকে পাঁচ তত্ব ভূমি, পানী, বায়ু, অগ্নি, আকাশক মানে। সাধাৰণতে ভাৰতৰ পূব হিমালয়ক ঔষধি উদ্ভিদৰ ঘৰ বুলি কোৱা হয়। প্ৰাচীন কালৰে পৰা এই অঞ্চলটো ধৰ্মীয় লোকসকলে পৱিত্ৰ স্থান বা আধ্যাত্মিক অনুশীলনৰ স্থান বুলি বিশ্বাস কৰি আহিছে। হিমালয়ৰ পাদদেশত জীৱন যাপন কৰি অহাৰ বাবে বড়ো সকল ঔষধি উদ্ভিদৰ সৈতেও ঘনিষ্ঠভাৱে জড়িত আছিল। এই সন্দৰ্ভত শ্ৰী ব্ৰহ্মানন্দ পাটোৱাৰীয়ে 'বড়োনি মুলি বিফাং-লাইফাং' গ্ৰন্থৰ ওপৰত কৰা পাটনিত বড়োৰ বিষয়ে এইদৰে কৈছেঃ 'অসমৰ সুপৰিচিত গোষ্ঠী বড়ো হৈছে পূব হিমালয়ৰ পাদদেশত বাস কৰা এটা জাতি। ই সদায়ে ঔষধি উদ্ভিদৰ সৈতে জড়িত হৈ আহিছে।'[৭] আন এটা অধ্যায়ত তেখেতে কৈছেঃ 'আন জাতিয় লোকসকলে তেওঁলোকৰ ঘৰত উৎপাদিত শাক-পাচলি খায়, কিন্তু বেছিভাগ মঙ্গোলীয় গোষ্ঠীৰ দৰে বড়ো সকলে বনৰীয়া গছ, লতা, পাত খায় আৰু সেইবোৰৰ অধিকাংশই ঔষধি।'[৮] যিয়ে নহক আমাৰ অসমত বাস কৰা বিভিন্ন জাতি-জনজাতি সকলেও অনগত সময়ৰ পৰাই একে প্ৰকাৰৰ লোক ঔষধ বিভিন্ন প্ৰকাৰে ব্যৱহাৰ কৰি আহিছে।

এই আলোচনাত ''বড়ো সকলৰ লোক ঔষধি (folk medicine) প্ৰথা আৰু বাস্তব্যবিদ্যা (ecology)'' বিষয়ৰ অধীনত, বাস্তব্যবিদ্যাৰ সহায়ত বড়ো সকলে কেনেদৰে পৰিৱেশৰ পৰা ঔষধ ব্যৱহাৰ কৰি আহিছে আৰু কেনেদৰে ঔষধি উদ্ভিদ বা উদ্ভিদক সুৰক্ষিত বা জীয়াই ৰাখি আহিছে সেই বিষয়ে আলোচনা কৰা হৈছে। বাস্তব্যবিদ্যাৰ সৈতে সম্পৰ্কিত বড়ো সংস্কৃতিৰ বিষয়ে আলোচনা কৰাৰ যথেষ্ট প্ৰয়োজন আছে। সাংস্কৃতিক বিষয় অতি বহল আৰু ইয়াৰ বহুতো শাখা আছে, সেয়েহে এই আলোচনাত পৰম্পৰাগত জ্ঞানৰ সৈতে সম্পৰ্কিত কেৱল এটা সৰু বিষয়হে আলোচনা কৰা হৈছে।

১.২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

বড়ো লোকসকলৰ মাজত প্ৰাচীন কালৰেপৰা লোক ঔষধিৰ (folk medicine) প্ৰথা প্ৰচলিত হৈ আহিছে। প্ৰকৃতিৰ মাজত থাকি ভালপোৱা জনগোষ্ঠী বাবেই তেওঁলোক পৰিৱেশৰ বিভিন্ন উদ্ভিদেৰেই বিভিন্ন ঔষধ তৈয়াৰ কৰি লয়। বৰ্তমান সময়ৰ পৰিৱৰ্তনত যাতে তেওঁলোকৰ লোক ঔষধিৰ প্ৰক্ৰিয়াটো লুপ্ত হৈ নাযায় আৰু সকলোৰে জ্ঞাত হয় এই উদ্দেশ্য আগত ৰাখি এই অধ্যয়ন কৰাহৈছে। ইয়াৰ লগতে এই লোক ঔষধি তৈয়াৰ কৰা উদ্ভিদসমূহৰ চিনাক্তকৰণ আৰু ৰক্ষণাবেক্ষণো জৰুৰী। গতিকে, তেওঁলোকৰ মাজত পৰম্পৰাগতভাৱে প্ৰচলন হৈ অহা এই লোক ঔষধি সমূহৰ ব্যৱহাৰৰ প্ৰথা আৰু পৰিবেশৰ লগত ইয়াৰ সম্পৰ্ক আদি উদ্দেশ্যৰে আলোচনা কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

১.৩ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ আৰু পদ্ধতি ঃ

এক প্ৰকৃতি প্ৰেমী সম্প্ৰদায় হিচাপে বড়ো সকলে বিভিন্ন উদ্ভিদসমূহ জীয়াই ৰখাৰ চেষ্টা কৰে আৰু পৰিবেশৰ সৈতে ঘনিষ্ঠতাও সেয়ে অধিক। এই গৱেষণা পত্ৰখনত প্ৰাচীন কালৰেপৰা বড়োসকলে পৰিবেশৰ পৰা সংগ্ৰহ কৰি অনা উদ্ভিদৰ পৰা তৈয়াৰী ঔষধি, চিকিৎসাৰ প্ৰথা আৰু পৰিবেশৰ লগত তেওঁলোকৰ সম্পৰ্কৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা হৈছে।

এই বিষয়টো অধ্যয়নৰ ক্ষেত্ৰত বৰ্ণনামূলক পদ্ধতি (Descriptive method) আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি (analytical method)-ৰ ব্যৱহাৰৰ জৰিয়তে গোটেই বিষয়টো আলোকপাত কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। এই গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোঁতে গৌণ তথ্যৰ (secondary sources) সহায় লোৱা হৈছে।

১.৪ তথ্য আহৰণৰ উৎস ঃ

বড়ো সমাজত প্ৰাচীন কালৰেপৰাই উদ্ভিদৰ পৰা প্ৰস্তুত কৰা লোক ঔষধি প্ৰচলন হৈ আহিছে। এই লোক ঔষধিগুণযুক্ত উদ্ভিদসমূহৰ বিষয়ে মৌখ্ৰি প্ৰচলনেই বেছি। অৱশ্যে কালীচৰণ ব্ৰহ্মৰ "বোড়োনি জলংগা", ৰেণু বড়োৰ "মুলি জলংগা" আৰ ডাঃ বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ব্ৰহ্ম, শ্ৰী ব্ৰহ্মানন্দ পটোৱাৰী, শ্ৰী হাটি বসুমতাৰী 'বড়োনি মুলি বিফাং- লাইফাং' পুথিখনত বড়োসকলে বিভিন্ন বেমাৰত ব্যৱহাৰ কৰা লোক ঔষধিৰ উল্লেখ আছে। এই আলোচনাৰ ক্ষেত্ৰত গৌণ উৎসৰ (Secondary Source) ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে।

২.১ বড়ো সকলৰ লোক ঔষধিৰ প্ৰথা আৰু বাস্তব্যবিদ্যা ঃ

সাধাৰণতে লোক ঔষধি বুলি ক'লে অনাদিকালৰ পৰা মানুহে ব্যৱহাৰ কৰি অহা প্ৰাকৃতিকভাৱে পোৱা উদ্ভিদৰ পাত, ফুল, ফল, শাখা, বাকলি, শিপা, লতা আৰু জীৱ-জন্তুৰ মল, প্ৰস্ৰাৱ আদিক খাদ্য, মলম ঔষধি হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰাটো বুজায়। R.M. Dorson-য়ে নিজৰ "Folklore and Folk life. An introduction" পুস্তকত লোক ঔষধিৰ বিষয়ে কৈছে - "Folk medicine is related derivatively to the academic medicine of earlier generation. Certain ideas that were once circulating in academic medical circles and now discarded have become part and parcels and now discarded have become part and parcels of the folk medical viewpoint."[৯]

এনেধৰণৰ চিকিৎসাৰ ব্যৱস্থা বৈজ্ঞানিক বা ঔদ্যোগিক প্ৰভাৱৰ আগমনৰ বহু আগতেই বড়ো সমাজত আছিল। গাওঁৰ প্ৰায় প্ৰতিজন প্ৰাপ্তবয়স্ক পুৰুষ আৰু মহিলাৰ স্বাস্থ্য সেৱাৰ বিষয়ে অন্ততঃ কিছু জ্ঞান আছিল। অৱশ্যে, এই ক্ষেত্ৰত আটাইতকৈ বেছি স্বীকৃতিপ্ৰাপ্ত আৰু সন্মানীয় আছিল ওজা বা কবিৰাজ সকল। ওজা বা কবিৰাজসকল বাথৌ ধৰ্মৰ আন ব্যক্তি দৌৰী বা দৌদিনীৰ দৰে মুখ্য ধৰ্মীয় ব্যক্তি। তেওঁলোকে পূজা অৰ্চনাৰ সামগ্ৰীবোৰ তৈয়াৰ কৰি নিয়ম নীতিৰে পূজা অৰ্চনা কৰি তন্ত্ৰ মন্ত্ৰৰ যোগেৰে অসংখ্য দেৱতাসকলক সম্বোধন কৰিছিল আৰু বাথৌ অৰ্চনা, খেৰাই পূজা, গাৰ্জা পূজা আদি পূজাক সফল কৰিছিল। সেই সময়ত বড়ো সকলৰ মাজত বিশ্বাস কৰা হৈছিল যে তেওঁলোক অসাধাৰণ মানুহ আৰু তন্ত্ৰ-মন্ত্ৰৰে যিকোনো কাম কৰিব পাৰে। কাৰোবাৰ পৰিয়ালত ৰোগ বা অসুস্থতাৰ ক্ষেত্ৰত পোনপটীয়াকৈ ওজা বা কবিৰাজ সকলৰ ওচৰলৈ লৈ যোৱা হৈছিল। তেওঁলোকে ৰোগীক লক্ষ্য কৰি কৰা তন্ত্ৰৰ দ্বাৰা যিকোনো লক্ষণ পৰীক্ষা কৰে আৰু তাৰপিছত, পূজা দিয়াৰ লগতে অৰণ্য বা পৰিৱেশৰ পৰা সংগ্ৰহ কৰা ঔষধ খুওৱা হৈছিল আৰু উক্ত উদ্ভিদ বা গছৰ পাত, শিপা আৰু ফলবোৰ বান্ধি দিয়া হৈছিল। বড়ো সকলে কেৱল উদ্ভিদৰ পৰাই ঔষধ সংগ্ৰহ নকৰে, তেওঁলোকে ইয়াক বিভিন্ন জীৱ-জন্তুৰ পৰাও সংগ্ৰহ কৰে।

"শ্ৰী ব্ৰহ্মানন্দ পাটোৱাৰীৰ মতে বিভিন্ন জাতি গোষ্ঠীৰ প্ৰভাৱত জ্ঞানৰ সংক্ৰমণৰ কাৰনে বড়োৰ ৰোগৰ চিকিৎসা আৰু জ্ঞানৰ সংক্ৰমণৰ কাৰণত যদিও আয়ুৰ্বেদিক, তিব্বতীয়, উনানী, হোমিঅ'পেথিক, এলোপেথিক, তান্ত্ৰিক আদিৰ সৈতে কিছু সমান্তৰাল আছে, বেছিভাগ বড়ো সকলৰ চিকিৎসা পদ্ধতি আয়ুৰ্বেদিক আৰু তিব্বতীয় পদ্ধতিৰে কৰা দেখা যায়।"[১০]

R.M. Dorson য়ে লোক ঔষধিক দুই প্ৰকাৰত ভাগ কৰিছে - ১. Natural Folk Medicine (প্ৰাকৃতিক লোক ঔষধি), ২. Mgico-religious folk medicine (যাদু তনা-ধৰ্মীয় লোক ঔষধি)।

প্ৰকৃতিৰ পৰা প্ৰাপ্ত ঔষধ বুলি কলে - কলা জাতীয় কচু, অৰ্জুন গছৰ বাকলি ইত্যাদি। আনহাতে, যাদু টোনা বুলি কলে -তাবীজ পিন্ধা, ঝাৰা ফুকা কৰা আদি কায্যক বুজায়। বড়ো সকলে প্ৰকৃতিৰ পৰা প্ৰাপ্ত ঔষধৰ লগতে যাদু বা ঝাৰা ফুকাৰ দ্বাৰা ৰোগীৰ চিকিৎসা কৰিবলৈ ব্যৱহাৰ কৰা হৈছিল। ক'বলৈ গলে, বড়ো সকলেও এই দুয়োটা পদ্ধতি চিকিৎসাৰ পদ্ধতি হিচাবে ব্যৱহাৰ কৰি আহিছিল।

ডাঃ বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ব্ৰহ্মা, শ্ৰী ব্ৰহ্মানন্দ পাটোৱাৰী, শ্ৰী হাটি বসুমতাৰী 'বড়োনি মুলি বিফাং-লাইফাং' পুথিখনত গছ-গছনিৰ আকাৰ বা সৰু ডাঙৰ চাই ভাগ কৰি বিতং ভাবে আলোচনা কৰি গৈছে।

ইয়াত R.M. Dorsonৰ লোক ঔষধিক ভাগ কৰাৰ দৰে দুই প্ৰকাৰত ভাগ কৰি বড়ো সকলৰ লোক ঔষধি প্ৰথাক আলোচনা কৰা হৈছে।

প্ৰাকৃতিক লোক ঔষধি (Natural Folk Medicine) ঃ

এই প্ৰাকৃতিকভাৱে পোৱা উদ্ভিদবোৰৰ পাত, ফল, বাকলি, থাৰা, শিপা, গোবৰ, গাখীৰ আদি বড়ো সকলে লোক ঔষধ হিচাপে ব্যাপকভাৱে ব্যৱহাৰ কৰি আহিছিল। ইয়াৰে কেইটামান উদাহৰণ স্বৰূপে তলত আলোচনা কৰা হৈছে-

ক) বিশিষ্ট লতাৰ প্ৰজাতি ঃ

এই প্ৰজাতিৰ উদ্ভিদ সাধাৰণতে আন গছবোৰৰ ওপৰত নিৰ্ভৰশীল হৈ থকা অৱস্থাত অৰ্থাৎ পৰজীৱী অৱস্থাত পোৱা যায়। প্ৰয়োজনীয়তাৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি কিছুমান বড়ো লোকে ইয়াক ঘৰলৈ লৈ যায়, ৰোপণ কৰে, সাং তৈয়াৰ কৰে আৰু নিজৰ ঘৰৰ ছাদত ৰাখে। উদাহৰণ স্বৰূপে ঃ

চিমফ্ৰি উদ্ভিদ (পিপলি/Piper longum Linn) ঃ ইয়াক বন্য কঁঠাল বা কঁঠালৰ দৰে দেখা যায়। বড়োসকলে ইয়াৰ পাত, ডালবোৰ আৰু ফলবোৰ ডায়েৰীয়া, জ্বৰ আৰু দুৰ্বলতাৰ দৰে ৰোগ নিৰাময়ৰ বাবে ঔষধ হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰিছিল ।

খিপি বেন্দোং (পাদুৰী লতা/Paederia foetida Linn) ঃ ই দুটা প্ৰজাতিৰ আছে- এটা প্ৰজাতি ঘন (dark) সেউজীয়া হয়। আন এটা প্ৰজাতিৰ পাত আৰু কাণ্ডবোৰ পাতল হয়, আৰু ইয়াৰ পাতৰ আকৃতি একেটা প্ৰজাতিৰ তুলনাত অলপ চুটি আৰু বহল হয়। ডায়েৰীয়া আৰু ডায়েৰীয়া নিৰাময়ৰ বাবে পাতবোৰ গুৰা কৰি ৰান্ধি খুওৱা হৈছিল। বড়ো সকলে কৈছিল যে যদি নিৰাময়কাৰীয়ে ইয়াৰ কাণ্ড আৰু শিপা উলিয়াই আনে আৰু সৰিয়হৰ তেল মিহলাই সেইবোৰত লগাই দিয়ে তেন্তে বিষ দূৰ হয়।

খাইলা (Momordica dioca) ঃ ইয়াক সাধাৰণতে ঘৰুৱা উদ্ভিদ বা জংঘলীয়া ঠাইবোৰত পোৱা যায়। ইয়াৰ ফলটো বুঢ়া আঙুলিৰ দৰে প্ৰায় একে আকাৰৰ। ইয়াৰ ৰং কেঁচা সময়ত সেউজীয়া আৰু পকা হ'লে ৰঙা হয়। মেলেৰিয়া আৰু ডায়েৰীয়াৰ মহামাৰীৰ ক্ষেত্ৰত উদ্ভিদৰ ফল আৰু পাতবোৰ আনি গুৰা কৰি আঞ্জা বনাই ৰোগীক খুৱাইছিল ।

তিয়ঁহ (তিয়ঁহ / Cucumis sativa) ঃ ই এক পানী ভিত্তিক উদ্ভিদ। ইয়াক সাধাৰণতে বড়োসকলে ইয়াৰ পাত আৰু ফলবোৰৰ খেতি কৰি ৰন্ধনৰ দ্বাৰা খায় (ফলটো সতেজভাৱেও খোৱা হয়)। ইয়াৰ পাতত কৰি ৰন্ধাৰ ফলত পিত্ত আৰু পেটৰ বিষ আদি ৰোগৰ পৰা উপশম পোৱা যায়।

খ) শাক-পাচলি আৰু বিবিধ উদ্ভিদঃ সাধাৰণতে এই ধৰণৰ উদ্ভিদ সৰু আৰু সাধাৰণ। এনে বহুতো ঔষধি উদ্ভিদ আমাৰ চাৰিওফালে পোৱা যায়।

ধৰণ ফুল ঃ এই উদ্ভিদ চাপৰ আৰু সৰু হয়। ইয়াৰ পাতবোৰ সৰু আৰু জোপোহা। ইয়াক টিলা বা পথাৰত আৰু ওখ মাটিত বা টিলাত বৃদ্ধি পোৱা পোৱা যায়। ইয়াক কৰি হিচাপেও ৰন্ধা হয়। নাকৰ পৰা ৰক্তক্ষৰণ হ'লে, নাক বন্ধ হ'লে বা চাইনাছ জনিত সমস্যা আঁতৰ কৰিবলৈ ইয়াৰ পাতবোৰ লৈ পিহি আৰু ৰসটো নাকত ৰাখিছিল আৰু ৰোগীয়েও ভাল অনুভৱ কৰিছিল।

মাণ্ডে বা মাণ্ডিয়া পাচলি (কলমৌ শাক /Impmoea aquatica) ঃ ইয়াক বিল বা মুকলি ঠাইত বৃদ্ধি হোৱা দেখা যায়। ইয়াৰ পাতবোৰ প্ৰায় ২ ইঞ্চি বহল আৰু ৩ বা ৪ ইঞ্চি দীঘল। ইয়াৰ ডালবোৰৰ ভিতৰত সুঙা থাকে। ইয়াক সাধাৰণতে বড়ো মহিলাসকলে মাছ, মাংস লগত খাবলৈ লৈ আহিছিল। যদি মল কঠিন হয়, ৰোগীক গৰম সংকোচন দিয়া হৈছিল। যদি ফোঁহাবোৰত মুখ দেখা নাযায়, তেন্তে উদ্ভিদটোৰ ৰস লগোৱা হয়, যাতে ফোঁহাবোৰ দেখা দিয়ে আৰু সোনকালে আৰোগ্য হ'ব পাৰে।

ইলাচী (এলচি শাক/enhydra fluctuance) ঃ এই উদ্ভিদটো বড়ো মহিলাসকলে বিল বা দঁ স্থানৰ পৰা চিঙি আনিছিল। এইটোও এক প্ৰকাৰৰ পাচলি যাক ৰন্ধা হয়। ইয়াক কাহ আৰু পানীলগা নিৰাময় কৰিবলৈ ব্যৱহাৰ কৰা হৈছিল। ইয়াৰ পাত আৰু কাণ্ডৰ পৰা উলিওৱা ৰস ৰাতিপুৱা আৰু সন্ধিয়া খাবলৈ দিয়া হৈছিল যদি কাৰোবাৰ তেজ দূষিত হয়। এই পাচলিটো ডেগলিনৰ দ্বাৰা বগা চন্দন পাউডাৰৰ সৈতে মিহলি কৰা হৈছিল আৰু জণ্ডিচ নিৰাময় কৰিবলৈ সেৱন কৰা হৈছিল, যদিও তেওঁ সৰু আইত আক্ৰান্ত আছিল।

লাজিসু (নিলাজী বন/Mimusa pudica) ঃ ই হৈছে জোপোহা পাত আৰু পাত থকা মাটিত বাস কৰা জোপোহা। পাত আৰু ডালবোৰ যেতিয়া চুই দিয়া হয় বা বতাহত লৰ-চৰ হয় তেতিয়াও কাঁইটযুক্ত হয়। ইয়াৰ পাত, কাণ্ড আৰু শিপা বড়ো সকলে ঔষধ হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰিছিল। যদি কাৰোবাৰ গাত ডাঙৰ ডাঙৰ ঘা হৈছিল, তেন্তে ইয়াৰ পৃষ্ঠভাগ কপাহৰ ফাকুৰে ঘঁহি ঘাটো সোনকালে আৰোগ্য কৰা হৈছিল।

থুণ্ঠিনি বা দাওশ্ৰি আইথিং (থুণ্ঠিনি শাক/ Oldenladia corymbose) ঃ ই এক ৰসাল বনৌষধি উদ্ভিদ আৰু গ্ৰীষ্মকাল আৰু শীতকালতো পোৱা যায়। ইয়াৰ পাত, শাখা বা ডাল আৰু শিপা সকলোবোৰ বড়ো সকলে ঔষধ হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰিছিল। ইয়াক প্ৰধানকৈ বিভিন্ন ঔষধৰ সৈতে টাইফয়েডৰ চিকিৎসাত ব্যৱহাৰ কৰা হৈছিল।

সামব্ৰাম গুফুৰ (নহৰু / Allium sativum) ঃ ইয়াক সাধাৰণতে বড়ো সকলে মাংস ৰন্ধাৰ সময়ত ব্যৱহাৰ কৰিছিল। ইয়াৰ লগতে চৰ্দি, হুপিং কাহ, ডিঙিৰ বিষ আৰু গাঁঠি আৰু

হাড়ত বিষ হ'লে উতলাই তেল বা সৰিয়হৰ তেল গৰম কৰি লগোৱা হৈছিল। (ভূতৰ পৰা নিজকে ৰক্ষা কৰিবলৈ বড়ো সকলে লগত লৈ ফুৰিছিল)।

গ) **সৰু গছ ঃ** সৰু গছবোৰ সাধাৰণতে ঘৰুৱা উদ্ভিদ বা জোপোহা আৰু পথৰ কাষত দেখা যায়। এনে সৰু প্ৰকাৰৰ উদ্ভিদবোৰো বড়ো সকলে ঔষধ হিচাপে ব্যাপকভাৱে ব্যৱহাৰ কৰিছিল।

উদাহৰণস্বৰূপে, নৰ্চিং ফিসা (সৰু নৰসিং/Murraya SP) ঃ ই প্ৰায় 8/9 ফুট ওখ এক চিৰস্থায়ী উদ্ভিদ। ইয়াৰ পাতবোৰ নিমৰ দৰে সৰু সৰু থাকে। ইয়াৰ পাতবোৰত সুগন্ধি থাকে। ইয়াক সাধাৰণতে বড়োসকলে মাংস আৰু মাছৰ সৈতে পৰিৱেশন কৰে। পেটৰ ৰোগ বা পাচনশক্তি হ্ৰাস হোৱাৰ ফলত মাংসৰ সৈতে কৰি ৰন্ধাটো সুস্থ হৈ পৰিব পাৰে। ইয়াৰ কাৰণ হ'ল ই পেটত গেছ গঠনৰ পৰা উপশম দিয়ে ঘা আৰু পাচন উন্নত কৰে।

এন্দা (এৰা) ঃ ৰঙা প্ৰজাতিৰ এৰা গছৰ পাত, আঠা আৰু মূলবোৰ বড়ো সকলে ঔষধ হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰিছে। নাকৰ পৰা ৰক্তক্ষৰণ হলে নাকৰ গহ্বৰত ভৰাই দিছিল। ইয়াৰ কাৰণ হৈছে ই ৰক্তক্ষৰণ প্ৰতিৰোধ কৰে। দাঁতত থকা কীটাণু নাশ কৰিবলৈ বড়োসকলে এই ঔষধি ব্যৱহাৰ কৰিছিল। বৰ্ষা ঋতুত যদি হাত বা ভৰিৰ আঙুলি পানীৰে আক্ৰান্ত হোৱা ভৰি বা হাতৰ আঙুলীৰ মাজৰ ঘা বোৰতো এই ঔষধিৰ প্ৰয়োগ কৰা হৈছিল।

ৰখ্‌লা (কলা দালি) ঃ ইয়াক প্ৰায়ে বড়োসকলে শস্য হিচাপে খেতি কৰে আৰু ইয়াৰ বীজবোৰ বড়োসকলে কাড়ি ৰান্ধি খায়। জণ্ডিচৰ ক্ষেত্ৰত, পাতবোৰ পিহি পেলোৱা হয় আৰু ৰাতিপুৱা খালী পেটত ৰস খোৱা হয়। জণ্ডিচৰ বাবে ই এক ভাল ঔষধ।

ঘ) **ডাঙৰ গছ ঃ** বড়ো সকলে আমাৰ চাৰিওফালে বৃদ্ধি পোৱা কিছুমান ডাঙৰ গছৰ পৰাও ঔষধ উলিয়াইছিল। উদাহৰণস্বৰূপে, আমলখি ঃ এই ফলবিধ বড়োসকলে ঔষধ হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰিছে। যদি চকু ৰঙা পৰে, প্ৰস্ৰাৱৰ সময়ত জ্বলন অনুভৱ হয়, তেন্তে ফলটো পিহি পেলোৱা হয় আৰু ৰসটো পান কৰা হয়। চুলি সৰিলেও ইয়াৰ ফলবোৰ খোৱা হয় আৰু চুলিত লগোৱা হয়। ই বড়ো সকলৰ এক গুৰুত্বপূৰ্ণ ঔষধি উদ্ভিদ।

সৌৰা ঃ ইয়াৰ গছৰ পাতবোৰ কিছু পৰিমাণে বহল আৰু চুটি। জণ্ডিচ ৰোগীক ইয়াৰ পাতবোৰ পিহি ৰাতিপুৱা ৰস কৰি খোৱাৰ পৰামৰ্শ দিয়া হৈছিল। বড়ো সকলে দাঁত ঘঁহিবৰ বাবেও ইয়াৰ ঠানি ব্যৱহাৰ কৰিছিল।

ডুৰু ঃ এইটো এড়া পাতৰ দৰে এটা বহল পাত থকা উদ্ভিদ। ইয়াৰ ফলবোৰ বড়ো সকলে ঔষধ হিচাপেও ব্যৱহাৰ কৰিছে। যৌন সংক্ৰমিত ৰোগ বা বগা স্ৰাৱ হোৱাৰ সময়ত ইয়াৰ ফলবোৰ ৰোগ নিৰাময়ৰ বাবে ব্যৱহাৰ কৰা হৈছিল।

অৰ্জুন (অৰ্জুন/Terminalia arjun) ঃ এই উদ্ভিদৰ পাত, বাকলি আৰু শিপা বড়োসকলে ঔষধ হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰিছে। যেতিয়া হাড় ভাগে তেতিয়া সেই ঠাইত অৰ্জুনৰ ছাল আৰু নহৰু গুৰি কৰি বান্ধিলৈ তাত লগোৱা হৈছিল। শৌচ কৰোঁতে তেজ ওলাই আহিলে অৰ্জুনৰ গছৰ ছাল ৰোগীক ছাগলীৰ গাখীৰেৰে মিহলাই খুওৱা হৈছিল ।

চিলিখা (শিলিখা/Terminalia Chebula) ঃ চিলিকা এক গুৰুত্বপূৰ্ণ ঔষধি উদ্ভিদ। ইয়াৰ ফলসমূহ চিকিৎসাৰ ক্ষেত্ৰত বিশেষভাৱে উল্লেখযোগ্য। মলদ্বাৰৰ ৰক্তক্ষৰণ বা ৰক্তক্ষৰণৰ ক্ষেত্ৰত ইয়াক খোৱাৰ যোগ্য কৰি তুলিবলৈ ফলটো পিহি গাখীৰ আৰু গুড়ৰ সৈতে মিহলি কৰি খুওৱা হৈছিল। মানুহৰ কফ বেমাৰ হলে চিলিকাৰ গুৰি নিমখৰ সৈতে মিহলি কৰি পান কৰা হৈছিল।

যাদু তনা - ধৰ্মীয় লোক ঔষধি (Mgico-religious folk medicine) ঃ

বিভিন্ন মানৱ জাতিৰ সভ্যতাৰ আৰম্ভণিৰ পৰাই বা চিন্তা চৰ্চা কৰি সংসাৰ খাবলৈ জনাৰ পৰাই প্ৰকৃতিত সংঘটিত হোৱা অলৌকিক ঘটনাবোৰ চকুৰে নেদেখা কোনোবা শক্তিশালী দেৱ-দেৱতাসকলৰ প্ৰভাৱত হোৱা বুলি ভবা হৈছিল। এনে ধৰণৰ বিশ্যস বড়ো সকলেও কৰিছিল। সেইকাৰণে কেতিয়াবা কোনোবা অকস্মাৎ অসুস্থ হৈ পৰিলে বা আক্ৰমণাত্মক ৰোগত পৰে তেন্তে কোনোবা দেৱতাই খং কৰিছে বুলি বিশ্বাস কৰিছিল আৰু জীৱ জন্তুৰ বলি দি, কণি, তামোল পাণ আদি অৰ্পন কৰি ৰোগৰ গৰাকী দেৱতাক পূজা কৰিছিল। মন কৰিবলগীয়া এটা গুৰুত্বপূৰ্ণ কথা, "বড়ো ওজা সকলে ৰোগীক সুস্থ কৰিবলৈ বনৰীয়া ঔষধি ব্যৱহাৰ কৰাৰ আগতে কোনো দেৱতাৰ বেয়া প্ৰভাৱ অথবা খেতৃ আছে নে নাই পৰীক্ষা কৰি লৈ। দেৱতাৰ বেয়া প্ৰভাৱৰ লক্ষণ বা সংকেত পোৱাৰ লগে লগে তেওঁলোকে সেই দেৱতাক পূজা অৰ্চনা কৰে আৰু তাৰ পিছতহে বনৰীয়া ঔষধ দিয়ে। দেৱতাক প্ৰাৰ্থনা কৰি এই ৰোগ নিৰাময় হোৱাৰ কোনো বৈজ্ঞানিক প্ৰমাণ নাই।"[১১] তেনেকুৱা বেমাৰৰ চিকিৎসা কেইটামান উদাহৰণ স্বৰূপে

তলত আলোচনা কৰা হ'ল ঃ

ক) **নিৰন্তৰ পেটৰ বিষ** ঃ বড়ো সকলৰ মতে, দেৱতা কুবিৰ অতি বেয়া। এই দেৱতাই যাকে তাকে যত পায় তাক ধৰে আৰু পেটত সহ্য কৰিব নোৱাৰা বিষ কৰোৱাই। যদি কোনোবাই হঠাতে পেটত এনে অসহনীয় বিষ অনুভৱ কৰে, তেওঁলোকে নিৰ্ধাৰিত নিয়ম অনুসৰি এই দেৱতাক পূজা কৰে। এই পূজাত এখন কলপাতত আসন বহুৱায়, তামোল পাণ অৰ্পণ কৰে, এটা কুকুৰা চৰাই এৰি দিয়ে অথবা কুকুৰা চৰাইটো বলি দিয়ে।

খ) **ক্ষেত্ৰ** ঃ বড়োসকলে বিশ্বাস কৰে যে দুষ্ট দেৱতাৰ কাৰ্য্যকলাপৰ বাবে নিশা শুলে হাতী, ঘোঁৰা, বাঘ আৰু ভালুকক লগ পোৱাৰ দুঃস্বপ্ন কঢ়িয়াই আনে। স্বৰ্গলৈ যোৱা বা উৰণ কৰাৰ সপোন দেখা যায়। বড়ো লোকসকলে ইয়াক এটা অঞ্চল বুলি কয়। এই ধৰণৰ কাৰণত মানুহৰ শৰীৰ শুকাই যায়। ৰক্তহীন হৈ পৰে। যদি এনেকুৱা হয়, তেন্তে তেওঁলোকৰ নিজৰ নিয়ম অনুসৰি, ক্ষেত্ৰৰ প্ৰকাৰৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰি, অগাৰ্বত্তি, খেৰৰ বুথা, ঘৰৰ কুঠাৰ গাতত বাস কৰা বাদুলি, ইন্দি গছৰ ডাল, দম্ব্ৰো গছৰ ডাল, সিঁদুৰ ইত্যাদি সংগ্ৰহ কৰা হয় আৰু দেৱতাক অৰ্পণ কৰাৰ লগতে ওজায়ে মন্ত্ৰ গায়।

গ) **মানুহৰ মুখ লগা** ঃ যদি ব্যক্তিজনৰ শৰীৰত কোনো ঘাঁ হয় আৰু ঘাঁটো স্বাভাৱিকতকৈ অধিক হয়, তেন্তে বড়ো সকলে বিশ্বাস কৰে যে যদি শিশুটি খাদ্য খোৱাৰ লগে লগে বমি কৰে, শৌচ কৰোঁতে অতি গন্ধ মল ওলাই তেতিয়া শিশুৰ মুখ লগা বুলি ভবা হয়। ইয়াক নিৰাময় কৰিবলৈ চিকিৎসকে সৰিয়হৰ বীজ, পুৰণি ঝাৰুৰ খাটি, শুকান জলকীয়া আদি এটা বাচনত লৈ আৰু ইয়াক ৰোগীৰ নাম লৈ ৰোগীৰ মুখৰ আগত 5/7 বাৰ ঘুৰাই আৰু তাৰ পিছত সেই বস্তু বোৰ ৰাস্তাৰ (তিনি আলি) মাজত পেলাই থৈ দিয়ে।

ইয়াৰ উপৰিও বড়ো সকলৰ মাজত বহুতো শাৰীৰিক চিকিৎসা পদ্ধতি দেখা যায়, যেনে ওজাই মন্ত্ৰ মাৰি ঝাপ পিন্ধোৱা, তাবিশ পিন্ধোৱা ইত্যাদি।

বড়ো সকলে এই ঔষধি গছ-গছনিবোৰ অতি পবিত্ৰ মানিছিল। সেয়ে এই ঠাইবোৰত অপবিত্ৰ বস্তু পেলাই লেতেৰা নকৰে আৰু অবাঞ্ছিতভাৱে পাত ফলবোৰ চিঙি পেলোৱা নাছিল। বড়ো সকলে বিশ্বাস কৰিছিল যে এই গছবোৰ অপবিত্ৰ কৰিলে উদ্ভিদবোৰ সোনকালে মৰি যায়। বড়ো লোকৰ ঔষধৰ ব্যৱহাৰ কেৱল উদ্ভিদৰ সৈতে সম্পৰ্কিত নহয়। প্ৰায়ে দেখা যায় যে ছাগলী, গৰুৰ গাখীৰ আৰু মৌ ৰস মিশ্ৰণ কৰি লোক ঔষধ প্ৰস্তুত কৰা হয়। ইয়াৰ অৰ্থ এইটোৱেই যে তেওঁলোকে এই উদ্ভিদবোৰক যিমান পাৰি জীয়াই ৰাখিবলৈ চেষ্টা কৰাৰ লগতে জীৱ-জন্তুবোৰক লালন-পালন কৰিছিল। এইটো মন কৰাটো গুৰুত্বপূৰ্ণ যে বড়ো সকলে বস্তিৰ কোনা ঠাই, নদ-নদীৰ পানী জমা হোৱা ঠাই, কবৰস্থান আদিত দুপৰীয়াৰ সময়ত যোৱাতো মানা কৰে আৰু তাত চিকাৰ কৰিবলৈ নাযায়। তেওঁলোকে বিশ্বাস কৰে যে সেইবোৰ ঠাইত দেৱতাই জীৱ জন্তুৰ স্বৰূপ লৈ জিৰণি লয় আৰু তাত চিকাৰ কৰিবলৈ গলে দেৱতাবিলাকে ধৰি হানি কৰে। এনে নিয়মাৱলী মানি চলাৰ বাবে বড়ো মানুহ আৰু উদ্ভিদৰ মাজত পাৰস্পৰিক সম্পৰ্ক থকা দেখা গৈছিল। সেয়েহে, তেওঁলোকৰ চিকিৎসাৰ অনুশীলনৰ অভিজ্ঞতা আৰু ইয়াৰ সৈতে জড়িত বিশ্বাসে বড়োসকলৰ সাংসাৰিক জীৱনক প্ৰতিফলিত কৰে। অৰ্থাৎ, মানুহে জীয়াই থকাৰ সময়ত পৰিৱেশ বা পৰিৱেশৰ সৈতে নিজকে সুসংগত কৰি ৰাখিবলৈ কৰা ৰীতি-নীতি আৰু অনুশীলনবোৰে বড়ো সংস্কৃতিক প্ৰতিফলিত কৰে। গতিকে আমি ক'ব পাৰোঁ যে সংস্কৃতি আৰু পৰিৱেশৰ মাজত সঁচাই এক গভীৰ সম্পৰ্ক আছে।

৩.১ সামৰণি ঃ

বড়ো সকলে প্ৰকৃতিৰ মাজত থাকি জীৱন যাপন কৰি আহিছে । সেয়েহে তেওঁলোকে খাদ্য সামগ্ৰীসমূহ এই বনভূমিৰ পৰা সংগ্ৰহ কৰিছিল। সেয়েহে তেওঁলোকে ঔষধি উদ্ভিদ চিনাক্ত কৰিব পাৰিছিল আৰু তেওঁলোকৰ ৰোগৰ ক্ষেত্ৰত সেইবোৰ ব্যৱহাৰ কৰিবলৈ শিকিছিল । কিন্তু এইটো এদিনতে হোৱা নাই, পৰিৱেশৰ বিভিন্ন পৰিস্থিতিৰ সন্মুখীন হৈ তেওঁলোকে নিজৰ সমস্যা সমাধানৰ বাবে কিছুমান সমাধান বিচাৰি উলিয়াইছিল আৰু নিজৰ অভিজ্ঞতাৰে সমাধান কৰিছিল। অন্য অৰ্থত ক'বলৈ গ'লে, তেওঁলোকে অন্ততঃ বহুত সময় ঔষধৰ সেৱন আৰু ব্যৱহাৰৰ অভিজ্ঞতাবোৰ লাভ কৰিছিল। পৰম্পৰাই হওক বা সংস্কৃতিয়েই হওক বড়োসকলে বিভিন্ন উদ্ভিদৰ ব্যৱহাৰ পূজা-পাতল,ঔষধি,খাদ্য হিচাপে কৰিছিল বাবে সেই উদ্ভিদসমূহৰ সংৰক্ষণো কৰিছিল আৰু এনে সংৰক্ষণে আমাৰ প্ৰকৃতিৰ ৰক্ষাত যথেষ্ট সহায় কৰে। কিন্তু বৰ্তমান সময়ত প্ৰকৃতিৰ সৈতে মানুহৰ সম্পৰ্ক কমি গৈছে। আগৰ দৰে গছৰ ছাঁত জিৰাবলৈও গছ-গছনিৰ সংখ্যাই কমি গৈছে। ঔষধি গুণযুক্ত উদ্ভিদও সংৰক্ষণৰ অভাৱত হেৰাই গৈছে।

বৰ্তমানৰ বড়ো সকলৰ মাজত এনে প্ৰাকৃতিক লোকঔষধৰ ব্যৱহাৰ অতি বিৰল হৈ আহিছে। এই উদ্ভিদবোৰ পৰ্যাপ্তভাৱে ৰক্ষণাবেক্ষণ বা মূল্য নিৰ্ধাৰণ কৰিব নোৱাৰাৰ বাবেও কিছুমান হেৰাই গৈছে। ভৱিষ্যত প্ৰজন্মই সেই উদ্ভিদবোৰ চিনি নাপাবও পাৰে। অৰ্থাৎ ইয়াৰ লোক চিকিৎসা আৰু ঔষধৰ প্ৰথা লুপ্ত হৈ আহি আছে। সুস্থ পৰিবেশে স্বাস্থ্যও সুস্থ ৰাখে। উদ্ভিদৰ গুনাগুনৰ কথা নজনাৰ বাবে বৰ্তমান সময়ত বহুত উদ্ভিদ কাটি নষ্ট কৰা হৈছে আৰু ফলস্বৰূপে বহুত উদ্ভিদ লুপ্তপ্ৰায় হৈ আহিছে। মানুহে ঘৰৰ কাষতে পৰিবেশৰ পৰা বিচাৰি পোৱা মূল্যৱান উদ্ভিদৰ পৰা উৎপন্ন কৰিব পৰা খাদ্যৰ ব্যৱহাৰ নকৰি পেকেজিং খাদ্যৰ ওপৰত নিৰ্ভৰশীল হৈ পৰিছে। উদ্ভিদৰ ঔষধি গুণ নজনাৰ বাবে আৰু চিনি নোপোৱাৰ বাবে সৰু সুৱা বেমাৰ আজাৰৰ পৰা বাচিবলৈ ঘৰুৱা বন ঔষধ ব্যৱহাৰ কৰিব নোৱাৰে। গতিকে আমি নতুন প্ৰজন্মৰ মাজত এই মূল্যবান উদ্ভিদ বোৰৰ ৰক্ষণাবেক্ষণৰ বাবে সজাগতাৰ সৃষ্টি কৰিব লাগিব। ❑

Bibliography :

Baruah, S.L. A comprehensive History of Assam. New Delhi: Indian Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd., 2019. English
Basumatary, Dr. Phukan. Phwrwnglai. B.D.T.A.: Bodo Teacher Association, 2021. Bodo.
Brahma, Aleen & Brahma Biswajit. Bodo-Garo Rao Hanja. N.L. Publications, 2013. Bodo.
Brahma, Dr. Birendra Kumar. Patgiri, Mr. Brahmannanda. Basumatary & Mr. Hati. Boroni Muli Bifang Laifang. Bodo Publication Board, Bodo Shahitya Sabha, 2023, Page- xi. Bodo
Brahma Kalicharan, N.L. Publication, Kokrajhar, B.A.C., Assam, 2001.Bodo
Dorson, R.M. Folklore and Folk life an introduction, London. The University of Chikago,1972. English
Endle, Rev. Sidney. The Kacharis. Bina Library, 2012, page- XVI. English.
Gait, Sir Edward. A History of Assam. panbazar, Guwahati: Grantham , 2017, 299. English.
Narzi, Bhaben. Boro Kocharini Somaj Arw Harimu. Kajalgaon:. Chirang Publication Board, 2014. 189. Bodo.
Odum,Eugene. Fundamental of Ecology. Thomson Brooks/Cole, 2005. English.
Steward, Julian. Theory of Culture change the methodology of multi

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

অসমীয়া আৰু ওড়িআ ভাষাৰ ক্ৰিয়াৰ 'সম্ভাব্য কাল' ঃ এটি তুলনাত্মক অধ্যয়ন

অৰূপ দাস

গবেষক, আধুনিক ভাৰতীয় ভাষা আৰু সাহিত্য অধ্যয়ন বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৯৯৫৪৩৮১৯২২
Aruppp745@gmail.com

ড° জ্যোৎস্না ৰাউত

অধ্যাপক, আধুনিক ভাৰতীয় ভাষা আৰু সাহিত্য অধ্যয়ন বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৯৭০৬৮৮০০৮৮

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

ইন্দো-ইউৰোপীয় ভাষা পৰিয়ালৰ এটা প্ৰধান ভাগ হৈছে ভাৰতীয় আৰ্য। ভাৰতীয় আৰ্য ভাষাই প্ৰাচীন আৰু মধ্য স্তৰ পাৰ কৰি আধুনিক স্তৰত বহুকেইটা ভাষাৰ জন্ম দিছে। তাৰে ভিতৰত অসমীয়া, ওড়িআ, হিন্দী, বাংলা, পাঞ্জাবী, মাৰাঠী, গুজৰাটী, ৰাজস্থানী, ভোজপুৰী, মৈথিলী, নেপালী, সিন্ধী অন্যতম। অসমীয়া আৰু ওড়িআ দুটা অন্যতম আধুনিক ভাৰতীয় আৰ্য ভাষা। পূৰ্ব ভাৰতবৰ্ষৰ দুটা ভিন্ন পৰিৱেশত সময়ৰ লগত দুয়োটা ভাষাই স্বকীয় বৈশিষ্ট্যৰ সৈতে বিকাশ লাভ কৰিছে। যাৰ ফলত দুয়োটা ভাষাৰ মূল সংস্কৃত ভাষাৰ লগত সাদৃশ্য থকাৰ লগতে বহুতো বৈসাদৃশ্যও দেখা যায়। দুয়োটা ভাষাতে পৰিলক্ষিত হোৱা এই স্বকীয় বৈশিষ্ট্য বা জতুৰা প্ৰকাশৰীতিৰ বাবে দুয়োটা ভাষাই স্বতন্ত্ৰ ভাষা হিচাপে গঢ় ল'বলৈ সক্ষম হৈছে। ভাষাৰ ধ্বনিতত্ত্ব, ৰূপতত্ত্ব, বাক্যতত্ত্ব আদি সকলো ক্ষেত্ৰতে এই বৈশিষ্ট্যসমূহ পৰিলক্ষিত হয়। আন আন নব্য ভাৰতীয় আৰ্য ভাষাসমূহৰ দৰে অসমীয়া আৰু ওড়িআ ভাষাতো সম্ভাব্য কালৰ ব্যৱহাৰ দেখা যায়। অসমীয়া আৰু ওড়িআ দুয়োটা ভাষাতে সম্ভাব্য কালৰ প্ৰয়োগত সুকীয়া বৈশিষ্ট পৰিলক্ষিত হয়। অসমীয়া ভাষাত সম্ভাব্য কালক অতীত কালৰে এটা ভাগ বুলি ধৰা হয়। যিহেতু অসমীয়া ভাষাত সম্ভাব্য কালৰ ক্ৰিয়া সাধন কৰিবলৈ নিৰ্দিষ্ট কালবাচক বিভক্তি নাই। কিন্তু ওড়িআ ভাষাবিদসকলৰ মতে ওড়িআ ভাষাত সম্ভাব্য কাল এটি স্বতন্ত্ৰ কালবাচক ৰূপ। এই প্ৰবন্ধটিত এই বিষয়ে আলোচনা কৰাৰ লগতে অসমীয়া আৰু ওড়িআ ভাষাত সম্ভাব্য কালৰ ৰূপ গঠনত থকা সাদৃশ্য আৰু বৈসাদৃশ্যসমূহ আলোচনা কৰাৰ চেষ্টা কৰা হ'ব।

বীজ শব্দ ঃ

অসমীয়া, ওড়িআ, সম্ভাব্য কাল, সম্ভাব্য অতীত, তুলনা।

অৱতৰণিকা ঃ

আধুনিক ভাৰতীয় আৰ্য ভাষাসমূহৰ ভিতৰত অসমীয়া আৰু ওড়িআ ভাষা অন্যতম। দুয়োটা ভাষাই সংস্কৃত, প্ৰাকৃত, অপভ্ৰংশৰ মাজেদি আহি বৰ্তমান ৰূপ লাভ কৰিছে। পূব-মাগধী অপভ্ৰংশৰ পৰা জন্মলাভ কৰি দুটা ভিন্ন অঞ্চলত বিকশিত হোৱা ভাষা দুটাক তুলনা কৰিলে দেখা যায় দুয়োটা ভাষাই উমৈহতীয়াভাৱে সংস্কৃত, প্ৰাকৃত, অপভ্ৰংশৰ কিছুমান বৈশিষ্ট্য ৰক্ষা কৰাৰ লগতে বহুতখিনি স্বকীয় বৈশিষ্ট্য লাভ কৰিছে। এই বৈশিষ্ট্যসমূহ ধ্বনিতত্ত্ব, ৰূপতত্ত্ব, বাক্যতত্ত্ব সকলো ক্ষেত্ৰতে বিদ্যমান। তুলনাত্মক

ভাষাবিজ্ঞানত এনে সমগোত্ৰীয় দুটা বা ততোধিক ভাষাৰ ধ্বনিগত, ৰূপগত, বাক্যগত, অৰ্থগত আদি দিশত পৰস্পৰৰ সম্পৰ্ক দেখুৱাই অধ্যয়ন কৰা হয়। ভাষা এটাৰ ৰূপতাত্ত্বিক দিশটোৰ বিচাৰ কৰিবলৈ হ'লে ভাষাটোৰ ক্ৰিয়াপদৰ অধ্যয়ন অপৰিহাৰ্য। কাৰণ ক্ৰিয়াপদৰ লগত ক্ৰিয়ামূল বা ধাতু, ক্ৰিয়াৰ প্ৰকাৰ, ক্ৰিয়াৰ কাল, ভাব, বাচ্য আৰু ক্ৰিয়াবিভক্তি আদি বিষয়সমূহ জড়িত হৈ থাকে। ক্ৰিয়াৰ কালৰ ভিতৰত এটি আলোচনাৰ বিষয় হ'ল সম্ভাব্য কাল। নব্য ভাৰতীয় আৰ্য ভাষাসমূহৰ প্ৰায়বোৰতে সম্ভাব্য কালৰ প্ৰয়োগ দেখা যায়। অসমীয়া ভাষাৰ বাহিৰে আনবোৰ পূৰ্ব-মাগধী ভাষাত সংস্কৃত কৃদন্ত -অন্ত-, -অয়ন্ত- ৰ পৰা বিৱৰ্তিত ৰূপেই সম্ভাব্যকালৰ ক্ৰিয়াৰূপ সাধনত ব্যৱহৃত হয়। অসমীয়া ভাষাত '-হেঁতেন' পৰসৰ্গ বা অনুপদ যোগ কৰি সম্ভাব্য কালৰ ক্ৰিয়াৰূপ সাধন কৰা দেখা যায়। এই প্ৰবন্ধটিৰ জৰিয়তে অসমীয়া আৰু ওড়িআ ভাষাত সম্ভাব্যকালৰ ক্ৰিয়াৰূপৰ গঠন আৰু প্ৰয়োগৰ তুলনাত্মক বিশ্লেষণ আগবঢ়োৱাৰ চেষ্টা কৰা হ'ব।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

তুলনাত্মক অধ্যয়নৰ জৰিয়তে অসমীয়া আৰু ওড়িআ ভাষাৰ ক্ৰিয়াৰ 'সম্ভাব্য কাল'ৰ গঠন আৰু ৰূপসাধনৰ সাদৃশ্য আৰু বৈসাদৃশ্যসমূহ বিচাৰ কৰাই এই অধ্যয়নৰ মূল উদ্দেশ্য হ'ব।

অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

অসমীয়া আৰু ওড়িআ ভাষাৰ ক্ৰিয়াৰ 'সম্ভাব্য কাল'ৰ গঠনৰ আলোচনাৰ বাবে তুলনাত্মক পদ্ধতিৰ ব্যৱহাৰ কৰা হ'ব। প্ৰয়োজন সাপেক্ষে বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ ব্যৱহাৰ কৰা হ'ব।

অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

যিকোনো ভাষাৰ ক্ৰিয়াপদৰ লগত বিভিন্ন গুৰুত্বপূৰ্ণ বিষয় জড়িত হৈ থাকে। এই অধ্যয়নটিত কেৱল অসমীয়া আৰু ওড়িআ ভাষাৰ ক্ৰিয়াপদৰ 'সম্ভাব্য কাল'ৰ বিষয়ে আলোচনা কৰ হ'ব।

অসমীয়া ভাষাৰ সম্ভাব্য কাল ঃ

অসমীয়া ভাষাত ক্ৰিয়াৰ কালক সাধাৰণতে তিনিটা ভাগত ভগাব পাৰি। বৰ্তমান কাল (Present Tense), অতীত কাল (Past tense) আৰু ভবিষ্যত কাল (Future Tense)। অসমীয়া ভাষাত অতীত কালৰে এটা ভাগ হৈছে 'সম্ভাব্য অতীত (Conditional Past) কাল। অতীতত কৰ্ম এটা সংঘটিত হোৱাৰ সম্ভাবনা আছিল কিন্তু সংঘটিত নহ'ল, তাক সম্ভাব্য অতীত কালেৰে বুজাব পাৰি। গঠনৰ ফালৰ পৰা 'সম্ভাব্য অতীত' কালৰ কোনো স্বতন্ত্ৰ কালবাচক বিভক্তি নাই। ক্ৰিয়ামূলৰ পাছত অতীত কালবাচক '-ইল-' বিভক্তি আৰু পুৰুষবাচক প্ৰত্যয় যোগ হোৱাৰ পাছত '-হেঁতেন' পৰসৰ্গ বা অনুপদ অব্যয় যোগ কৰি সম্ভাব্য অতীত কালৰ ৰূপ সাধন কৰা হয়। যেনে- মই কৰিলোঁহেঁতেন।

সম্ভাব্য অতীত (Conditional Past) ঃ নব্য ভাৰতীয় আৰ্য ভাষাসমূহত সম্ভাব্য কালৰ প্ৰয়োগ দেখা যায়।কিন্তু প্ৰতিটো ভাষাতো ইয়াৰ প্ৰয়োগ সুকীয়া। অসমীয়া ভাষাত কোনো কাম অতীত কালত কৰাৰ সম্ভাৱনা আছিল, কিন্তু সেই কাল উকলি গৈছে, ক্ৰিয়া কৰা নহ'ল, এনে অৰ্থ প্ৰকাশ কৰে। সেইবাবে ইয়াক সম্ভাব্য অতীত কাল বুলি কোৱা হয়। উদাহৰণ- সি অহাহেঁতেন, মই গ'লোঁহেঁতেন। (If He had come, I would have gone)

অৰ্থাৎ কোনো অতীতৰ এক সময়ত সি অহাৰ কথা আছিল সেই সময়ত সি অহা হ'লে মই তাৰ লগত গ'লোঁহেঁতেন যিহেতু সি সেই সময়ত নাহিল, কামটো নহ'ল।

কাৰ্যটো সম্পন্ন হোৱাটো আন এটা কাৰ্যৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰে। সম্ভাব্য অতীত কালৰ বাক্য দুটা অংশত বিভক্ত। প্ৰথম অংশত আ প্ৰত্যায়ন্ত নিত্যকৃৎ বা কৃদন্ত বিশেষণৰ পিছত হেঁতেন বা হ'লে প্ৰত্যয় যোগ কৰি ভূত অসমাপিকা প্ৰকাশ কৰা হয়।

তুমি অহাহেঁতেন/ হ'লে (If You had come...)

সি ভালকৈ পঢ়াহেঁতেন/ হ'লে (If He had Studied well..)

সি সময়ত কামটো কৰাহেঁতেন/ হ'লে (If he had done the work at time...)

ভূত অসমাপিকাৰ পাছত বাক্যটোৰ দ্বিতীয় অংশ সম্ভাব্য ভূতৰ ব্যৱহাৰ হয়। দ্বিতীয় অংশটোতো -হেঁতেন প্ৰয়োগ কৰা হয়। কেৱল দ্বিতীয় অংশত অতীত কালৰ ক্ৰিয়াপদৰ পাছত -হেঁতেন যোগ দিয়া হয়। দ্বিতীয় অংশটোৱে বাক্যটো শেষ হোৱা বুজায়। উদাহৰণ-

- সি অহাহেঁতেন মই গ'লোহেতেন (If he had come, I would have gone)

- সি ভালকৈ পঢ়াহেঁতেন / হ'লে পৰীক্ষাত পাছ কৰিলেহেঁতেন। (If he had studied well, He would have passed in the examination)

ইয়াত প্ৰথম বাক্য সম্পন্ন হোৱাটো প্ৰথমটোৰ ওপৰত

নিৰ্ভৰশীল। কোনো এটা কাৰ্য সম্পন্ন হোৱাটো আন এটা কাৰ্যৰ ওপৰত নিৰ্ভৰশীল কাৰণেই ইয়াক ক্ৰিয়াৰ চৰ্তসাপেক্ষতা বুলিও কোৱা হয়।

দৰাচলতে অসমীয়া ভাষাত সম্ভাব্য কালক স্বতন্ত্ৰ কাল বুলি ধৰিব নোৱাৰি। কাৰণ এই কালৰ কোনো নিৰ্দিষ্ট ক্ৰিয়াবিভক্তি নাই। ধাতুৰ পিছত -হেঁতেন যোগ নহয়, ক্ৰিয়াবিভক্তিৰ পাছতহে যোগ হয়। কিন্তু -হেঁতেন যুক্ত ক্ৰিয়াপদটোৱে অতীত কালত কোনো এটা কাৰ্য হোৱাৰ সম্ভাৱনাৰ নিৰ্দেশ দিয়ে, সেইবাবে ইয়াক অতীত কালৰ এটা ভাগ বুলি ধৰিবই লাগিব। ওড়িআত এইবিধ কালৰ স্বতন্ত্ৰ প্ৰত্যয় আছে। সেই প্ৰত্যয়টো হৈছে অন্ত। এই প্ৰত্যয় '-ইল', '-ইব' প্ৰত্যয়ৰ দৰেই ধাতুত যুক্ত হয় আৰু পুৰুষবাচক প্ৰত্যয় গ্ৰহণ কৰে।

ওড়িআ ভাষাৰ ক্ৰিয়াৰ সম্ভাব্য অতীত কাল ঃ

ওড়িআ ভাষাৰ কালক কুঞ্জ বিহাৰী ত্ৰিপাঠীয়ে মুঠ ১৫ টা ভাগত ভাগ কৰিছে। তেখেতে ওড়িআ কালক এনেদৰে ভাগ কৰিছে।

১. সামান্য বৰ্ত্মান (Present Simple), ২.অসম্পন্ন বৰ্ত্মান (Present imperfect), ৩. সম্পন্ন বৰ্ত্মান (Present Perfect), ৪. সামান্য অতীত (Past Simple), ৫. অসম্পন্ন অতীত (Past Imperfect), ৬. সম্পন্ন অতীত (Past Perfect), ৭. সামান্য ভবিষ্যৎ (Future Simple), ৮. অসম্পন্ন ভৱিষ্যৎ (Future Imperfect), ৯. সম্পন্ন ভবিষ্যৎ (Future Perfect), ১০. সামান্য সম্ভাব্য (Conditional Simple), ১১. অসম্পন্ন সম্ভাব্য (Conditional Imperfect), ১২. সম্পন্ন সম্ভাব্য (Conditional Perfect), ১৩. নিত্য অসম্পন্ন (Habitual Imperfect), ১৪. নিত্য সম্পন্ন (Habitual Perfect), ১৫. অনুজ্ঞা (Imperative)(mood)।

এই বিষয়ে তেওঁ কোনো যুক্তি আগবঢ়োৱা নাই,কেৱল এখন তালিকা আগবঢ়াইছে। [১]

ডঃ খৰ্গেশ্বৰ মহাপাত্ৰই ওড়িআ ক্ৰিয়াৰ ক্ষেত্ৰত তিনিবিধ সময়গত স্বতন্ত্ৰৰ কথা কৈছে। -বৰ্তমান, অতীত, ভবিষ্যৎ। '-অছ', '-ইল' ,'- ইব'ক যথাক্ৰমে 'বৰ্তমান', 'অতীত', 'ভবিষ্যৎ'ৰ নিৰ্দেশক ভাৱে গ্ৰহণ কৰিছে। ত্ৰিপাঠীৰ দৰে তেৰোঁ একো বিশ্লেষণাত্মক প্ৰমাণ আগবঢ়োৱা নাই। [২]

ডঃ দেবী প্ৰসন্ন পট্টনায়কে সমাপিকা ক্ৰিয়াক চাৰিটা ভাগত ভাগ কৰিছে। বৰ্তমান, অতীত, ভৱিষ্যৎ, প্ৰতিবন্ধী (সম্ভাব্য)। তাৰ লগত অনুজ্ঞাকো যুক্ত কৰিব পাৰি বুলি তেওঁ মত দিছে। অৰ্থাৎ তেওঁ ওড়িআ ভাষাত পাঁচটা ক্ৰিয়াৰ কালৰ কথা কৈছে। [৩]

সম্ভাব্য কালৰ ক্ৰিয়াৰ গঠন আৰু ভাগৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি বিজয় প্ৰসাদ মহাপাত্ৰই ইয়াক এটা স্বতন্ত্ৰ কাল বুলি কৈছে আৰু ওড়িআ কালক চাৰিটা ভাগত ভাগত কৰিছে। বৰ্তমান, অতীত, ভৱিষ্যৎ, সম্ভাব্য। [৪]

কৃষ্ণ ভট্টাচাৰ্যই তেখেতৰ "Bengali-Oriya Verb Morphology: A Contrastive study" গ্ৰন্থত বিজয় প্ৰসাদ মহাপাত্ৰৰ কাল বিভাজনকে মানি লৈছে। [৫]

বিজয়লক্ষ্মী মহান্তিয়ে ওড়িআ ভাষাৰ কালক ছটা ভাগত ভাগ কৰিছে। - বৰ্তমান কাল, অতীত কাল, ভৱিষ্যৎ কাল, সম্ভাব্য কাল, নিত্য অতীত আৰু সম্ভাবনা কাল। [৬]

ৰথ নায়কে তেওঁৰ 'ওড়িআ ক্ৰিয়া বিচাৰ' গ্ৰন্থত ওড়িআ ভাষাত চাৰিটা কালৰ কথা মানি লৈছে। তেৰোঁ সম্ভাব্য কালক স্বতন্ত্ৰ কাল হিচাপে স্বীকৃতি দিছে। তেওঁ সম্ভাব্য বা প্ৰতিবন্ধী কালৰ ঠাইত প্ৰকল্প কাল নাম দিছে। তেওঁৰ মতে "যিহেতু এই কাল প্ৰয়োগৰ মাধ্যমেৰে বক্তাই সকলো সময়তে কোনো কাৰ্য কৰাৰ পৰিকল্পনা কৰি থাকে সেইবাবে আমি ইয়াক প্ৰকল্প কাল বুলি গ্ৰহণ কৰিছোঁ।" [৭]

উক্ত আলোচনাৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি আমি ওড়িআ ভাষাত যে সম্ভাব্য কাল এটি স্বতন্ত্ৰ কাল সেই কথা মানি ল'ব পাৰোঁ। ওড়িআ ভাষাত সম্ভাব্য কালৰ গঠন আৰু ভাগসমূহক লক্ষ্য কৰি ইয়াক স্বতন্ত্ৰ কাল বুলি ক'ব পাৰি। ওড়িআ ভাষাত সম্ভাব্য কালৰ ক্ষেত্ৰত '-অন্ত' প্ৰত্যয় ধাতুৰ লগত যুক্ত হয় আৰু তাৰ পিছত ক্ৰিয়াবিভক্তি যোগ হয়।

ওড়িআ সম্ভাব্য কাল ঃ বৰ্তমান কৃদন্ত সৰ্গ 'অন্ত' সম্ভাব্য কালত ব্যৱহাৰ হয় ।অন্ত প্ৰত্যয়ৰ দুটা উপাকৃতি আছে। -আন্ত- আৰু -ন্ত-। -আন্ত - খাআন্ত, যআন্ত, -ন্ত- কৰন্ত, বসন্ত।

ওড়িআ ভাষাত সম্ভাব্য কালৰো তিনিটা ৰূপ দেখা যায়- সাধাৰণ সম্ভাব্য (Conditional Simple), সম্পূৰ্ণ সম্ভাব্য (Conditional perfect), অসম্পূৰ্ণ সম্ভাব্য (Conditional Imperfect)।

(ক) **সাধাৰণ সম্ভাব্য কাল** (Conditional Simple) ঃ যি ক্ৰিয়াৰ দ্বাৰা ভৱিষ্যৎ ঘটনাৰ সম্ভাৱনা সূচিত হয়, সেই ক্ৰিয়াৰ কালক সাধাৰণ সম্ভাব্য কাল বোলা হয়। ভৱিষ্যতত কাম এটা হ'ব পাৰিলহেঁতেন বা পাৰিব এনে অৰ্থ প্ৰকাশ কৰা বাবে ইয়াক সম্ভাব্য ভৱিষ্যৎ কাল বুলিও কোৱা হয়।

যদি তমে যাআন্ত, মু বি তম সাঙ্গৰে যাআন্তি। (If you go I would also like to go with you)

ধোবা আসিলে তম শাড়ী মো শাড়ী একাঠি দেই দেলে ভল হুঅন্তা (when the washerman comes it would be better if you give yours and my saree together)

সেলুনকু যাই বাল কাটিলে ভল হুঅন্তা (It would be better to cut hair in saloon)

সাধাৰণ সম্ভাব্য (Conditional Simple) কালত ধাতুৰ পাছত -অন্ত- বিভক্তি যোগ কৰা হয় তাৰ পিছত পুৰুষবাচক ৰূপ।

(খ) **সম্ভাব্য অসম্পূৰ্ণ** (Conditional Imperfect) ঃ যি ক্ৰিয়াৰ দ্বাৰা কাৰ্য বৰ্তমান সময়ত হোৱাৰ সম্ভাৱনা থাকে, তাক সম্ভাব্য অসম্পূৰ্ণ কাল বোলে। এই ক্ৰিয়াৰ কাল বা অৱধি বৰ্তমান হোৱা বাবে ইয়াক বৰ্তমান সম্ভাব্য কাল বুলিও কোৱা হয়। উদাহৰণ-

এ বৰ্ষ নইবঢ়ি হেইথিলে এতে বেলকু আমে বঢ়ি অঞ্চলকু যাউথান্তে। (Had there been flood this year we would have gone to the flooded areas by this time)

তমে ডাকিথিলে আমে যাউথান্ত (we would have gone if you would have called us)

সম্ভাব্য অসম্পূৰ্ণ কালত ধাতুৰ লগত কৃদন্ত -উ-, সহায়কাৰী ধাতু √থা, কালবাচক ৰূপ (-অন্ত /-ন্ত) আৰু পুৰুষবাচক ৰূপ যোগ হয়।

(গ) **সম্ভাব্য সম্পূৰ্ণ** (Conditional perfect) ঃ যি ক্ৰিয়াৰ দ্বাৰা কাৰ্য অতীত কালত ঘটাৰ সম্ভাৱনা আছিল বুলি বুজা যায়, তাক সম্ভাব্য সম্পূৰ্ণ কাল বোলে। যিহেতু ইয়াৰ কাল বা অৱধি অতীতৰ হয়, সেইবাবে ইয়াক সম্ভাব্য অতীত কাল বুলিও কোৱা হয়। উদাহৰণ-

বৰ্ষা হোইথিলে ভল ফচল হোইথান্তা (If it would rained better crops would have been better)

এ পিলাটি পঢ়িথিলে জণে বড় লোক হোইথান্তা (had this boy studied he would have become famous person)

সম্ভাব্য সম্পূৰ্ণ কালত ধাতুৰ লগত কৃদন্ত -ই- সহায়কাৰী ধাতু √থা কালবাচক ৰূপ (-অন্ত / -ন্ত) আৰু পুৰষবাচক ৰূপ যোগ হয়।

অসমীয়া আৰু ওড়িআ ভাষাৰ সম্ভাব্য কালৰ তুলনা ঃ

১। অসমীয়া ভাষাত সম্ভাব্য কালৰ ক্ৰিয়াৰূপ সাধনৰ বাবে কোনো স্বতন্ত্ৰ বিভক্তি নাই, অতীত কালৰ ৰূপৰ পাছত 'হেঁতেন' পৰসৰ্গ বা অনুপদ যোগ কৰি সম্ভাব্য ক্ৰিয়াৰূপ সাধন কৰা হয়। ওড়িআ ভাষাত 'অন্ত' স্বতন্ত্ৰ বিভক্তি যোগ কৰি সম্ভাব্য কালৰ ক্ৰিয়া সাধন কৰা হয়। যাৰ বাবে ইয়াক স্বতন্ত্ৰ কাল হিচাপে স্বীকৃতিও দিয়া হৈছে।

<u>অসমীয়া</u>

-মই খেলিলোঁহেঁতেন

-সি আহিলহেঁতেন

<u>ওড়িআ</u>

-মুঁ খেলিথান্তি

-সে আসিথান্তা

২। অসমীয়া ভাষাৰ ধাতুত অতীত কালৰ বিভক্তিৰ পাছত 'হেঁতেন' পৰসৰ্গ যোগ হয়। যাৰ বাবে ইয়াক স্বতন্ত্ৰ কাল বুলিব নোৱাৰি। অতীত কালত কাম এটা ঘটিব লগা আছিল বুজায় বাবে ইয়াক সম্ভাব্য অতীত বোলা হয়। '-হেতেন' পৰসৰ্গৰ মূল- সংস্কৃত- ভৱন্ (ভূ) = মা.প্ৰা- হোংতে, ভবংতে বা হবংতে, প্ৰা- হোংতো, পু.অসমীয়া- হন্ত, হন্তে, অসমীয়া- হেতেন।[৮] ওড়িআ ভাষাত সম্ভাব্য কালৰ স্বতন্ত্ৰ বিভক্তি আছে, যিটো সংস্কৃতৰ পৰা ওড়িআ ভাষাত ৰক্ষিত হৈছে। সংস্কৃতৰ বৰ্তমান কৃদন্তৰ ৰূপ প্ৰাকৃতৰ জৰিয়তে '-অন্ত' ৰূপ লৈ ওড়িআ ভাষাত সম্ভাব্য কাল গঠন কৰে।[৯]

৩। ওড়িআ ভাষাৰ সম্ভাব্য কালৰ ক্ষেত্ৰত দুটা দশাবাচক ৰূপ দেখা যায়। সম্ভাব্য সম্পূৰ্ণ, সম্ভাব্য অসম্পূৰ্ণ। অসমীয়াত তেনেকুৱা ৰূপ দেখা নাযায়।

৪। অসমীয়া আৰু ওড়িআ দুয়োটা ভাষাতে সম্ভাব্য কালৰ বাক্য গঠনৰ ক্ষেত্ৰত 'ক্ৰিয়াৰ চৰ্তসাপেক্ষতা দেখা যায়। অৰ্থাৎ কোনো এটা কৰ্ম সংঘটিত হোৱাৰ সম্ভাবনা আন এটা কাৰ্যৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰে। যেনে-

<u>অসমীয়া</u>

- সি অহা হ'লে, ময়ো গ'লোঁহেঁতেন

<u>ওড়িআ</u>

- সে আসিথিলে, মু বি যাইথান্তি। ❑

উপসংহাৰ ঃ

ভাৰতীয় আৰ্য ভাষা পৰিয়ালৰ পৰা বিকশিত দুয়োটা ভাষাই বহুখিনি মিল ৰক্ষা কৰিলেও সময়ৰ লগতে স্বকীয় গঠন লাভ কৰিছে। এই স্বকীয় গঠনসমূহৰ আলোচনাই দুয়োটা ভাষা কিদৰে একে মূলৰ হোৱা স্বত্ত্বেও সময়ৰ লগত ভিন্ন ভৌগোলিক স্থানত ভিন্ন ভাষাৰ ৰূপ লৈছে বুজিব পাৰি। অসমীয়া আৰু ওড়িআ ভাষাৰ সম্ভাব্য কালৰ তুলনা কৰিলে সাদৃশ্য আৰু বৈসাদৃশ্য দুয়োটা ধৰা পৰে। অসমীয়া ভাষাত সম্ভাব্য কালৰ ক্ৰিয়াৰূপ সাধনৰ বাবে অতীত কালৰ ৰূপৰ পাছত 'হেঁতেন' পৰসৰ্গ বা অনুপদ যোগ কৰি সম্ভাব্য ক্ৰিয়াৰূপ সাধন কৰা হয়। ওড়িআ ভাষাত 'অন্ত' স্বতন্ত্ৰ বিভক্তি যোগ কৰিহে সম্ভাব্য কালৰ ক্ৰিয়াৰূপ সাধন কৰা হয়। সেইবাবে অসমীয়া ভাষাত সম্ভাব্য কালক স্বতন্ত্ৰ কালৰূপে স্বীকৃতি দিয়া হোৱা নাই। কিন্তু ওড়িআ ভাষাত সম্ভাব্য কালক স্বতন্ত্ৰ কালৰূপে স্বীকৃতি দিয়াৰ লগতে ইয়াৰ দুটা দশাবাচক ৰূপ দেখা যায়। দুয়োটা ভাষাতে সম্ভাব্য কালৰ বাক্য গঠনৰ ক্ষেত্ৰত ক্ৰিয়াৰ ছৰ্তসাপেক্ষতা দেখা যায়। ❑

প্ৰসংগটীকা ঃ

১। Tripathy, Kunja Bihari : *The Evolution of Oriya Language and Script*, page-164
২। মহাপাত্ৰ, খৰ্গেশ্বৰ ঃ *ওড়িআ লিপি ও ভাষা,* পৃ-৫১
৩। নায়ক, ৰথ ঃ *ওড়িআ ক্ৰিয়া বিচাৰ,* পৃ-১৪৮
৪। Mahapatra, Bijay Prasad : *A Synchronic grammar of Oriya,* page-245
৫। Bhatacharya, Krishna : *Bengali-Oriya Verb Morphology: A Contrastive Study*, পৃ- ১২০
৬। মহান্তি, বিজয়লশ্ৰী ঃ *ভাষা অনুশীলন,* পৃ- ১০৪
৭। নায়ক, ৰথ ঃ *ওড়িআ ক্ৰিয়া বিচাৰ,* পৃ-১৫৪
৮। মেধি, কালিৰাম ঃ *অসমীয়া ব্যাকৰণ আৰু ভাষাতত্ত্ব,* পৃ- ২৬৩
৯। Tripathy, Kunja Bihari : *ibid*, page-164

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

অসমীয়া ঃ

১। ফুকন পাটগিৰি, দীপ্তি। *অসমীয়া, বাংলা আৰু উড়িয়া তুলনামূলক অধ্যয়ন।* দ্বিতীয় সংস্কৰণ, ২০১২, বনলতা, গুৱাহাটী- ০১, মুদ্ৰিত।
২। মৰল, ভগৱান। *অসমীয়া ব্যাকৰণ জ্যোতি।* পঞ্চবিংশতিতম তাঙৰণ, ২০১৬, অসম ৰাজ্যিক পাঠ্যপুথি প্ৰণয়ন আৰু প্ৰকাশন নিগম লিমিটেড, গুৱাহাটী- ২১, মুদ্ৰিত।
৩। মেধি, কালিৰাম। *অসমীয়া ব্যাকৰণ আৰু ভাষাতত্ত্ব।* তৃতীয় প্ৰকাশ, পুনৰ মুদ্ৰণ, ২০১৯, লয়াৰ্ছ বুক ষ্টল, গুৱাহাটী-০১, মুদ্ৰিত।
৪। শইকীয়া বৰা, লীলাৱতী। *অসমীয়া ভাষাৰ ৰূপতত্ত্ব।* তৃতীয় সংস্কৰণ, মাৰ্চ ২০১৫, বনলতা, গুৱাহাটী-০১, মুদ্ৰিত।
৫। শৰ্মা, অনুৰাধা। *ভাষাবিজ্ঞান আৰু অসমীয়া ভাষা।* প্ৰথম প্ৰকাশ, নৱেম্বৰ, ২০২০, বান্ধৱ, গুৱাহাটী-০১, মুদ্ৰিত।

ওড়িআ ঃ

১। নায়ক, ৰথ। *ওড়িআ ক্ৰিয়া বিচাৰ।* প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০২৩, কিতাব ভবন, ভুবনেশ্বৰ- ১৫, মুদ্ৰিত।
২। মহান্তি, বিজয়লশ্ৰী। *ভাষা অনুশীলন।* প্ৰথম সংস্কৰণ, ২০১০, বিদ্যা, ভুবনেশ্বৰ- ৩০, মুদ্ৰিত।
৩। মহাপাত্ৰ, খগেশ্বৰ। *ওড়িআ লিপি ও ভাষা।* নতুন সংস্কৰণ, ২০১৭, গ্ৰন্থমন্দিৰ, কটক- ০১, মুদ্ৰিত।
৪। মহাপাত্ৰ, নাৰায়ণ শ্ৰীধৰ দাস। *সৰ্বসাৰ ব্যাকৰণ।* পুনঃমুদ্ৰণ, ২০১৪, নিউ ষ্টুডেণ্টস ষ্টোৰ, কটক - ০২, মুদ্ৰিত।

English ঃ

1. Misra, Haripriya. *Historical Odia Morphology*, First Edition, 1975, Bharat Manisha, Varanasi, Published.
2. Mahapatra, Bijay Prasad. *A Synchronic Grammar of Oriya*, First Edition, 2007, Central Institute of Indian Languages, Mysore-06, Published
3. Pattnaik, D.P.
   G.N. Das. *Conversational Oriya*, First Edition, 1972, Central Institute of Indian Languages, Manasagangotri, Mysore- 06, Published.
4. Tripathy, Kunja Bihari. *The Evolution of Oriya Language and script* , Utkal University, Cuttack.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

কাৰ্বিসকলৰ শ্ৰাদ্ধ অনুষ্ঠান - ‘চ’মাংকান’

পূৰবী বৰদলৈ

সহকাৰী অধ্যাপিকা, অসমীয়া বিভাগ
খাগৰিজান মহাবিদ্যালয়, নগাঁও-৭৮২০০৩
৮৬৩৮৭৪৩৭৫০
purvibordoloi683@gmail.com

অৱনীতা সাউদ

প্ৰাক্তন ছাত্ৰী, গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৯৬৭৮৭৪৬৯৬২
abanitasaud&@gmail.com

১.০০ সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

কাৰ্বি জনগোষ্ঠীৰ লোকসকল হল সেউজীয়া পাহাৰৰ বুকুত বসবাস কৰা অন্যতম আদিম অধিবাসী। অৱশ্যে প্ৰাচীন কালত কাৰ্বিসকল ‘মিকিৰ’ নামেৰে জনাজাত আছিল। নৃতাত্বিক দৃষ্টিকণৰ পৰা এওঁলোক মংগোলীয় গোষ্ঠীৰ লোক আৰু ভাষাতাত্বিক দিশৰ পৰা তিব্বত-বৰ্মী ভাষাগোষ্ঠীৰ অন্তৰ্গত। কাৰ্বিসকলে বছৰৰ বিভিন্ন সময়ত বিভিন্ন উৎসৱ পালন কৰি আহিছে। এই উৎসৱসমূহ ভিতৰত ‘চ’মাংকান’ বা মৃতকৰ শ্ৰাদ্ধ অনুষ্ঠান তেওঁলোকৰ প্ৰধান জাতীয় উৎসৱ। কাৰ্বি সমাজত কোনো লোকৰ মৃত্যুৰ পাছত কাঠ-সংস্কাৰ(খৰি দিয়া কাৰ্য) কৰি পুনৰ মৃতকৰ আত্মাৰ শান্তি কামনা কৰি পালন কৰা হয় ‘চ’মাংকান’ শ্ৰাদ্ধ অনুষ্ঠান। মৃতকৰ আত্মাই যাতে সম্পূৰ্ণ ৰূপে পাপ, দুখ-ক্লেশ আদিৰ পৰা মুক্তি লাভ কৰি পৰজন্মত সুস্থ শৰীৰ আৰু দীৰ্ঘায়ু লাভ কৰে, তাৰ কামনা কৰি আত্মীয়-স্বজনসকলে পৰম্পৰাগত ভাৱে শ্ৰাদ্ধ ক্ৰিয়া ‘চ’মাংকান’ উৎসৱ উদ্‌যাপন কৰে। আড়ম্বৰপূৰ্ণ ভাৱে নৃত্য-গীতসহ উদ্‌যাপিত হয় এই ‘চ’মাংকান’ অনুষ্ঠান।

বীজ শব্দ ঃ

কাৰ্বি, মৃতক, শ্ৰাদ্ধ অনুষ্ঠান, চ’মাংকান।

২.০০ অৱতৰণিকা ঃ

কাৰ্বিসকলৰ নৃতাত্বিক দৃষ্টিকোণৰ পৰা মংগোলীয় গোষ্ঠীৰ লোক আৰু ভাষাতাত্বিক দিশৰ পৰা তিব্বত-বৰ্মী ভাষাগোষ্ঠীৰ অন্তৰ্গত। “কাৰ্বিসকল প্ৰধানকৈ কাৰ্বি আংলঙৰ পাহাৰ আৰু ভৈয়াম অঞ্চল, উত্তৰ কাছাৰ, কামৰূপৰ দক্ষিণ অংশ, নগাঁও, মৰিগাওঁ, দৰং, গোলাঘাট, লক্ষীমপুৰ আদি জিলাত বসবাস কৰি আছে। আমাৰ বাহিৰেও নাগালেণ্ডৰ টুৱেনচাঙ জিলা আৰু মেঘালয়ৰ জয়ন্তীয়া জিলাতো কাৰ্বি জনগোষ্ঠীৰ লোকসকলে বাস কৰি আছে।”[১] কাৰ্বিসকলে নিজৰ মাজত নিজকে পুৰুষ হলে ‘আৰ্লেং’ আৰু নাৰী হলে ‘আৰ্লেংপী’ বুলিহে চিনাকী দিয়ে। কাৰ্বি ভাষাত ‘আৰ্লেং শব্দৰ অৰ্থ হল-হেলনীয়া ওখ ঠাই-এনে ঠাইৰ বাসিন্দা এই অৰ্থতে তেওঁলোকে নিজকে উক্ত নাম দুটাৰে চিনাকী দিছিল। এওঁলোকৰ সমাজ ব্যৱস্থা পিতৃতান্ত্ৰিক। পিতৃপক্ষীয় প্ৰধান পাঁচটা কুৰ বা গোত্ৰ আছে। এই গোত্ৰসমূহৰ আকৌ কেইবাটাকৈ উপগোত্ৰ আছে। কাৰ্বিসকলে সুকীয়া ঐতিহ্য, পৰম্পৰা আৰু স্বকীয় ৰীতি নীতিৰে বছৰৰ প্ৰথম দিনত পতা ৰাছিনজা, কৃষি কাৰ্যৰ আৰম্ভণতি পতা ৰংকেৰ আৰু ৰবযুণৰ বাবে পতা চ’জুন পূজা পালন কৰি

আহিছে। ইয়াৰোপৰি সৃষ্টিকৰ্তা 'মুকৰাং', পালনকৰ্তা 'হেমফু', ৰণদেৱতা 'পেং' আৰু ব্যাঘ্রদেৱতা 'উমখ্রা' আদি দেৱতালৈও পূজা এভাগ দিয়া হয়। পূজাৰ উপচাৰ হিচাপে থাকে চাউল, পিঠাগুৰি, মদ আৰু গাহৰি-কুকুৰাৰ তেজ। "এই পৰম্পৰাগত উৎসৱসমূহৰ ভিতৰত 'চ'মাংকান' বা মৃতকৰ শ্রাদ্ধ অনুষ্ঠান তেওঁলোকৰ প্ৰধান জাতীয় উৎসৱ।"[২] কাঠ সংস্কাৰ(খৰি দিয়া) পাছত মৃতকৰ আত্মাৰ শান্তি কামনা কৰি পালন কৰা হয় 'চ'মাংকান' শ্ৰাদ্ধ অনুষ্ঠান। কাৰ্বি জনগোষ্ঠীৰ লোসকলে জন্মান্তৰবাদত বিশ্বাস কৰে। মৃত্যুৰ পিছত কিছুকাল 'চ'মাংকান' অৰ্থাৎ প্ৰেতলোকত কৰ্মফল অনুযায়ী ভুগি পুনৰ পুনৰ নিজ বংশ বা ফৈদত বিপৰীত লিংগৰ মানৱী শিশু হিচাপে জন্ম ধাৰন কৰি বংশ পৰম্পৰাৰ নিৰৱচ্ছিন্ন ধাৰা অক্ষুন্ন ৰখাটোৱে তেওঁলোকৰ ধাৰনাত আত্মাৰ প্ৰকৃত উদ্দেশ্য।"[৩] কাৰ্বিসকলে অতি আড়ম্বৰপূৰ্ণ ভাৱে উদ্‌যাপন কৰা 'চ'মাংকান' উৎসৱ তিনি প্ৰকাৰৰ -

ক) উচ্চ খাপৰ 'হাৰণে' চ'মাংকান

খ) মধ্যমীয়া পৰ্যায়ৰ 'লাংটুক' চ'মাংকান আৰু

গ) সাধাৰণ পৰ্যায়ৰ 'কানফ্লাফ্লা' চ'মাংকান

৩.০০ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

কাৰ্বিসকলৰ বিভিন্ন উৎসৱ অনুষ্ঠানৰ ভিতৰত জাতীয় অনুষ্ঠান হিচাপে পালন কৰা শ্ৰাদ্ধ অনুষ্ঠান 'চ'মাংকান'ৰ বিষয়ে আলোচনা কৰাই হৈছে এই গৱেষণা পত্ৰখনিৰ মুখ্য উদ্দেশ্য।

৪.০০ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

"কাৰ্বিসকলৰ শ্ৰাদ্ধ অনুষ্ঠান ঃ চ'মাংকান শীৰ্ষক প্ৰস্তাৱিত গৱেষণা বিষয়টোৰ পৰিসৰ যথেষ্ট বিস্তৃত। গৱেষণা কৰ্মত কাৰ্বিসকলৰ শ্ৰাদ্ধ অনুষ্ঠান চ'মাংকানৰ প্ৰকাৰ, ৰীতি-নীতি, লোকাচাৰ, খাদ্যভাস, নৃত্য-গীত, শিল্পকৰ্ম(জাম্বিলি আথন) ইত্যাদিৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা হব।

৫.০০ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

এই গৱেষণাপত্ৰখনি প্ৰস্তুত কৰোঁতে বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হৈছে। তথ্য সংগ্ৰহণৰ ক্ষেত্ৰত গৌণ তথ্যৰ সহায় লোৱ হৈছে। গৌণ উৎস হিচাপে বিষয়ৰ লগত সংগতি ৰাখি বিভিন্ন লেড্ৰ ৰ গ্ৰন্থ আৰু এই উৎসৱৰ বিষয়ে লিখা বিভিন্ন গৱেষণাধৰ্মী প্ৰৱন্ধসমূহৰ সহায় লোৱা হৈছে।

৬.০০ মূল বিষয়বস্তু ঃ

মৃতকৰ আত্মাই যাতে সম্পূৰ্ণৰূপে পাপ, দুখ-ক্লেশ আদিৰ পৰা মুক্তি লাভ কৰি পৰজন্মত সুস্থ শৰীৰ আৰু দীৰ্ঘায়ু লাভ কৰে তাৰ কামনা কৰি আত্মীয় সুজনসকলে পৰম্পৰাগত ভাৱে শ্ৰাদ্ধ ক্ৰিয়া 'চ'মাংকান' উৎসৱ পালন কৰে। চমাংকন শব্দৰ বুৎপত্তি সম্বন্ধে কাৰ্বি ভাষাত বহু ধৰনৰ ব্যাখ্যা পোৱা যায়। বুৎপত্তিগত অৰ্থৰ ফালৰ পৰা 'চ'মাংকান' হল খাচী নৃত্য। চ'মাং মানে খাচী আৰু কান মানে হ'ল নৃত্য। কাৰ্বি ডেকা-গাভৰুসকলে চ'মাং অৰ্থাৎ খাচীসকলৰ পৰা নৃত্য শিকি তাক শ্ৰাদ্ধত পৰিবেশন কৰিবলৈ লোৱাৰ পৰা সেই নৃত্য জড়িত শ্ৰাদ্ধ অনুষ্ঠানটোকে 'চ'মাংকান' বুলিবলৈ ল'লে। অতীজতে শ্মশান যাত্ৰাৰ এই উৎসৱটোৰ নাম আছিল 'আৰ্লেং কাৰ্হি', পিছলৈ খাচী সংস্কৃতিৰ প্ৰভাৱেৰে পৰিপুষ্ট হৈ এই উৎসৱটো 'চ'মাংকান' হিচাপে পৰিচিত হয়। কাৰ্বি শ্ৰাদ্ধ অনুষ্ঠান 'চ'মাংকান'ৰ কোনো কোনো দিশত খাচীসকলৰ প্ৰভাৱৰ নিদৰ্শন বিৰাজমান। উদাহৰণস্বৰূপে, মৃতকৰ অস্থিক আত্মজ্ঞান কৰি পৰিতুষ্টিৰ অৰ্থে মদ-ভাত অৰ্পণ কৰা, মৃতকৰ প্ৰতিকৃতি হিচাপে দীঘল আৰু চেপেটা শিল(লংত্ৰ) পোতা ইত্যাদি লোকাচাৰ খাচীসকলৰ প্ৰভাৱতে কাৰ্বি শ্ৰাদ্ধ অনুষ্ঠানত বিৰাজমান। 'চ'মাংকান' শ্ৰাদ্ধৰ বুৎপত্তি বিষয়ক দুটা জনশ্ৰুতি কাৰ্বিৰ মাজত প্ৰচলিত আছে। 'এটা জনশ্ৰুতি মতে, 'চ'মাংকান শ্ৰাদ্ধৰ উদ্‌যাপন ৰীতি 'থিৰেং ৰাৰেং' নামৰ এজন কাৰ্বি সমাজ সংস্কাৰকে প্ৰৱৰ্তন কৰিছিল। এই গৰাকী সমাজ-সংস্কাৰকে ঐশ্বৰিক ক্ষমতা থকা বাবে যমপুৰিলৈ অবাধে আহযাহ কৰিব পাৰিছিল(যিহেতু তেওঁ যমৰাজৰ জীয়েকক বিয়া কৰাইছিল) আৰু তেওঁ মানৱৰ আত্মাই প্ৰেতলোকত ভোগা দুৰ্ভোগ দেখি ইয়াক লাঘৱ কৰাৰ উদ্দেশ্যে মৃত্যুৰ অধিপতি গৰাকীক সন্তুষ্ট কৰা উৎসৱৰ প্ৰৱৰ্তন কৰিছিল।'[৪]

কাৰ্বিসকলে অতি আড়ম্বৰপূৰ্ণ ভাৱে উদ্‌যাপন কৰা 'চ'মাংকান' উৎসৱ তিনি প্ৰকাৰৰ -

ক) উচ্চখাপৰ 'হাৰণে' চ'মাংকান

খ) মধ্যমীয়া পৰ্যায়ৰ 'লাংটুক' চ'মাংকান আৰু

গ) সাধাৰণ পৰ্যায়ৰ 'কানফ্লাফ্লা' চ'মাংকান

সাধাৰণতে সামাজিক ভাৱে স্বীকৃতি থকা মৃত ব্যক্তিৰ ক্ষেত্ৰত সামাজিক অনুমতি সাপেক্ষে লাংটুক আৰু হাৰণে চ'মাংকান অনুষ্ঠান পালন কৰা হয়। এই দুই প্ৰকাৰৰ চ'মাংকান উৎসৱটো ঘৰত পালন কৰা দেখা নাযায়। ঘৰৰ পৰা কিছু আঁতৰত মুকলি ঠাই বাচি লৈ তাত পালন কৰা হয়। চ'মাংকান অনুষ্ঠানটো তিনিদিন ধৰি পালন কৰা হয়। চতুৰ্থ দিনা এই অনুষ্ঠানৰ সামৰণি পৰে। উৎসৱস্থলীত নাদ খান্দি পূব দিশত লংত্ৰ(দীঘল শিলৰ টুকুৰা এটা) আৰু লংপাক(বহল চেপেটা শিলৰ টুকুৰা এটা) মৃতকৰ প্ৰতিকৃতি হিচাপে প্ৰতিষ্ঠা কৰা হয়। পুৰুষ-স্ত্ৰী ভেদে শিলবোৰত সমাজপাৰ পৰিধান কৰোৱাই

চ'মাংকানৰ বাবে প্ৰস্তুত কৰা হয়। শিলবোৰৰ ঠিক পিছফালে মদাৰৰ ডাল ৰোপন কৰা হয়। নাদৰ তলিৰ পৰা প্ৰতিকৃতিৰ শেষলৈকে জখলা দিয়া হয়। হাৰণে উৎসৱ লাংটুক উৎসৱতকৈ বেছি খৰচী আৰু সমাজৰ শ্ৰেষ্ঠতম ব্যক্তিয়েহে এই উৎসৱ পতাৰ সন্মান পাব পাৰে। ধনেশ, ময়না, শালিকা আদি যুক্ত কাঠেৰে নিৰ্মিত প্ৰতীকেৰে চাৰিওফালে সু-সজ্জিত নাদ এই শ্ৰেণীৰ 'চ'মাংকানৰ প্ৰতীক। কানফ্লাফ্লা কাৰ্বিসকলৰ সাধাৰণ শ্ৰেণীৰ শ্ৰাদ্ধ উৎসৱ। ঘৰৰ সন্মুখৰ চোতালখনেই এই শ্ৰেণীৰ 'চ'মাংকানৰ স্থলী। এই শ্ৰাদ্ধ অনুষ্ঠানত নাদ খন্দা বা শিল পোতা নিয়ম পালন কৰা নহয়।

এই উৎসৱত মৃতকৰ পৰিয়ালবৰ্গই মৃতকৰ পিণ্ড দিয়াৰ বাহিৰেও পূৰ্বপুৰুষ আৰু যমৰাজকো পিণ্ড দিয়াৰ পৰম্পৰা আছে। 'চ'মাংকান অনুষ্ঠানটো পালন কৰাটো যথেষ্ট ব্যয় বহুল হোৱাৰ বাবে একেলগে কেইবাজনো মৃত ব্যক্তিৰ 'চ'মাংকান বা শ্ৰাদ্ধ অনুষ্ঠান পালন কৰে। অৱশ্যে পিণ্ড দিয়াটো নিজ গোত্ৰৰ লোক আত্মীয় স্বজনৰ মাজতে সীমাবদ্ধ থাকে। চ'মাংকান উৎসৱৰ মুখ্য লোক হ'ল - উচেপী আৰু দুইহুদী। উচেপী গৰাকী বৃদ্ধা বা বয়সস্থ মহিলা আৰু তেওঁৰ প্ৰধান কাম হল মৃতকৰ উদ্দেশ্য খাদ্য 'অঞ্জম প্ৰস্তুত কৰা আৰু উৎসৱৰ কেইদিন মৃতক আৰু মৃতকৰ পৰিয়ালৰ গুণানুকীৰ্তন কৰি উচুপি উচুপি কন্দা। আনহাতে আনজন মুখ্য লোক 'দুইহুদী' হল উৎসৱৰ ঢোলবাদক। তেওঁলোকে এই উৎসৱত আৰম্ভণিৰ পৰা শেষলৈকে বিভিন্ন কাৰ্যসূচী খাপ খোৱাকৈ ঢোল বজায়।'[৫]

'চ'মাংকান প্ৰথম দিনটোক 'ৰ্দ-কেহয়'(মৃতকৰ অস্থি সংগ্ৰহৰ দিন) বুলি কোৱা হয়। এই দিনটোত গাঁৱৰ বাসিন্দা তথা মৃতকৰ বংশ পৰিয়াল সকলোৱে মিলি উচেপীৰ সৈতে শ্মশানলৈ যাত্ৰা কৰে। মৃতকৰ 'টিলিং' (পৈত্ৰিক বংশৰ শ্মশানবেদী) ৰ পৰা যথা নিয়মে অস্থি নাইবা কড়িকে আত্মজ্ঞান কৰি মৃতকৰ ধান খেৰৰ প্ৰতিকৃতিৰ ভিতৰত সুমুৱাই পুনৰ ঘৰলৈ অনা হয়। ঘৰ পোৱাৰ পিছত সমবেত ৰাইজৰ এজনে মংগল চাই ৰোগীৰ মৃত্যু অনিবাৰ্য বুলি কোৱাৰ লগে লগে মৃতকৰ প্ৰতিকৃতি থোৱা কোঠা(কুত)ৰ পৰা কান্দোনৰ ৰোল উঠে। এয়াই চ'মাংকানৰ প্ৰথম পৰ্ব। চ'মাংকানৰ প্ৰথম ৰাতি গাঁৱৰ সকলো মিলি গাঁওবুঢ়াৰ ঘৰৰ পৰা প্ৰায় ৮/৯ বজাত চ'মাংকান কৰা পৰিয়ালৰ চোতাললৈ সমদলে যাত্ৰা কৰে। এই সমদল যাত্ৰাৰ নাম 'ৰংকেতং'। উচেপীয়ে মৃতকৰ বাবে ঘৰুৱা মদ(হৰলাং), ভাত, আঞ্জা, তামোল-পাণ আদিৰে 'অঞ্জাম' উচৰ্গা কৰি বিলাপ কৰে। মৃতকে যাতে 'যমআৰেং'ত স্থান লাভ কৰিব পাৰে তাৰবাবে প্ৰাৰ্থনা কৰে। চ'মাংকানৰ চোতালত যুৱকসকলে হাতত ঢাল-তৰোৱাল লৈ ঢোলৰ চেৱে চেৱে নৃত্য কৰে। এইদৰে চোতালখনত ২/৩ বাৰ ঘূৰি ঘূৰি নচাৰ পাছত যুৱক-যুৱতীসকলে একেলগ হৈ 'নিমছ কিৰুং' আৰম্ভ কৰে। একে সময়তে ডেকাসকলে 'কাপাত্ৰ্' নামৰ যৌন সম্বন্ধীয় গীত পৰিবেশন কৰে, যাৰ অৰ্থ অতি অশ্লীল।

'চ'মাংকানৰ দ্বিতীয় দিনাখনৰ পৰ্যায়ক 'কান্‌ছ' বুলি কোৱা হয়। কানছ শব্দৰ অৰ্থ হল সৰুনাচ। কানছৰ ৰাতিত নিমন্ত্ৰিত গাওঁবোৰে ঢোল, ঢাল-তৰোৱাল, জাম্বিলি আথন(কাৰ্বি শিল্পকৰ্ম) আদি লৈ 'চ'মাংকানত যোগ দি ৰং-ধেমালি আৰু আনন্দ ফুৰ্তি কৰে। সেইদিনা ডেকা-গাভৰুসকলে 'চ'মাংকানৰ কিছুমান সৰু সৰু নৃত্য পৰিবেশন কৰে।

চ'মাংকানৰ উৎসৱৰ তৃতীয় দিনটোক 'কানপি' বা বৰলচ বুলি কোৱা হয়। এইদিনটো উৎসৱস্থলীত নৃত্য-গীতৰ পয়োভৰে আনন্দমুখৰ কৰি ৰাখে। দূৰৰ পৰা মৃতকৰ ইষ্ট-কুটুম্বসকল আহি মৃতকলৈ তামোল-পান, মদ আদি আগবঢ়াই ভক্তি অঞ্জলি নিবেদন কৰে। মৃত ব্যক্তিসকলৰ প্ৰত্যেকৰ উদ্দেশ্যে একোটাকৈ পাৰ আৰু ছাগলী আগবঢ়াই তেওঁলোকৰ নামত বলি দিয়া হয়।

'চ'মাংকানৰ চতুৰ্থ দিনটোত মৃতকৰ প্ৰতিকৃতি শ্মশানলৈ নিয়া কাৰ্যটোৱে মূল কাৰ্যসূচী। এই দিনটোত বয়সস্থ সকলে চ'মাংকান পালন কৰা গৃহস্থীৰ ঘৰৰ চোতালত কাৰ্বিসকলৰ উৎপত্তি কিংবদন্তি বিশিষ্ট 'মচিকাকহিৰ' পাঠ কৰে। 'ৰ্দ-কেহুম'ৰ পৰা 'কানপি' লৈকে এই তিনিদিন চ'মাংকান উৎসৱ উদ্‌যাপন কৰি শেষত চতুৰ্থ দিনা 'বান্‌জাৰ কেকু' অনুষ্ঠানেৰে শ্ৰাদ্ধ উৎসৱৰ সামৰণি পৰে।

'চ'মাংকান উৎসৱৰ আৰম্ভণিৰ পৰা শেষলৈকে ওছেপী(চ'মাংকানৰ নিয়ম-নীতি জনা গায়িকা) য়ে কৰণ সুৰ সংযোজন কৰি গোৱা 'কাচাৰ্হে' গীতৰ প্ৰয়োজন অপৰিহাৰ্য। বিভিন্ন ধৰনৰ বিষয়বস্তু যেনে- লাংকেপাংলু(মৃতকক গা ধুওৱা গীত), আন কেপি(ভাত-আঞ্জা দিয়া), ট'ৱাৰ কেথান(বাটৰ চিনাকিকৰণ), ৰংকেথন(প্ৰতিকৃতি নিয়া) ইত্যাদিৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি ওচেপীয়ে কাচাৰ্হে গীত গায়। তদুপৰি নিমছ' কিৰুং নৃত্য, চমছিনাং নৃত্য(ৰণনৃত্য), ৰিছ'মাৰ কাচিহিং(যুৱক-যুৱতীৰ নাচ), বান্‌জাৰ কেকান(বয়সস্থসকলৰ নৃত্য) আদি চ'মাংকান উৎসৱৰ উল্লেখযোগ্য নৃত্য।

'চ'মাংকান উৎসৱৰ অপৰিহাৰ্য সামগ্ৰী 'জাম্বিলি আথন' এক উল্লেখযোগ্য সৃষ্টিমূলক শিল্পবস্তু। 'ৰেংৰেই নামৰ বিশেষ গছৰ দ্বাৰা জাম্বিলি অথেন নিৰ্মাণ কৰা হয়।'[২] মিটাৰ দৈৰ্ঘ্যৰ বৰ্তুলাকাৰ ফুল কাঠেৰে সজা এডাল ধুনীয়া দণ্ডই জাম্বিলি আথন(এটা মূৰত চাৰিডাল দণ্ড লগাই, চাৰিডাল সৰু সৰু দণ্ডৰ মূৰত আৰু মূল দণ্ডৰ মূৰত এটি এটিকৈ মুঠতে পাঁচটা ভীমৰাজ চৰাই লগায়)। ভীমৰাজ পক্ষী কাৰ্বিৰ জাতীয় পক্ষী। অৱশ্যে কাৰ্বিৰাজে ব্যৱহাৰ কৰা জাম্বিলি আথনত মইনা চৰাইহে লগোৱা প্ৰথা আছে।'[৬] গঠনৰ ফালৰ পৰা জাম্বিলি আথন ৪.৫২ মিটাৰ ওখ হয় আৰু সোঁমাজত এডাল দণ্ড বা ধুৰা থাকে। এই দণ্ড ডালক 'আথান পি' বোলা হয়। আথান পিৰ অৰ্থ হৈছে ডাঙৰ শাখা। এই প্ৰধান শাখাডালৰ চাৰিওফালে চাৰিডাল সৰু সৰু প্ৰশাখা থাকে যাক 'এৰ আথন' বোলে। জাম্বিলি আথনৰ পাঁচটা ডালৰ জৰিয়তে পাঁচটা ফৈদক সূচিত কৰা হয়। এই চাৰু শিল্পবিধত ব্যৱহৃত কলা ৰংটোক কাৰ্বিসকলে অদৃষ্ট বা মহাকালৰ প্ৰতীক স্বৰূপে গণ্য কৰে। জাম্বিলি আথন অবিহনে চ'মাংকান উৎসৱ অসম্পূৰ্ণ।

৭.০০ সামৰণি ঃ

কাৰ্বিসকলৰ চ'মাংকান উৎসৱটো এক শ্ৰাদ্ধ অনুষ্ঠান যদিহে ইয়াৰ মাজেদি জাতিটোৰ কৃষ্টি, সভ্যতা আৰু জীৱন সম্বন্ধীয় ধ্যান-ধাৰণাই প্ৰকাশ লাভ কৰিছে। এই অনুষ্ঠানটো একান্ত পাৰিবাৰিক হোৱা সত্বেও জাতীয় লোকৰ উপস্থিতি, জাতীয় নৃত্য-গীত, বাদ্যযন্ত্ৰৰ উপস্থাপন, জাতীয় ধ্যাণ-ধাৰণাৰ পৰিস্ফুটল ইত্যাদিৰ কাৰণত জাতীয় তথা ৰাজহুৱা অনুষ্ঠানলৈ উত্তৰণ ঘটা দেখিবলৈ পোৱা যায়। চ'মাংকান উৎসৱ যথেষ্ট ব্যয়বহুল। সমাজৰ আৰ্থিক দুৰাৱস্থা, বস্তু-বাহানিৰ মূল্যবৃদ্ধি ইত্যাদি কাৰণত চ'মাংকান পালন কৰাটো অন্তৰায় স্বৰূপ হৈ পৰিছে। বৰ্তমান সময়ত কিছুমান ৰীতি-নীতিৰো বিলোপ ঘটিছে। শ্ৰাদ্ধবিধিৰ নিয়ম জনা 'ওচেপী'ৰ সংখ্যা কমি যোৱাত চ'মাংকান অনুষ্ঠিত কৰা গাঁৱে নিজৰ গাঁৱত নাথাকিলে অন্য গাঁৱৰ পৰা ওচেপীৰ মান ধৰি নিমন্ত্ৰণ কৰি আনিবলগীয়া হয়। কাৰ্বি জনগোষ্ঠীৰ লোকসকলে সামাজিক, ধৰ্মীয় আৰু সাংস্কৃতিক মৰ্যদা অক্ষুন্ন ৰাখিবলৈ হলে কাৰ্বিসকলৰ লোক উৎসৱ চ'মাংকান উদ্‌যাপন কৰাটো নিতান্তই প্ৰয়োজনীয়তা আছে। ❑

পাদটিকা ঃ

১। শইকীয়া, পল্লৱীঃ কাৰ্বি ভাষা-সংস্কৃতিৰ ৰেঙণী, ২০১২ পৃষ্ঠা ৭২
২। শইকীয়া, পল্লৱীঃ কাৰ্বি ভাষা-সংস্কৃতিৰ ৰেঙণী, পৃষ্ঠা
৩। হাকাচাম, উপেন ৰাভাঃ অসমৰ জনজাতীয় সংস্কৃতি, ২০১৬ পৃষ্ঠা ১৫৪
৪। হাকাচাম, উপেন ৰাভাঃ অসমৰ জনজাতীয় সংস্কৃতি, ২০১৬ পৃষ্ঠা ১৫৫
৫। শইকীয়া, পল্লৱীঃ কাৰ্বি ভাষা-সংস্কৃতিৰ ৰেঙণী, ২০১২ পৃষ্ঠা ৭৪
৬। (সম্পা.) দাস, দীপামণি বৰুৱা ঃ অসমৰ লোক পৰিবেশ্য কলা, ২০২১ পৃষ্ঠা ২৭৩

সহায়ক গ্ৰন্থপুঞ্জী ঃ

১। দাস, নাৰায়ণ, ৰাজবংশী পৰমানন্দ (সম্পা.) ঃ অসমৰ সংস্কৃতি-কোষ, জ্যোতি প্ৰকাশন, দ্বিতীয় প্ৰকাশ, জুলাই ২০১৪
২। দাস, দীপামণি বৰুৱাঃ অসমৰ লোক পৰিবেশ্য কলা (তৃতীয় খণ্ড), পূৰ্বায়ন প্ৰকাশন, প্ৰথম প্ৰকাশ, মাৰ্চ ২০২১
৩। বৰা, দেৱজিৎ (সম্পা.) ঃ উত্তৰ-পূৰ ভাৰতৰ জনগোষ্ঠীয় উৎসৱ-অনুষ্ঠান, এম.আৰ. পাব্লিকেশ্যন, পানবজাৰ, গুৱাহাটী-১ , প্ৰথম প্ৰকাশ, নৱেম্বৰ,২০১৫
৪। শইকীয়া, পল্লৱীঃ কাৰ্বি ভাষা-সংস্কৃতিৰ ৰেঙণী, মালতী গুৰুং ডি.বি. জাগৰণ সাহিত্য প্ৰকাশন, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০১২
৫। হাকাচাম, উপেন ৰাভাঃ অসমৰ জনজাতীয় সংস্কৃতি, বাণী মন্দিৰ প্ৰকাশন, তৃতীয় প্ৰকাশ, ২০১৬
৪। হাকাচাম, উপেন ৰাভাঃ অসম আৰু অসমৰ জাতি-জনগোষ্ঠীৰ প্ৰসংগ-অনুষঙ্গ, কিৰণ প্ৰকাশন, দ্বিতীয় প্ৰকাশ, ছেপ্তেম্বৰ, ২০১৭

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

অসমীয়া উপন্যাসত অসমৰ পাৰ্বত্য জনজাতিৰ সমাজ জীৱনৰ প্ৰতিফলন

(ৰং বং তেৰাঙৰ ৰংমিলিৰ হাঁহি উপন্যাসৰ বিশেষ উল্লিখনেৰে)

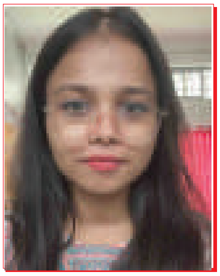

ৰিম্পী ৰাণী দত্ত
গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
জগন্নাথ বৰুৱা মহাবিদ্যালয়
যোৰহাট (অসম)-৭৮৫০০১
৮১৩৬০০২৫০৮
rimpidutta98@gmail.com

ভাৰতী শইকীয়া
গৱেষক, বুৰঞ্জী বিভাগ
জগন্নাথ বৰুৱা মহাবিদ্যালয়
যোৰহাট (অসম)-৭৮৫০০১
৯১০১১২০৫৩২
saikiabharati123@gmail.com

ভাৰতবৰ্ষৰ উত্তৰ-পূব কোণত অৱস্থিত অসম বিভিন্ন জাতি-জনজাতিৰ মিলনভূমি। ভাৰতবৰ্ষৰ মূল ভূ-খণ্ডৰ পৰা ভৌগোলিকভাৱে দূৰত অৱস্থিত যদিও অতি প্ৰাচীন কালৰে পৰা বৰ্তমানলৈকে অসমলৈ বিভিন্ন জাতি-জনগোষ্ঠীৰ সোঁত বৈ আছে। জীৱিকাৰ সন্ধানত বা বসতিৰ বাবে সুচল হোৱাৰ কাৰণে বহুতো জাতি-জনজাতিয়ে অসমত স্থায়ীভাৱে বসতি কৰিবলৈ আৰম্ভ কৰিলে।

'জনজাতি' শব্দটো ইংৰাজী 'Tribe' শব্দৰ সমাৰ্থক হিচাপে অসমীয়াত ব্যৱহাৰ হৈ আহিছে। এই 'জনজাতি' শব্দটো দুই ধৰণে ব্যৱহাৰ হৈছে। এটা হৈছে সংবিধান স্বীকৃত জনজাতি আৰু আনটো হ'ল নৃতত্ত্ববিদসকলৰ জনজাতি। আমাৰ ভাৰতীয় সংবিধানত বিশেষ কেতবোৰ সম্প্ৰদায়ক জনজাতিৰ মৰ্যদা দিয়া হৈছে। এনে জনজাতি বোলা সম্প্ৰদায়সমূহে সাংবিধানিকভাৱে বিশেষ কিছুমান সা-সুবিধা উপভোগ কৰে। সংবিধানত এখন অনুসূচীযোগে এই সম্প্ৰদায়সমূহক জনজাতি বুলি স্বীকৃতি প্ৰদান কৰা হৈছে। আৰ্থ-সামাজিকভাৱে পিছপৰা এই সম্প্ৰদায়সমূহক সাংবিধানিকভাৱে সুৰক্ষা প্ৰদান কৰাৰ লগতে সংৰক্ষণৰ সুবিধা দিয়া হৈছে। অন্যান্য সম্প্ৰদায়সমূহৰ জীৱন-যাত্ৰাৰ মানৰ লগত এই সম্প্ৰদায়সমূহৰ সমতা স্থাপন কৰাই হ'ল সংবিধানৰ মূল উদ্দেশ্য। আমাৰ ৰাষ্ট্ৰব্যৱস্থাত অসমত থকা মংগোলীয় প্ৰজাতিৰ বড়ো শাখাৰ-বড়ো, ৰাভা, গাৰো, তিৱা, ডিমাছা, সোণোৱাল কছাৰী, মিচিং আদি লোকসকল ভাৰতীয় সংবিধান স্বীকৃত জনজাতি। কিন্তু নৃতত্ত্বৰ বিচাৰত এই একে শাখাৰ ভিতৰত থকা কোচ, মৰাণ, চুতীয়া লোকগোষ্ঠীক ভাৰতীয় সংবিধানে জনজাতি স্বীকৃতি দিয়া নাই।[১] জনগোষ্ঠীৰ মিলনভূমি অসমত বিভিন্ন জনগোষ্ঠী ভৈয়াম অঞ্চলত সিঁচৰিত হৈ আছে যদিও মূলতঃ পাৰ্বত্য অঞ্চলত চাৰিওফালে বসবাস কৰি থকা জনজাতি সমূহৰ সামাজিক আৰু শৈক্ষিক দিশ ভৈয়ামত বসবাস কৰি থকা জনজাতি সকলতকৈ পৃথক আৰু নৃতাত্ত্বিক দৃষ্টিকোণৰ পৰা স্বকীয় বৈশিষ্ট্য অক্ষুন্ন ৰাখিছে। এই জনজাতি সমূহ হৈছে - কাৰবি, ডিমাছা, গাৰো, চাকমা ইত্যাদি। মূলতঃ বৃহৎ তিব্বতবৰ্মী ভাষাগোষ্ঠী আৰু মংগোলীয় প্ৰজাতিৰ অন্তৰ্ভুক্ত এই সকলো জনজাতিৰ কিছুমান আছুতীয়া ৰীতি-নীতি,ভাষা-সংস্কৃতি আদি নিজৰ মাজত বৰ্তমানেও অক্ষুন্ন ৰাখিছে। ৰাজনৈতিক আৰু শৈক্ষিক দিশৰ পৰা অনগ্ৰসৰ এই জনজাতিবোৰে বৰ্তমান ভাৰতীয় সংবিধানৰ ষষ্ঠ অনুসূচীৰ অধীনত বহুতো সা-সুবিধা লাভ কৰি ভৈয়ামৰ জাতিসকলৰ লগত সমানে আগবাঢ়ি যোৱাটো অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ।

অতীজৰে পৰা শিক্ষাৰ ক্ষেত্ৰত অনগ্ৰসৰ হৈ থকা এই জনজাতিসকলৰ উন্নতিৰ আৰু শৈক্ষিক অগ্ৰগতিৰ বাবে বহুতো উন্নয়নমূলক আঁচনি হাতত লোৱা দেখা গৈছে। মূলতঃ খ্ৰীষ্টান ধৰ্ম প্ৰচাৰৰ উদ্দেশ্যে ভাৰত তথা উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চললৈ আগমন ঘটা খ্ৰীষ্টান মিচনেৰীসকলৰ পশ্চিমীয়া শিক্ষা আৰু উদাৰ চিন্তা-ধাৰাই ৰক্ষণশীল পাৰ্বত্য জনজাতিসকলৰ সমাজ তথা শৈক্ষিক জীৱনতো পৰিৱৰ্তনৰ জোৱাৰ আনিলে। তাৰোপৰি অসম সাহিত্য সভাই পাৰ্বত্য জনজাতিসকলৰ মাজত অসমীয়া ভাষা-সংস্কৃতিৰ বাবে লোৱা প্ৰচেষ্টা লেখত লবলগীয়া। এই বহুতো পাৰ্বত্য জনজাতীয় লোকে অসমীয়া ভাষা-সাহিত্যৰ লগত পৰিচয় ঘটি বহুতো কালজয়ী সাহিত্য সৃষ্টি কৰি গৈছে য'ত পাৰ্বত্য জনজাতিসকলৰ সমাজ জীৱনৰ প্ৰতিফলন সুস্পষ্টভাৱে দেখা পোৱা গৈছে। এসময়ত এই সমগ্ৰ উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চল তাহানিৰ 'বৰ অসমৰ' অধীনত আছিল। বৰ্তমানৰ অৰুণাচল প্ৰদেশত পূৰ্বতে অসমীয়া ভাষা মাধ্যম হিচাপে থকাৰ বাবে কেইবাজনো অৰুণাচলী লেখকে অসমীয়া ভাষাত সাহিত্য চৰ্চা কৰি অসমীয়া সাহিত্যৰ ভৰাঁল চহকী কৰি গৈছে। এইক্ষেত্ৰত লুম্মেৰ দাই আৰু য়েচে দৰজে ঠংচিৰ নাম উল্লেখযোগ্য। পূৰ্বৰে পৰা বৰ্তমানলৈকে পাৰ্বত্য জনজাতি সকলৰ জীৱনৰ আধাৰতউপন্যাস ৰচন কৰা ঔপন্যাসিকসকলৰ ভিতৰত- ৰং বং তেৰাং, জয়ন্ত ৰংপি, অজিত ছিংনাৰ, যাদৱ ফুকন, পৰমানন্দ ৰাজবংশী, বসন্ত দাস, কেংচাম কেংলাং, ৰাংচাম জংচাম আদি ঔপ্যনাসিকসকল উল্লেখযোগ্য। এইসকল ঔপন্যাসিকে বৈচিত্ৰ্যময় আৰু বৰ্ণাঢ্য সমাজ-সংস্কৃতিৰ প্ৰতিফলন ঘটাই অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যলৈ অমূল্য অৱদান আগবঢ়াই থৈ গৈছে।

অসমৰ পাৰ্বত্য জনজাতিসমূহৰ চমু পৰিচয় ঃ

অসমৰ পাৰ্বত্য জনজাতিসকলৰ অৱস্থিতি কেৱল ভৌগোলিক ভাৱেই গুৰুত্বপূৰ্ণ নহয়। তেওঁলোকৰ ভাষা ৰীতি-নীতি আদিৰ পৰায়ো যথেষ্ট গুৰুত্বপূৰ্ণ। নিজা ভাষা থকাৰ উপৰি জনজাতিসমূহ বাৰে ৰহণীয়া সংস্কৃতিৰ অধিকাৰী। অসমত বাস কৰা এই পাৰ্বত্য জনজাতিসমূহ বিশেষভাৱে মংগোলীয় নৃগোষ্ঠীৰ আৰু তিব্বতবৰ্মীয় ভাষা পৰিয়ালৰ অৰ্ন্তগত। শৈক্ষিক,ৰাজনৈতিক, আৰ্থ সামজিক আদি দিশত অনগ্ৰসৰ পাৰ্বত্য জনজাতিসমূহৰ বিকাশৰ বাবে বিভিন্ন আঁচনি হাততলোৱা হৈ আহিছে যদিও আজিও সৰ্বাংগীন বিকাশ হৈ উঠা নাই। অসমত বসবাস কৰি থকা পাৰ্বত্য জনজাতিসমূহৰ এক চমু পৰিচয় তলৰ আলোচনাত আগবঢ়োৱা হ'ল-

কাৰবিসকল অসমৰ পাৰ্বত্য অঞ্চলৰ এটা লেখত লব লবলগা জনজাতি। কাৰবিসকলক পূৰ্বতে মিকিৰ বুলি কোৱা হৈছিল। ভাষাতাত্ত্বিক দিশত তিব্বত বৰ্মীয় আৰু নৃতাত্ত্বিক দৃষ্টিৰে মংগোলীয় লোক। কাৰবি লোকসকলৰ গৰিষ্ঠ সংখ্যকেই কাৰবি পাহাৰত বাস কৰে যদিও গোলাঘাট, শোণিতপুৰ, নগাওঁ, মেঘালয়ৰ বিভিন্ন ঠাইটো বসবাস কৰি আছে। কিন্তু কাৰবিসকল বিভিন্ন জিলাত সিচঁৰিত হৈ থাকিলেও কাৰবি আংলং মিকিৰ পাহাৰতহে বেছিসংখ্যক কাৰবি জনজাতিৰ লোক থকাৰ ঐতিহাসিক ভাৱেও প্ৰমাণ থকাত, এই জিলা কাৰবিসকলৰ স্বায়ত্বশাসিত জিলা হিচাপে পৰিগণিত হয়। বাসস্থানৰ দৃষ্টিকোণৰ পৰা কাৰবিসকলক তিনিটা গোটত ভাগ কৰা হয়। 'চিন্‌থং', 'ৰংহাং' আৰু 'আম্‌ৰি'। সমতল অঞ্চলৰ জিলাসমূহত বসবাস কৰা কাৰবিসকলক'ডুমুৰালি'বোলা হয়। ইংতি, ইংহি, তেৰাং, টেৰণ আৰু তিমুং নামেৰে কাৰবি সকলৰ পাঁচটা ফৈদ আছে। যুগ যুগ ধৰি অসমতে বসবাস কৰি থকা কাৰবিসকলে অসমীয়া সমাজ- সংস্কৃতিৰ সৈতে মিলি আপোন ভাৱ গঢ়ি তুলিছে।

নৃতাত্ত্বিকাভাৱে মংগোলীয় আৰু ভাষিকভাৱে তিব্বত-বৰ্মী শাখাৰ বড়ো উপশাখাৰ অৰ্ন্তগত ডিমাছাসকল অসমৰ প্ৰধানকৈ উত্তৰ কাছাৰ পাহাৰ জিলাত বসবাস কৰি আছে। নগাওঁ জিলা ,কাৰবি আংলং,ডিমাপুৰ আদিতো ভালেসংখ্যক ডিমাছা লোকৰ বসতি আছে। ২০০১চনৰ লোকপ্ৰিয়ল অনুসৰি ডিমাছা জনসংখ্যা ১,৩৩,৩২৭+ জন।[২] ডিমাছাসকল বৃহত্তৰ বড়ো জনগোষ্ঠীৰ অৰ্ন্তগত। এওঁলোকৰ একাংশ সমতলৰ জনজাতি আৰু একাংশ পাৰ্বত্য জনজাতি। ডিমাছা শব্দৰ অৰ্থ 'ডিমা' মানে হৈছে- ডাঙৰ নদী আৰু 'ছা' ৰ অৰ্থ হৈছে সন্তান, গতিকে ডিমাছাৰ অৰ্থ হ'ল - ডাঙৰ নদীৰ সন্তান। ডিমাছাসকল বৰ্তমান সংখ্যালঘু হৈ কাছাৰত বসবাস কৰি আছে। এওঁলোকৰ নিজা ভাষা আৰু বাৰে ৰহনীয়া সংস্কৃতি আছে।

গাৰোসকলক তিব্বতবৰ্মী ভাষাগোষ্ঠীৰ বড়ো শাখাৰ অৰ্ন্তগত এটা অন্যতম পাৰ্বত্য জনজাতি। গাৰোসকল চীনৰ হোৱাংহো আৰু ইয়াংচিকিয়াঙৰ পৰা আহি গাৰো পাহাৰত থিতাপি লয়। তেওঁলোকৰ মুখ্য বসতিস্থল মেঘালয়ৰ গাৰো পাহাৰ হ'লেও গাৰো পাহাৰৰ সংলগ্ন হৈ থকা কামৰূপ, গোৱালপাৰাৰ উপৰিও শিৱসাগৰ, ডিব্ৰুগড়, মিকিৰ পাহাৰত তেওঁলোকে বসতি কৰি আছে। গাৰোসকলৰ ভাষাক আচিক

ভাষা বোলা হয়। তেওঁলোকৰ নিজা কোনো লিপি বা আখৰ নাই। অসমৰ অন্য এটা পাৰ্বত্য জনজাতি চাকমাসকল কাৰবি আংলং জিলাৰ বংলাংফেৰ অঞ্চলত বসবাস কৰি আহিছে। কৃষিৰে জীৱন নিৰ্বাহ কৰা চাকমাসকল বৌদ্ধ ধৰ্মালম্বীৰ লোক। এই সমূহ জনজাতিৰ উপৰিও ডিমা হাচাও জিলাৰ দ্বিতীয় বৃহত্তম পাৰ্বত্য জনজাতি জেমিনগা, মিজোৰামত থুপ খাই থকা অসমৰ পাৰি সকল, উত্তৰ কাছাৰ পাৰ্বত্য জিলাৰ বৃহৎ কুকি জনগোষ্ঠীৰ অৰ্ন্তগত ব্যেইটেসকল আদি অসমত বাস কৰা অন্যতম পাৰ্বত্য জনজাতি।

অসমীয়া উপন্যাসত অসমৰ পাৰ্বত্য জনজাতিৰ সমাজ জীৱনৰ প্ৰতিফলন ঃ

অসমীয়া উপন্যাসসমূহো আধুনিক সাহিত্যৰ এক নৱতম সৃষ্টি। ১৮৪৬ চনত সাত-সাগৰ তেৰ নদীৰ সিপাৰৰ আমেৰিকান বেপ্টিষ্ট মিছনেৰীসকলৰ প্ৰচেষ্টাত প্ৰকাশিত অৰুণোদয় সংবাদ পত্ৰৰ জৰিয়তেই এই সাহিত্যৰ বিধাই অসমত জন্ম লাভ কৰিছিল। নাথান ব্ৰাউনৰ জন বনিয়ানৰ The Pilgrim’s Progress ৰ অসমীয়া অনুবাদ ‘যাত্ৰিকৰ যাত্ৰা’ত উপন্যাসৰ লক্ষণসমূহ ভালদৰে ফুটি নুঠিলেও অসমীয়া উপন্যাসৰ প্ৰথম আৰম্ভণি বুলি কোৱা হয় যদিও জোনাকীত প্ৰকাশিত পদ্মনাথ গোহাঞি বৰুৱাৰ ভানুমতীকহে প্ৰকৃততে প্ৰথম উপন্যাসৰ আখ্যা দিয়া হয়। অৰুণোদয়ৰ পাততে জন্ম লাভ কৰি ঊণবিংশ শতিকাত পূৰ্ণৰূপ পোৱা অসমীয়া উপন্যাসে আজি শতিকা গৰকি ছকুৰি বছৰ পাৰ কৰিলে। সময়ৰ লগে লগে সাহিত্যৰ এই প্ৰকাৰৰ বিধাই বিভিন্ন পৰিৱৰ্তন লাভ কৰিছে। আৰম্ভণিতে ঐতিহাসিক আৰু সামাজিক উপন্যাসেৰে বিকাশ লাভ কৰা অসমীয়া উপন্যাসৰ বিজ্ঞানভিত্তিক, কল্পবিজ্ঞানভিত্তিক, নদীকেন্দ্ৰিক, নাৰীবাদী,আঞ্চলিক, আধুনিকতাবাদী, জনজাতীয় জীৱন ভিত্তিক, উত্তৰ আধুনিকতাবাদী আদি বিভিন্ন ধাৰাই বিকাশ লাভ কৰিছে।

এই ধাৰাসমূহৰে এক অন্যতম ধাৰা জনজাতীয় জীৱনভিত্তিক উপন্যাসৰ ধাৰা। বিভিন্ন জাতি-জনগোষ্ঠীৰ মিলনভূমি অসম আৰু উত্তৰ- পূৰ্বাঞ্চলৰ জনজাতীয়মূলৰ আৰু অজনজাতীয় ঔপন্যাসিকসকলে জনজাতীয় জীৱনভিত্তিক উপন্যাস ৰচনা কৰি জনজাতিসমূহৰ ৰাজনৈতিক,অৰ্থনৈতিক, সামাজিক বিভিন্ন দিশ আৰু সমস্যাৱলীক প্ৰকাশ কৰিছে। অসমৰ পাৰ্বত্য জনজাতীয় মূলৰ আৰু অজনজাতীয় উপন্যাসিক সকলে পাৰ্বত্য জনজাতীয় সমাজখনৰ সাংস্কৃতিক,সমাজিক আদি ৰ ইতিবাচক দিশসমূহৰ লগতে তেওঁলোকৰ সমাজখনৰ বিভিন্ন সমস্যাৱলীক উপন্যাসৰ কাহিনীৰ মাজেৰে পাঠক সমাজলৈ আগবঢ়াইছে। অসমৰ কাৰবি আংলং আৰু উত্তৰ কাছাৰ পাৰ্বত্য জিলাত বসবাস কৰা এটা পাৰ্বত্য জনজাতি কাৰবি। ইতিহাসে ঢুকি নোপোৱা কালৰে পৰাই এই কাৰবি সকল অসমৰ পাহাৰে-ভৈয়ামে বসবাস কৰি আছে। এই কাৰবি জনজাতিৰ বিভিন্ন দিশ সামৰি কেইবাজনো জনজাতীয় আৰু অজনজাতীয় উপন্যাসিকে উপন্যাস ৰচনা কৰি আহিছে।

কাৰবি জনজাতীয় মূলৰ ঔপন্যাসিক হিচাপে আমি প্ৰথমে জয়ন্ত ৰংপিৰ নাম ল’ব লাগিব। ১৯৭৭ চনত ৰংপিয়ে ৰচনা কৰা ‘পুৱাতে এজাক ধনেশ নাম’ৰ উপন্যাসখনেই প্ৰথম কাৰবি ঔপনাসিকে ৰচনা কৰা কাৰবি জনজাতীয় জীৱনভিত্তিক অসমীয়া উপন্যাস। তেখেতৰ দ্বিতীয়খন উপন্যাস ‘নীলা পাহাৰৰ ইতিকথা’ প্ৰকাশ পাইছিল ধ্ৰুৱজ্যোতি বৰাৰ সম্পাদিত ‘আজিৰ সময়’ আলোচনীখনত।

অসমীয়া উপন্যাসৰ জগতখনলৈ অৱদান আগবঢ়োৱা দ্বিতীয়জন কাৰবি ঔপন্যাসিক ৰং বং তেৰাঙে ১৯৮১ চনত প্ৰকাশ পোৱা *ৰংমিলিৰ হাঁহি* উপন্যাসৰ বাবে অসম সাহিত্য সভাৰ ‘কলাগুৰু বিষ্ণু প্ৰসাদ ৰাভা বঁটা’ আৰু ‘অসম প্ৰকাশন পৰিষদ বঁটা’ লাভ কৰিবলৈ সক্ষম হয়। তেখেতৰ আন উপন্যাস কেইখন হৈছে ক্ৰমে- *নীলা অৰ্কিড* (২০০১), *ক্ৰান্তিকালৰ অশ্ৰু* (২০০১), *জাক হেৰুৱা পক্ষী* (২০০৫), *মিৰ্বিন* (২০০৯), *অৰণ্যৰ প্ৰেম, অপৰাহ্নৰ গীত* (অসমীয়া প্ৰতিদিন,২০০৫), *উৰুখা ল্ডখাঁৰ কাব্য* ইত্যাদি।

কাৰবি জনজাতিৰ মূলৰ ঔপন্যাসিকসকলৰ ভিতৰত অজিত ছিংনাৰ অন্যতম। তেখেতৰ ২০১৪ চনত গ্ৰন্থ আকাৰে প্ৰকাশ পোৱা *লংৰি আতমন* উপন্যাসৰ বাবে অসম সাহিত্য সভাই ২০১৩-১৫ চনৰ সন্মানীয় বুদুৰাম পাংগিং স্মাৰক বঁটা প্ৰদান কৰে। তেখেতৰ দ্বিতীয় খন উপন্যাস ‘ছেৰহংথম’ (২০১৬) কাৰবিসকলৰ জনশ্ৰুতি বীৰ ৰাইছং তেৰাঙৰ বৰ্ণাঢ্য জীৱন আৰু কৰ্মৰ আধাৰত উপন্যাসখন ৰচনা কৰিছে। ব্ৰিটিছৰ বিৰুদ্ধে সংগ্ৰাম কৰা ডিমাছা বীৰ যোদ্ধা শম্ভুধন ফংলোৰ জীৱন আৰু কৰ্মৰ আধাৰত ৰচনা কৰা ‘*সন্ধ্যা বেলাৰ শোঁকগাথা*’ (২০১৬) তেখেতৰ লেখত লবলগীয়া আন এখন উপন্যাস। ছিংনাৰৰ ‘*বৰ্যাদেৱীৰ মালিতা*’ উপন্যাসখনে প্ৰকাশ লাভ কৰে ২০১৯ চনত। গ্ৰন্থ আকাৰে প্ৰকাশ পোৱাৰ পূৰ্বতে উপন্যাসখন অসম বাণীৰ বসন্ত সংখ্যাৰ ২০১৯ চনত আলোচনীত ধাৰাবাহিকভাৱে প্ৰকাশ পাইছিল।

কাৰবি জনজাতীয় জীৱনক আধাৰ কৰি ৰচনা কৰা '*মেকক্রি*' আৰু '*কেংৰত কাচেদং*' ঔপন্যাসিক যাদৱ ফুকন অজনজাতীয় মূলৰ। '*মেকক্রি*' সমাজত চিৰ প্ৰচলিত কাৰবি ৰমণীৰ নাম যাৰ সাধাৰণ অৰ্থ 'চকুলো'। পৰম্পৰাগত নিয়মক শ্ৰদ্ধা জনাই ৰখাবলৈ গৈ,জীৱনলৈ অশান্তিৰ কলীয়া ডাৱৰ নমাই অনা দুটি জীৱনৰ কাহিনী উপন্যাসখনৰ আধাৰ।[৩]

উপন্যাসখনত পাৰ্বত্য জনজাতি কাৰবিসকলৰ সমাজ জীৱনৰ বিবাহ, উৎসৱ, সামাজিক সম্বন্ধ আদি বিভিন্ন দিশৰ আলোচনা কৰিছে। যাদৱ ফুকনে কাৰবি সমাজ জীৱনক লৈ ৰচনা কৰা '*কেংৰত কাচেদং*' উপন্যাসখনৰ নামৰ অৰ্থ হৈছে- পূৰ্বপুৰুষে পূৰ্বতে অজানিতে ভুলৰ পুনৰাবৃত্তি। উপন্যাসখনে কাৰবি সমাজৰ ৰীতি-নীতিৰ লগত চিনাকি কৰাই দিয়াত যথেষ্ট সহায় কৰিছে। উপন্যাসখনৰ পাৰ্বত্য জনজাতিয়ে কৰা জুমখেতিৰ প্ৰচলন, বিভিন্ন উৎসৱ-পাৰ্বণৰ বৰ্ণনা উপন্যাসখনত আছে।

ডিফুৰ পূবেৰুণ প্ৰকাশনৰ দ্বাৰা ২০০৬ চনত প্ৰথম প্ৰকাশিত নীলাম্বৰ ৰংপিৰ দ্বাৰা ৰচিত এখন কাৰবি সমাজৰ আধাৰিত উপন্যাস হ'ল-'*ৰিক্রিয়েশ্বন পাৰ্ক*'। ডিফু চহৰৰ কাষতে লাগি থকা ৰিক্রিয়েশ্বন পাৰ্ক খনক কেন্দ্ৰ কৰি ৰচিত এই উপন্যাসখনত পৰম্পৰাগত আচাৰ-আচৰণ, ধৰ্মবিশ্বাস তথা সমাজ ব্যৱস্থাৰ কথা বাংময় ৰূপত উন্মোচিত হৈছে।[৪]

কাৰবি জনজাতীয় জীৱনক আধাৰ কৰি উপন্যাস ৰচনা কৰা আন এজন ঔপন্যাসিক হৈছে- বিদ্যাছিং ৰংপি। কাৰবি জনজীৱনৰ প্ৰাণত স্পন্দিত হৈ থকা 'হাঈমু' কাহিনী গীতক কেন্দ্ৰ কৰিয়েই বিদ্যাছিং ৰংপিয়ে 'হাঈমু' কাহিনী গীতৰ মূল একে ৰাখি তাত কল্পনাৰ ৰহন চৰাই উপন্যাসখনত কাহিনীক গতি প্ৰদান কৰিছে। সহজ-সৰল আৰু প্ৰাঞ্জল ভাষাৰে ৰচিত উপন্যাসখনিৰ মাজে মাজে কাৰবি সমাজ, লোকাচাৰ, বিবাহ পদ্ধতি, খাদ্যভাস, পানীয়, সাজপাৰ, আ-অলংকাৰ, ডেকাচাং আদি লোকসংস্কৃতিৰ আটাইবোৰ সমলৰ বিষয়ে প্ৰকাশিত হৈছে।[৫]

অজনজাতীয় লেড্ৰ বসন্ত দাসৰ '*তমন*' কাৰবি জনজাতিৰ জীৱন আধাৰিত এখন উপন্যাস।শেহতীয়াকৈ কাৰবি সমাজ আৰু লোকসংস্কৃতিৰ আধাৰত ৰচিত অজয় কুমাৰ বৰাৰ '*বিনহোম*' উপন্যাসখনে প্ৰকাশ লাভ কৰিছে। ইয়াৰ উপৰিও কাৰবি জনজাতিৰ জীৱন আধাৰত ৰচিত পৰমানন্দ ৰাজবংশীৰ *উন্মিলনৰ পৃথিৱী* (১৯৯২), হৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভূঞাৰ *ৰংছপীৰ কীহিনী* (১৯৯৫), শৈলেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্যৰ *লংকু পাৰাই আতুৰ* (২০০৮) আদি উপন্যাসৰ কথা উল্লেখ কৰিব পাৰি।

অসমীয়া জাতিৰ অপৰিহাৰ্য অংগ ডিমাছাসকলৰ জীৱনৰ আধাৰত ৰচনা কৰা স্বৰ্ণ বৰাৰ '*ডিয়ুং নদীৰ গীত*' উপন্যাসখনত ডিমাছাসকলৰ সমাজ জীৱনৰ বিভিন্ন দিশ সামৰিছে। ডিমাছা জনজাতিৰ বাৰেৰহনীয়া জীৱনশৈলীক অসমীয়া উপন্যাসত তুলি ধৰাত সম্ভৱতঃ স্বৰ্ণ বৰাই প্ৰথম গৰাকী ঔপনাসিক। পাহাৰ আৰু ভৈয়ামৰ সম্প্ৰীতি উপন্যাসখনৰ মূল উল্ডখীব্য। কাৰবি জনজাতীয় মূলৰ ঔপন্যাসিক অজিত ছিংনাৰৰ '*সন্ধ্যা বেলাৰ শোকগাথা*' উপন্যাসখনত ডিমাছা বীৰ শম্ভুধন ফংলোৰ বীৰত্বৰ কথা বৰ্ণনা কৰোঁতে ডিমাছাসকলৰ সমাজ জীৱনৰ বিভিন্ন দিশ সামৰিছে। পশুপতি ভৰদ্বাজৰ '*ছিমছাঙৰ দুটি পাৰ*' উপন্যাসখনত দেশ বিভাজনৰ সময়ৰ সমাজ জীৱনত দেখা দিয়া সমস্যাৰাজিৰ বৰ্ণনাৰ মাজেদি অসমৰ এটা অন্যতম পাৰ্বত্য জনজাতি গাৰোসকলৰ জীৱন সংগ্ৰামৰ ছবি দাঙি ধৰিছে। স্বাধীনতা আন্দোলনৰ পটভূমিত ৰচিত বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্যৰ '*মৃত্যুঞ্জয়*' উপন্যাসত গাৰোসকলৰ ৱাংগালা উৎসৱৰ বৰ্ণনা আছে। উপন্যাসখনত জনজাতীয় জীৱনৰ আংশিক প্ৰতিফলন ঘটিলেও এইখনক জনজাতীয় উপন্যাস আখ্যা দিব নোৱাৰি। একালৰ বৰ অসমৰ অৰ্ন্তগত অৰুণাচল প্ৰদেশ কেন্দ্ৰীয় শাসিত অঞ্চল থকাৰ পৰাই অসমৰ অবিচ্ছেদ্য অংগ আছিল আৰু অৰুণাচলত এসময়ত অসমীয়া ভাষাৰ মাধ্যম থকাৰ বাবে হয়তো কেইবাজনো অৰুণাচলী লেখকে সাহিত্য ৰচনা কৰি অসমীয়া সাহিত্যৰ ভৰাঁললৈ অৱদান আগবঢ়াইছে। এইসকলৰ ভিতৰত আমি প্ৰথমেই লুম্মেৰ দাইৰ নাম ল'ব লাগিব। 'পাহাৰৰ শিলে শিলে', পৃথিৱীৰ হাঁহি, কইনাৰ মূল্য ,মন অৰু মন আৰু ওপৰ মহল উপন্যাসত তেওঁ আদি জনজাতীয় সমাজখনক প্ৰতিফলিত কৰিছে। লুম্মেৰ দাইৰ পিছতে অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যক সমৃদ্ধ কৰা আন এজন ঔপন্যাসিক -য়েছে দৰজে ঠংচি। চনম,লিংঝিক, শ কটা মানুহ, মৌন ওঁঠ মুখৰ হাঁহি আদি কেইবাখনো উপন্যাস অৰুণাচলৰ জনজাতিসমূহৰ জীৱনৰ আধাৰত কৰিছে। এইসমূহৰ লগতে মেঘালয়,নাগালেণ্ডৰ পাৰ্বত্য জনজাতিৰ জীৱনৰ আধাৰতো কেইবাজনো ঔপন্যাসিকে উপন্যাস ৰচনা কৰিছে।

আলোচ্য উপন্যাসসমূহত পাৰ্বত্য জনজাতীয় লোকলকলৰ সমাজ-সংস্কৃতিৰ দিশসমূহ প্ৰতিফলন ঘটিছে।

ঔপন্যাসিকসকলে জনজাতিসমূহৰ জীৱনধাৰা, আৰ্থ-সামাজিক, সাংস্কৃতিক, ৰাজনৈতিক আদি দিশসমূহ যে পুংখানুপুংখভাৱে অধ্যয়ন কৰি আলোচনা কৰিছে।

ৰং বং তেৰাঙৰ 'ৰংমিলিৰ হাঁহি' ত প্ৰতিফলিত পাৰ্বত্য সমাজ জীৱন ঃ

প্ৰাক্ -স্বাধীনতাৰ কালছোৱাত কাৰবি জীৱন ধাৰালৈ অহা পৰিৱৰ্তন আৰু ন-পুৰণি সংঘাতক আধাৰ হিচাপে লৈ ৰংবং তেৰাঙে *ৰংমিলিৰ হাঁহি* উপন্যাসখন ৰচনা কৰিছে। উপন্যাসখনিৰ পটভূমি পশ্চিম কাৰবি আংলং জিলাৰ টীকাপাহাৰৰ অৱস্থিত ৰংমিলিৰ নামৰ এখন কাৰবি গাঁও। ইয়াৰ কাহিনী কেৱল ৰংমিলিৰ গাঁৱৰে মানুহখিনিৰে নহয়, ইয়াৰ মাজেদি প্ৰতিফলিত হৈছে সমগ্ৰ কাৰবি জাতিটোৰ জীৱন্ত ছবি।[৩] উপন্যাসখন গ্ৰন্থ আকাৰে প্ৰকাশ পোৱাৰ পূৰ্বতে প্ৰকাশ আলোচনীত চোৰা- চোৰাকৈ প্ৰকাশ পাইছিল আৰু উপন্যাসখনে গ্ৰন্থ আকাৰে প্ৰকাশ পাইছিল ১৯৮১ চনত।

ৰংমিলিৰ হাঁহি উপন্যাসখনৰ কাহিনীৰ মাজেৰে অসমৰ পাৰ্বত্য জনজাতি কাৰবি সমাজখনৰ প্ৰায় সকলোবোৰ দিশেই স্থান লাভ কৰিছে। কাৰবি জীৱন ধাৰাৰ এক অমূল্য দলিলস্বৰূপ উপন্যাসৰ মাজেৰে কাৰবি সমাজৰ পৰম্পৰাগত বিভিন্ন দিশ যেনেঃ ধৰ্মীয় বিশ্বাস, সামাজিক জীৱন-ধাৰা, কৃষি-কৰ্ম, উৎসৱ-অনুষ্ঠান, গীত-মাত, লোকবিশ্বাস আদি অতি সুন্দৰ ৰূপত প্ৰতিফলিত হৈছে। বিংশ শতিকাৰ তৃতীয় - চতুৰ্থ দশকটোত কাৰবি সমাজ জীৱনত ভালেকেইটা ভালেকেইটা পৰিৱৰ্তনে দেখা দিছিল। তেনে পৰিৱৰ্তনৰ ভিতৰত কেইটামান উল্লেখযোগ্য ঘটনা হ'ল - কাৰবি পাহাৰত খ্ৰীষ্টান মিছনেৰিৰ আগমনৰ লগতে খ্ৰীষ্ট ধৰ্মই প্ৰচাৰ আৰু প্ৰসাৰতা লাভ কৰা, আধুনিক শিক্ষাৰ সূচনা হোৱা, ঝুম খেতিৰ পৰিৱৰ্তে স্থায়ী খেতিৰ আগমন হোৱা আদি এই বিষয়বোৰ উপন্যাসখনত স্থান লাভ কৰি বিশেষ মাত্ৰা প্ৰদান কৰিছে।[৫] বৰাপানী নৈৰ পাৰৰ ৰংমিলি গাঁৱৰ লোকসকলৰ মাজত সংঘটিত হোৱা ন-পুৰণি সংঘাতক বিশেষভৱে মূল বিষয়বস্তু হিচাপে লৈ ঔপনাসিকে উপন্যাসখন ৰচনা কৰিছে। ৰংমিলি গাঁৱৰ ছাৰবাছা (গাঁওবুঢ়া) ছাৰইক তেৰাঙক কেন্দ্ৰ কৰিয়েই উপন্যাসখনৰ কাহিনী আ গবাঢ়িছে। পৰম্পৰাগত ৰীতি-নীতি, লোকাচাৰৰ প্ৰতি সন্মান জনাই সাধাৰণ ভাৱে জীৱন নিৰ্বাহ কৰা ছাইৰক তেৰাঙে নতুন আৰু পৰিৱৰ্তনক্ষমী সমাজৰ প্ৰতি আগ্ৰহ দেখুৱাইছে। ৰংমিলি গাঁওখনৰ আৰ্থসামাজিক, সাংস্কৃতিক সকলো দিশতে পৰিৱৰ্তন হোৱাটো, অগ্ৰগতি হোৱাটো তেওঁ কামনা কৰে। অৰ্থনৈতিক দিশৰ উন্নতিৰ বাবে তেখেতে ঝুমখেতিৰ পৰিৱৰ্তে পানীখেতি কৰাৰ বাবে ৰাইজক আহ্বান জনাইছে। শিক্ষাৰ প্ৰসাৰে সমাজখনৰ উন্নতি সাধিব বুলি তেখেতে নতুন চামৰ বাবে গাওঁত এখন স্কুল এখন প্ৰতিষ্ঠা কৰাৰ কথা ভাবিছে। কাৰবি পা হাৰলৈ মিছনেৰীসকলৰ আগমনৰ লগতে আধুনিক শিক্ষাৰ প্ৰসাৰ কামটোৰ তেওঁ আগ্ৰহ দেখুৱাইছে। কিন্তু এচাম মানুহে মিছনেৰীসকলৰ আগমনৰ বাবেই যে গাওঁবাসীৰ মাজত সঘনে অশান্তিকৰ পৰিৱেশ আৰু দুৰ্দ্দশাৰ দিনে দেখা দিছে বুলি ভাবিবলৈ লৈছে। ছাৰইক তেৰাঙে অৱশ্যে মিছ্নেৰীসকলক আগমন আৰু আধনিক শিক্ষাৰ প্ৰসাৰক সমাজৰ বাববে প্ৰত্যাহ্বান বুলি ভবা নাই। গাওঁখনৰ কল্যানৰ বাবে তেওঁ ঘৰতে চ'জুন পূজা পাতিছে। সমাজখনৰ সামূহিক উন্নতিৰ ব াবে খৰছিং তেৰাং, ছেমছনছিং ইংতিহঁতে নেতৃত্বলৈ কাৰবি আংলং জিলা গঠনৰ দিশটো তেওঁ সমৰ্থন আগবঢ়াইছে। পুৰণি নীতি-নিয়ম সাৰতি থকা কাৰবি সমাজতন্ত্ৰৰ প্ৰধান বিষয়া 'হাবে- পিনপ' সকলৰ লগত তেওঁৰ পৰিৱৰ্তনকাৰী চিন্তাৰ সংঘাত হৈছে। এই সংঘাত উপন্যাসখনৰ মূখ্য বিষয়বস্তু।

ছাইৰকৰ জীয়ৰী অমফু আৰু জিৰছঙৰ ক্লেদুন (সহকাৰী সভাপতি) ছেং তেৰণৰ মাজৰ প্ৰেম কাহিনীক উপন্যাসখনৰ মূল প্ৰৱাহৰ সৈতে সংগতি ৰাখি সংযোগ কৰিছে। অফুম আৰু ছেম তেৰণৰ প্ৰেমৰ মাজত বাধা ৰূপে থিয় দিছে জিৰছঙৰ ক্লেংছা ৰপ (প্ৰধান দলপতি) ৰফ ইংতি। অফুমৰ বাবেই ক্লেদুন আৰু ক্লেংছা ৰপৰ মাজত সংঘাতৰ সৃষ্টি হৈ্ছে। এই সংঘাতে গাওঁখন হাঁহিয়তাৰ প্ৰাত্ৰ হ'ব বুলিয়েই অফুৱে প্ৰেম বৰ্জন কৰিছে আৰু দেউতাকে পচন্দ কৰা গাঁৱৰে ল'ৰা ৰংমান্দুলৈ বিয়া হৈছে।

উপন্যাসখনৰ অমফুৰ প্ৰেমৰ ত্যাগ, গাঁখনত পশ্চিমীয়া শিক্ষা, ধ্যান-ধাৰণাৰ প্ৰভাৱ আদিয়ে গাওঁখনলৈ কিদৰে পৰিৱৰ্তন আহিছে ঔপন্যাসিকে উপন্যাসখনত প্ৰকাশ কৰিছে। সমাজখনলৈ বহিৰাগত লোকৰ আগমন আৰু কানিৰ বেয়া প্ৰভাৱ আদি বিভিন্ন দিশ উপন্যাসৰ মূল বিষয়বস্তুৰ সৈতে উপন্যাসিকে প্ৰকাশ কৰিছে।

ৰংমিলিৰ হাঁহি উপন্যাসখনত কাৰবিসকলৰ সামাজিক-সাংস্কৃতিক জীৱনৰ বিভিন্ন দিশে প্ৰকাশ লাভ কৰিছে। ঊণবিংশ শতিকাৰ শেষৰ আৰু বিংশ শতিকাৰ আৰম্ভণিৰ সময়চোৱাৰ কাৰবি সমাজখনলৈ অহা পৰিৱৰ্তনক ঔপন্যাসিক ৰংবং তেৰাঙে ধৰি ৰখাৰ প্ৰয়াস কৰিছে। কাৰবিসকলৰ সমাজ

ব্যৱস্থা, শিক্ষা ব্যৱস্থা, ধৰ্মবিশ্বাস, অন্ধবিশ্বাস,কাৰবি আংলং জিলা গঠন, মিচনেৰী সকলৰ আগমন,কানি বৰবিহৰ প্ৰচলন আদি বিভিন্ন দিশ উপন্যাস খনে তুলি ধৰিছে।

ৰংমিলিৰ হাঁহি উপন্যাসখনৰ বিষয়বস্তু উপস্থাপন কৰোঁতে সমাজখনৰ বিভিন্ন দিশ প্ৰতিফলিত হৈছে। উপন্যাসখনৰ সমাজ-ব্যৱস্থালৈ মন কৰিলে দেখা যায় যে - প্ৰাক-স্বাধীনতাৰ সময়চোৱাত কাৰবি সমাজতন্ত্ৰ ব্যৱস্থাৰ বিষয়ে উপন্যাসখনিত বহু তথ্যপোৱা যায়। সেই সময়ৰ তাকবি সমাজৰ যি ছবি উপন্যাসখনত দাঙি ধৰা হৈছে তাৰ পৰা জনা যায় যে কাৰবিসকলৰ ৰজাৰ তত্বাৱধানত বহুতো কাম সম্পাদন হৈছিল। সৰু-ডাঙৰ সমস্যাবোৰক লৈ কাৰবি ৰাইজ তথা জনসাধাৰণে ৰজাৰ ওচৰলৈ গৈছিল। কাৰবি ৰাজ্যৰ ৰাজধানী 'ৰংহাং ৰংবঙ'ত ৰজাই বসবাস কৰিছিল । ৰজাৰ শাসন ব্যৱস্থাত একেবাৰে সৰু গোট হৈছে গাঁও। গাঁৰৰ শাসক হ'ল গাঁওবুঢ়া। যিকোনো সমস্যা আহিলে গাঁওবুঢ়াৰ ওচৰলৈ গৈ উচিত ন্যায় বিচাৰিব পাৰি। এটা বৃহৎ অঞ্চল জুৰি এটা লংৰি গঠন কৰা হয়। লংৰিৰ শাসনকৰ্তা হ'ল হাবে। হাবেইসকলক ৰজাই নিয়োগ কৰে। কাৰবি ৰাজ্যত বাৰটা লংৰি আছে। উপন্যাসখনত উমলাৰং, হাবেপি, উমাহা, চিঙ্ঠ, ৰংহাং, আমৰি আদি লংৰি আৰু লংৰিৰ হাবেসকলৰ কথা উল্লেখ আছে। একো একোটা লংৰিত কেইবাখনো গাওঁ অৰ্ন্তভুক্ত কৰা হয়। সেয়ে এজন হাবেৰ অধীনত কেইবাখনো গাওঁবুঢ়া থাকে। জনসাধাৰণৰ সৈতে গাওঁবুঢ়া আৰু হাবেৰ প্ৰত্যক্ষ সৰ্ম্পক থাকে। লংৰিৰ পৰ্যবেক্ষক ৰাজবিষয়া হ'ল পিনপ' । পিনপ', 'কাথাৰপ', 'দিলি', পাতৰ আদি বিষয়াসকল ৰাজধানীত থাকে। এই গোটেই ব্যৱস্থাটোৰে মূল ভেটি হ'ল সৰ্বসাধাৰণ ৰাইজ 'ছ'লাংদ"। সৰ্বসাধাৰণ লোকসকলে বসবাস কৰা অঞ্চলক জিৰ'ই বোলা হয়।[৮]

কাৰবি সমাজ জীৱনত গাওঁবুঢ়াজনৰ ভূমিকা অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ। আমি উপন্যাসখনত উল্লেখ থকা ছাৰইক তেৰাঙৰ ভূমিকাৰ জৰিয়তে সমাজ ব্যৱস্থাত গাওঁবুঢ়াৰ গুৰুত্ব সৰ্ম্পকে জানিব পাৰি। ৰংমিলি গাওঁখনৰ উন্নতিৰ আৰু কল্যানৰ বাবে তেৰাঙ সদায় তৎপৰ হৈ থাকে। কাৰবি সমাজ ব্যৱস্থাত কাৰবিসকলৰ ডেকাচাঙ জিৰছঙৰ সুশৃংখলিত নীতি-নিয়মৰ বিষয়ে উপন্যাসখনৰ জৰিয়তে জানিব পাৰি। এই জিৰচঙত কাৰবি যুৱসমাজে সমূহীয়াকৈ কাম কৰে আৰু সমাজৰ যিকোনো কামত সহায়ৰ হাত আগবঢ়াইছে। ছাৰবাছাই জিছঙৰ সকলোকামৰ তদাৰক কৰে। উপন্যাসখনত ছাৰবাছা হিচাপে থকা ছাইৰাক তেৰাঙে দেখা পাইছে যে জিৰচঙৰ ডেকা-গাভৰু সকলৰ মাজত মিলা-প্ৰীতিৰ অভাৱ হৈছে আৰু তেওঁ তাৰ বাবে তেখেত চিন্তিত হৈ পৰিছে। কাৰণ গাঁৰৰ ডোক চামৰ মাজৰ ভেদভাৱে সমাজ ব্যৱস্থাত বেয়া প্ৰভাৱ পেলায়।

সমাজ এখনৰ বিকাশৰ ক্ষেত্ৰত শিক্ষাই অতি গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰে। শিক্ষাৰ বিকাশে সমাজ এখনৰ আমূল পৰিবৰ্তনৰ সাধিব পাৰে। ৰংমিলিৰ হাঁহিত উপন্যাসিকে শিক্ষাৰ দিশত পিছপৰি থকা কাৰবি সমাজখনৰ ছবি তুলি ধৰিছে।

মিছনেৰীসকলৰ আগমনে শিক্ষাৰ পোহৰ নপৰা কাৰবি পাহাৰত কিছু শিক্ষাৰ পোহৰ পৰিছে। তেওঁলোকে ঠায়ে ঠায়ে বিদ্যালয় স্থাপনৰ ব্যৱস্থা কৰিছে। নিজে অশিক্ষিত হৈয়ো ছাইৰক তেৰাঙে নতুন চামৰ শিক্ষাৰ কথা ভাবি গাঁৰত এখন স্কুল পতাৰ ব্যৱস্থা কৰিছে। আনহাতে গাঁৰত স্কুল প্ৰতিষ্ঠা নোহোৱাৰ বাবে তেখেতৰ একমাত্ৰ ল'ৰা হেমাইক কামপুৰত পঢ়োৱাৰ ব্যৱস্থা কৰিছে। ৰংমিলিৰ হাঁহি উপন্যাসখনত হিন্দু আৰু খ্ৰীষ্টিয়ান দুটা ধৰ্মৰ বিষয়ে উল্লেখ আছে। উপন্যাসখনত দুয়োটা ধৰ্মৰ মানুহৰ মাজত মিলা-প্ৰীতিৰ ভাৱ পৰিলক্ষিত হৈছে। উপন্যাস খনত পৰম্পৰাগতভাৱে হিন্দু ধৰ্মৰ লোকসকলে বিভিন্ন উৎসৱ -পাৰ্বন পালন কৰাৰ লগতে বৰদিন পালন কৰাৰ কথাও উল্লেখ আছে।

সমাজ এখনৰ অন্যতম সাংস্কৃতিক উপাদান উৎসৱ-পাৰ্বণ। কাৰবিসকলৰো সামাজিক জীৱন নানা পূজা-পাতল, উৎসৱ -পাৰ্বণ আদিৰে পৰিপূৰ্ণ। ৰংমিলিৰ হাঁহিতো কিছুমান উৎসৱ-পাৰ্বণ, পূজা-পাতলৰ লগতে ধৰ্মীয় চিন্তাৰ দিশ প্ৰকাশিত হৈছে। উপন্যাসখনত ৰংমিলি গাওঁখনৰ উন্নতিৰ হ'কে গাওঁবুঢ়া ছাইৰক তেৰাঙে চ'জুন পূজাৰ বাবে দিন বাৰ চাই সকলোৰে পৰা সহায় আৰু সহযোগ বিচাৰিছে। এই পূজাৰ অপৰিহাৰ্য অংগ হৈছে বনশাক, গতিকে গাঁৰৰ ডেকা-গাভৰুসকলে টীকা পাহাৰত বনশাক ঢেঁকীয়া তুলি আনন্দমনেৰে ঘৰলৈ উভতিছে। সকলোৱে মুখত কেৱল হাঁহি, যেন এইয়া ৰংমিলিৰ হাঁহি। পৰিয়ালৰ মংগলৰ বাবে এই পূজা পালন কৰা হয়। ইয়াৰ উপৰিও উপন্যাসত বৰ্ণিত আন আন উৎসৱ-অনুষ্ঠানসমূহ হৈছে - হমফু পূজা, হাচ্ছা কেকান, ৰ'লকেতৰ পূজা আদি।

কাৰবিসকলৰ প্ৰধান খাদ্য ভাত। ঝুমখেতিৰ উপৰিও কাৰবিসকলে পানীখেতিও কৰে। ঘৰৰ বাৰীতে সকলো ধৰণৰ শাক-পাচলিৰ খেতি কৰে। ৰংমিলিৰ হাঁহিত পূজা-

পাতল আদিত তেওঁলোকে বিভিন্ন পৰম্পৰাগত ব্যঞ্জনেৰে ৰন্ধাৰ কথা উপন্যাসখনত উল্লেখ আছে। উপন্যাসখনত মাছ, গাহৰি, কুকুৰা, পহু, গুই আদি আমিষ আহাৰ গ্ৰহণ কৰাৰ কথা উল্লেখ আছে। কাৰবি সমাজত মদ অপৰিহাৰ্য। ঘৰলৈ আলহী আহিলে মদেৰে আপ্যায়ন কৰে। উপন্যাসখনৰ পাতত তেওঁলোকৰ সমাজত মদৰ ব্যৱহাৰ সম্পৰ্কে এনেদৰে উল্লেখ আছে-

" ফটিকা আৰু লাওপানী, কাৰ্বি কৃষ্টিৰ স'তে ইয়াৰ এৰাব নোৱাৰা সম্পৰ্ক। জন্ম, মৃত্যু, বিবাহ এই ত্ৰিকাৰ্যৰ বাবে ফটিকা অআৰু লাওপানী অপৰিহাৰ্য। কাৰ্বি জীৱনৰ হাঁহি আৰু চকুপানী যেন লাওপানীৰ অপূৰ্ব মায়াজালতহে বন্দী। স্বপ্নলব্ধ 'থাপ' ৰদ্বাৰা সৃষ্টি হোৱা এই হৰলাং কাৰবি এক পূৰঠ কঠীয়া।"[৯]

উপন্যাসখনত পাতত সমাজখনত প্ৰচলিত লোকবিশ্বাসৰ দিশ প্ৰতিফলিত হৈছে। গাহৰি-কুকুৰা আদি আগবঢ়াই পূজা কৰিলে অপায় অমংগল দুৰ হোৱাৰ লগতে ভাল ফল পোৱা যায় বুলি বিশ্বাস কৰে। গাওঁবুঢ়া ছাইৰক তেৰাঙৰ ঘৰত ছজুন পূজাত গাহৰি আৰু কুকুৰাৰ লগত জড়িত লোক বিশ্বাস সম্পৰ্কে উপন্যাসখনৰ পাতত বৰ্ণিত আছে এনেদৰে-

"পিৰথাৎ গাহৰি কটাটো চ'জুন পূজাৰ এক উল্লেখনীয় দিশ। গাহৰি কলিজা আৰু হাওঁফাওঁ অন্তৰালত নিহিত থাকে গৃহস্থৰ ৰহস্যময় ভৱিষ্যৎটো। কলিজা আৰু হাওঁ ফাওঁ উলিয়াই মানে পূজাৰীয়ে বাকীবোৰ দেৱতালৈ কুকুৰা চৰাই কাটি পূজাৰ নৈবেদ্য আগবঢ়ালে। হাৰাতা দেৱতালৈ আগবঢ়োৱা চৰাইৰ মৃত -অৱস্থানটো চমৎকাৰ । খেতি পথাৰ বাল হোৱাৰ ইংগিত। কাৰণ, হাৰাতা হ'ল- মাটিৰ পলস নষ্ট কৰা অপদেৱতা। এইজন দেৱতা সন্তোষ হোৱা মানেই খেতিপথাৰো ভাল হোৱাৰ লক্ষণ বুলি কাৰবিসকলে বিশ্বাস কৰে। "[১০]

আনহাতে মিছনেৰী সকল যিহেতু বহিৰাগত লোক, তেওঁলোকৰ আগমনে সমাজখনৰ দুখ-দুৰ্দশা বৃদ্ধি পাইছে বুলি সমাজৰ এচামে বিশ্বাস কৰিছে। এই বিষয়ে উপন্যাসখনৰ কাহিনীত উল্লেখ কৰিছে এনেদৰে-

"যোৱাবাৰৰ ৰ'থাতলাংচ' বজাৰত লাংচিংবোৰ গাঁৱৰ নী কানংহঁতে কথা পতা শুনিছিলো। বগা চাহাব অহাৰ পৰাহে বোলে ধান খেতিও কমি আহিল। লংৰিত খ্ৰীষ্টিয়ান ধৰ্ম সোমোৱা কাৰণে হেমফু দেৱতাৰ খং। খেতি বেয়া হোৱাৰ সেয়ে কাৰণ হেনো। "[১১]

প্ৰতিটো জনজাতিৰে কিছুমান নিজস্ব সাজপাৰ আৰু আ-অলংকাৰ আছে। সেইদৰে কাৰবিসকলৰো বিভিন্ন পৰম্পৰাগত সাজপাৰ আৰু আ-অলংকাৰৰ উল্লেখ আছে। কাছাং ৰংহাংপীয়ে পৰিধান কৰা আ-অলংকাৰ আৰু সাজপাৰৰ জৰিয়তে ঔপন্যাসিকে কাৰবি নাৰীৰ সাজপাৰ আৰু আ-অলংকাৰৰ বিষয়ে উল্লেখ কৰিছে-

"তাই পৰিধান কৰা আ-অলংকাৰবোৰে কাৰ্বি নাৰীৰ সৌন্দৰ্যবোধৰ পৰিচয় দিব পাৰিছে। তাইৰ দুয়োখন হাতৰ ৰূপৰ খাৰু ৰই পেংখাৰা। কাণ দুখনত ৰূপৰ ফুলথুৰীয়া ন'থেংপি। জুইৰ পোহৰত লৰি থকা ৰূপৰ থুৰীয়া দুটা চিক্‌মিকাই আছে। বুঢ়া আঙুলিৰ বাদে কেউটা আঙুলি ৰূপ আৰু পিতলৰ আঙুঠি - আৰ্নানেৰে ঠাহ খোৱা। কপালৰ সোঁ-মাজেদি নাকৰ ওপৰেৰে থুঁতৰিলৈকে বৈ পৰা এডাল কলা আঁক- দুক্। ক'লা দুক্ যেন কাৰবি নাৰীৰ চিৰন্তন ঐতিহ্যৰ স্বাক্ষৰ। মেৰিয়াই থ'ব পৰা সৰু মোনা 'চুই' ৰ পৰা পাণছালি উলিয়াই তাই চোবাবলৈ ধৰিলে। ধুনীয়া মোনাৰ চেইনডালো ৰূপৰ। ক'লা-ৰঙা সূতাৰে বনকৰা মোনাৰ ওপৰত শাৰী শাৰীকৈ সিকি - আধলিবোৰ লগোৱা। মুদ্ৰাবোৰত মহাৰাণীৰ মোহৰ জিলিকি আছে। এনে 'চুই' হাতত থকাটো কাৰ্বি নাৰীৰ পৰিচায়ক।"[১২]

উপন্যাসখনৰ পাতত ঔপন্যাসিকে কাৰবিসকলৰ সংস্কৃতিৰ অন্যতম উপাদান গৃহ সজ্জাৰ বিষয়ে বৰ্ণনা কৰিছে। এনেদৰে- "পাঁচ-ছয় ফুট উখ চাঙৰ ওপৰত সজা এটি চাংঘৰ। বৰঘৰ হেম্‌পি- পূৰমুৱা কৰি সজোৱা। হেম্‌পিৰ ফালে মুখ কৰি ছাৰইকৰ চ'ৰাঘৰ -হংফাৰ্লা। হেম্‌পি আৰু হংফাৰ্লাৰ মাজত এখনি বহল মুকলি চাং-চোতাল। চাং-চোতালৰ সোঁ-দাঁতিতে চাংঘৰলৈ উঠা জখলা-দন্দন্।"[১৩]

ৰং বং তেৰাঙে তেখেতৰ কাহিনীযুক্ত সাহিত্যৰ প্ৰায়বোৰ চৰিত্ৰ কাৰবি সমাজখনৰ পৰাই বুটলিছে। চৰিত্ৰসমূহৰ জৰিয়তে উপন্যাসখনৰ কাৰবি সমাজখনৰ বিভিন্ন দিশ তুলি ধৰিছে। *ৰংমিলিৰ হাঁহি* ত প্ৰধান চৰিতৰে হিচাপে ছাৰবাছা ছাইৰক তেৰাঙৰ নাম প্ৰথমেই লব লাগিব। কাৰবি সমাজখনৰ সকলো ৰীতি-নীতি, সংস্কৃতিৰ প্ৰতি সন্মান জনাই আধুনিকত ধ্যান ধাৰণাৰ সৈতে খোজ মিলাই আগবাঢ়িবলৈ প্ৰয়াস কৰা ছাইৰক তেৰাঙক সমাজৰ এজন সচেতন প্ৰতিনিধি হিচাপে উপন্যাসৰ পাতত অংকন কৰিছে।

লৰেন্স হান্সে উপন্যাসখনৰ এটা উল্লেখযোগ্য চৰিত্ৰ। লৰেন্স নিজে খৃষ্টান ধৰ্ম গ্ৰহন কৰিছে যদিও খৃষ্ট ধৰ্ম গ্ৰহন

নকৰাসকলৰ প্ৰতি তেওঁ সেয়জ্ঞান কৰা নাই। শিক্ষাৰ প্ৰতি আগ্ৰহী হান্সে ল'ৰা-ছোৱালী কেইটাক নগাঁও, শ্বিলং আদিত পঢ়োৱাইছে। ছাইৰকৰ ল'ৰ হেমাইকো বাহিৰত পঢ়োৱাবলৈ উৎসাহ যোগাইছে।

কানি বৰবিহে জুৰুলা কৰা কাৰবি সমাজখনৰ মানুহৰ জীৱন কেনেদৰে দুৰ্বিসহ কৰি তুলিছে উপন্যাসখনত লিন্দক চৰিত্ৰটোৰ জৰিয়তে। কানিৰ ৰাগীত মতলীয়াসকলে নিজৰ জীৱনটো কেনেকৈ তিলতিলকৈ শেষ কৰে লিন্দক চৰিত্ৰটোৰ জৰিয়তে ঔপন্যাসিকে তুলি ধৰিছে। উপন্যাসকনৰ ত্ৰিকোণ প্ৰেমৰ চৰিত্ৰকেইট - ৰফং, অমফু আৰু ছেংতেৰণ। অমফু ছেংতেৰণৰ প্ৰেমত পৰিছিল যদিও তাইক লৈয়েই ৰফং আৰু ছেংতেৰণৰ মাজত কাজিয়াৰ সৃষ্টি হোৱাৰ বাবে সমাজখনৰ হাঁহি ম্লান নপৰক বুলিয়েই দেউতাক ছাইৰকৰ কথা মতে ৰমান্দুলৈ বিয়া হৈছে। ইয়াৰ উপৰি ছাইৰকৰ পত্নী কাছাং ৰংহানপী, লিন্দকৰ পত্নী কাৰেং আদি উপন্যাসখনৰ উল্লেখযোগ্য কাৰবি সমাজৰ নাৰী চৰিত্ৰ।

এনেদৰে পাৰ্বত্য জনজাতি কাৰবিসকলৰ সমাজ ব্যৱস্থা, সাংস্কৃতিক দিশ- কৃষিকৰ্ম, গীত-মাত, লোকাচাৰ আদিও বিভিন্ন দিশবোৰৰ ৰূপায়নে উপন্যাসখনক বিশেষ মাত্ৰা প্ৰদান কৰিছে। কাৰবি সমাজক বাস্তৱ জীৱনৰ অংকনে উপন্যাসখনক শ্ৰেষ্ঠ উপন্যাসৰ শাৰীলৈ উন্নীত কৰিছে।

সামৰণি ঃ

অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যৰ অন্যতম ধাৰা জনজাতীয় জীৱনভিত্তিক উপন্যাসসমূহে অসমীয়া সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনক বিশেষভাৱে সমৃদ্ধ কৰি আহিছে। ৰজনীকান্ত বৰদলৈৰ পৰা আৰম্ভ হোৱা এই শ্ৰেণীৰ উপন্যাসৰ ধাৰাই বৰ্তমান সময়লৈকে বিভিন্নজন জনজাতীয় আৰু জনজাতীয়মূলৰ লেড্ৰৰ হাতত বিকাশ লাভ কৰিছে। ঐতিহাসিক আৰু সাহিত্যিক উভয় দৃষ্টিকোণৰ পৰাই গুৰুত্বপূৰ্ণ এই শ্ৰেণীৰ উপন্যাসসমূহ জনজাতীয় জীৱনধাৰাৰ দলিল স্বৰূপ। মন কৰিবলগীয়া যে, যিসময়ত অসমৰ জনজাতিসমূহে নিজৰ স্বকীয়তা ৰক্ষাৰ আন্দোলনত নামিছে তেনে সময়তো কিন্তু জনজাতীয় লেড্ৰ সকলে অসমীয়া ভাষাত উপন্যাস ৰচনা কৰি নিজা জনজাতিটোৰ সমাজ জীৱনৰ বৈচিত্ৰ্যতাক তুলি ধৰি সাহিত্যৰ চৰ্চা অক্ষুন্ন ৰাখিছে। কিন্তু দুৰ্ভাগ্যজনক ভাৱে,বিভিন্ন জাতীয় আৰু ৰাষ্ট্ৰীয় সাহিত্য অনুষ্ঠানত তেওঁলোকৰ প্ৰান্তীয় হৈ থকা পৰিলক্ষিত হয়।

সাম্প্ৰতিক সময়ত জনজাতীয়সকলৰ মাজত সংযোগী ভাষা হিচাপে হিন্দী ভাষাই বিশেষ ভাৱে প্ৰচাৰ আৰু প্ৰসাৰ লাভ কৰা পৰিলক্ষিত হৈছে। জনজাতীয় সকলৰ মাজত শিক্ষাৰ প্ৰচাৰ আৰু প্ৰসাৰ ঘটাৰ লগে লগে হিন্দী ভাষাটো বিভিন্ন সাহিত্যৰ বিধাত এওঁলোকে ৰচনা কৰিছে যদিও কোনো ধৰণৰ গৱেষণামূলক আলোচনা হোৱা আমাৰ দৃষ্টিগোচৰ হোৱা নাই। এনে আলোচনাৰ বৰ্তমান সময়ত যথেষ্ট প্ৰাসংগিকতা আছে, যিসমূহে ভৱিষ্যত গৱেষণাৰ বাট মুকলি কৰিব। ❑

প্ৰসংগসূত্ৰ ঃ

১. মজুমদাৰ,বিমল, *জনজাতি আৰু গাৰো জনজাতি*,গুৱাহাটী ,বীণা লাইব্ৰেৰী, ২০০৪, পৃ-১৫

২. হাজৰিকা, *জ্যোতৰেখা, কাৰবি ভাষা -সাহিত্যৰ অধ্যয়ন,* বনলতা প্ৰকাশন, প্ৰথম প্ৰকাশ-২০২৩,পৃ-১৮২

৩. বৰপূজাৰী, জিতাঞ্জলি, *অসমীয়া উপন্যাসত উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলৰ জনজাতীয় জীৱন, এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন,* পৃ-২০৩

৪. হাজৰিকা, জ্যোতিৰেখা, উল্লিখিত গ্ৰন্থ,পৃ-১৮৫

৫. হাজৰিকা, জ্যোতৰেখা, উল্লিখিত গ্ৰন্থ,পৃ-১৮৫

৬. হাঞ্চেপী, গীতা, *নিৰ্বাচিত উপন্যাসৰ আলোচনা,* জাগৰণ সাহিত্য প্ৰকাশন, পৃ-১০০

৭. হাজৰিকা, জ্যোতিৰেখা, উল্লিখিত গ্ৰন্থ,পৃ-১৮২

৮. হাঞ্চেপী, গীতা, উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃ-১২৬

৯. তেৰাং, ৰং বং, *ৰংমিলিৰ হাঁহি,* অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, দশম সংস্কৰণ, ২০২২,পৃ-২৫

১০. তেৰাং, ৰং বং, উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃ-৩৭

১১. তেৰাং, ৰং বং, উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃ-১৯

১২. তেৰাং, ৰং বং, উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃ-১০

১৩. তেৰাং, ৰং বং, উল্লিখিত গ্ৰন্থ, পৃ-৯

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

মূখ্য উৎস ঃ

তেৰাং, ৰংবং,*ৰংমিলিৰ হাঁহি* , গুৱাহাটীঃ অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, ২০২২,দশম সংস্কৰণ

গৌণ উৎস ঃ

গৱেষণা গ্ৰন্থ ঃ

দেৱী, অণুৰাণী, *ৰংবং তেৰাঙৰ গল্প-উপন্যাসত কাৰ্বি জীৱন চিত্ৰঃ এটি সমীক্ষাত্মক অধ্যয়ন,* গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়ৰ পিএইচ.ডি ডিগ্ৰীৰ বাবে প্ৰদান কৰা গৱেষণা গ্ৰন্থ,২০১১

শইকীয়া, ঘনকান্ত, *অসমীয়া উপন্যাসত কাৰ্বি লোকসংস্কৃতি,* গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়ৰ পিএইচ.ডি. ডিগ্ৰীৰ বাবে প্ৰদান কৰা গৱেষণা গ্ৰন্থ,২০১৭

গ্ৰন্থ ঃ

ঠাকুৰ,নগেন(সম্পা.) ,*এশ বছৰৰ অসমীয়া উপন্যাস,* গুৱাহাটী ঃ সাহিত্য অকাডেমি আৰু গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়ৰ অসমীয়া বিভাগ,২০০০

দাস, অমল চন্দ্ৰ (সম্পা), *অসমীয়া উপন্যাসৰ পৰিক্ৰমা* , গুৱাহাটীঃ বনলতা,২০১২ ,প্ৰথম প্ৰকাশ

নাথ, প্ৰফুল্ল কুমাৰ,*অসমীয়া উপন্যাসৰ ধাৰা,* গুৱাহাটীঃ ৰেখা প্ৰকাশন, ২০১১, জানুৱাৰী, প্ৰথম প্ৰকাশ,

বৰগোহাঞি, হোমেন (সম্পা.) *অসমীয়া সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী (ষষ্ঠ খণ্ড),* গুৱাহাটী ঃ আনন্দৰাম বৰুৱা ভাষা-কলা-সংস্কৃতি সংস্থা,২০১৫, তৃতীয় প্ৰকাশ,

বৰপূজাৰী, জিতাঞ্জলি, *অসমীয়া উপন্যাসত জনজাতীয় জীৱন,* গুৱাহাটী ঃ চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, **১৯৯৯**

ভৰালী, শৈলেন, *অসমীয়া উপন্যাসৰ গতি-প্ৰকৃতি,* গুৱাহাটীঃ সাহিত্য অকাডেমি, কলকতা, ২০১৭, তৃতীয় প্ৰকাশ

শইকীয়া, চিত্ৰজিৎ ,*জনজাতীয় মূলৰ অসমীয়া ঔপন্যাসিকৰ উপন্যাস বিচাৰ আৰু বিশ্লেষন,* ডিব্ৰুগড় ঃ বনলতা প্ৰকাশন, ২০১৭

শৰ্মা, গোবিন্দ প্ৰসাদ, *অসমীয়া উপন্যাসৰ ইতিহাস* , গুৱাহাটী ঃজ্যোতি প্ৰকাশন, ১৯৯৫, দ্বিতীয় সংস্কৰন

শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰনাথ, *অসমীয়া উপন্যাসৰ গতিধাৰা,* গুৱাহাটীঃ সৌমাৰ প্ৰকাশ, ২০১৩, তৃতীয় প্ৰকাশ

হাজৰিকা, জ্যোতিৰেখা, *কাৰবি ভাষা-সাহিত্যৰ অধ্যয়ন,* ডিব্ৰুগড,ঃ বনলতা প্ৰকাশন, প্ৰথম প্ৰকাশ,

হাঞ্চেপী, গীতা, *কাৰবি সাহিত্য-সংস্কৃতিৰ আভাস,* গুৱাহাটীঃ সম্প্ৰীতি প্ৰকাশন, ডিচেম্বৰ, ২০১৯, প্ৰথম প্ৰকাশ

হাঞ্চেপী, গীতা, *নিৰ্বাচিত উপন্যাসৰ আলোচনা* ঃ জাগৰণ সাহিত্য প্ৰকাশন, ২০২২,প্ৰথম প্ৰকাশ

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

শংকৰদেৱৰ বৰগীতত কৃষ্ণ চেতনা ঃ এক অধ্যয়ন

হিনাশ্ৰী দিহিঙীয়া

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

শংকৰদেৱ আৰু মাধৱদেৱৰ দ্বাৰা ৰচিত, শাস্ত্ৰীয় ৰাগ-তাল বিশিষ্ট, চৈধ্য প্ৰসংগৰ পৰিক্ৰমাত স্থান লাভ কৰা, ব্ৰজবুলি ভাষাত ৰচিত আৰু শৃংগাৰা দিলৌলিক ভাব বিমুক্ত গীতেই বৰগীত। (ডঃ নবীনচন্দ্ৰ শৰ্মা, মহাপুৰুষ শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱ)।

কৃষ্ণ আমাৰ নিচেই কাষৰ। শংকৰদেৱৰ বৈষ্ণৱাদৰ্শ প্ৰচাৰৰ কেন্দ্ৰীয় চৰিত্ৰ আছিল কৃষ্ণ। এই কৃষ্ণ সুদূৰ উত্তৰ ভাৰতৰ পৰা অসম সোমাওঁতে হৈ পৰিছে অসমীয়া মাত-কথাৰ আমাৰে দীনবন্ধু চিনাকি এটা সত্বা। কৃষ্ণ কেৱল চৰিত্ৰ নহয় কৃষ্ণ এটা অস্তিত্ব, উপলব্ধি, বৈষ্ণৱবাদৰ দৰ্শন। কৃষ্ণৰ এক বিৰাট ৰূপ বিৰাজমান। কৃষ্ণ চৈতন্য কৃষ্ণ সনাতন, কৃষ্ণ ব্ৰহ্ম। এয়ে ভাৰতীয় আধ্যত্মবাদৰ দৰ্শন। পৃথিৱীৰ যত জীয়া জড় আছে সকলোৰে সৃষ্টিৰ মূল কৃষ্ণ, জগজন, জনাৰ্দন।

কৃষ্ণ চেতনাৰ মূৰ্ত-বিমূৰ্ত দুয়োটা ৰূপৰে নান্দনিক উপস্থাপন শংকৰদেৱৰ বৰগীতসমূহ শাস্ত্ৰীয় ৰাগ-তালযুক্ত ভাবগধুৰ, কৃষ্ণ গুণানুকীৰ্তনৰ বাবে ৰচিত। বৰগীতৰ সুৰ মাধুৰীয়ে ভাষা বুজি নোপোৱা লোক এজনকো স্বৰ্গীয় অনুভৱ দিব পাৰে, এয়ে গানৰ ভাষা। অস্তিত্বৰ দৰ্শনটোও ঠিক একেধৰণৰ। ভাবৰ গভীৰতালৈ যিয়েই গৈছে সি বিমুখ হৈ ওভতা নাই। সেয়ে কৃষ্ণ বন্দনাক লৈ ভাৰতবৰ্ষৰ বিভিন্ন প্ৰান্তত বিভিন্ন বৰগীত ৰচনা হৈছে। শংকৰদেৱৰ বৰগীতত ভাবৰ সম্পূৰ্ণতা আৰু কৃষ্ণ প্ৰেমৰ অতীন্দ্ৰিয় দৰ্শনটোৰ বাবে বৰগীতসমূহ বিৰল।

বীজ শব্দ ঃ

কৃষ্ণ চেতনা, শংকৰদেৱ, বৰগীত।

আৰম্ভণি ঃ

কৃষ্ণৰ দৰ্শন ধৰ্মৰ উৰ্দ্ধত একেধৰণৰ অস্তিত্বৰ দৰ্শন। এই দৰ্শনত প্ৰেম, দয়া, কৰুণা, প্ৰতিটো হৃদয়ৰ মধুৰতম ভাব সংগিক্ত হৈ আছে। শংকৰদেৱে এই ভাববোৰ উপলব্ধি কৰিছিল আৰু বৰগীতৰ মাজেৰে কৃষ্ণ চেতনা প্ৰবল কৰি তুলিছিল। কৃষ্ণ চেতনাৰ আধাৰ আধ্যাত্মবাদ, এই আধ্যাত্মবাদৰ দৰ্শনক হোজা এজনেও বুজিব পাৰে বৰগীতৰ মাজেৰে। শংকৰদেৱ হৃদয়ৱান আছিলে। এজন আধুনিক মনোবিজ্ঞানীৰ দৰে তেওঁ বুজি উঠিছিল অসমৰ মানুহক। তেওঁ এই কৃষ্ণ চেতনা প্ৰতিষ্ঠাৰ আঁৰত সমাজ সংস্কাৰৰ মহৎ উদ্দেশ্য। নৱবৈষ্ণৱ আন্দোলনৰ গতি ধাৰাক স্বৰান্বিত কৰিছিল বৰগীতে।

কৃষ্ণ চেতনাৰ গভীৰ দৰ্শনক বৰগীতসমূহ কেনেদৰে সাধাৰণ মানুহৰ মাজলৈকে বিয়পাই দিছিল, চিন্তাধাৰাৰ উত্তৰণ ঘটাই আধ্যাত্মবাদৰ ওখ ভেঁটি স্থাপন কৰিছিল।

গৱেষক ছাত্ৰী, অসমীয়া বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয়, গুৱাহাটী-৭৮১০০১
৭০০২৪৮৭৯৫৫
hinashree21@gmail.com

অসমৰ সংস্কৃতিত কৃষ্ণৰ প্ৰৱেশত শংকৰদেৱৰ বৰগীতৰ ভূমিকা কেনে। ব্যাপক অৰ্থত শংকৰদেৱৰ বৰগীত আৰু কৃষ্ণ চেতনা এই সম্পৰ্কীয় সু-গভীৰ বিশ্লেষণৰ আলমেই "শংকৰদেৱৰ বৰগীতত কৃষ্ণ চেতনা ঃ এক আলোচনা" এই প্ৰবন্ধৰ আলোচনা কৰা হৈছে।

শংকৰদেৱৰ বৰগীতৰ এক আলোচনা ঃ

শংকৰদেৱৰ অসমৰ জাতীয় জীৱনৰ এক অনুপম, অতুলনীয় আৰু আপুৰুগীয়া সম্পদ বৰগীত। অসমৰ সকলোবোৰ সাংস্কৃতিক সম্পদৰ ভিতৰতো বৰগীতৰ স্থান আগশাৰীত। সাম্প্ৰতিক কালৰ নানান প্ৰতিকূল পৰিস্থিতি আৰু সংকটময় জনজীৱনৰ মাজতো বৰগীতসমূহে সকলো পৰ্যায়ৰ শ্ৰোতাৰ মানসলোকক গভীৰভাৱে অনুৰণিত কৰি আহিছে। অসমৰ কলা-সংস্কৃতিৰ কেইবাটিও দিশৰ বাটকটীয়া, অসমৰ সৰ্বকালৰ সৰ্বশ্ৰেষ্ঠ প্ৰতিভা শংকৰদেৱৰ হাততেই বনগীতবোৰ সৃষ্টি। শংকৰদেৱে তেওঁৰ প্ৰৱৰ্তিত ভক্তিধৰ্ম সাফল্যমণ্ডিত কৰিবৰ কাৰণে জনসাধাৰণক তেওঁৰ মতৰ অনুকৰণ কৰিবলৈ তেওঁ গীত পদ নাটৰ আশ্ৰয় গ্ৰহণ কৰে আৰু ফলস্বৰূপে মহাপুৰুষজনে এক বিৰাট পৰিসৰৰ সাহিত্য সম্ভাৰ আমাক দান কৰে। এই সাহিত্য সম্ভাৰৰ মাজেদি শংকৰদেৱে যি পৰম্পৰাৰ সৃষ্টি কৰিলে তাকে আশ্ৰয় কৰি পৰৱৰ্তী লিড্ৰ সকলোৱে অসমীয়া সাহিত্যৰ কলেৱৰ পৰিপুষ্ট কৰিবলৈ সুবিধা পালে।

বৰগীত শংকৰদেৱৰ অভিনৱ অনুপম সৃষ্টি। শংকৰদেৱে প্ৰথমে কাব্য বা উপাখ্যান তাৰপিছত ভাগৱতৰ অনুবাদ, লগে লগে নাম প্ৰসংগৰ কাৰণে কীৰ্তন পুথি ৰচনাত আত্মনিয়োগ কৰে। তাৰ পাছত তেখেতে বৰগীতসমূহ ৰচনা কৰে আৰু জীৱনৰ শেষৰ ফালে নাট ৰচনাত অধিক গুৰুত্ব দিয়ে। শংকৰদেৱৰ ৰচনাসমূহৰ ৰচনাৰ চন তাৰিখ দুই-এখনৰ বাহিৰে সঠিককে জনা নাযায়। সেইয়ে বৰগীতসমূহ তেখেতে কেতিয়া, ক'ত, কেনেকৈ ৰচনা কৰিছিল সঠিকভাৱে ক'ব নোৱাৰি। চৰিতপুথিসমূহত অৱশ্যে এই বিষয়ে কিছু কথা আছে। যেনে ঃ "মন মেৰি ৰাম চৰণহি লাগু" গীতটি প্ৰথমবাৰ তীৰ্থ ভ্ৰমণৰ সময়তে ৰচনা কৰা বুলি কোৱা হৈছে। ১৪৯০ খ্ৰীষ্টাব্দ মানত এই গীত ৰচিত হয়। মানুহক কৃষ্ণ ভক্তিৰ প্ৰতি আৰু বেছিকৈ আকৃষ্ট কৰিবৰ বাবে ৰাগ সংগীতৰ মাধুৰ্য্য আৰু সুৰৰ ব্যঞ্জনাৰে তেখেতে বৰগীতসমূহ ৰচনা কৰিছিল। এই গীতসমূহৰ লক্ষ্য আছিল কৃষ্ণ ভক্তিৰ প্ৰতি যাতে শ্ৰোতা সাধাৰণ আৰু বেছিকৈ আকৃষ্ট হয়।

চৰিত পুথিত উল্লেখ আছে যে শংকৰদেৱে প্ৰথমে ৰচনা কৰা বৰগীতসমূহ এখন পুথিত সন্নিবিষ্ট আছিল। শংকৰদেৱে বৰপেটাত থাকোঁতে কমলা গায়ন নামৰ ভকত এজনে পঢ়িবলৈ নিওতে চ'তমহীয়া বনপোৰা জুইয়ে ঘৰ পোৰাৰ লগতে পুথিখনো পুৰিলে। গতিকে মনৰ দুখত শংকৰদেৱে আৰু গীত ৰচনা নকৰি মাধৱদেৱক গীত ৰচনা কৰিবলৈ ক'লে। শংকৰদেৱৰ অনুৰোধ ক্ৰমে মাধৱদেৱেও বৰগীত ৰচনা কৰে। শংকৰদেৱৰ নামত থকা গীতৰ সংখ্যা মাধৱদেৱৰ নামত থকা গীততকৈ কম। যোৰহাটৰ শ্ৰী গৌৰীচৰণ বৰ কটকীয়ে ১৯৭০খ্ৰীঃত সংগ্ৰহ কৰি প্ৰকাশ কৰা "বড়গীত"ৰ পুথিত শংকৰদেৱৰ সাতাইশটা গীত পোৱা যায়। শংকৰদেৱৰ চৌত্ৰিশটা গীত আছে বুলি সাহিত্যৰ বুৰঞ্জীত উল্লেখ কৰা হৈছে।

শংকৰদেৱৰ বৰগীতসমূহ বিষয়বস্তু সম্পূৰ্ণ আধ্যাত্মিক। শংকৰদেৱৰ বৰগীতসমূহৰ মাজেদি প্ৰথম পুৰুষ শ্ৰীকৃষ্ণৰ সু-মহান ব্যক্তিত্ব সংসাৰৰ প্ৰতি বিতৃষ্ণাৰ ভাব আৰু কৃষ্ণৰ বিৰহত গোপিনীসকলৰ হৃদয়ত উথলি উঠা ভক্তিৰ পৰিকাঠা প্ৰকাশ পাইছে। শংকৰদেৱ বিৰচিত প্ৰথম বৰগীতটিৰ মাজেৰে শ্ৰীকৃষ্ণৰ সু-মহান ব্যক্তিত্বৰ কথা বৰ্ণনা কৰা হৈছে। শ্ৰীকৃষ্ণই হৈছে এই জগতৰ ত্ৰাণকৰ্তাস্বৰূপ। দ্বিতীয় বৰগীতটিত মানৰ মনৰ কথা ইয়াৰ বিভিন্ন অৱস্থাৰ কথা বৰ্ণনা কৰি অত্যন্ত নম্ৰভাৱে ঈশ্বৰৰ চৰণত প্ৰণতি জনাইছে। তৃতীয় বৰগীতটি বিৰহ বিষয়ক হ'লেও ভক্তিয়ে তাত প্ৰধান স্থান লাভ কৰিছে। এই বিৰহত কৃষ্ণ ৰুক্মিণী বা কৃষ্ণ সত্যভামাৰ বিৰহত কোনো চিন পোৱা নাযায়। ভক্তিত দাম সুদামে শ্ৰীকৃষ্ণৰ কান্ধত বহুবাৰ উঠিছে। তাত ঈশ্বৰে ভক্তৰ দোষ নেদেখে। এইদৰে বৰগীতবোৰত বিষয়বস্তুৰ উপৰিও যথোচিত কাব্যিক সৌন্দৰ্য্যও আছে। সুন্দৰ অৰ্থপ্ৰকাশক সুললিত শব্দই এফালে অৰ্থ স্পষ্ট কৰিছে আৰু আনফালে গীতৰ মাধুৰ্য্য বঢ়াইছে।

শংকৰদেৱৰ বৰগীতত কৃষ্ণ চেতনা ঃ

শংকৰদেৱৰ ভক্তিমাৰ্গৰ আনুষ্ঠানিক নামেই হ'ল এক শৰণ নাম ধৰ্ম, সাধাৰণতে জনাজাত হয় মহাপুৰুষীয়া ধৰ্ম। এই ধৰ্মৰ তাত্ত্বিক দিশটোৱেই হ'ল একমাত্ৰ দেৱ বিষ্ণু আৰু বিশেষকৈ কৃষ্ণৰূপে অৱতাৰ হোৱা বিষ্ণুৱেইহে সেৱা কৰিব লাগে। সেয়ে আমি সংস্কৃত শ্লোকত পাওঁ "মহাপুৰুষো বিষ্ণুস্তদীয়ো মহা পৌৰষিক বৈকুণ্ঠনাথানুচৰঃ মহাপুৰুষো বিষ্ণুস্তদীয়ো কথাযাৰৰ অৰ্থ হ'ল 'মহাপুৰুষৰ সেৱক' তাৰ তাৎপৰ্য এইয়ে যে ব্ৰহ্ম, পৰমাত্মা ভাগৱত নামেৰে জনাজাত

প্ৰকৃতি, কাল আৰু পুৰুষৰ নিয়ন্ত্ৰণ কৰোঁতা পৰমেশ্বৰ বিষ্ণুয়েই এই ধৰ্মত সেব্য। শংকৰদেৱে লোকমানসলৈ এই ভক্তিমাৰ্গৰ প্ৰচাৰৰ বাবে অৱলম্বন কৰিছিল গীত-মাত নাট-ভাওনা আদিৰ। শংকৰদেৱৰ কৃষ্ণ চেতনা নিৰ্গুণ আছিলে। তেওঁ নিৰাকাৰ পৰমাত্মাৰ সতে আত্মিক সম্পৰ্ক স্থাপনৰ বাবে 'কৃষ্ণৰ' নামেই সাৰ বুলি কৈছিলে। উচ্চ-নীচ সকলোৱে শৰণ-কীৰ্তনৰ জৰিয়তে এই ইন্দ্ৰিয়াতীত অস্তিত্বৰ উপাসনা কৰিবলৈ পাৰিব বুলি গুৰুজনাৰ ধৰ্মীয় দৰ্শনে কয়। শংকৰদেৱৰ কৃষ্ণ চেতনা সম্পৰ্কে তেওঁৰ সাহিত্যৰাজিত অস্তিত্ববাদী সত্তা পুংখানুপুংখভাৱে উপস্থাপন কৰিছে। শংকৰদেৱৰ বৰগীতত কৃষ্ণ তত্ত্ব, অস্তিত্ববাদী সত্ত্বা, কৃষ্ণ, মানৱীয় কৃষ্ণৰ চাৰিত্ৰিক গুণানুকীৰ্তন প্ৰভৃতিৰে প্ৰতিফলন ঘটিছে। এই সম্পৰ্কে পৰ্যায়ক্ৰমে বিশ্লেষণ কৰাৰ থল আছে।

ক) লীলা বিষয়ক বৰগীতৰ মাজেৰে কৃষ্ণ চেতনা ঃ

ক) *ধ্ৰুং মধুৰ মূমুতিমূৰাৰু*
মন দেখোঁ হৃদয়ে হামাৰু।।
ৰূপে অনংগ সংগ তুলনা তনু।
কোটি সুৰুয উজিৰাৰো।।

পদ ঃ

মকৰ কুণ্ডল গণ্ড মণ্ডিত খণ্ডিত
চান্দ ৰুচি স্মিত হাসা।
কনক কিৰীতি জড়িত ৰতনা নৱ
নীৰুজ নয়ন বিকাশা।।

শংকৰদেৱৰ উপৰোক্ত বৰগীতটিত ভকত নিধি মুৰাৰি বিষ্ণুৰ দৈহিক সৌন্দৰ্য্যৰ অপৰূপ ৰূপৰ বাংময় চিত্ৰ পৰিৱেশন হৈছে। গুৰুজনাই পৰম বিষ্ণু চৈতন্যক সগুণ ৰূপত উপলব্ধি কৰাবলৈ প্ৰতিকাত্মকভাৱে উপস্থাপন কৰি কৈছে যে তেওঁৰ শৰীৰ কোটি সূৰ্যৰ সমান উজ্জ্বল। কাণত পিন্ধা মকৰ কুণ্ডলৰ জিলিকনিৰে তেওঁৰ দুয়োখন গাল জিলিকি উঠিছে। তেওঁৰ হাঁহিটো খণ্ডিত চন্দ্ৰৰ দৰে শুভাবৰ্দ্ধনকাৰী। তেওঁৰ চকুৰ সৌন্দৰ্য্যক পদুম ফুলৰ ৰূপকেৰে সজাইছে। কংকন আৰু কেয়ূৰেৰে তেওঁৰ চাৰিখন হাত জিলিকি আছে। চাৰিও হাতৰ মাজত মুকুতাৰ মালা। তেওঁ লীলাৰ উদ্দেশ্য বিনোদ কেলি কৰি শংখ, চক্ৰ, গদা আৰু পদ্ম ধাৰণ কৰি আছে।

তেওঁৰ শ্যাম বৰণীয়া শৰীৰত ৰুচিকৰ পীতবস্ত্ৰ আৰু বক্ষঃস্থলত বনমালা ওলমি আছে, কণ্ঠ কৌস্তৱ মণিৰে শোভিত কটিত কাঞ্চিদাম আৰু সোণৰ কিংকিনি দুলি আছে। নতুন কুঁহিপাতৰ নিচিনা তেওঁৰ পদ যুগলৰ শুভাই পদ্মফুলৰ শুভাকো চেৰ পেলাইছে। শংকৰৰ এনে অভিলাষ ভক্তসকলৰ পৰম ধন ভগৱন্তৰ চৰণত মোৰ মন নিমগ্ন হওক তাকেই বৰগীতটিত প্ৰকাশ পাইছে।

শংকৰদেৱৰ কৃষ্ণচেতনাক উপলব্ধি কৰিবলৈ পৰম শক্তিৰ সম্পৰ্কে দুই ধৰণৰ দৃষ্টিভংগীক অৱলম্বন কৰিব লাগিব। 'মধুৰ মূৰুতি মুৰাৰু' বৰগীতটোৰ মাধ্যমেৰে গুৰুজনাই ক'ব খোজা তাত্বিক দৰ্শনটোৱেই হৈছে জগতৰ সমস্ত ইন্দ্ৰিয়গ্ৰাহ্য সৌন্দৰ্য্য ভগৱন্তৰ সৌন্দৰ্য্যৰে প্ৰতীক মাত্ৰ। জগতৰ সমস্ত ক্ৰিয়া শক্তিও তেওঁৰ শক্তিৰে এটা ডাব মায়। তথৰয় মানুহৰ নিচিনা অংগ বা স্কুল ইণ্ডিয়যুক্ত নহয়। তেওঁ চৈতন্য ভাৱস্বৰূপয়ে। ভাবৰ হৃদয়ৰে সৈতে সংপৃক্ত কিন্তু ডাৱৰ প্ৰকাশ মাধ্যম জ্ঞান বা বৃদ্ধি। এই বৃদ্ধিয়ে দৰাচলতে ইন্দ্ৰিয়াতীত অস্তিতকো প্ৰতীক ৰূপকৰ সহায়ত চমৎকাৰপূৰ্ণ অলৌকিক মূল দিব পাৰে। গোপাল কৃষ্ণটো এই চমৎকাৰ লক্ষ্য কৰিবলগীয়া।

লীলা বিষয়ক বৰগীতসমূহত কৃষ্ণৰ চমৎকাৰপূৰ্ণ ৰূপ গোপাল কৃষ্ণন বৃন্দাবন লীলা আৰু গোপীসকলৰ বিৰহ। এই তিনিটা বিষয় প্ৰধানকৈ বৰ্ণিত হৈছে। কৃষ্ণ মথুৰালৈ যোৱাৰ বাবে গোপীসকলৰ বুকুয়েদি বৈ যোৱা দুখৰ অন্তঃসলীলাৰ বৰ্ণনা কৰিবলৈ গৈ শংকৰদেৱে বৰগীতত লিখিছে—

ৰাগ - মাহুৰ ধনশ্ৰী
ধ্ৰুং- *গোপিনী প্ৰাণ কাহানু গয়ো ৰে গোৱিন্দ।*
হামু গোপিনী পুনু পেখবো নাহি আৰ
সোহি বদন অৰৱিন্দ।।

পদ-

কমল ভাগ্যৱতী ভয়ো ৰে সুপৰভাত
আজু ভেটৰ মুখচন্দা।
উগত সূৰ দূৰ গয়ো ৰে গোৱিন্দ
ভয়ো গোপবধূ অন্ধা।

গোপিনীসকলৰ প্ৰাণৰ গোবিন্দ আজিৰে পৰা গকুলৰ গোপীসকলে কাষৰে পৰা গোকুলৰ পোৱাৰ অৱকাশ নাথাকিব। মথুৰাপুৰীত শ্ৰীকৃষ্ণৰ আগমনে মহোৎসৱ হ'ব সমস্ত পোহৰ সমৃদ্ধি মাধৱৰ লগতে যেন মথুৰা পাবগৈ। গোপীসকলে কৃষ্ণ বিৰহত ম্ৰিয়মান হৈ পৰিছে। তেওঁলোকে ভাবিছে মথুৰাৰ নাৰীসকলৰ আজি ভাগ্য উদয় হ'ব। কৃষ্ণৰ কিংকৰ অৰ্থাৎ দাস শঙ্কৰে এই ৰসময় কৃষ্ণ কথা বৰ্ণনা কৰিছে। গোপী বিৰহৰ কথা কাহিনীৰ মাজেৰে কৃষ্ণ চেতনা প্ৰকাশক শংকৰদেৱৰ অনা এটা বৰগীত হৈছে—

ৰাগ- ধনশ্ৰী।

ধ্ৰুং- *হেৰহ মাই, চললি বিপিন মধাই।*

বেণু বিষাণ নিদান আৰত

হৰযে হৰযে ধেনু ধায়।

পদ- *ওহি অগমোদন কন্ধে দধি ওদন*

গোধন আগু বুলায়।

বংকিম নয়ন সৰোৰুহ সাহি

হেৰাইতে ভুৱন ভোলায়।।

গোপাল কৃষ্ণ ৰাতিপুৱাই গৰুলৈ যোৱাৰ পাছত পুৱাৰ পৰা গধূলিলৈকে গোটেই দিনটো কৃষ্ণৰ অনুপস্থিতিত যি বিৰহৰ ভাব মনলৈ আহে তাকেই বৰ্ণনা এগৰাকী গোপীয়ে অন্য এগৰাকী গোপীক কৈছে। গুৰুজনাই "দেখু সখি মধুৰ মূৰুতি হৰি। ধৰি অধৰে পূৰে মুৰুৰি।।" বৰগীতটোৰ মাজেৰে কৃষ্ণৰ ব্যক্তি সৌন্দৰ্য্যৰ বৰ্ণনা কৰিলেও বিৰাট পুৰুষৰ ব্যঞ্জনাও আছে। ব্যক্তিৰূপৰ সৌন্দৰ্য্য বিশ্বপ্ৰকৃতিৰ ইন্দ্ৰিয়গ্ৰাহ্য ৰূপৰ প্ৰতীকমাত্ৰ। কৃষ্ণৰ শ্যাম বৰণৰ শৰীৰত থকা পীতবস্ত্ৰৰ লগত মেঘৰ বৰ্ণনা, শংখৰ ৰেখাৰ লগত কৃষ্ণৰ ডিঙিৰ ৰেখাৰ তুলনা। এই উপমাবোৰ হৈছে প্ৰতীক মাত্ৰ। ইয়াৰ ব্যাপক অৰ্থ উপলব্ধিটোৱে হৈছে ভগৱন্তৰ স্বৰূপ। ব্যক্তিৰূপৰ মাধ্যমত বিৰাট ৰূপৰ ফালে মন আকিষ্ঠ কৰিব পৰাটোৱেই লীলা ভাবৰ এক বিশেষত্ব।

ৰাগ- তুৰ বসন্ত

ধ্ৰুং- *কহৰে উদ্ধৱ, কহ প্ৰাণেৰ বান্ধৱ হে*

প্ৰাণ কৃষ্ণ কৰে আৰে।

পুছয়ে গোপী প্ৰেম আকুল ভাৱে

(এ) নাহি চেতন গাৰে।।

পদ- *বাঁসুৰী ধ্বনি শুনি গো-বৎস পেখি।*

লাগে আগে গাৰে উদ্ধৱ সখি।।

কালিন্দী দেখি সখি ফুটয় বুক।

এখাএ খেলিছিল সে চান্দ মুখ।

হৰিল নয়ন সুখ।।

বিৰিন্দাবন বৈৰী হামাৰ ভেলি।

গেখিতে না বিছুৰো গোপাল কেলি।।

এই বৰগীতটিত ধ্বজ ব্ৰজ যৱ পংকজ আৰু অংকুশ এই পাঁচোটা হৈছে বিষ্ণুৰ চৰণ তলত থকা চিহ্ন। ইয়াত অংকুশৰ উল্লেখ নাই যদিও এই চাৰিটা চিহ্নৰ দ্বাৰা পঞ্চমটোও ব্যঞ্জিত হৈছে। গোপীসকলে কৃষ্ণক ভগৱান বিষ্ণুৰে অভিন্ন বুলি ভবাৰ প্ৰমাণ এই পদচিহ্নবোৰৰ উল্লেখেই দিয়ে।

গোপীসকলৰ কৃষ্ণ প্ৰেম কেৱল ইন্দ্ৰিয়গ্ৰাহ্য সুখতে আৱদ্ধ লৌকিক যৌন কামনাৰ লগত জড়িত নহয়। তেওঁলোকৰ এই প্ৰেম নিৰ্গুণ নিৰাকাৰ। এক ইন্দ্ৰিয়াতীত চৈতন্যৰ প্ৰতি থকা ভক্তিমূলক অনুৰাগহে। সেইকাৰণে প্ৰতীকত কোনো কোনো স্থূলত ব্যক্তিৰূপৰ লগত বিৰাট বিষ্ণুৰূপকো উপস্থাপন কৰা হৈছে। আচলতে কৃষ্ণ প্ৰেমৰ অস্তিত্ব (নিৰকাৰী)ক উপলব্ধি কৰা গোপীসকল দাৰ্শনিক গুণসম্পন্ন নেকি? বুলি প্ৰশ্ন কৰাৰ অৱকাশ থাকি যায় যদিও এই গোপীসকলক শ্ৰেষ্ঠ ভকত বুলি কোৱাৰহে থল বিচাৰি পোৱা যায়। কিন্তু এইটো তাৎপৰ্যপূৰ্ণ দিশ যে গীতিকাৰ অৰ্থাৎ শংকৰদেৱৰ বৰগীতত গোপীসকলৰ প্ৰেম আৰু আৱেগৰ মাধ্যমত স্বয়ং কৃষ্ণৰ প্ৰতি থকা নিজা দাৰ্শনিক প্ৰেম, অনুৰাগ ভক্তিৰহে বহিঃপ্ৰকাশ ঘটিছিল।

শ্ৰীকৃষ্ণ পৰম ব্ৰহ্মাধাতাৰ অভিন্ন অংশ। তেওঁৰ সেৱায়ে সকলোকে সেৱা জনোৱা হয় সেই কথাৰ সাৰো প্ৰতিপন্ন কৰে। গোপীসকলৰ কৃষ্ণও যে ভগৱান বিষ্ণুৰ অভিন্ন সেই কথা ধ্বজ, ব্ৰজ, যত্ন, পংকজ এই বিষ্ণুৰ তলত থকা পদ চিহ্নবোৰ বৰগীতত বৰ্ণিত হোৱাটোৱেই নিশ্চিত কৰে। শংকৰদেৱৰ বিশাল নৱবৈষ্ণৱ ধৰ্মৰ আদৰ্শক প্ৰতিফলিত কৰাত আৰু জনসাধাৰণৰ মাজলৈ লৈ যোৱাত বৰগীতবোৰৰ অৰিহণা অনস্বীকাৰ্য।

খ) বন্দনা আৰু প্ৰাৰ্থনা প্ৰধান বৰগীতৰ মাজেৰে কৃষ্ণ চেতনা ঃ নাৰায়ণ হৈছে সকলো সগুণ অৱতাৰৰ ধাৰক। কীৰ্তনত সেয়ে কোৱা হৈছে—

প্ৰথমে প্ৰণামো ব্ৰহ্মাৰূপী সনাতন

সৰ্ব অৱতাৰৰ কাৰণ নাৰায়ণ।।

যদুপতি কৃষ্ণ নাৰায়ণৰ পূৰ্ণ অৱতাৰৰূপে স্বীকৃত শংকৰদেৱৰ প্ৰাৰ্থনা প্ৰধান বৰগীতসমূহৰ মাজেৰে কৃষ্ণচেতনাৰ প্ৰতিফলন ঘটিছিল।

ৰাগ - অশোৱাৰী

ধ্ৰুং - *জয় জয় যাদৱ জলনিধি জাধৱ ধাতা।*

শ্ৰুতমাত্ৰাখিলত্ৰাতা স্মৰণে কৰয় সিদ্ধি

দীনদয়ানিধি ভকত-মুকুতি পদদাতা।।

পদ - *জগজন-জীৱন অজন-জনাৰ্দন*

দনুজদমন দুখহাৰী

মহাদানন্দকন্দ পৰমানন্দ

নন্দনন্দন বনচাৰী।।

উপৰোক্ত বৰগীতটিত "জয় জয়" শব্দেৰে শুভাৰম্ভ কৰা

হৈছে। জয় শব্দত শ্ৰেষ্ঠ প্ৰকাশ আৰু ব্যাপ্তিৰ ভাৱ নিহিত হৈ আছে। উপাস্য দেৱ কৃষ্ণৰ জয় ঘোষণাৰে বৰগীত শুভাৰম্ভ হৈছে। যাদৱ কৃষ্ণৰ লগত পৰম ব্ৰহ্ম ধাতাক অভিন্ন বুলি মানি লোৱা হৈছে। "যাদৱ"ৰ বিশেষণ ৰূপেহে মাধৱ আৰু ধাতা শব্দ প্ৰয়োগ কৰা হৈছে। যাদৱ ব্যক্তিৰূপ, মাধৱ শক্তিমান সূঐভাৰৰূপ আৰু ধাতা সৃষ্টিৰ মূলত থকা কাৰণস্বৰূপ নিগুণ পৰমতত্ত্বৰ সূচক। "শ্ৰুতমাত্ৰাখিলত্ৰাতা"এই বিশেষণটিৰ অৰ্থ হৈছে "তেৱেঁই অখিল সৃষ্টিৰ একমাত্ৰ ত্ৰাতা" এই কথা প্ৰসিদ্ধ। সেইজনৰ নাম সোঁৱৰণ কৰিলেই পৰমাৰ্থ লাভ হয়। বৰগীতৰ "অবিনাশী" বিশেষণটোৰে মুখ্যভাৱে যাদৱ কৃষ্ণৰ উদ্দেশ্যেই ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। 'শেষশয়নশিল্প' (অখণ্ড বিশ্বত ব্যাপ্ত মঙ্গলময় চেতন সত্তা) বিশেষণটোৰ জৰিয়তে বিমূৰ্ত সূঐ চৈতন্য প্ৰকাশ ঘটাইছে। 'দীনদয়ানিধি ভকত মুকুতি পদদাতা' বুলি যাদৱৰ স্থূল ব্যক্তিৰূপৰ কথা কোৱা হোৱা নাই, কোৱা হৈছে চন্দ্ৰৰ নিচিনাকৈ শান্তিৰ কিৰণ বিকিৰিত কৰা জগতৰ হিতকাৰী বিষ্ণু বা সুখ সমৃদ্ধিৰ স্বামী মাধৱ কেশৱৰ চৰণকমলৰ কিংকৰ শংকৰৰ এয়ে অভিলাষ।

মানৱৰ জীৱন যে কায়িক সুখত আৱদ্ধ আৰু এই কায়িক বিপুগত বান্ধোনৰ পৰা মুক্তিৰ প্ৰধান অৱলম্বন হৰিভক্তিহে সেইয়া গুৰুজনাই একাধিক বৰগীতত উল্লেখ কৰিছে। গুৰুজনাই তেখেতৰ বৰগীত— "গোপালে কি গতি কৈলে"ত বৰ্ণনা কৰিছে—

"এভৱ গহন বন
অভি মোহপাশে ছন্ন
তাতে হামু হৰিণ বেৰাই
ফন্দিলো মায়াৰ পাশে
কাল ব্যাধ ধায়া আসে
কাম ক্ৰোধ কুত্তা খেদি যায়।"

অৰ্থাৎ এই সংসাৰখন মায়াৰ অৰণ্য। এই অৰণ্যত মোহৰ জাল তৰি খোৱা আছে হৰিণাৰ নিচিনাকৈ তাত ঘূৰি ফুৰোঁতে মই মায়াজালত বন্দী হ'লো। কালদী ব্যাধে মোকে খেদি আহিছে আৰু কাম-ক্ৰোধৰ ৰূপী কুকুৰে মোক খেদি আহিছে। এই গভীৰ অৰণ্যৰ পৰা মুক্তিৰ বাটেই হ'ব পৰমাৰ্থ লাভৰ বাট। এই বাট নিৰ্মাণৰ প্ৰস্তুতি কণ্টকময়, মায়াৰ বান্ধোনে মনৰ বিচাৰ শক্তি কমাই আনিলে এই বাট বুদ্ধ হয়। পৰমাৰ্থিক বাট লাভৰ বাবে শংকৰদেৱে বৰগীতত গাইছে—

"তুৱা হৰি লাগো গোড়
মোৰ মায়া পাশ ছোড়
শংকৰ কৰয় কাকুতি।।"

অৰ্থাৎ হে হৰি, মই তোমাৰ চৰণত ধৰিছোঁ, মোক মায়াজালৰ পৰা উদ্ধাৰ কৰা। বিষয় সুখত আৱদ্ধ মায়াৱী জীৱনৰ উদ্ধাৰৰ পথ সুগম হয় যেতিয়া ভক্তয়ে দীনভাৱে ভগৱন্তৰ চৰণত আত্মসমৰ্পণ কৰে (আত্মসমৰ্পণ আৰু ভক্তি ইটো সিটোৰ পৰিপূৰক) সংসাৰ মায়াৰ ৰচনা, হৰিভক্তিৰ সংসাৰৰ সাৰ এই কথা উপলব্ধিৰ স্বচ্ছ প্ৰতিচ্ছবি প্ৰতিফলিত হয় এই বৰগীতটিত।

"পাৰে পৰি হৰি কৰোহো কাতৰি
প্ৰাণ ৰাখবি মোৰ।

বৰগীতটিত "মোৰ প্ৰাণ ৰক্ষা কৰা" মানে সাধাৰণ জীৱন ৰক্ষা নহয়। বিষয়ৰ অধীন হৈ পৰমাৰ্থতত্ত্ব সিক্ত অৱস্থাকে ইয়াত মৃত্যু বুলি কোৱা হৈছে। ইন্দ্ৰিয়সুখত আৱদ্ধ তুচ্ছ জীৱন পৰমতত্ত্বত বিলীন হোৱাটোৱেই সংসাৰৰ সাৰ কথা। মনৰ সু-বুদ্ধিৰ উদয়ে পৰমতত্ত্বৰ বাট কাটে। এই মনৰ সু-বুদ্ধিৰ উদ্বোধনো কৰিব পাৰে 'হৃষীকেশ' ভগৱন্তয়েহে। সেয়ে শংকৰদেৱে কৈছে—

"কহতু শংকৰ এ দুখ সাগৰ
পাৰ কৰা হৃষীকেশ।"

অৰ্থাৎ এই বিষয় সংসাৰৰ ইন্দ্ৰিয়সমূহৰ জালত আৱদ্ধ দুখময় সংসাৰ সাগৰখন পাৰ কৰা। ভগৱন্তৰ কৃপাতহে জীৱৰ মন ভক্তিৰ প্ৰতি আকৰ্ষিত হয়। (শংকৰদেৱৰ) প্ৰাৰ্থনা প্ৰধান বৰগীতসমূহে প্ৰধানকৈ কৃষ্ণ চেতনাৰ বিৰাট ৰূপ বা অবিনাশী নশ্বৰ ৰূপটোৰ কথা কৈছে। অৱশ্যে এই অস্তিত্বটোৰ এটা ব্যক্তিৰূপ হৃদয়ত ধাৰণ কৰাৰ কথা পাকে প্ৰকাৰন্তৰে গুৰুজনাই উল্লেখ কৰিছে।

গ) উপদেশ প্ৰধান বৰগীতৰ মাজেৰে কৃষ্ণ চেতনা ঃ

শংকৰদেৱৰ বৰগীতৰ মাজেৰে জীৱনৰ ৰূঢ় বাস্তৱতত্ত্বৰ উপদেশো প্ৰদান কৰিছে। শংকৰদেৱে বৰগীতত কৈছে—

"বোলহ ৰাম নামেসে মুকুতি নিদানা।
ভৱ বৈতৰণী তৰণী সুখ-সৰণী
নাহি নাহি নাম সমানা।।

অৰ্থাৎ ভগৱন্তৰ নামেই মুক্তিৰ কাৰণ, গতিকে ৰামৰ নামেই সেই মুক্তিৰ পথ প্ৰশস্ত কৰিব বুলি কোৱা হৈছে। "ৰাম" শব্দৰ তাত্বিক দিশটো ৰামৰ জৰিয়তে চাৰিত্ৰিক বা ইন্দ্ৰিয়জ ৰামৰ কথা কোৱা হোৱা নাই ইয়াত মহাশক্তিৰ বা পৰমাত্মাৰ হে অৱতাৰণা কৰা হৈছে। সেয়ে পুৰাণত বৰ্ণিত দুমৰ্তিজনৰ দুখ ভোগৰ নদী বৈতৰণীৰ দৰে সংসাৰিক যাতনাৰ নদীখনৰ পাৰ পোৱাৰ সাধন হৈছে ভগৱন্তৰ নাম। সেইকাৰণে গুৰুজনাই

উপদেশ দি কৈছে—

কৃষ্ণ কিংকৰ কয় ছোড়হু মায়াময়
ৰাম পৰমতত্ত্ব সাৰ।।

এই মায়াময় সংসাৰৰ মোহ এৰা মৃত্যুৰ পাছত এই সংসাৰ অসাৰ হৈ পৰে। ৰামহে কেৱল পৰম সাৰতত্ত্ব, তেওঁৰ সেৱা কৰা। গুৰুজনাই পাৰ্থিৱ জগতৰ সকলো বস্তুৱেই ক্ষন্তেকীয়া, পৰমজনৰ শৰণহে চিৰস্থায়ী সেই কথা দোহাৰি বৰগীতৰ মাজেৰে উপদেশসূচকভাৱে কৈ গৈছে— ৰাগ-গৌৰী

পদ-

তীৰথ বৰত তপ জপ যাগ যোগ যুগুতি।
মন্ত্ৰ পৰম ধৰম কৰম কৰত নাহি মুকুতি।।
মাতু পিতু পতনী তনয় জনয় সব মৰণা।
ছাৰহু ধন্ধ মানস অন্ধ ধৰতু হৰি চৰণা।।

অৰ্থাৎ তীৰ্থ, ব্ৰত, তপ, যোগ, যাগ-যজ্ঞ, জপ, মন্ত্ৰ, ধৰ্ম, আৰু কৰ্ম কৰিলেই মুক্তি লাভ নহয়। পিতৃ, মাতৃ, পুত্ৰ, পত্নী আৰু সকলো আত্মীয় কুটুম্ব সকলো মৃত্যুমুখত পৰিব। হৰিৰ চৰণে এই সাংসাৰিক বান্ধোনৰ পৰা মুক্তিৰ পথ দিয়ে। শংকৰদেৱে বৰগীতসমূহৰ শেষাংশত নিজকে নেদেখাজনৰ দাস বুলি স্বীকাৰ কৰি সকলোকে হৰি ভক্তিৰ পথলৈ আহিবলৈ উপদেশ দিছে।

উদাহৰণস্বৰূপে— ৰাগ-গৌড়ী

পদ- *কৃষ্ণ কিংকৰ ওহি শংকৰ ভাণা*
বিনে হৰি ভকতি তৰণী নাহি আনা।।

শংকৰদেৱৰ উপদেশমূলক বৰগীতত ৰামনামৰ জপ, চিন্তন আৰু চিত্তৰ ওপৰত গুৰুত্ব দিয়া হৈছে। সংসাৰবন্ধন ছিন্ন কৰিবৰ কাৰণে চিত্তশুদ্ধিৰ আৱশ্যক। নাম চিত্তশুদ্ধিৰ উপায়। ভক্তিৰ কাৰণে নামেই মুখ্য সাধন। ভগৱন্তৰ উপলব্ধি সগুণ নিগুণ দুই প্ৰকাৰে হ'ব পাৰে। এই দুয়োবিধ উপলব্ধিৰ কাৰণে নামৰ প্ৰয়োজন আছে।

শংকৰদেৱৰ কৃষ্ণ চেতনা যে দৰাচলতে আধ্যাত্মবাদী দৰ্শনৰ দাপোণ সেই কথা প্ৰতিপন্ন কৰে, তলৰ বৰগীতাংশই।

ৰাগ- ধনশ্ৰী

ধ্ৰুং- *ৰাম মেৰে হৃদয় পংকজে ৰৈছে।*
ভাই চিত্তে নিচিন্তস কৈছে।।

ইয়াত আধ্যাত্মবাদৰ ৰেঙণি ফুটি উঠিছে। সকলোৱে নিজৰ হৃদয়তে 'ৰাম' চিৰন্তন জগজন বাস কৰে। 'ভাই' অৰ্থাৎ ভক্তগণ এই তাৎপৰ্য বুজি উঠি নিজৰ মনত চিন্তা কৰাৰ মৰ্ম উপলব্ধি কৰিবলৈ যোৱা উপদেশৰ জৰিয়তে। পূৰ্বতে উল্লেখ কৰাৰ দৰে শংকৰদেৱৰ উপদেশমূলক বৰগীতসমূহত "ৰাম" নামৰ জপ গুণৰ কথা কৈছে। শংকৰদেৱে বৰগীতত কৈছে—

ৰাগ- ধনশ্ৰী

এং- *পামৰু মন ৰামচৰণে চিত্ত দেহু।*
অথিৰ জীৱন ৰাম মাধৱ কেৰি নাম
মৰণক সম্বল লেহু।।

অৰ্থাৎ আমাৰ অস্থিৰতাভৰা জীৱদেহৰ পৰকালৰ সম্বল হ'ব ৰামৰ নামহে। সেয়ে অবিৰামভাৱে আমাৰ সেৱা তেৰাৰ চৰণত বৰ্তি হ'ব লাগে। এনেদৰে আমি শংকৰদেৱৰ উপদেশমূলক বৰগীতসমূহৰ মাজেৰে চিত্তশুদ্ধিৰ অৱশ্যকতাৰ কথা উপলব্ধি কৰোঁ। আধ্যাত্মবাদ আৰু কৃষ্ণচেতনা দুয়োটাইয়ে ইটো সিটোৰ পৰিপূৰক এই কথা উপলব্ধি কৰোঁ।

ঘ) মিশ্ৰিত বিষয়ৰ গীতৰ মাজেৰে কৃষ্ণ চেতনা ঃ

শংকৰদেৱৰ কিছুসংখ্যক বৰগীত ভাব-ভংগী আৰু বৰ্ণনাৰ দিশৰ পৰা মিশ্ৰিত হৈ পৰিছে। এই মিশ্ৰিত বৰগীতসমূহৰ মাজতো ছায়াৰ দৰে কৃষ্ণ চেতনাই সংপৃক্ত হৈ আছে।

ৰাগ- গৌড়ী

ধ্ৰুং- *ওৰে সখি পেখোৰে কুঞ্জলোচন*
চললি নন্দ কুমাৰা।
ইন্দু বদন কোটি মদন
ৰূপে তুল নাহি যাৰা।।

পদ- *মকৰ কুণ্ডল মণ্ডিত গণ্ড*
গলে গজমতি লুলে।
তড়িতাম্বৰ শ্যামসুন্দৰ
শিৰে শিখণ্ডক ভুলে।।

শংকৰদেৱৰ উপৰোক্ত বৰগীতটিৰ প্ৰধান অংশত লীলাসূচক বৰ্ণনাই ঠাই পাইছে যদিও কিন্তু অন্ততঘোড় বিষহ ওহি জগ আধাৰু বুলি কোৱা অংশটো উপদেশ তথা তত্ত্বমূলক হৈ পৰিছে। বৰগীতটিত কৃষ্ণৰ সৌন্দৰ্য্য বৰ্ণনা হৈছে এনেদৰে — পদুমফুলৰ দৰে দুচকু, চন্দ্ৰৰ দৰে মুখ, ডিঙিত মালা, শিৰত মৰাৰ পাখি, চৰণ কমলত থকা নূপুৰৰ ধ্বনিয়ে গোপীসকলৰ মন কাঢ়ি নিয়ে। লীলা বিষয়ক বৰগীতসমূহত প্ৰকাশ পোৱা ব্যক্তিৰূপৰ সৌন্দৰ্য্যৰ দৰে শ্ৰীকৃষ্ণৰ মধুৰ মূৰ্তি ৰূপ বৰগীতটোত বৰ্ণিত হৈছে। কিন্তু পূৰ্বতে উল্লেখ কৰাৰ দৰে শেষাংশত বৰগীতটি উপদেশমূলক হৈ পৰিছে কাৰণ

শংকৰদেৱে উপদেশ সূচকভাৱে কৈছে যে শ্যামসুন্দৰৰ বিৰহৰ কথা মনৰ পৰা এৰি দিয়া তেওঁ সমস্ত জগতৰ আধাৰস্বৰূপ।

ৰাগ- শ্ৰী

"উদ্ধৱ চলহু গোকুল লাই।
হামু বিনা গোপীৰ তিলেকে যুগ যায়।।"

বৰগীতটোতো বাহ্যিক অৰ্থত গোপী কৃষ্ণ প্ৰেমভিত্তিক লীলাৰ বৰ্ণনা দিয়া হৈছে যদিও শেষলৈকে বৰগীতটি হৈ পৰিছে উপদেশমূলক। বৰগীতটিত বৰ্ণিত—

হামাকেসে আশে গোপী জীঅ সমুদায়।।
বাহুৰি আৱব কৃষ্ণ ভেটবো দুনাই।।

গীতাংশই কৃষ্ণৰ প্ৰতি থকা গোপীসকলৰ অনুৰাগ কিমান গভীৰ সেই কথা উপলব্ধি কৰিবলৈ দিয়ে তেওঁলোকে আশা কৰিছে যে "কৃষ্ণ আকৌ ঘূৰি আহিব আকৌ লগ পাম" গুৰুজনাই ভক্তক উপদেশ দিছে যে হৰিৰ বিনে আৰু কোনো সহৃদ বা আত্মীয়-স্বজন নাই সেই কথা জানি সকলোলোৱে হৰিক ভক্তি কৰিব লাগে। শংকৰদেৱে চৈতন্যস্বৰূপৰ বৰ্ণনা কৰিবলৈ গৈ কৈছে—

যোহি জগত জীৱজনক
যাহে ন হম কোই।
সোহি পৰম পুৰুষোত্তম
ৰাখতু তনু তোই।।

অৰ্থাৎ যিজন জগতৰ সমস্ত প্ৰাণীৰ জন্মদাতা, যাৰ সমান শ্ৰেষ্ঠ আৰু কোনো নাই, সেই পৰম পুৰুষোত্তম ভগৱন্তই তোমাৰ শৰীৰ সুস্থ কৰি ৰাখ্‌ক। যিজনে বামণৰ ৰূপ দেখুৱায়ো সূঐচৈতন্য স্বৰূপৰ দ্বাৰা তিনি খোজৰেই ত্ৰিভুৱন আচ্ছাদিত কৰি পেলালে, সেই সৰ্বত্ৰ ব্যাপনশীল ভগৱান বাসুদেৱ বাহিৰত থাকি তোমাৰ সমস্ত বিঘিনি নাশ কৰক কৈছে। শংকৰদেৱে অন্তঃস্থলীৰ অনন্ত আত্মাই পৰমাত্মা সেইকথা বৰগীতৰ মাধ্যমেৰে কৈছে—

" অন্তৰে তেৰি ৰাখতু হৰি কহতু কৃষ্ণক দাস"

এনেদৰে মিশ্ৰিত বিষয়ৰ বৰগীতৰ মাজেৰে কৃষ্ণ চেতনাৰ বিচাৰ কৰাৰ থল বিচাৰি পাওঁ।

দৰাচলতে গুৰুজনাৰ কৃষ্ণচেতনা আধ্যাত্মবাদত আধাৰিত। আধ্যাত্মবাদ কি? যদি সূঐ দৃষ্টিৰে বিশ্ব প্ৰপঞ্চ চিন্তা কৰা হয়। আমি দুটা ভাগ পাওঁ- দ্ৰষ্টা আৰু দৃশ্য। দ্ৰষ্টাৰ প্ৰধান সহায়ক অনুভৱ আৰু অনুভৱৰ বিষয় দৃশ্য। বিশ্ব প্ৰপঞ্চৰ সাক্ষী আত্মা, আত্মতত্ত্ব, নিত্য, নিশ্চল, নিধিকাৰ, অসংগ, কুটস্থ এক আৰু নিৰ্বিশেষ। বুদ্ধিকে ধৰি স্থুলভূত পৰ্যন্ত সমস্ত জগতৰ লগত আত্মাৰ কোনো সম্পৰ্ক নাই। অজ্ঞানতাৰ কাৰণে দেহ আৰু ইন্দ্ৰিয়বোৰৰ লগত আৰু বিশ্বপ্ৰপঞ্চৰ লগত আদ্যত্ম স্বীকাৰ কৰি বা মানি লৈ জীৱই নিজক অন্ধ, কণা, মুৰ্খ, বিদ্বান, সুখী, দুখী, কৰ্তা, ভোক্তা ইত্যাদি বুলি ভাবে। তাৎপৰ্য এইয়ে যে যিমান জীৱ আমাৰ দৃষ্টিগোচৰ হয় সকলো মায়া হেতু সত্য বুলি জনা যায়। প্ৰকৃততে এক, অখণ্ড, শুদ্ধ, সচ্ছিদানন্দ ব্ৰাহ্ম হে শুদ্ধ। আধ্যাত্মবাদৰ এই অন্তঃসাৰক গুৰুজনাই আত্মবোধেৰে নিজক স্বগুণ ব্ৰহ্ম কৃষ্ণৰ অংশ বুলি মানি লৈ ভগৱত প্ৰেমত নিজকে উছৰ্গা কৰিছে। কৃষ্ণ পৰমাত্মাত বিলীন হৈ কৈছে— দৃষ্টিত যদিও মোৰ এটা শৰীৰ আছে সেইয়া দেহ নহয় সেইয়া অনুভৱৰ বিষয়হে। এক অৰ্থত তেওঁ দেহে মনে কৃষ্ণ ভকতিত বিলীন হোৱা বাবে নিজৰ পাৰ্থিৱ শৰীৰটোৰ অবয়ৱ মায়া মাত্ৰ বুলিছে আৰু তাৰ দৃশ্যৰূপ অস্বীকাৰ কৰিছে। অৱশ্যে গুৰুজনাই কৃষ্ণৰ চাৰিত্ৰিক বৰ্ণনাই ভকতৰ হৃদয়ত ৰূপৰ সঞ্চাৰ কৰে এই বৰ্ণনা কেৱল চাক্ষুক বৰ্ণনা নহয়, হৃদয় বৰ্ণনা। এই হৃদয় বৰ্ণনাই শ্ৰৱণ কৰা সকলৰ মানসপটত যি চিত্ৰ অংকিত হ'ল সেইয়া যুগজয়ী, কোনেও মচিব নোৱাৰা চিত্ৰ। এইয়ে হৃদয়ৰ ৰূপ নিৰ্মাণ, আধ্যাত্মিক দৰ্শন। প্ৰতিগৰাকী ভক্তই নিজৰ ভাল লগাকৈ ভগৱানৰ ৰূপ নিৰ্মাণ কৰিবলৈ হৃদিস্থিত কৰিব পাৰে।

শংকৰদেৱৰ কৃষ্ণচেতনাৰ এই তাত্বিক দৃষ্টিভঙ্গী তেওঁৰ বৰগীতসমূহত সফল ৰূপত প্ৰতিফলিত হৈছে।

উপসংহাৰ ঃ

শংকৰদেৱৰ বৰগীতত কৃষ্ণচেতনা এক অধ্যয়ন শীৰ্ষক প্ৰবন্ধই ভাৰতীয় নৱবৈষ্ণৱ সাহিত্যৰ অন্যতম শংকৰদেৱৰ দ্বাৰা বিৰচিত শাস্ত্ৰীয় ৰাগ, তালযুক্ত আধ্যাত্মিক ভাবসম্পন্ন বৰগীতসমূহত কৃষ্ণচেতনা অৰ্থাৎ কৃষ্ণতম কৃষ্ণ প্ৰেম বা উক্তি কৃষ্ণৰ গুণানুকীৰ্তন কিদৰে প্ৰতিফলিত হৈছে সেই সম্পৰ্কে আমাক অৱগত কৰে। মধ্যযুগতে ৰচিত হোৱা বৰগীতসমূহৰ গুণগত মানদণ্ডক শাস্ত্ৰীয় সংগীত স্বৰূপে আজিও সন্মান জনোৱা হয় আৰু অত্যন্ত পবিত্ৰ জ্ঞান কৰা হয়। এই অধ্যয়নে শংকৰদেৱৰ বৰগীতত কৃষ্ণ চেতনা সম্পৰ্কে নিশ্চিত কৰা সিদ্ধান্ত কিছুমান আমি দেখিবলৈ পাওঁ। বৰগীতবোৰে অসমীয়া সাহিত্যক আধ্যাত্মিকতাৰ ওখ ভেঁটিত প্ৰতিষ্ঠা কৰিলে। বৰগীত সম্পৰ্কে ডঃ বাণীকান্ত কাকতি, কালিৰাম মেধি, দেবেন্দ্ৰনাথ হাজৰিকা, মহেশ্বৰ নেওগ প্ৰমুখ্য বহুকেইজন ভাষা সাহিত্যৰ সাধকে গবেষণামূলক অধ্যয়ন কৰিছে। পৰৱৰ্তী পৰ্যায়ত আৰু

সাম্প্ৰতিক সময়তো বৰগীত অধ্যয়ন আৰু গৱেষণাই নতুন নতুন দিশ উন্মোচিত কৰিছে। ভৱিষ্যতেও বৰগীতত আধ্যাত্মবাদ কৃষ্ণতত্ত্ব, ভাব-ভাষা, সুৰ, তাল, লয় বিভিন্ন বিষয়ক অধ্যয়নৰ থল আছে। ভাষাৰ ছাত্ৰ সংগীতৰ ছাত্ৰসকলে এই বিষয়টোত গুৰুত্ব দিয়া উচিত। শংকৰদেৱৰ বৰগীত অসমৰ জাতীয় জীৱনৰ এক আপুৰুগীয়া সম্পদ। শংকৰদেৱৰ বৰগীতসমূহৰ বিষয়বস্তু সম্পূৰ্ণ আধ্যাত্মিক। শংকৰদেৱৰ বৰগীতসমূহৰ মাজেৰে পৰম পুৰুষ শ্ৰীকৃষ্ণৰ সু-মহান ব্যক্তিত্ব প্ৰকাশ পাইছে। শংকৰদেৱৰ বৰগীতত কৃষ্ণতত্ত্ব নিৰাকাৰ নিগুণ পৰম পুৰুষ শ্ৰীকৃষ্ণ আনহাতে মানৱীয় কৃষ্ণৰ চাৰিত্ৰিক গুণসমূহ প্ৰতিফলিত হৈছে। শংকৰদেৱৰ বৰগীতৰ সাৰ্থকতা হ'ল কৃষ্ণৰ ব্যক্তিৰূপৰ মাজেৰে বিৰাট ৰূপৰ ফালে মন আকৃষ্ট কৰিব পাৰে। শংকৰদেৱৰ বৰগীতত সামাজিক, সংস্কৃতি বা আধ্যাত্মিক গুৰুত্বৰ লগতে নৱবৈষ্ণৱ ধৰ্মৰ প্ৰচাৰত বনপুৰা জুইক বতাহে সহায় কৰাৰ দৰে সহায় কৰিছিল। অসমীয়া উচ্চাঙ্গ সংগীতৰ পৰম্পৰা স্থাপন কৰিছিল। শংকৰদেৱৰ বৰগীতে ভাৰতীয় নৱ বৈষ্ণৱ সাহিত্যত ঐক্যৰ নিদৰ্শন দাঙি ধৰিছিল। ❑

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

১। কাকতি, বাণীকান্ত। পুৰণি অসমীয়া সাহিত্য

২। গোস্বামী, কেশৱানন্দ দেৱ। ভাৰতীয় পটভূমিত শংকৰী সাহিত্য আৰু সত্ৰীয়া সংগীত

৩। চৌধুৰী, ভূপেন্দ্ৰ ৰয়। ব্ৰজাৱলী সাহিত্য মুকুৰ

৪। দাস, তিলক। সংগীত সংস্কৃতি প্ৰদায়ক শ্ৰী শ্ৰী শংকৰদেৱ

৫। নেওগ, মহেশ্বৰ। অসমীয়া সাহিত্যৰ ৰূপৰেখা

৬। বেজবৰুৱা, লক্ষ্মীনাথ। শ্ৰীকৃষ্ণ তত্ত্ব

৭। মহন্ত, বাপচন্দ্ৰ। প্ৰবন্ধ গানৰ পৰম্পৰাত বৰগীত

৮। শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰনাথ। অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত

৯। শৰ্মা, হেমন্ত কুমাৰ। অসমীয়া সাহিত্যত দৃষ্টিপাত

১০। শৰ্মা, নবীনচন্দ্ৰ। মহাপুৰুষ শ্ৰীমন্ত শংকৰদেৱ

১১। শৰ্মা, ইলা। বৰগীত

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

উড়িআ গল্পকাৰ সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পত প্ৰতিফলিত সমাজ

মৃদুল মৰাণ

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
দেৰগাঁও কমল দুৱৰা মহাবিদ্যালয়
পিন-৭৮২৪৪১
৯৮৫৪৭০৭০১৪
mridulmoran8feb@gmail.com

সাৰাংশ ঃ

উড়িআ গল্পকাৰ সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ এটা উল্লেখযোগ্য গল্প হৈছে 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম'। গল্পটো অসমীয়ালৈ অনুবাদ কৰিছে নীৰাজনা মহন্ত বেজবৰাই আৰু গল্পটো সংকলিত হৈছে তেওঁৰ দ্বাৰা সংকলিত আৰু সম্পাদিত 'জীৱনৰ অন্য এক নাম' (২০১৮) নামৰ আধুনিক ভাৰতীয় চুটিগল্পৰ সংকলনটোত। 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' শীৰ্ষক গল্পটোৰ মূল কথা হৈছে— মানৱীয়তাৰ স্পৰ্শত পাশৱিকতাৰ পৰাজয় সম্ভৱ। উড়িআ গ্ৰাম্য সমাজ এখনৰ পটভূমিত ৰচিত গল্পটোৱে হাতী আৰু মানুহৰ সংঘাতক আধাৰ হিচাপে লৈ সমাজ এখনৰ ভালেখিনি দিশ প্ৰকাশ কৰিছে। তেনে কেতবোৰ দিশ হ'ল— গাঁওবুঢ়া আৰু পঞ্চায়তনিৰ্ভৰ গ্ৰাম্য সমাজ, উড়িআ লোকসংস্কৃতিৰ প্ৰতিফলন, সমাজ আৰু ব্যক্তি মানসিকতাৰ পৰিৱৰ্তনৰ প্ৰকৃতি, সাধুকথা কথনৰ পৰম্পৰা, বৃদ্ধৰ প্ৰতি অনাদৰ-অৱহেলা ইত্যাদি। বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰে প্ৰস্তুত কৰা এই পত্ৰখনত তেনে দিশবোৰ উদাহৰণসহ আলোচনা কৰা হৈছে। এই আলোচনাৰ যোগেদি সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পটোৰ সামাজিক মূল্য স্পষ্ট হ'ব।

বীজশব্দ ঃ

উড়িআ চুটিগল্প, ভাৰতীয় চুটিগল্প, সমাজ, সুপ্ৰিয়া পণ্ডা, হাতী আৰু হাৰিকেন লেম।

১. আৰম্ভণি ঃ

উড়িআ লেড্ৰি। সুপ্ৰিয়া পণ্ডা ভাৰতীয় সাহিত্য জগতত গল্পকাৰ আৰু নাট্যকাৰ হিচাপে পৰিচিত। তেওঁৰ জন্ম ১৯৫৭ চনত উড়িশাৰ ময়ুৰভঞ্জ জিলাত। তেওঁ ইংৰাজী সাহিত্যত স্নাতকোত্তৰ ডিগ্ৰীধাৰী। সাহিত্য চৰ্চাৰ বাবে সুপ্ৰিয়া পণ্ডাই কেইবাটাও বঁটা লাভ কৰিছে। তাৰ ভিতৰত 'বিষুৱ সাহিত্য পুৰস্কাৰ' অন্যতম। পণ্ডাৰ উল্লেখযোগ্য ৰচনাসমূহ হ'ল— নিৰ্বাণ, নিশান্ত, মুগ্ধ নদী, বহুৰূপী আদি। তেওঁ ভুৱনেশ্বৰৰ কে. আই. আই. টি. বিশ্ববিদ্যালয়ৰ সামগ্ৰী ব্যৱস্থাপনা বিভাগৰ মুৰব্বী হিচাপে কাম কৰিছিল।

পণ্ডাৰ গল্প ভাৰতৰ বিভিন্ন ভাষা; যেনে— হিন্দী, বাংলা, গুজৰাটী, মালায়ালম, তেলেগু, মাৰাঠী, অসমীয়া আদিলৈ অনূদিত হোৱাৰ লগতে ইংৰাজী ভাষালৈও অনূদিত হৈছে। তেওঁৰ গল্প ইংৰাজী আৰু হিন্দী ভাষালৈ অনূদিত হৈ সাহিত্য অকাডেমিৰ পত্ৰিকা 'সমকালীন ভাৰতীয় সাহিত্য' আৰু 'The Indian Literature'-ত প্ৰকাশ পাইছে।

নীৰাজনা মহন্ত বেজবৰাই সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পটো অসমীয়ালৈ ৰূপান্তৰ কৰিছে। অৱশ্যে মূল ভাষাৰ পৰিৱৰ্তে ৰাজেন্দ্ৰ প্ৰসাদ মিশ্ৰৰ হিন্দী অনুবাদৰ পৰাহে তেওঁ অনুবাদ কাৰ্য সম্পাদন কৰিছে। হিন্দী ভাষাত গল্পটো প্ৰকাশ

পাইছিল 'হাথী ঔৰ লালটেন' নামেৰে 'সাহিত্য অমৃত'ৰ জানুৱাৰী, ২০০৪ সংখ্যাত। অসমীয়া অনুবাদটো অন্তৰ্ভুক্ত হৈছে নীৰাজনা মহন্ত বেজবৰাৰ দ্বাৰা সংকলিত আৰু সম্পাদিত 'জীৱনৰ অন্য এক নাম' (২০১৮) নামৰ আধুনিক ভাৰতীয় চুটিগল্পৰ সংকলনত। অৱশ্যে গল্পটো পোনতে 'সাতসৰী' আলোচনীৰ অক্টোবৰ, ২০১৭ সংখ্যাত প্ৰকাশ পাইছিল।

উড়িআ মহিলা গল্পকাৰসকলৰ ভিতৰত সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ এক বিশিষ্ট স্থান আছে। উড়িআ গল্প সাহিত্যক সমৃদ্ধ কৰা অন্যান্য উড়িআ মহিলা গল্পকাৰসকল হ'ল — মমতা দাশ (জ. ১৯৪৭), বনজা দেৱী (জ. ১৯৪১), প্ৰেমলতা দেৱী (জ. ১৯৪৪), সুশীলা দেৱী, চিৰশ্ৰী ইন্দ্ৰসিংহ (জ. ১৯৬৬), মনালিছা জেনা (জ. ১৯৬৪), গোলাপ মঞ্জৰী কৰ (জ. ১৯৪৯), সুপ্ৰভা কৰ, গায়ত্ৰী বসু মল্লিক (১৯৩০-২০১৩), সংঘমিত্ৰা মিশ্ৰ (জ. ১৯৫১), বীণাপানি মোহন্তি(জ. ১৯৩৬), অৰ্চনা নায়ক (জ. ১৯৪৭), পল্লৱী নায়ক (জ. ১৯৭৯), বসন্ত কুমাৰী পাটনায়ক (১৯২৩-২০১২), বিনোদিনী পাত্ৰ (জ. ১৯৫১), আৰতিবালা প্ৰভৃতি, দীপ্সা ৰথ (১৯৮২-২০১৫), সুস্মিতা ৰথ (জ. ১৯৫২), প্ৰতিভা ৰায় (জ. ১৯৪৪), ৰেবা ৰায় (১৮৭৫-১৯৫৭), সংযুক্তা ৰাউত (জ. ১৯৫০), সৰোজিনী চাহু (জ. ১৯৫৬), পৰমিতা শতপাঠী (জ. ১৯৬৫), গায়ত্ৰী সাৰফ (জ. ১৯৫২) আদি।

১.১ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

"উড়িআ গল্পকাৰ সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পত প্ৰতিফলিত সমাজ" শীৰ্ষক এই অধ্যয়নৰ মুখ্য উদ্দেশ্য হৈছে—

■ 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পৰ আধাৰত উড়িআ গল্পকাৰ সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ চুটিগল্পৰ বিশেষত্ব নিৰূপণ কৰা আৰু

■ গল্পটোত প্ৰতিফলিত সমাজ জীৱনৰ লগত সম্পৃক্ত দিশবোৰ বিচাৰ কৰা।

১.২ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি আৰু সামগ্ৰী ঃ

বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰে এই পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰা হৈছে। মূল আলোচনাৰ পূৰ্বে সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ গল্পৰ বিশেষত্ব আৰু 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পটোৰ বিষয়বস্তুৰ সংক্ষিপ্ত আভাস দাঙি ধৰা হৈছে।

পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোঁতে মুখ্য আৰু গৌণ দুয়ো প্ৰকাৰৰ সমল ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। "উড়িআ গল্পকাৰ সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পত প্ৰতিফলিত সমাজ" শীৰ্ষক বিষয়টো বিশ্লেষণৰ বাবে নীৰাজনা মহন্ত বেজবৰাই কৰা গল্পটোৰ অসমীয়া অনুবাদক মূল উৎস হিচাপে গ্ৰহণ কৰা হৈছে। মূল পাঠ গ্ৰহণ কৰা হৈছে নীৰাজনা মহন্ত বেজবৰাৰ দ্বাৰা সংকলিত আৰু সম্পাদিত 'জীৱনৰ অন্য এক নাম' (২০১৮) নামৰ আধুনিক ভাৰতীয় চুটিগল্পৰ সংকলনটোৰ পৰা।

২. সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ গল্পৰ বিশেষত্ব ঃ

Spark of Light: Short Stories by Women Writers of Odisha গ্ৰন্থৰ সম্পাদক ভেলেৰি হেনিটিউক আৰু সুপ্ৰিয়া কৰে উড়িআ গল্পকাৰ সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ গল্পৰ তিনিটা বিশেষ বিশেষত্বৰ কথা উল্লেখ কৰিছে—

■ সৌন্দৰ্যৰ এক সূক্ষ্ম অনুভূতি।

■ বাস্তৱতাৰ এক গভীৰ আৰু সহানুভূতিশীল উপলব্ধি।

■ মানৱতাৰ এক অবিচলিত বিশ্বাস। (Henitiuk & Kar 2016 : 235)

সম্পাদকদ্বয়ে উল্লেখ কৰা এই তিনিওটা বিশেষত্ব 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পটোৰ মাজতো প্ৰতিফলিত হৈছে। গল্পকাৰৰ 'কুমাৰী নদী' গল্পটোৰ মাজতো এই বিশেষত্ব তিনিটা পোৱা যায়।

'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পত মানৱীয়তাৰ সংস্পৰ্শত পাশৱিকতা পৰাজিত হোৱাৰ চিত্ৰ পোৱা যায়। ইয়াৰ যোগেদি গল্পকাৰৰ মানৱতাৰ ওপৰত থকা অবিচলিত বিশ্বাসৰ উমান পোৱা যায়। 'কুমাৰী নদী' গল্পত কুসুমে বলাৎকাৰী হ'লেও উদ্ধৱৰ কন্যা মুক্তাৰ সমস্ত দায়িত্ব মূৰ পাতি লৈছে।

এই বিশেষত্বকেইটাৰ বাহিৰেও সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ গল্পত আৰু কিছুমান বিশেষত্ব চকুত পৰে। তলত প্ৰধানকৈ 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' আৰু 'কুমাৰী নদী' গল্প দুটাৰ আধাৰত সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ গল্পৰ দুটামান বিশেষত্ব নিৰূপণ কৰি আলোচনা কৰা হ'ল—

২.১ মানুহৰ হৃদয়হীনতাৰ স্বৰূপ ঃ

সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ গল্পত মানুহৰ হৃদয়হীনতাৰ বিভিন্ন স্বৰূপ প্ৰকাশিত হৈছে। 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পত আলৰ বুঢ়ী নেত্ৰমণিৰ দায়িত্ব ল'বলৈ পৰিয়ালৰ কোনো লোক আগবাঢ়ি অহা নাই। গাঁওবুঢ়া উদয় ৰাউতে নেত্ৰমণিক হাতী ৰখাৰ কাম দি হৃদয়হীনতাৰ পৰিচয় দিছে। সেইদৰে 'কুমাৰী নদী' গল্পত গাঁৱৰ প্ৰধানে স্বামীৰ চিতাৰ জুইৰ উত্তাপ গাৰ পৰা আঁতৰ নৌহওঁতেই কুসুমক বিয়াত বহিবলৈ পৰামৰ্শ দিছে। আকৌ বলাৎকাৰী উদ্ধৱৰ ছোৱালী মুক্তাক ডাঙৰ-দীঘল কৰাৰ বাবদ তাই চূড়ান্ত অপমানহে লাভ কৰিছে।

২.২ সুগভীৰ আশাবাদ ঃ

সুগভীৰ আশাবাদৰ প্ৰসংগ সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ গল্পত বিশেষভাৱে সক্ৰিয়। পৰিয়ালৰ মানুহৰ অনাদৰ-অৱহেলা

অথবা হাতী ৰখাৰ দৰে বিপদজনক কাম সমৰ্পণ কৰাৰ পাছতো নেত্ৰমণি অসুখী হোৱা নাই। আলৰ বুঢ়ী হ'লেও নেত্ৰমণিয়ে ভিক্ষা কৰি নাখায়। জীৱনৰ প্ৰতি থকা সৰল দৃষ্টিভংগীয়ে নেত্ৰমণিৰ দৰে মানুহক পাশৱিকতাৰ পৰা আঁতৰাই ৰাখে। এনে জীৱনবোধৰ প্ৰকাশ ঘটাৰ বাবে 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পটো হৃদয়স্পৰ্শী। সেইদৰে 'কুমাৰী নদী' গল্পৰ ইবা, কুসুম আদি চৰিত্ৰৰ জীৱনবোধেও আমাক আকৰ্ষিত কৰে। ইবাৰ আশাবাদৰ বিষয়ে গল্পকাৰে এনেকৈ উল্লেখ কৰিছে— "এই শৰণপুৰৰে এজনে শপত খাইছে যে তেওঁ নদী এখন যেনে তেনে বিচাৰি উলিয়াবই। মানুহজনৰ নাম ইবা। তেওঁ জানে যে পাহাৰখনৰ বুকুতেই ক'ৰবাত লুকাই আছে সেই জলকন্যা। তাইক সি যেনে তেনে বিচাৰি উলিয়াব। তাৰ পাছত সেই জলধাৰা তৰল কাঁচৰ দৰে শৰণপুৰ গাঁৱৰ দাঁতিৰে বৈ আহি জলপ্ৰপাত হৈ এচাৰ খাই পৰিব ভৈয়ামৰ বাকৰিত।"

স্বামীৰ মৃত্যু, উদ্ধৱৰ অনৈতিক আচৰণ, উদ্ধৱক হত্যা, উদ্ধৱৰ কন্যা মুক্তাৰ দায়িত্ব গ্ৰহণ আৰু মুক্তাৰ অনাদৰ-অৱজ্ঞাই কুসুমৰ জীৱনস্পৃহাৰ সমাপ্তি ঘোষণা কৰা নাই। ইবাৰ প্ৰিয় নদীৰ কাষত প্ৰিয়তমা নাৰী ৰূপে থিয় হৈ নকৈ জীৱন এটা আৰম্ভ কৰিছে।

২.৩ উড়িআ সমাজ-সংস্কৃতিৰ প্ৰতিফলন ঃ

সংক্ষিপ্ত পৰিসৰৰ হ'লেও সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ গল্পত উড়িআ সমাজ-সংস্কৃতিৰ প্ৰতিফলন লক্ষ্য কৰা যায়। 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পত উড়িআ লোকবিশ্বাসৰ কথা আছে— "গাঁৱৰ মানুহে কি নেজানে নেকি যে এনেকৈ ভিক্ষাৰে পেট ভৰালে অহা জনমত চুক ভেকুলী হৈ জন্ম ল'ব লাগিব?" (বেজবৰা ২০১৮ ঃ ২১৯) 'কুমাৰী নদী' গল্পত যানি যাত্ৰা, ঘোঁৰা নাচ, বাঘ নাচৰ উল্লেখ পোৱা যায়। এইবোৰ হৈছে ওড়িশাৰ লোকনাট্যৰ একো একোটা প্ৰকাৰ। উড়িআ সমাজখনত যে বিধৱা বিয়াৰ প্ৰচলন আছিল বা দত্তক-পুত্ৰ গ্ৰহণৰ পৰম্পৰাও আছিল, সেই কথাও 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' আৰু 'কুমাৰী নদী' গল্পত পোৱা যায়।

২.৪ সংলাপ বা কথোপকথনৰ উপযুক্ত প্ৰয়োগ ঃ

সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ গল্প কেৱল বৰ্ণনামূলক নহয়। বৰ্ণনা, উপযুক্ত কথোপকথন বা সংলাপ আৰু গল্পকাৰৰ দেখা-নেদেখা উপস্থিতিয়ে তেওঁৰ গল্পৰ পঠনীয় গুণ বৃদ্ধি কৰিছে।

২.৫ সৰল আলংকাৰিক ভাষাৰ প্ৰয়োগ ঃ

সৰল আলংকাৰিক ভাষাৰ প্ৰয়োগ সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ গল্পৰ অন্য এটা প্ৰধান বিশেষত্ব। এই বিশেষত্বটো 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' আৰু 'কুমাৰী নদী' গল্পত বিশেষভাৱে পোৱা যায়। তলত দুয়োটা গল্পৰ পৰা দুটাকৈ উদাহৰণ দাঙি ধৰা হ'ল—

হাতী আৰু হাৰিকেন লেম ঃ

(ক) "বয়সৰ লগে লগে মানুহৰ জেদো কিজানি <u>ইতিহাসৰ দৰেই</u> ক্ৰমে বেচি শক্তিশালী হৈ গৈ থাকে।" (বেজবৰা ২০১৮ ঃ ২১৯)

(খ) "নতুনকৈ ওলোৱা দুটা তৰুণ দাঁতৰ সৈতে <u>ধোঁৱা বৰণীয়া চলন্ত পাহাৰ</u>।" (বেজবৰা ২০১৮ ঃ ২২০)

কুমাৰী নদী ঃ

(ক) "...তাৰ পাছত সেই জলধাৰা <u>তৰল কাঁচৰ দৰে</u> শৰণপুৰ গাঁৱৰ দাঁতিৰে বৈ আহি জলপ্ৰপাত হৈ এচাৰ খাই পৰিব ভৈয়ামৰ বাকৰিত।"

(খ) "<u>নদীৰ বালি ৰঙৰ</u> এক <u>বাদামী</u> পুৰুষ, থিয় হৈ থাকে এক প্ৰস্তৰ মূৰ্তিৰ দৰে।"

২.৬ স্মৰণীয় বাক্যৰ উপস্থিতি ঃ

স্মৰণীয় বাক্যৰ উপস্থিতিও সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ গল্পত পৰিলক্ষিত হয়। যেনে—

(ক) **হাতী আৰু হাৰিকেন লেম ঃ** "জীৱনৰো জানো কিবা বয়স থাকে?" (বেজবৰা ২০১৮ ঃ ২১৮)

(খ) **কুমাৰী নদী ঃ** "নৈৰ সন্ধানত ব্যস্তজনৰ আৰু কিহৰ হিচাপ-নিকাচ?"

৩. 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পটোৰ বিষয়বস্তু ঃ

"কিন্তু সিতো নাজানে যে সকলো মানুহেই নেত্ৰমণি নহয় আৰু সকলো লেম কেৱল কেৰাচিন তেলেৰেই নজ্বলে।"— এই বাক্যটোৰে সমাপ্ত হোৱা সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পটোৰ মূল বক্তব্য হৈছে মানৱীয়তাৰে পাশৱিকতাক বশ কৰিব পাৰি। গল্পটোৰ বিষয়বস্তু সম্পৰ্কে অনুবাদকে এনেদৰে লিখিছে— "মানৱীয়তাৰে পাশৱিকতাক বধ কৰিব পাৰি— এই কথাটো আজিৰ মানুহে লাহে লাহে পাহৰি যাবলৈ ধৰিছে। 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পটোত বৰ্তমান সময়ৰ এটা অতি জ্বলন্ত সমস্যাৰ ৰূপত চিহ্নিত হাতী আৰু মানুহৰ সংঘাতৰ প্ৰসঙ্গৰে সেই কথাটোকে অতি হৃদয়স্পৰ্শী ধৰণেৰে বৰ্ণোৱা হৈছে। (বেজবৰা ২০১৮ ঃ ২৬৮) গল্পটোত থকা আলৰ বুঢ়ী নেত্ৰমণি অথবা উদণ্ড ডেকা বনৰীয়া হাতীটো পাঠকৰ বাবে এগৰাকী বুঢ়ী বা এটা হাতী হৈ থকা নাই। বনৰীয়া ডেকা হাতীটোৰে প্ৰতিনিধিত্ব কৰিছে সমাজৰ সমস্ত পাশৱিকতাক আৰু নেত্ৰমণি বুঢ়ীয়ে মানৱীয়তাক। অৱশ্যে গল্পটোত উল্লেখ থকা জুই লগাই ঢোল-ডগৰ বজাই শব্দ কৰি হাতী খেদিবলৈ চলোৱা প্ৰচেষ্টা আৰু কেৰাচিন তেলেৰে নজ্বলা হাৰিকেন লেমো প্ৰতীকাত্মক। পাশৱিকতাৰ পতনৰ বাবে বা যিকোনো সংঘাতজনিত সমস্যা সমাধানৰ বাবে আমাক লাগিব স্নেহযুক্ত প্ৰচেষ্টা অৰ্থাৎ মানৱীয়তাৰ স্পৰ্শ। সেইবাবে উদয় ৰাউতৰ গাঁৱৰ মানুহখিনিয়ে জুই লগাই

ঢোল-ডগৰ বজাই শব্দ কৰি উদণ্ড হাতীটোক খেদাব পৰা নাই। কিন্তু নেত্ৰমণি বুঢ়ীৰ মৰমসনা দুষাৰ মাততে হাতীটো শান্ত হৈ পৰিছে—

(ক) "কি অ' ক'লীয়া পৰ্বত, যা উলটি যাগৈ। চুৰ কৰি অনা দানা-পানীৰে কেতিয়াবা কাৰোবাৰ পেট ভৰাৰ কথা শুনিছ জানো!" (বেজবৰা ২০১৮ ঃ ২২১)

(খ) "বোলো শুনিছনে হাতী পোৱালি, উভতি বাট ল।" (বেজবৰা ২০১৮ ঃ ২২১)

৪. গল্পটোত প্ৰতিফলিত সমাজ ঃ

গল্পটোত দৰিদ্ৰ গ্ৰাম্য উড়িআ সমাজ এখনৰ লগত জড়িত ভালেখিনি কথা প্ৰকাশ পাইছে। তাৰ লগতে আজিৰ আধুনিক সমাজত শিপাই থকা দুটা গুৰুত্বপূৰ্ণ সমস্যাৰ প্ৰসংগ গল্পটোৰ মাজত পোৱা যায়। সেই দুটা হ'ল— হাতী আৰু মানুহৰ সংঘাত আৰু বৃদ্ধ লোকসকলৰ প্ৰতি ব্যক্তি, পৰিয়াল আৰু সমাজে দেখুওৱা নিষ্ঠুৰতা।

তলত গল্পটোত প্ৰকাশিত সমাজ জীৱনৰ লগত জড়িত দিশসমূহ আলোচনা কৰিবলৈ যত্ন কৰা হ'ল—

৪.১ গাঁও পঞ্চায়তৰ যোগেদি সমস্যা সমাধান ঃ

গল্পটোত প্ৰতিফলিত সমাজখনৰ সকলো সৰু-বৰ সমস্যা গাঁও পঞ্চায়তৰ মিটিঙতেই সমাধান কৰা হয় আৰু সমস্যা সমাধানৰ সূত্ৰ আগবঢ়োৱা মূল ব্যক্তিগৰাকী হ'ল গাঁওখনৰ গাঁওবুঢ়া 'উদয় ৰাউত'— "পঞ্চায়তৰ সদস্যৰ নামত বাকী আটাইসোপা মাত্ৰ নামটোৰ বাবে সদস্য। আটাইবোৰে চকুকেইটা টেল্‌টেল্‌কে মেলি মাথোঁ উদয় ৰাউতৰ মুখলৈকে থৰ লাগি চাই আছে — তেওঁৰ মুখৰ পৰা যি ওলাব, সেয়ে ন্যায়, সেয়ে সত্য, সেয়ে শেষ কথা।" (বেজবৰা ২০১৮ ঃ ২১৭) গাঁওখনৰ মানুহে সমস্যা সমাধানৰ বাবে আদালতলৈ নাযায়। পঞ্চায়তৰ মজিয়াতেই গাঁওবুঢ়াৰ সহযোগত সকলো সমস্যা সমাধান কৰে। এনে ব্যৱস্থা কেৱল উড়িআ সমাজখনতেই যে আছিল, তেনে নহয়। ভাৰতীয় প্ৰায়বোৰ গ্ৰাম্য সমাজতেই এনেদৰে পঞ্চায়ত পাতি সমস্যা সমাধান কৰাৰ ব্যৱস্থা আছিল।

৪.২ সমাজ আৰু ব্যক্তি মানসিকতাৰ পৰিৱৰ্তনৰ ইংগিত ঃ

সংস্কৃতি বা সমাজ কেতিয়াও স্থবিৰ নহয়। সময়ৰ লগে লগে বিভিন্ন কাৰকৰ প্ৰভাৱত সংস্কৃতি বা সমাজলৈ পৰিৱৰ্তন আহে। সংস্কৃতি বা সমাজ সলনি হ'বলৈ হ'লে প্ৰথমতে ব্যক্তিৰ মানসিকতা সলনি হ'ব লাগিব। উদয় ৰাউতৰ গাঁওখনৰ মানুহবোৰ আছিল একেবাৰে নিজস্বতাহীন। উদয় ৰাউতৰ প্ৰত্যেকটো ৰায় তেওঁলোকে একো বিচাৰ নকৰাকৈয়ে মানি লৈছিল। কিন্তু গল্পটোত নেত্ৰমণি বুঢ়ীৰ প্ৰসংগত গাঁওবুঢ়া উদয় ৰাউতে দিয়া ৰায়টোৰ বিষয়ে গাঁৱৰ মানুহে 'প্ৰথম বাৰৰ বাবে' ভাবি চোৱাৰ কথা আছে— "এই প্ৰথম বাৰৰ বাবে গাঁৱৰ মানুহে ৰাউতৰ বিচাৰৰ বিষয়ে কোৱাকুই কৰিলে— ৰাউতেনো বাৰু এইটো কি ৰায় দিলে হয়নে? বুঢ়ীজনীক হাতী পহৰা দিবলৈ দিছে, এয়া জানো মানুহজনীক জীয়াই জীয়াই চিতাত তুলি দিয়াৰ নিচিনা নহ'ল?" (বেজবৰা ২০১৮ ঃ ২২০) অৱশ্যে গাঁওখনৰ মানুহখিনিয়ে প্ৰত্যক্ষ প্ৰতিবাদ কৰা নাই। তেওঁলোকেই বুঢ়ীৰ বাবে পাহাৰৰ নামনিত ততাভুকুতাকৈ নামত জুপুৰি এটা সাজি দিছে। তথাপিও গল্পটোত থকা এই বৰ্ণনাই ইংগিত দিয়ে যে, এদিন গাঁওখনৰ মানুহৰ মানসিকতা সলনি হ'ব, নিজৰ বিচাৰ-বুদ্ধিৰে চিন্তা কৰিবলৈ শিকিব আৰু এইদৰেই সমাজলৈ পৰিৱৰ্তন আহিব।

৪.৩ কৃষিকেন্দ্ৰিক গ্ৰাম্য সমাজ ঃ

সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পটোত প্ৰতিফলতি উড়িআ সমাজখন কৃষিকেন্দ্ৰিক গ্ৰাম্য সমাজ। গাঁওখন পাহাৰৰ নামনিত অৱস্থিত। গাঁৱৰ মানুহে পথাৰত খেতি কৰে। কেতিয়াবা হাবিৰ বনৰীয়া হাতীৰ জাকে পথাৰৰ শস্য টহিলং কৰি থৈ যায়। গল্পটোত প্ৰতিফলিত সমাজখনত মদৰো প্ৰচলন আছে। অগনি নামৰ ব্যক্তিজনৰ ঘৰত মদ প্ৰস্তুত কৰে আৰু সেই মদ খাবলৈ নিজৰ গাঁৱৰ মানুহৰ লগতে ওচৰৰ চাৰি-পাঁচখন গাঁৱৰ মানুহো আহে।

৪.৪ হাতী আৰু মানুহৰ সংঘাত ঃ

গল্পটোত হাতী আৰু মানুহৰ সংঘাতৰ বিষয়টোক কেন্দ্ৰ কৰি মূল বিষয়বস্তু প্ৰকাশ কৰা হৈছে। হাতী আৰু মানুহৰ সংঘাতৰ ঘাই কাৰণ হৈছে অৰণ্য তথা হাতীৰ বাসস্থান ধ্বংস। গল্পটোত পোনপটীয়াকৈ অৰণ্য ধ্বংসৰ কথা নাই যদিও গাঁওখনত হাতীয়ে চলোৱা উপদ্ৰৱৰ আঁৰত খাদ্যৰ নাটনিয়েই সক্ৰিয় হৈ আছে বুলি অনুমান কৰিব পাৰি। গাঁৱৰ পথাৰ নষ্ট কৰাৰ লগতে মানুহৰ ঘৰৰো অনিষ্ট সাধন কৰাৰ কথা গল্পটোত আছে।

৪.৫ লোকসংস্কৃতিৰ প্ৰতিফলন ঃ

'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পটোত উৰিয়া লোকসংস্কৃতিৰ লগত জড়িত লোকবিশ্বাসৰ নিদৰ্শন পোৱা যায়। তেওঁলোকৰ সমাজত বিশ্বাস আছে যে, ভিক্ষা কৰি খালে অহা জন্মত চুকভেকুলী হৈ জন্ম ল'ব লাগিব। ইয়াৰ উপৰি পূৰ্ণিমাত কঁকালৰ বিষ বাঢ়ে বুলি থকা লোকবিশ্বাসৰ কথাও আছে— "আজি পূৰ্ণিমা। নেত্ৰমণিৰ কঁকালৰ বিষটো সেই কাৰণে আজি আন দিনাতকৈ বেচি।" (বেজবৰা ২০১৮ ঃ ২১৯)

গাঁওখনৰ মানুহখিনিৰ মাজত যাদু-মন্ত্ৰ বিষয়ক

লোকবিশ্বাসো আছে। হাতী পহৰা দিবলৈ যোৱা নেত্ৰমণি বুঢ়ীক হাতীয়ে একো অনিষ্ট নকৰা দেখি গাঁৱৰ ৰাইজে ভাবিছিল— "...বুঢ়ীয়ে নিশ্চয় যাদু-মন্ত্ৰ জানে।" (বেজবৰা ২০১৮ঃ ২২১) গল্পটোত লোককথাৰ জন্ম আৰু তাৰ প্ৰসাৰৰ লগত জড়িত কথাও পোৱা যায়। নেত্ৰমণি বুঢ়ী আৰু হাতীৰ কথাটো গাঁৱৰ মানুহৰ বাবে সাধুকথা হৈ পৰিছিল। মাকহঁতে নিজৰ নিজৰ ল'ৰা-ছোৱালীক ৰাতি শুৱাবৰ সময়ত হাতীৱালী বুঢ়ী নেত্ৰমণিৰ কাহিনী কৈছিল। এদিন নেত্ৰমণি বুঢ়ীৰ মৃত্যু হ'ল। কিন্তু তাইক লৈ জন্ম হোৱা সাধু গাঁওখনত ৰৈ গ'ল। গল্পকাৰৰ ভাষাত— "...নেত্ৰমণি মানুহৰ পৰা গৈ লোককথাৰ নায়িকা হৈ পৰিলগৈ। লোককথাৰ কেতিয়াও মৃত্যু নহয়, কিন্তু মানুহ মাত্ৰেই মৰণশীল।" (বেজবৰা ২০১৮ঃ ২২২)

৪.৬ সাধুকথা কথনৰ পৰম্পৰা ঃ

গল্পটোত প্ৰতিফলিত গাঁওখন সাধুকথা কথনৰ পৰম্পৰাৰে সমৃদ্ধ এখন গাঁও। সেই পৰম্পৰাৰ বাহক হ'ল নাৰী। গল্পটোত ইয়াৰ বৰ্ণনা আছে এনেকৈ— "সৰু সৰু ল'ৰা-ছোৱালীবোৰক ৰাতি শুৱাবৰ বাবে মাকহঁতে সাধু কৈ শুনায়— 'সেই পাহাৰটোৰ ওপৰত যে ডাঙৰ হাবিখন আছে, তাত এজনী হাতীৱালী বুঢ়ী আছে। বনৰীয়া হাতীয়ে তাইক শুঁড়েৰে তুলি নি স্বৰ্গ ফুৰাই আনেগৈ। তাইৰ হাতত থকা হাৰিকেন লেমটোৰে স্বৰ্গলৈ বাট দেখুৱাই লৈ যায়'।" (বেজবৰা ২০১৮ঃ ২২২)

৪.৭ বৃদ্ধৰ প্ৰতি অনাদৰ-অৱহেলা ঃ

গল্পটোত বৃদ্ধজনৰ প্ৰতি ব্যক্তি, পৰিয়াল আৰু সমাজে দেখুওৱা অনাদৰ-অৱহেলাৰ চিত্ৰ এখন আছে। অৱশ্যে নেত্ৰমণিৰ সৰলতা, নিজস্ব জীৱনবোধ আৰু জীৱনৰ প্ৰতি থকা গভীৰ আশাবাদে আমাক সেই অনাদৰ-অৱহেলাৰ লগত জড়িত যন্ত্ৰণাক উপলব্ধি কৰিবলৈ নিদিয়ে। ইতিমধ্যে নেত্ৰমণিৰ নিজৰ পুতেক-জীয়েক আৰু নাতি-নতুৱাৰ মৃত্যু হৈছে। আজো নাতিসকলে বিভিন্ন অজুহাত দেখুৱাই নেত্ৰমণিৰ দায়িত্ব ল'ব নিবিচাৰে— "নেত্ৰমণিৰ পুতেক-জীয়েক, আনকি নাতি-নতুৱাও সবেই কেতিয়াবাই এই সংসাৰ এৰিলে। এতিয়া থকাবোৰ আজো নাতি। সিহঁতে আকৌ বুঢ়ীক নিজৰ বংশ বুলি মানিবই নোখোজে। সেয়েহে বুঢ়ীৰ দায়িত্ব ল'বলৈ কোনো আগবাঢ়ি নাহে। কয় বোলে আজো নাতিটো হেনো তোলনীয়া পুতেকহে। গতিকে বুঢ়ীৰ দায়ে তাক নেপায়। তাৰ তোলনীয়া বাপেকে আকৌ কয় বোলে সি যিহেতু নিঃসন্তান, গতিকে আইতাকৰ দায়িত্ব সি ল'ব নোৱাৰে, দায়িত্ব গোটেই গাঁওখনৰ।" (বেজবৰা ২০১৮ ঃ ২১৯) এনেবোৰ কথাই কিন্তু নেত্ৰমণিক অলপো স্পৰ্শ কৰিব পৰা নাছিল। সেইদৰে গাঁওবুঢ়া উদয় ৰাউতৰ মন্তব্যৰ মাজেদিও নেত্ৰমণিৰ প্ৰতি থকা গাঁওখনৰ মানুহৰ অনাদৰ-অৱহেলা প্ৰকাশ পাইছে— "এই বয়সত <u>বুঢ়ীয়ে</u> আৰু কৰিব কি, <u>জীয়াই থাকে মানে</u> পাল পাতি পাতি গাঁৱৰ ঘৰে ঘৰে তেওঁক খোৱাৰ যোগাৰ দিব লাগিব।" (বেজবৰা ২০১৮ঃ ২১৯) নেত্ৰমণিয়ে আনৰ ভিক্ষাৰে চলিব নিবিচৰাত উদয় ৰাউতে তাইক হাতীৰ পহৰা দিয়া কামটো দি সিপুৰীলৈ পঠিওৱাৰ দিহা কৰিছে। নেত্ৰমণিক এনেকৈ দেখ দেখকৈ মৰণৰ মুখলৈ ঠেলি দিয়া কাৰ্যটোৰ প্ৰতিবাদ কৰিবলৈ কিন্তু গাঁওখনৰ কোনো এজন লোক আগবাঢ়ি নাহিল। বৰং "গাঁৱৰ মানুহে পাহাৰৰ নামনিত বুঢ়ীৰ বাবে ততাভুকুতাকৈ নামত জুপুৰি এটা সাজি দিলে। জুপুৰি নহৈ বুঢ়ীৰ বাবে চিতা এখনহে সাজিলে যেনিবা।" (বেজবৰা ২০১৮ ঃ ২১৯)

৫. সামৰণি ঃ

এই আলোচনাৰ অন্তত আমি ক'ব পাৰোঁ যে উড়িআ গল্পকাৰ সুপ্ৰিয়া পণ্ডাৰ 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম' গল্পটোত মানৱীয়তাৰ স্পৰ্শত কিদৰে পাশৱিতাৰ নাশ হয়, তাৰ প্ৰত্যয়জনক চিত্ৰ অংকিত হৈছে। এই বিষয়বস্তু প্ৰকাশ কৰিবলৈ যাওঁতে গল্পকাৰে উড়িআ সমাজৰ বিভিন্ন দিশৰ চিত্ৰও দাঙি ধৰিছে। অৱশ্যে তাৰ সকলোখিনি চিত্ৰক কেৱল উড়িশাৰ মাজতে সীমিত কৰি ৰাখিব নোৱাৰি। হাতী আৰু মানুহৰ সংঘাত, বৃদ্ধজনৰ প্ৰতি সমাজৰ নেতিবাচক তথা দায়িত্বহীন মানসিকতাৰ দৰে বিশেষত্ববোৰৰ পৰিসৰ বৰ্তমান ব্যাপক। অৰ্থাৎ এইবোৰ সমস্যা বৰ্তমান এটা বিশেষ অঞ্চলৰ সমস্যা হৈ থকা নাই। গতিকে বিষয়বস্তুৰ সমান্তৰালভাৱে গল্পটোত প্ৰতিফলিত সমাজ জীৱনৰ দিশবোৰে 'হাতী আৰু হাৰিকেন লেম'ক ভাৰতীয় চুটিগল্পৰ বুৰঞ্জীত স্মৰণীয় কৰি ৰাখিব বুলি ক'ব পৰা যায়। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

গৌড়, বৰ্ণালী শৰ্মা। *ওড়িআ সাহিত্য-সংস্কৃতিৰ আভাস*। গুৱাহাটী ঃ পূৰ্বাঞ্চল প্ৰকাশ, ২০১৯

বেজবৰা, নীৰাজনা মহন্ত (সংক. আৰু সম্পা.)। *জীৱনৰ অন্য এক নাম*। ডিব্ৰুগড় ঃ বনলতা, ২০১৮

— (অনু.)। "হাতী আৰু হাৰিকেন লেম।", *সাতসৰী*, October, ২০১৭, পৃ. ১০৯-১১১

Henitiuk, Valerie & Supriya Kar (eds.). *Spark of Light: Short Stories by Women Writers of Odisha*. edmonton: AU Press, Athabasca University, 2016 www.nilacharai.com/কুমাৰী-নদী-অনুবাদ-গল্প/

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

ঔপনিষদীয় চতুর্মহাবাক্য ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

প্ৰকাশ বৰ্মন

জিলা ঃ বাক্সা, বি, টি, আৰ (অসম),
গাওঁ - খাৰুৱাজান, ডাকঘৰ-খাৰুৱা,
পিন-৭৮১৩৪৬, থানা- বৰমা
৬০০২৫১৩৬২৩
prakashbarman6265@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

বেদৰ চতুৰ্থ বিভাগটো বা অন্তিম অংশটোৱেই হৈছে উপনিষদ্। উপনিষদ্‌ক বেদান্ত বুলি কোৱা হয় কিয়নো উপনিষদ্ বেদৰ অন্তিম ভাগ। বৈদিক সাহিত্যৰ লগতেই বিশ্ব সাহিত্যকো উপনিষদীয় গ্ৰন্থ সমূহে সমৃদ্ধ কৰি আছে। উপনিষদীয় সাহিত্যৰ মাজত যি জ্ঞানৰ শ্ৰোত প্ৰৱাহিত হয় সেয়া আমাৰ বাবে অমৃত সদৃশ। য'ত অধ্যাত্ম-বিদ্যাৰ বীজ সিঞ্চিত হয়। উপনিষদ্ সাহিত্যক পৰা বিদ্যা বুলিও জনা যায়। যি অধ্যাত্মবিদ্যা ৰহস্যৰ প্ৰতিপাদক সেয়াই উপনিষদ। ভাৰতীয় বিচাৰ শাস্ত্ৰৰ শ্ৰেষ্ঠ উ ল্ডখীৱ্য গ্ৰন্থ উপনিষদ্। যাৰ মাজেৰে ব্ৰহ্ম প্ৰাপ্তিৰ চৰম উৎকৃষ্ট সাধন হয়। য'ত শ্ৰেয়-প্ৰেয়াদি বিদ্যাৰ উৎস বিকশিত হয়। ইয়াত ব্ৰহ্মবোধ, মোক্ষতত্ত্বৰ উপলব্ধি উৎকৃষ্ট ৰূপে গুৰু শিষ্যৰ মাজৰ এক অগতানুগতিক পৰম্পৰাৰ সুন্দৰ স্বৰূপ বিশ্লেষণ হয়। এই আলোচনাত ব্ৰহ্ম বা আত্মাৰ স্বৰূপ সম্পৰ্কে বিশদ আলোচনা কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। মোক্ষ লাভৰ বাবে ব্ৰহ্মক উপলব্ধি কৰি জ্ঞানৰ স্বৰূপ অনুধাৱন কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে। যাক্ বিশ্লেষণ কৰিবলৈ বেদাদি গ্ৰন্থৰ পৰা সাৰ বাক্যৰ অৱতাৰণা কৰা হৈছে। এই সংসাৰখন মায়াৰ অধীন, মায়াই বা অবিদ্যাই আবৰি থকা আমাৰ বাবে ব্ৰহ্মক জনাৰ এক মাত্ৰ মাধ্যম হৈছে উপনিষদৰ ৰস পান কৰা। ব্ৰহ্ম জ্ঞানেই আমাক মোক্ষত্ব প্ৰদান কৰিব পাৰে, তাৰ প্ৰসংগতেই এই মহাবাক্য সমূহৰ উপস্থাপন কৰা হৈছে। এই জগতৰ প্ৰতিপদ বস্তু জড় কিম্ব জীৱতেই যে ব্ৰহ্ম বিৰাজমান তাৰ জীৱন্ত উদাহৰণ এই আপ্তপুৰুষৰ মহাবাক্য সমূহ। এই মহাবাক্যৰ সাৰ সমূহে আমাক জীৱনৰ উত্তম শিখৰ দৰ্শন কৰাত সহায় কৰে। কিন্তু এই ব্ৰহ্ম জ্ঞান লাভ কৰাটো ইমান সহজ নহয়। যাৰ বাবে আমাক প্ৰয়োজন হয় প্ৰজ্ঞাৰ লগতে প্ৰতিটো বস্তুকে খণ্ড-বিখণ্ড বা যুক্তিৰে ফঁহিয়াই চোৱাৰ প্ৰৱল হেঁপাহ। সেই হেঁপাহৰ পম খেদাৰ ক্ষুদ্ৰ প্ৰয়ায় এই আলোচনাৰ মাজেৰে জুঁখিব চেষ্টা কৰা হৈছে। যাৰ বাবে পৌৰাণিক তথা বৈদিক ভিন্ন ভিন্ন বিশ্লেষণ উল্লেখ কৰা হৈছে। এই আলোচনা পত্ৰখনৰ পদ্ধতি হিচাপে বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ অৱলম্বন কৰা হৈছে।

সূচক শব্দ ঃ

বেদ, উপনিষদ্, মহাকাব্য, ব্ৰহ্ম বা ব্ৰহ্মাণ্, আত্মা, মোক্ষ, জগত ইত্যাদি।

প্ৰস্তাৱনা ঃ

বেদ ঈশ্বৰকৃত, অনাদি, অপৌৰুষেয়, নিত্য, শ্বাশ্বত আৰু পৰম জ্ঞানৰ উৎস। সমস্ত জ্ঞানৰ শ্ৰোত বেদৰ মাজতেই বিৰাজমান। বেদ ভাৰতীয় সংস্কৃতিৰ প্ৰতিভূ, যাৰ মাজত প্ৰকাশিত জ্ঞান, নৈতিকতা, আচাৰ। বেদ স্বয়ং ভূত, স্বয়ং প্ৰকাশ্য আৰু স্বয়ং প্ৰমাণ। ধৰ্ম, বিজ্ঞান, দৰ্শন, সংস্কৃতি, সামাজিক, ৰাজনৈতিক আদিৰ ভাৱধাৰা। বেদ কেৱল ভাৰতীয় বিদ্যানৰ মাজতেই সীমাবদ্ধ নহয়, বৈদেশিক বিদ্বান সকলেও ইয়াক শ্ৰদ্ধাৰে অৱলোকন কৰে। অতি প্ৰাচীন কালৰে পৰাই বেদে নিজৰ স্বকীয়তা বজাই আহিছে আৰু যেতিয়ালৈ বেদৰ স্বৰূপ, পৱিত্ৰতা এই ধাৰাত বিদ্যমান থাকিব তেতিয়ালৈ ভাৰতভূমি জগতত শ্ৰেষ্ঠ হৈ থাকিব। বেদ আমাৰ শ্ৰেয়-প্ৰেয়াদি সকলো জ্ঞানৰ উৎস। প্ৰাচীন ধৰ্ম-সমাজ-ব্যৱহাৰ প্ৰভৃতিৰ বোধ কৰাবলৈ বেদৰ জ্ঞান অত্যাৱশ্যক। বেদসমূহ ধৰ্মৰ মূলতেই বিদ্যামান বুলি উল্লেখ পোৱা যায়। ভগৱান মনুৱে কৈছে- "বেদোহখিলো ধৰ্মমূলম্" তথা "বেদাদ্ধৰ্মো হি নিৰ্বভৌ।"[১] বেদসমূহ আধ্যাত্মদৰ্শনৰ উকৃষ্ট ভাণ্ডাৰ। কিন্তু ইয়াৰ প্ৰতিপাদন শৈলী অৰ্বাচীন ৰীতিৰ আৰু ভিন্ন ভিন্ন। মানুহৰ জীৱন দৰ্শনৰ স্বৰূপ বেদৰ মাজতেই দেখা পোৱা যায়। বিশ্ব সাহিত্যত বেদৰ মহত্ব আৰু বৈশিষ্ট স্পষ্টকৈ প্ৰতিফলিত হয়।

প্ৰধানত ঃ বেদৰ চাৰিটা প্ৰমূখ বিভাগ ক্ৰমে-- মন্ত্ৰ, ব্ৰহ্মণ, আৰণ্যক আৰু উপনিষদ। মন্ত্ৰৰ সমূদায়ক সংহিতা বুলি কোৱা হয়। মন্ত্ৰভাগৰ ব্যাখ্যাই ব্ৰহ্মণ, যি গৃহস্থৰ বাবে যথেষ্ট উপযোগী, ব্ৰাহ্মণৰ পিছৰ অংশই ব্ৰহ্ম অৰণ্যক, যি বানপ্ৰস্থাশ্ৰমৰ বাবে উপযোগী, আনহাতে উপনিষদ হৈছে ব্ৰহ্মবোধ, মোক্ষতত্ত্বৰ উপলব্ধিৰ উৎকৃষ্ট মাধ্যম। য'ত গুৰু শিষ্যৰ মাজৰ এক অগতানুগতিক পৰম্পৰাৰ সুন্দৰ স্বৰূপ বিৰাজমান।

উপনিষদক পৰা বিদ্যা পদেৰে বুজায়। উপনিষদক বেদান্ত নামে জনা যায়, কাৰণ উপনিষদ বেদৰ অন্তিম ভাগ, যাৰ অৰ্থ ৰহস্যবিদ্যা অধ্যাত্মবিদ্যা, ৰহস্যৰ প্ৰতিপাদক বেদাংশ। অজ্ঞান নাশ কৰি যি বিদ্যা বা জ্ঞানে জীৱক ব্ৰহ্ম প্ৰাপ্তিৰ বাবে বাট দেখুৱাই দিয়ে, পৰম ব্ৰহ্মৰ প্ৰাপিত সাধন ৰূপ সেই ব্ৰহ্মবিদ্যাৰ নামেই উপনিষদ। উপনিষদ্ শব্দটো উপ-নি-(যদলৃ(ধাতু) + ক্কিপ্ প্ৰত্যয় যোগ হৈ নিষ্পন্ন হৈছে। যাৰ আভিধানিক অৰ্থ/ব্যাখ্যা উপনিষদৰ ভাষাত শংকৰাচাৰ্যই এনেদৰে আগবঢ়াইছে যে-- 'সদেদৰ্ধাতোৰ্বিশৰণগত্যৱসাদ নাৰ্থস্যোপনিপূৰ্বস্য ক্কিপ্ৰত্যয়ান্তস্য ৰূপমুপনিষদিতি।'[২] অৰ্থাৎ বিশৰণ (নাশ) গতি আৰু অৱসাদন বা শিথিল কৰা, এই তিনি অৰ্থযুক্ত তথা 'উপ' আৰু 'নি' উপসৰ্গ পূৰ্বক 'ক্কিপ্' প্ৰত্যয়ান্ত 'সদ্' ধাতুৰ পৰা এই উপনিষদ ৰূপ গঠন হৈছে। উপনিষদ্ শব্দটো স্ত্ৰী লিঙ্গ বাচক শব্দ।

সাধাৰণতে যি মোক্ষকামী পুৰুষ ইহলৌকিক আৰু পৰলৌকিক বিষয়ৰ পৰা বিৰক্ত হৈ উপনিষদ শব্দৰ বাচ্য তথা আগত উল্লেখ কৰা লক্ষণেৰে যুক্ত বিদ্যাৰ সমীপ বা ওচৰলৈ যায় অৰ্থাৎ সেয়া লাভ কৰি তাৰ নিষ্ঠা সহকাৰে নিশ্চয়তাপূৰ্বক তাৰ পৰিশীলন কৰে, তাৰ অবিদ্যা আদি সংসাৰৰ বীজৰ বিশৰণ-হিংসন অৰ্থাৎ বিনাশ কৰাৰ কাৰণে এই অৰ্থৰ যোগতেই উপনিষদ্ শব্দেৰে বিদ্যা বুলি কোৱা হয়। প্ৰসংগ ক্ৰমে 'নিচায্য তান্মৃত্যুমুখাৎপ্ৰমুচ্যতে।'[৩]

অথবা পূৰ্বোক্ত বিশেষণৰ দ্বাৰা যুক্ত মুমুক্ষতাক ব্ৰহ্মবিদ্যা পৰব্ৰহ্মৰ ওচৰলৈ প্ৰেৰণ কৰে, এই দৰেই ব্ৰহ্মৰ ওচৰলৈ প্ৰেৰণ কৰিব লগা হোৱাৰ কাৰণে, এই অৰ্থৰ যোগতো ব্ৰহ্ম বিদ্যাক উপনিষদ্ বোলে। প্ৰসংগ ক্ৰমে -- 'ব্ৰহ্মপ্ৰাপ্তো বিৰজোহভূমিদ্বিমৃত্যুঃ।"[৪]

যি অগ্নি ভূঃ ভুবঃ শ্বাঃ আদি লোকৰ পৰা পূৰ্বাসিদ্ধ, ব্ৰহ্মৰ দ্বাৰা উৎপন্ন আৰু জ্ঞাতা হয়, তাৰ সতে সম্বন্ধ ৰখা বিদ্যা, যি অন্য বৰৰ পৰা খুঁজি লোৱা হয় আৰু স্বৰ্গলোকৰূপ ফলৰ প্ৰাপ্তিৰ কাৰণ ৰূপেৰে লোকান্তৰত পুনঃ পুনঃ প্ৰাপ্ত হোৱাৰ যোগ্য গৰ্ভবাস, জন্ম আৰু বৃদ্ধাবস্থা আদিত উপদ্ৰৱ সমূহৰ অৱসান অৰ্থাৎ শিথিল্য কৰে, অতঃ সেই অগ্নিবিদ্যাও 'সদ্' ধাতুৰ অৰ্থৰ যোগতেই উপনিষদ্ বুলি কোৱা হয়। এই প্ৰসংগত -- 'স্বৰ্গলোকা অমৃতত্বং ভজন্তে।'[৫]

এনেদৰেই গ্ৰন্থসূচক অধ্যয়ন কৰা অৰ্থতো উপনিষদ্ শব্দটো ব্যাখ্যা কৰিব পাৰি।

উপনিষদৰ সাংখ্ৰি দৃষ্টিলৈ লক্ষ্য কৰিলে উপনিষদৰ সংখ্যা ১০৮ খন বুলি উল্লেখ পোৱা যায়।[৬] তাৰ বিভাগ প্ৰতি বেদ অনুসৰি ঋগ্বেদৰ উপনিষদৰ সংখ্যা ১০ খন, শুক্লযজুৰ্বেদৰ ১৯ খন, কৃষ্ণযজুৰ্বেদৰ ৩২ খন, সামবেদৰ ১৬ খন আৰু অৰ্থবেদৰ লগত সম্বন্ধ উপনিষদৰ সংখ্যা ৩১ খন। ভগৱান শংকৰাচাৰ্যই ৰচনা কৰা ভাষ্য অনুসৰি উক্ত ১০৮ খন উপনিষদৰ মাজত ১১ খন প্ৰমুখ উপনিষদ। কিন্তু অন্য বিদ্বান সকলে অন্য ১১ খন উপনিষদৰ লগত যজুবেদীয় মৈত্ৰায়ণী উপনিষদৰকো সংলগ্ন কৰি এই ১২ খন উপনিষদৰ প্ৰাচীনতা তথা প্ৰসিদ্ধতা সিদ্ধ কৰিছে। মুক্তিকোপনিষদ অনুসৰি প্ৰাচীন দশোপনিষদ ক্ৰমে -- ঈশ, কেন, কঠ, প্ৰশ্ন, মুণ্ডক, মাণ্ডুক্য, তিত্তিৰিয়, ঐতৰেয়, ছান্দোগ্য আৰু বৃহদাৰণ্যক উপনিষদৰ

লগতে শ্বেতাশ্বতৰ উপনিষদ্ ১১ নম্বৰ উপনিষদ্ ক্ৰমত অৱতাৰণা কৰা হৈছে। যাৰ প্ৰসিদ্ধতা শংকৰাচাৰ্যই ভাষ্য আকাৰে প্ৰমাণিত কৰিছে।

প্ৰমুখ বিষয় ঃ

উপনিষদ্ সাহিত্যত বহু ব্ৰহ্ম বিদ্যা প্ৰতিপাদক তত্ত্বৰ আলোচনা উপলব্ধ। সমস্ত উপনিষদেই মোক্ষ ধৰ্মৰ ওপৰত প্ৰতিষ্ঠিত। সাধাৰণতে মহাবাক্যৰ অৰ্থ এনেদৰে কৈছে -- 'ব্ৰহ্মবিদ্যাৰ প্ৰতিপাদ বাক্য যেনে -- ওঁ তৎসৎ, তত্বমসি ইত্যাদি।' [৭] বেদান্তসাৰৰ টীকাত উল্লেখ কৰিছে যে মহাবাক্যৰ গণনা কোনো কোনো ঠাইত ১২ প্ৰকাৰৰ কৰিছে আৰু কোনো ঠাইত ৪ প্ৰকাৰৰ। কিন্তু প্ৰমূখ ৰূপে ব্ৰহ্মতত্ত্বৰ প্ৰতিপাদক ৪ টাই মহাবাক্যৰ বৰ্ণনাই পোৱা যায়। সেয়া ক্ৰমে --

১. 'প্ৰজ্ঞানং ব্ৰহ্ম' (ঐতৰেয় উপনিষদ্/ঋগ্বেদ)

২. 'অহং ব্ৰহ্মাস্মি' (বৃহদাৰণ্যক উপনিষদ্ /যজুৰ্বেদ)

৩. 'তত্বমসি' (ছান্দোগ্য উপনিষদ্ /সামবেদ)

৪. 'অয়মাত্ম ব্ৰহ্ম' (মাণ্ডুক্য উপনিষদ্ /অথৰ্ববেদ)

উপৰোক্ত উপনিষদীয় মহাবাক্য চাৰিটাই মানবীয় মূল্যবোধৰ প্ৰতিষ্ঠিত ভাৰধাৰা বহন কৰিছে। এই উপনিষদ্ সমূহৰ মাজত ক্ৰান্তঃদৰ্শী ঋষি সকলৰ কাহিনীৰ সংমিশ্ৰণ ঘটাই তাৰ মাজেৰে অধ্যাত্মবিদ্যাৰ সুন্দৰ শিক্ষা দাঙি ধৰিছে। উপনিষদৰ সামাজিক আচাৰ-ব্যৱহাৰ, ৰীতি-নীতি বেদকালীন সামাজিক ব্যৱহাৰৰ পৰা বহুত পৃথক। উপনিষদৰ যুগত বৈদিক দেৱতাৰ প্ৰাধান্য ভালেই খিনি কমি আহিছিল। সমাজত ব্ৰাহ্মণ, পুৰোহিত আৰু যজ্ঞৰ আনুষ্ঠানিক দিশৰ প্ৰাধান্য বাঢ়ি গৈছিল যদিও ধ্যানপ্ৰৱণ তত্বজিজ্ঞাসুসকলৰ মাজত যজ্ঞ আৰু ব্ৰাহ্মণৰ প্ৰাধান্য নাছিল। লোক আৰু পৰলোকৰ ৰহস্য সন্ধানেই আছিল তেওঁলোকৰ মূল লক্ষ্য। সেই সময়ত সকলো শ্ৰেণীৰ লোকে অধ্যাত্মবিদ্যা শিকাবলৈ সুযোগ লাভ কৰিছিল। কিন্তু অধ্যাত্ম জিজ্ঞাসুসকলৰ আটায়ে গৃহত্যাগী সন্নাসী নাছিল। এওঁলোকৰ ত্যাগ আছিল বিষয়ত আসক্তি, ত্যাগ অথবা ইন্দ্ৰিয় সংযম। সেই ব্ৰহ্মজিজ্ঞাসু ঋষি সকলৰ প্ৰায় সংখ্যকেই আছিল গৃহী কিন্তু কামনাদি ৰিপু বিজয়ী মুক্ত ব্ৰহ্মজ্ঞানী।

প্ৰমুখ বিষয়ৰ আলোচনা ঃ

ব্ৰহ্মতত্ত্বৰ প্ৰতিপাদক এই মহাবাক্যৰ আলোচনা উপনিষদৰ বিস্তৃত ভাৱে কৰিছে। উল্লেখিত প্ৰথমটো মহাবাক্য আৰম্ভণিতে বহুকেইটা প্ৰশ্নৰ অৱতাৰণা কৰা হৈছে। উক্ত প্ৰথমটো মহাবাক্য ঐতৰেয় উপনিষদত পোৱা যায়। যিখন উপনিষদ ঋগ্বেদৰ লগত সংবদ্ধ। ব্ৰহ্মৰস্বৰূপ জনাৰ উদ্দেশ্যে সৰ্বাত্মিভাৱৰূপ ফলৰ প্ৰাপ্তিক উপলব্ধ কৰা আধুনিক, মুমুক্ষ আৰু ব্ৰহ্মজিজ্ঞাসু ব্ৰাহ্মণ সকলে প্ৰশ্ন কৰিছিল যে আমি যাৰ উপাসনা কৰোঁ সেই আত্মা কোন? যাৰ দ্বাৰা আমি দেখোঁ, শ্ৰৱণ কৰোঁ, গোন্ধ লওঁ, বাণীৰ বিশ্লেষণ কৰোঁ, স্বাদু-অস্বাদু জ্ঞান লাভ কৰোঁ সেয়া কোন? [৮] এই সমস্ত প্ৰশ্নৰ উত্তৰ ৰূপে বামদেৱে আগবঢ়াইছে যে এই যি হৃদয়, সেয়াই মন, চেতনা ৰূপ, প্ৰভূতা, বিজ্ঞান, প্ৰজ্ঞান, মেধা, দৃষ্টি, ধৃতি, মতি, মনীষা, জুতি, স্মৃতি, সংকল্প, ক্ৰতু, অসু, কাম আৰু বশ এই সমস্ত প্ৰজ্ঞানৰ নাম। [৯] এই প্ৰসংগত উল্লেখ কৰিছে যে প্ৰজ্ঞানৰ দ্বাৰা বাণীৰ ওপৰত আৰোহিত হৈ বাণীৰ পৰা সম্পূৰ্ণ নামক গ্ৰহণ কৰে, প্ৰজ্ঞাৰ দ্বাৰা চক্ষু ইন্দ্ৰিৰ ওপৰত আৰূঢ় হৈ চক্ষুৰে সমস্ত ৰূপক প্ৰাপ্ত কৰে, ইত্যাদি। [১০] মনৰ পৰাই দেখা পায়, মনৰ পৰাই শ্ৰৱণ কৰে আৰু হৃদয়ৰ পৰাই স্বৰূপৰ জ্ঞান প্ৰাপ্ত কৰে। [১১] অতঃ হৃদয় আৰু মন শব্দবাক্য অন্তঃ কৰণৰেই সকলো প্ৰকাৰৰ উপলব্ধি সাধনত্ব প্ৰসিদ্ধ। প্ৰাণো সেই ৰূপেই। এই প্ৰসংগত উল্লেখ কৰিছে-- 'য়ো বৈ প্ৰাণঃ সা প্ৰজ্ঞা য়া বৈ প্ৰজ্ঞা স প্ৰাণঃ। ১২ এনেদৰেই নানা যুক্তি দাঙি ধৰি প্ৰজ্ঞানৰ স্বৰূপ এনেদৰে দাঙি ধৰিছে "...প্ৰজ্ঞানং ব্ৰহ্ম"। [১৩] অৰ্থাৎ প্ৰজ্ঞানৰূপ আত্মাই অপৰব্ৰহ্ম অথবা সম্পূৰ্ণ শৰীৰত স্থিত প্ৰাণেই প্ৰজ্ঞাত্মা। বিভিন্ন জলপাত্ৰত প্ৰতিবিম্বিত প্ৰতিবিম্বৰ সমান এই অন্তঃ কৰণৰূপ উপাধিত অনুপ্ৰৱিষ্ট হিৰণ্যগৰ্ভ প্ৰাণ বা প্ৰজ্ঞাত্মা হয়। এই গুণৰ বাবে ইন্দ্ৰই দেৱৰাজ। এই প্ৰাণৰূপ প্ৰজ্ঞাই প্ৰজাপতি, যি সকলোতকৈ আগতে উৎপন্ন হোৱা দেহধাৰী। যাৰ দ্বাৰা মুখাদি নিৰ্ভেদেৰে অগ্নি আদি লোকপাল উৎপন্ন হৈছে সেই প্ৰাজাপতিও তেৱেঁই আৰু অগ্নি আদি অন্য সম্পূৰ্ণ দেৱতাও তেৱেঁই। এই সমস্ত শৰীৰৰ উপাদানভূত অন্ন আৰু অন্নদত্ব ভাৰক প্ৰাপ্ত হোৱা পৃথিৱী আদি পঞ্চভূতেৰে গঠিত। অণ্ডজ, জৰায়ুজ, স্বেদজ, উদ্ভিদজ আৰু অশ্ব, গৌ, পুৰুষ, হাতী আদি অন্য যি জীৱ, জংগম,পক্ষী, স্থাৱৰ এই সকলোবোৰ প্ৰজ্ঞানেত্ৰ। প্ৰজ্ঞাপ্তিকেই প্ৰজ্ঞা বোলে আৰু যাৰ দ্বাৰা নয়ন অৰ্থাৎ লৈ যোৱা যায় সেয়াই নেত্ৰ। এনেদৰে প্ৰজ্ঞাই যাৰ নেত্ৰ তাকেই প্ৰজ্ঞানেত্ৰ বুলি কয়। উৎপত্তি, স্থিতি আৰু প্ৰলয়ৰ সময়ত প্ৰজ্ঞান বা ব্ৰহ্মা স্থিতি থাকি প্ৰজ্ঞাকেই আশ্ৰয় কৰে। এনেদৰে পূৰ্বৱতী এই লোক প্ৰজ্ঞানেত্ৰযুক্ত হয় অৰ্থাৎ সকলো প্ৰজ্ঞাৰূপ নেত্ৰযুক্ত হয়, সম্পূৰ্ণ জগতৰ আশ্ৰয় প্ৰজ্ঞান, সেয়েহে "প্ৰজ্ঞানং ব্ৰহ্ম" অৰ্থাৎ প্ৰজ্ঞাই ব্ৰহ্ম বুলি কৈ শংকৰে বিভিন্ন উদাহৰণ সহিতে ন ন ব্যাখ্যাৰ অৱতাৰণা কৰি প্ৰথম মহাবাক্যৰ বিশ্লেষণ কৰিছে। উপলব্ধ অনুসৰি 'প্ৰজ্ঞানং ব্ৰহ্ম' মহাবাক্যটো লক্ষণ প্ৰকাশ মহাবাক্য।

ব্ৰহ্মবিদ্যাৰ স্বৰূপ উপলব্ধি কৰাৰ আগতে যেতিয়া ব্ৰহ্মাই

নিজে নিজক উপলব্ধি কৰে তেতিয়াই জগতৰ উৎপত্তি প্ৰক্ৰিয়া আৰম্ভ হয়। এই জগতত উপলব্ধি কৰিব লগা এক মাত্ৰ সত্ত্বাটোৱেই হৈছে পৰম ব্ৰহ্ম, কিন্তু আমি তাক কেনেকৈ জানিব পাৰোঁ, তাক লাভ কৰা মাধ্যমেই বা কি ইত্যাদি প্ৰশ্নৰ অৱতাৰণা হয়। সৃষ্টিৰ আগত এই পৃথিৱীত কোন আছিল? তেওঁ কি? তেওঁৰ স্বৰূপ কেনেকুৱা ইত্যাদি ইত্যাদি প্ৰশ্ন। তেতিয়াই এই উপনিষদীয় দ্বিতীয় মহাবাক্যটোৰ অৱতাৰণা কৰা হৈছিল। যাৰ পৰৱৰ্তী ক্ৰমে সকলো ব্ৰহ্মক উপলব্ধি কৰাৰ দৰে ব্ৰহ্মক আত্মা ৰূপেৰে দেখি ঋষি বামদেৱে জানিছিল। ইয়াৰ সুন্দৰ উপস্থাপন ব্যাখ্যা সহিতে শংকৰাচাৰ্যই সমাজত দাঙি ধৰিছে। শুক্লযজুৰ্বেদীয় সৰ্ব প্ৰসিদ্ধ উপনিষদৰ, পৰিসৰৰ পৰাও বিশাল বৃহৎদাৰণ্যকোপনিষদত, প্ৰাপ্ত অনুসৰি- 'ব্ৰহ্ম বা ইদমগ্ৰ আসীত্তদাত্মানমেবাবেত। অহং ব্ৰহ্মাস্মীতি....।' [১৪] অৰ্থাৎ সৃষ্টিৰ আগত ইয়াত ব্ৰহ্মাই আছিল, তেওঁ প্ৰথমতে নিজকেই উপলব্ধি কৰিছিল বা জানিছিল অহং ব্ৰহ্মাস্মি অৰ্থাৎ ময়েই ব্ৰহ্ম হওঁ। এনেদৰে তেওঁ সকলো হৈ গৈছিল। সেই দেৱতা সকলৰ মাজত যিয়ে যাক জানিছিল তেৱেঁই সেই ৰূপ পাইছিল। ইয়াত 'ব্ৰহ্ম অথবা ইদমগ্ৰ আসীদ্' এই বাক্যত ব্ৰহ্ম পদটো অপৰব্ৰহ্মৰ বাচক হয় বুলি ক'ব খোজে। ইয়াত মনুষ্যৰ অধিকৰণ হোৱাৰ বাবে ব্ৰহ্ম শব্দত ব্ৰহ্মৰূপতাৰ প্ৰাপ্ত হোৱা ব্ৰহ্মণ বুলি বোধ কৰিব পাৰি। পৰব্ৰহ্ম আৰু অপৰব্ৰহ্ম প্ৰজাপতিৰ বাচক নহয়। সেয়েহে কৰ্মসহিত দ্বৈত একত্বৰূপৰ ওপৰত ব্ৰহ্মবিদ্যাৰ দ্বাৰা অপৰব্ৰহ্মৰ ভাৱক লাভ কৰে হিৰণ্যগৰ্ভসম্বন্ধী ভোগৰ পৰা বিৰক্ত আৰু সকলো প্ৰকাৰৰ কৰ্মফল প্ৰাপ্ত হোৱাৰ কাৰণে যাৰ কাম আৰু কৰ্মৰূপ বন্ধন নষ্ট হৈ গৈছে সেই পৰব্ৰহ্মভাৱত প্ৰাপ্ত হোৱা পুৰুষ ব্ৰহ্মবিদ্যাৰ বাবে 'ব্ৰহ্ম' শব্দৰে অভিহিত কৰে। শাস্ত্ৰত উল্লেখ আছে যে সন্যাসীয়ে সস্ত ভূতক অভয়ৰূপ দক্ষিণা দি সন্যাস পালন কৰে ইত্যাদি বাক্যত এনেই প্ৰয়োগ হয়। সেইদৰেই ব্ৰহ্মভাৱক প্ৰাপ্ত হোৱা ব্ৰহ্মণেই ব্ৰহ্ম হয় বুলি এনে ব্যাখ্যা কিছু পণ্ডিতে দিব খোজে। এই ব্ৰহ্মত বিদ্যাৰ বিধান কৰা হৈছে। যদি শুক্তিত ৰজতৰ ইধ্যাৰোপ নহ'লে তাৰ নেত্ৰেন্দ্ৰিয়ৰ বিষয় হিচাপে ল'লে সেয়া শুক্তি হে ৰজত নহয় এনেদৰে জ্ঞান কৰাব নোৱাৰে। যদি ব্ৰহ্মত কোনো স্বৰূপ অৰ্পন কৰা হয় আৰু অন্যত্ৰ প্ৰদৰ্শন কৰিবলৈ চেষ্টা কৰা হয় সেয়া অবিদ্যাৰ বাবে হয়। কিন্তু যদি শুক্তিত ৰজত জ্ঞান লাভ কৰে তেন্তে সেয়া অধ্যাৰোপৰ বাবে বা অবিদ্যা/অজ্ঞানৰ বাবে হয়। যদি ব্ৰহ্মত অবিদ্যাৰ আৰোপ কৰা পিছতো 'এই সকলোৱেই সত্, এই সকলো ব্ৰহ্মাই হয়', এনে জ্ঞান হয়, সেয়া তেওঁৰ ব্ৰহ্ম সাক্ষ্য জ্ঞানৰ বাবে সম্ভৱ হয়। কিয়নো আগতে উল্লেখ কৰা হৈছে যে প্ৰজ্ঞাই ব্ৰহ্ম। এই সকলো প্ৰজ্ঞাৰ বাবেই সম্ভৱ হৈছে। সেয়েহে আমাৰ জ্ঞানৰ পৰা বোধ হৈছে যে ময়েই ব্ৰহ্ম হওঁ আদি জ্ঞানৰ। এই প্ৰসংগত শংকৰাচাৰ্যই যুক্তি দাঙি ধৰিছে যে- 'অহমাত্মা গুড়াকেশ' অৰ্থাৎ হে গুড়াকেশ! মইয়ে আত্মা হওঁ। [১৫] এনেদৰে আমি সকলোতে ব্ৰহ্মৰ উপস্থিতি বোধ কৰিব পাৰোঁ, লাগিলে সেয়া জড় কিম্বা জীৱই হওঁ। 'অহং ব্ৰহ্মাস্মি' এই প্ৰসিদ্ধ ব্ৰহ্মত্ত্ব প্ৰতিপাদক মহাবাক্যটো অনুভৱ সূচক বাক্য।

'অহং ব্ৰহ্মাস্মি' মহাবাক্যৰ আলোচনাৰ পিছতেই তৃতীয় মহাবাক্যত এক জটিল বিশ্লেষণৰ প্ৰয়োজন হৈ পৰে। শ্বেতকেতুৰ প্ৰশ্নৰ উত্তৰ দিবলৈ গৈ ভগৱান আৰুণিয়ে 'তত্বমসি' [১৬] মহাবাক্যৰ অৱতাৰণা কৰিছে। এই মহাবাক্যটো সামবেদীয় জনপ্ৰিয় উপনিষদৰ পৰা তুলি লোৱা। 'তত্বমসি' অৰ্থাৎ সেয়াই তুমি হোৱা, এই বাক্যটো পৰক্ষত্ব আদি বিশিষ্ট চৈতন্যৰ বাচক 'তত্' পদৰ আৰু অপৰোক্ষত্ব আদিৰে বিশিষ্ট চৈতন্যৰ বাচক 'ত্বম্' পদৰ এটাই চৈতন্যৰ তাৎপৰ্যত হোৱাৰ বোধেই সামানাধিকৰণ্য সম্বন্ধ। 'তত্বমসি' পদটোত সাধৰণতে তিনিটা পদ আছে, সেয়া ক্ৰমে তত্ + তম্ + অসি। এই পদৰ বাচ্যাৰ্থত আৰু প্ৰত্যাগ্যাত্মাত ক্ৰমশঃ সমানাধিকৰণ্য, বিশেষণ-বিশেষ্য ভাৱ আৰু লক্ষ্য-লক্ষণ সম্বন্ধৰ প্ৰয়োগ দেখা যায়। [১৭] তত্বমসি এই বাক্যত 'তত্ পদৰ অৰ্থ হৈছে পৰোক্ষত্ব, সৰ্বজ্ঞত্ব আদিৰ বিশিষ্ট চৈতন্য আৰু 'ত্বম্' পদৰ অৰ্থ হৈছে অপৰোক্ষত্ব, অল্পজ্ঞত্ব আদিৰে বিশিষ্ট চৈতন্য। 'তত-তম্' এই পদ দ্বয়ে প্ৰথমা একবচনত আছে বাবেই সমান বিভক্তি যুক্ত। সমান বিভক্তি যুক্ত এই দুই পদৰ একেই চৈতন্য ৰূপৰ অৰ্থত তাৎপৰ্য সম্বন্ধ হয়। এনেদৰে প্ৰত্যেক প্ৰশ্নৰ উত্তৰ দাঙি ধৰি গুৰু আৰুণিয়ে শ্বেতকেতুক স্পষ্ট ভাৱে কৈছে যে এই ব্ৰহ্ম সাক্ষাৎকাৰ পৰম মহাবাক্যৰ মত পোৱা সকলো তত্ত্বই তুমি হোৱা। কিয়নো ব্ৰহ্ম সকলোতে বিদ্যমান। যদি তোমাৰ মাজত ব্ৰহ্ম আছে তেন্তে তুমিও সকলোতে আছা। বেদান্তত ব্ৰহ্মক চিত্তবৃত্তিৰ দ্বাৰ ব্যাপ্ত কৰা স্বীকাৰ কৰা গৈছে; কিন্তু ফলৰ দ্বাৰা ব্ৰহ্মক লাভ কৰিবলৈ যোৱাটো নিষেধ কৰিছে। এনেদৰে 'অহং ব্ৰহ্মাস্মি' আৰু 'তত্বমসি' বাক্য দুটাত আচাৰ্যৰ দ্বাৰা অধ্যাৰোপ আৰু অপবাদৰ মাধ্যমেৰে 'তত্ আৰু 'ত্বং' পদ দুটাৰ অৰ্থ বিবেচনা কৰি বাক্যৰ দ্বাৰা অখণ্ড ব্ৰহ্মৰূপ অৰ্থৰ বোধ কৰোঁৱাত ব্ৰহ্ম সত্তাক উপলব্ধি কৰাত সহায় হৈছে। 'অহংব্ৰহ্মাস্মি' এই বাক্যটো অনুভৱ বাক্য। অনুভৱ বাক্যৰ অৰ্থ হৈছে ব্ৰহ্মৰ আন্তৰিক সাক্ষাৎকাৰ। আনহাতে 'তত্বমসি' হৈছে উপদেশ বাক্য। য'ত ভাগ্যলক্ষণা বা লক্ষণলক্ষণাৰ সমাহাৰ ঘটিছে। উক্ত উপনিষদীয় মহাবাক্যটো উপদেশাত্মক মহাবাক্য।

পৰম ব্ৰহ্মাৰ প্ৰতিপাদক তত্ব বা বাচক হৈছে ওঁকাৰ অথবা প্ৰণৱ। ব্ৰহ্ম তত্বৰ বাচ্য-বাচক জ্ঞান বোধ কৰোৱাৰ আৰু ব্ৰহ্মৰ অন্য স্বৰূপ বোধ কৰোৱাৰ প্ৰসংগত জগত প্ৰসিদ্ধ মহাবাক্যটোৰ অৱতাৰণা কৰিছে। উক্ত ব্ৰহ্মাসূচক মহাবাক্যটো অথৰ্ববেদীয় মাণ্ডুক্য উপনিষদত্ পোৱা যায়। যাক বিশ্লেষণ কৰাৰ প্ৰসংগ ক্ৰমে শংকৰে ন ন বাক্য আৰু উদাহৰণৰ উদ্ধৃতিৰে আগবাঢ়িছে, সেয়া- 'ওমিতি ব্ৰহ্ম'।[১৮] অৰ্থাৎ ওঁ শব্দই ব্ৰহ্ম বুলি শ্ৰুতিয়েও কয়। ওঁ অক্ষৰেই সকলো। এই যি ভূত, ভৱিষ্যত্, বৰ্তমান সকলো তেওঁৰেই ব্যাখ্যা। সেয়েহে এই সকলো ওঁ কাৰে হয়। ইয়াৰ বাহিৰেও যি ত্ৰিকালাতীত বস্তু আছে সেয়াও ওঁকাৰৰেই বাচক।[১৯] বাচক আৰু বাচ্যৰ অভেদ হোৱাৰ পিছতো বাচকৰ প্ৰধানতাৰ পৰাই ওঁ একাক্ষৰেই সকলোৰে ৰূপ হয় সেয়া নিৰ্দেশ কৰিছে। সেয়েহে শ্ৰুতিয়েও কৈছে যে 'পাদেই মাত্ৰা হয় আৰু মাত্ৰাই পাদ হয়।'[২০] ইয়াক স্পষ্টকৈ বিশ্লেষণ কৰা প্ৰসংগটেই ৪ৰ্থ মহাবাক্যৰ উল্লেখ কৰিছে এনেদৰে -- 'সৰ্বহ্যেতদ্ ব্ৰহ্মায়মাত্মা ব্ৰহ্ম সোহয়মাত্মা চতুষ্পাত্।'[২১] অৰ্থাৎ এই সকলো ব্ৰহ্মাই হয়. অৰ্থাৎ এই সকলো, যি ওঁকাৰ মাত্ৰ কোৱা হৈছে সেয়াও ব্ৰহ্মাই। এতিয়ালৈ পৰোক্ষৰূপে কোৱা ব্ৰহ্মাক বিশেষ প্ৰত্যক্ষভাৱে 'এই আত্মাই ব্ৰহ্মা হয়' এনে ধৰণৰ নিৰ্বেশ কৰে। 'অয়মাত্মা ব্ৰহ্ম' এই প্ৰসিদ্ধ মহাবাক্যটোৱে ব্ৰহ্মৰ স্বৰূপ সাক্ষ্য কৰাই। এয়া সাক্ষাৎকাৰাত্মক মহাবাক্য। এই 'অয়ম' শব্দৰ দ্বাৰা চতুষ্পাদ ৰূপত বিভক্ত কৰা আত্মাক স্বকীয় অন্তৰাত্মাস্বৰূপেৰে অভিনয় পূৰ্বক 'অয়মাত্মা ব্ৰহ্ম' এনেদৰে কোৱা হৈছে। ওঁকাৰ নামেৰে কোৱা পৰ/অপৰ ৰূপেৰে ব্যৱস্থিত সেই আত্মা কাৰ্যাপণ (দেশবিশেষ প্ৰচলিত মুদ্ৰা)ৰ সমান চাৰি পাদ যুক্ত হয়, গৰুৰ সমান নহয়। বিশ্ব আদি তিনি পাদৰ পৰা ক্ৰমশঃ পূৰ্বৰ পৰা লয় কৰি অন্তিমত তুৰীয় ব্ৰহ্মাৰউপলব্ধি হয়। সেই তুৰীয়ই জগতৰ মূল কাৰণ। এই তুৰীয়কেই বেদান্তসাৰত চতুৰ্থ, শিৱ, অদ্বৈত বুলি কৈছে। এই ওঁকাৰ ব্ৰহ্ম আৰু আত্মাৰ চতুষ্পাদ কি কি সেয়া তালিকা আকাৰে দেখুওৱা হ'ল --

আত্মন্	ব্ৰহ্ম
(১) শৰীৰ ৰূপ ১ম পাদ (বিশ্ব/বৈশ্বানৰ)	জগত (বিৰাট্)
(২) প্ৰাণ ৰূপ ২য় পাদ (তৈজস্)	জগতৰ আত্মা (হিৰণ্যগৰ্ভ/ সুত্ৰাত্মা)
(৩) বুদ্ধিৰূপ ৩য় পাদ (প্ৰাজ্ঞ/প্ৰজ্ঞা)	আত্মচেতাত্ম (ঈশ্বৰ)
(৪) আত্মা ৰূপ ৪ৰ্থ পাদ (তুৰীয়)	আনন্দৰূপ (ব্ৰহ্ম)

উপনিষদ ভাৰতীয় দৰ্শনৰ জ্ঞান বিদ্যাৰ মূল উৎস। উপনিষদৰ মতে জ্ঞানৰ চূড়ান্ত পৰ্যায় বা লক্ষ্য হ'ল ব্ৰহ্মজ্ঞান লাভ কৰা। সেয়েহে উপনিষদক ব্ৰহ্মবিদ্যা নামেৰে অভিহিত কৰে। 'ব্ৰহ্ম' পদটোৰ ব্যুৎপত্তি সম্পৰ্কে উল্লেখ কৰিছে -- 'ব্ৰহ্মণ্' নপুংসক বৃং হ -মনিন্ "বৃংহের্নোহচ্চেতি" উণাদি. নকাৰস্যাকাৰে ঋতো ৰত্বম্।[২২] অৰ্থাৎ ব্ৰহ্ম/ ব্ৰহ্মণ্ শব্দটো নপুংসক লিংগবাচক। 'বৃহৎ' আৰু 'বৃংহন্ শব্দৰ পৰা 'ব্ৰহ্ম' পদটো নিষ্পন্ন হোৱা। 'বৃহৎ' মানে বিশাল আৰু 'বৃংহন' মানে সীমাহীন। যি কেতিয়াও শেষ স্বৰূপত উপনীত নহয়, যি বাঢ়ি বাঢ়ি গৈ থাকে বা বৃদ্ধি প্ৰাপ্ত হৈ গৈ থাকে। ব্ৰহ্ম হ'ল সেয়া যি স্বতঃস্ফূৰ্তভাৱে জগত আৰু আত্মাৰূপে প্ৰকাশিত হয়।

উপনিষদ্ সাহিত্যই দিয়া ব্ৰহ্মৰ সংজ্ঞা সমূহ ক্ৰমে উল্লেখ কৰা হৈছে। কিন্তু বিভিন্ন উপনিষদীয় ব্ৰহ্মাৰ স্বৰূপ সূচক বাক্য বোৰৰ পৰা ক'ব পাৰি এই ব্ৰহ্ম সংজ্ঞাতীত। যাক বোধ কৰাটো সহজ নহয়। ব্ৰহ্মসাক্ষাৎকাৰ সূচক চতুঃ মহাবাক্যই তাৰে আভাস প্ৰদান কৰিছে। আত্মাই ব্ৰহ্ম, যি স্বতঘ্ৰাসিত, অন্তহীন যাৰ পৰিসৰ, অনন্তভাৱে অমৰণশীল, বিশ্বজগতৰ যি আধা স্বৰূপ, যি সত্য পৰম, যাৰ ব্যতিৰেকে কোনোৰেই বৰ্তিব নোৱাৰে সেয়ে ব্ৰহ্ম। এই সমগ্ৰ জাগতিক উপাদানসমূহেই হ'ল ব্ৰহ্মৰ শৰীৰ, ব্ৰহ্মই এই শৰীৰৰ আত্মা, পুৰুষৰ আত্মাই ব্ৰহ্মৰ শৰীৰ আৰু ব্ৰহ্মই এই শৰীৰৰ স্বৰূপভূত আত্মা। এই ব্ৰহ্মই জড় আৰু জীৱৰ মাজত সংগম ঘটাই সমভাৱে ইয়াৰ মাজেৰেই নিজৰ প্ৰকাশ কৰে যদিও নিজস্ব মহিমাৰে উভয়ৰ পৰা ঊৰ্ধ্বত বিৰাজ কৰে। এই ব্যাখ্যাৰ পৰা জনা যায় যে ব্ৰহ্মৰ সৰল নহয় যি ব্যক্ত কৰি শেষ কৰিব নোৱাৰি। যি চিৰ চৈতন্যময়তা অনন্ত শক্তিময়তা, চিৰ আস্তত্বশীলতা, পৰম আনন্দময়, পৰম জ্ঞানময় আদি দৃষ্টিৰে যি উপলব্ধি কৰা হয় সেই পৰম সত্বাই ব্ৰহ্ম। উপনিষদ গ্ৰন্থই ব্ৰহ্মৰ সংজ্ঞা প্ৰত্যক্ষভাৱে দাঙি নধৰি নঞাৰ্থক দিশেৰে দিবলৈ চেষ্টা কৰিছে, সেয়া-- 'নেতি নেতি'।[২৩] অৰ্থাৎ কি কি বস্তু বা বিষয় ব্ৰহ্ম নহয় তাকেহে বোধ কৰোৱা হৈছে।

সামৰণি ঃ

প্ৰতিভাষিক দৃষ্টিৰে ব্ৰহ্ম 'জ্ঞাতা' নহয়, কাৰণ, ব্ৰহ্ম কোনো ব্যক্তি নহয়। ব্ৰহ্ম 'জ্ঞয়' ও নহয়; কাৰণ, ব্ৰহ্ম জ্ঞানৰ বিষয়বস্তু হ'ব নোৱাৰে। ব্ৰহ্ম 'জ্ঞান' নহয়; কাৰণ এই জীৱজগতক বাদ দি ব্ৰহ্মৰ সুকীয়া স্বৰূপ নাথাকে বুলি ভাৰতীয় দৰ্শনে উল্লেখ কৰিছে। কিন্তু উপনিষদীয় সাহিত্যই ব্ৰহ্মক বিৰাট্ শূণ্য বুলিও কোৱা নাই। পৰম চৈতন্যময় ব্ৰহ্ম কাৰ্যৰূপে হিৰণ্যগৰ্ভ বা সৃষ্টি আৰু কাৰ্যকাৰণৰূপে সৃষ্টিকৰ্তা বা ঈশ্বৰ। এই ব্ৰহ্ম স্বয়ং সম্পূৰ্ণ, সমস্তৰে আধাৰ আৰু এক

অখণ্ড, অনন্ত শক্তি স্বৰূপ পৰম সত্ত্বা। ব্ৰহ্মাৰ এই ধাৰণাকে বোধ কৰাবলৈ ওঁ অৰ্থাৎ 'অ উ ম' চিহ্নৰ ব্যৱহাৰ কৰিছে।[২৪] এই তিনি অক্ষৰৰ পৰা বেদত্ৰয়ী ক্ৰমে ঋক্‌বেদ, যজুৰ্বেদ, আৰু সামবেদৰ নিৰ্মাণ হৈছে বুলি উল্লেখ পোৱা যায়।[২৫] ইয়াৰ উপৰিও উপলব্ধ অনুসৰি অ' মানে ব্ৰহ্মা (সৃষ্টিৰ কাৰণ), 'উ' মানে বিষ্ণু (পালনকৰ্তা) আৰু 'মা' মানে শিৱ (সংহাৰক)।[২৬] এই উপনিষদীয় চাৰি মহাবাক্যত পৰিমিতিৰ বাবে উদ্দীপ্ত বাস্তৱত এয়া স্বাধীন সত্তাৰ স্বৰূপ, অন্তৰ্বাহিতা বা অজ্ঞেয়তাৰ মূল্যাংশ আৰু প্ৰতিপাদ্যত্তাৰ অধিকাৰ একেবাৰে নিৰ্দিষ্ট কৰিছে। এই মহাবাক্য চতুষ্টয়ে আমাৰ স্বাধীন সত্তাৰ সচিত্ৰ অভিন্ন সমন্বয় জনিত অভিজ্ঞতা, য'ত অজ্ঞেয়তাৰ নিকটস্থ বুদ্ধিগত মূল্যাংশ আৰু প্ৰতীকযুক্ত এটি অপূৰ্ণ স্বৰূপ অভিহিত হৈছে। অতীতৰ অধিকাৰ সমূহত উপনিষদীয় এই ব্ৰহ্মত্ব প্ৰতিপাদক মহাবাক্যই মানবীয় জীৱনত বাস্তৱিক সত্তাৰ উপাসনা তথা প্ৰমূল্যবোধ উপলব্ধি কৰাত সহায় কৰে। ❑

সন্দৰ্ভ ঃ

১। মনুস্মৃতি. ১.১
২। কটোপনিষদ, ভাষ্য, পৃষ্ঠা.১৯৭. (ঈশাদি নৌ উপনিষদ্)
৩। কঠোপনিষদ্ ১.৩.১৫.
৪। কৌষীতকি উপনিষদ্ ১.১.১৮.
৫। একেই, ১.১.১৬.
৬। মুক্তিকোউপনিষদ.
৭। হেমকোষ, পৃষ্ঠা. ১০৭২
৮। ঐতৰেয়. উপনিষদ. ৩.১.১
৯। একেই, ৩.১.২.
১০। কৌষীতকি উপনিষদ্, ৩.৬.
১১। বৃহদাৰণ্যক উপনিষদ্, ১.৫.৩.
১২। কৌষীতকি উপনিষদ্, ৩.৬.
১৩। ঐতৰেয়. উপনিষদ্, ৩.১.৩.
১৪। বৃহদাৰণ্যক উপনিষদ্, ১.৪.১০.
১৫। গীতা. ১০.২০.
১৬। ছান্দোগ্য উপনিষদ ৬.৯.৪.
১৭। নৈষ্কাৰ্ম্যসিদ্ধি ৩.৩.
১৮। তৈত্তিৰীয় উপনিষদ্ ৮.১.
১৯। মাণ্ডুক্য উপনিষদ্ ১.
২০। একেই, ৮.
২১। একেই, ২.
২২। শব্দকল্পদ্ৰুম. বাচস্পত্যম্
২৩। বৃহদাৰণ্যক উপনিষদ্, ৩.৯.২৬.
২৪। মাণ্ডুক্য উপনিষদ্
২৫। মনুস্মৃতি. ২.
২৬। ভৰতীয় দৰ্শন, পৃষ্ঠা. ৩৫.

সন্দৰ্ভ ঃ গ্ৰন্থৰাজি ঃ

১। গোস্বামী, হৰমোহন দেৱ, সংস্কৃত সাহিত্যৰ বুৰঞ্জী, বুকলেণ্ড, গুৱাহাটী, পঞ্চম প্ৰকাশঃ ফেব্ৰুৱাৰী, ২০০৮
২। মিশ্ৰ, জগদীশ চন্দ্ৰ, ডাং, বৈদিকবাঙ্ময়স্যেতিহাসঃ, চৌখম্বা সুৰভাৰতী প্ৰকাশন, বাৰনসী, সংস্কাৰণ ঃ ২০২১
৩। শ্ৰীমৎ সদানন্দ যোগেন্দ্ৰ বিৰচিত বেদান্তসাৰ ঃ, সম্পাদনা ত্ৰিপাঠী, ৰমাশংকৰ ডাং, ভাৰতীয় বিদ্যা সংস্থান, বাৰানসী, সংস্কৰণ ঃ ২০০৮
৪। ফুকন, দাতা, বৈশ্য, নাথ, ভাৰতীয় দৰ্শন, অসম বুক ডিপো, গুৱাহাটী, পুনৰ্মুদ্ৰণ ঃ ২০১৬
৫। ईशादि नौ उपनिषद्, शाङ्करभाष्यर्थ, गीताप्रेस, गोरख्यपुर, सं. 2077
৬। छान्दोग्योपनिषद्, सानुवाद शाङ्करभाष्यसहित, गीताप्रेस, गोरख्यपुर, सं. 2076
৬। बृहदारण्यकोपनिषद्, सानुवाद शाङ्करभाष्यसहित, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं. 2071

लेखकों से निवेदन

- द्विभाषी राष्ट्रसेवक में प्रकाशन हेतु पत्रिका की प्रकृति के अनुरूप भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक लेख आमंत्रित हैं।
- अनूदित रचनाओं के संदर्भ में मूल लेखक की अनुमति/स्वीकृति अनिवार्य है।
- लेखक अपनी रचनाएँ केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा स्वीकृत मानक हिंदी यूनिकोड में 13 प्वाइंट में टंकित कराकर पत्रिका के ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com पर अथवा स्पष्ट अक्षरों में लिखकर समिति कार्यालय के पते (मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, रूपनगर, गुवाहाटी-781032, असम) पर भेजें।
- अस्वीकृत रचनाएँ लौटाई नहीं जाएँगी। अतः भेजी गई रचना की प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- लेखक अपनी रचना के साथ अपना नाम, पदनाम, मोबाइल नं., ई-मेल, पूरा पता सहित एक पासपोर्ट साइज फोटो अवश्य भेजें।
- शोधपत्र की न्यूनतम शब्द-सीमा 2000 और अधिकतम 3000 होनी चाहिए और सार 150 से 200 शब्दों के भीतर होना चाहिए।
- असमीया भाषा में लिखे गए लेख को पेजमेकर फारमेट में गीतांजलि फंट, 12 प्वांइट में टाइप कराकर भेज सकते हैं।
- शोधपत्र के लेखन में एमएलए शैली का अनुपालन करना होग।
- शोधपत्र में क्रमशः शीर्षक, सार, प्रस्तावना, उद्देश्य, संसाधन/सामग्री, प्रविधि/पद्धति, क्षेत्र, मूल विषयवस्तु का विश्लेषण, परिणाम/उपलब्धियाँ, निष्कर्ष और उद्धृत कार्य शामिल होंगे।
- शोधपत्र की मौलिकता हेतु रचना के साथ घोषणा-पत्र संलग्न किया जाना आवश्यक है।
- लेखक अपनी तथ्यात्मक सटीकता के लिए पूरी तरह जिम्मेदार हैं।

द्विभाषी राष्ट्रसेवक का सदस्यता प्र-पत्र

यहाँ से काटिए

नाम : ....

पदनाम : ....

पूरा पता : ....
: ....

ई-मेल : .... मोबाइल : ....

RTGS का विवरण : ....

सदस्यता शुल्क

व्यक्तिगत

प्रति अंक	: रु. 100/-
वार्षिक	: रु. 1000/-
आजीवन सदस्य	: रु. 10,000/-

संस्थागत

प्रति अंक	: रु. 150/-
वार्षिक	: रु. 1,500/-

निर्धारित शुल्क मनीऑर्डर/डी.डी. के द्वारा असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के नाम से समिति कार्यालय के पते पर भेजा जा सकता है। ऑनलाइन शुल्क निम्न विवरण के अनुसार भेजें :-

Name of Beneficiary	: **Asom Rastrabhasha Prachar Samiti**
A/c No.	: 551802010004619
Name of Bank & Branch	: **Union Bank of India**, Hatigaon Chariali, Dispur-781038
IFS Code	: UBIN0555185

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें -

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया, मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, डाक : इंद्रपुर, जिला : कामरूप महानगर, गुवाहाटी-781032 (असम), मो. 9101541380, ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

POSTAL REGISTRATION NO. GH/127/2022-24 ❖ Date of Publication : 31st August, 2024 ❖ RNI No. ASSBIL/2009/31008

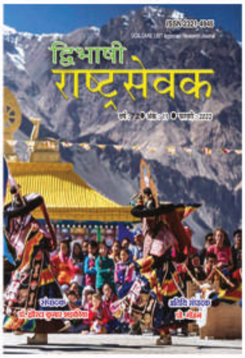

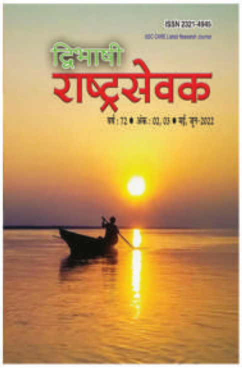

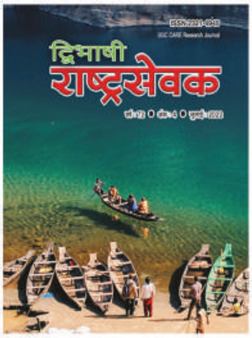

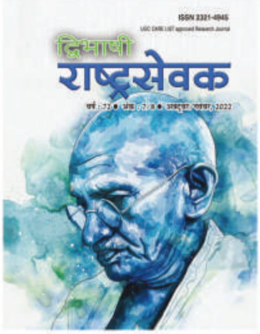

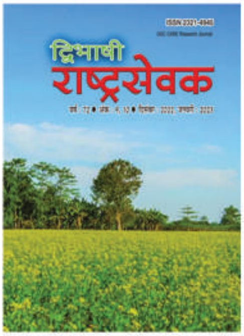

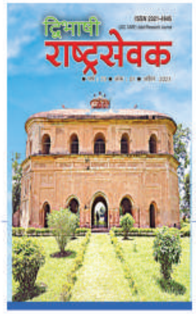

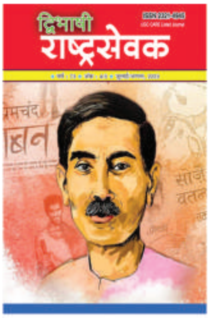

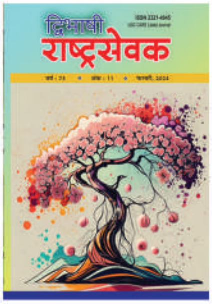

संपादकीय कार्यालय :

प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-781032

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

arpsguwahati.com rastrasewak51@gmail.com 9101541395/9101541380